५.स्थानसमुत्कीर्तन

आचार्य इष्टदेव को नमस्कार करके स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार कहने की प्रतिज्ञा करते हैं -

णमिऊण णेमिणाहं सच्चजुइट्ठिरणमंसियंघिजुगं ।
बंधुदयसत्तजुत्तं ठाणसमुक्कित्तणं वोच्छं ।।४५१।।

अन्वयार्थ - **(सच्चजुइट्ठिरणमंसियंघिजुगं)** सत्यवादी युधिष्ठिर के द्वारा जिनके चरणयुगल नमस्कार किये गये हैं **(णेमिणाहं)** उन नेमिनाथ को **(णमिऊण)** नमस्कार करके **(बंधुदयसत्तसंजुत्तं)** बन्ध, उदय और सत्त्व से युक्त **(ठाणसमुक्कित्तणं)** स्थान समुत्कीर्तन को **(वोच्छं)** कहूंगा।

विशेषार्थ - पहले प्रकृतिसमुत्कीर्तन अधिकार में जो प्रकृतियाँ कही हैं उनका बन्ध आदि क्रम से होता है या बिना क्रम से होता है यह बतलाने के लिए स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार कहते हैं।

स्थानसमुत्कीर्तन- एक जीव के एक समय में जितनी प्रकृतियाँ सम्भव हैं उनके समूह को स्थान कहते हैं। समुत्कीर्तन अर्थात् व्याख्यान।

अब मूलप्रकृतियों के बन्ध, उदय, उदीरणा और सत्त्व के स्थानों का कथन गुणस्थानों में छह गाथाओं से करते हैं -

छसु सगविहमट्ठविहं कम्मं बंधंति तिसु य सत्तविहं ।
छव्विहमेक्कट्ठाणे तिसु येक्कमबंधगो एक्को ।।४५२।।

अन्वयार्थ - **(छसु)** मिश्र गुणस्थान को छोड़कर अप्रमत्तपर्यन्त छह गुणस्थानों में **(सगविहं)** आयु बिना सात प्रकार अथवा **(अट्ठविहं)** आठ प्रकार के **(कम्मं)** कर्म **(बंधंति)** बंधते हैं। **(तिसु)** मिश्र, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण इन तीन गुणस्थानों में **(सत्तविहं)** सात प्रकार के कर्म बंधते हैं। **(एक्कट्ठाणे)** सूक्ष्मसांपराय एक गुणस्थान में

(छव्विहं) छह प्रकार का कर्मबंध होता है। **(तिसु)** आगे के तीन गुणस्थानों में **(येक्कं)** एक सातावेदनीय कर्म बंधता है। **(एक्को)** एक अयोगी गुणस्थान **(अबंधगो)** अबंधक है।

गुण. क्र.	गुणस्थान के नाम	प्रकृति सं.	कर्मबन्धन का सद्भाव
१,२,४,५,६,७	मिश्र गुणस्थान के बिना १ से ७ गुणस्थान में	७/८	आयुरहित ७ अथवा आयुसहित ८ कर्मों का
३,८,९	मिश्र, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण	७	आयुरहित सात कर्मों का
१०	सूक्ष्मसांपराय	६	आयु, मोह के बिना छह
११,१२,१३	उपशान्त,क्षीणमोह,सयोगी	१	वेदनीय कर्म का
१४	अयोगी में	०	कर्मबन्ध नहीं होता

चत्तारि तिण्णितियचउ पयडिट्ठाणाणि मूलपयडीणं ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणि वि कमे होंति ।।४५३।।

अन्वयार्थ - (मूलपयडीणं) मूलप्रकृतियों के **(पयडिट्ठाणाणि)** प्रकृतिबंधस्थान **(चत्तारि)** चार हैं **(भुजगारप्पदराणि)** भुजकार, अल्पतर **(य)** और **(अवट्ठिदाणि)** अवस्थित स्थान भी **(कमे)** क्रम से **(तिण्णितियचउ)** तीन, तीन और चार **(होंति)** हैं।

विशेषार्थ - मूलप्रकृति के बन्धस्थान चार हैं ८,७,६,१
बन्धस्थान में भुजकार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य इसप्रकार ४ प्रकार कहेंगे।

१) भुजाकारबन्ध - भुजा अर्थात् बाहु। जैसे बाहु नीचे छोटा और ऊपर ऊपर बढ़ता जाता है उसी प्रकार पहले थोडी प्रकृतियों को बाँधकर पीछे बहुत प्रकृतियों को बाँधना भुजाकार बन्ध है।

२) अल्पतर बन्ध - पहले बहुत प्रकृतियों को बाँधकर पीछे थोड़ी प्रकृतियों को बाँधना अल्पतर बन्ध है।

३)अवस्थित बन्ध - पहले जितनी प्रकृतियाँ बाँधी थी द्वितीयादि समय में उतनी ही बाँधना अवस्थित बन्ध है।

४) अवक्तव्य बन्ध - पहले कुछ भी न बाँधकर पीछे पुन: बाँधने को अवक्तव्यबन्ध कहते हैं।

मूलप्रकृति में भुजाकार बन्ध तीन, अल्पतर बन्ध तीन और अवस्थित बन्ध चार हैं। मूलप्रकृति में अवक्तव्य बन्ध नहीं है क्योंकि ग्यारहवें गुणस्थान में एक वेदनीय का बन्ध करता है, बन्ध का अभाव नहीं होता।

भुजाकार बन्ध तीन प्रकार का -

१) प्रथम भुजाकार बन्ध - १/६ उपशान्तकषाय में एक का बन्ध था वहाँ से उतरनेपर सूक्ष्मसांपराय में छह कर्म का बन्ध किया।

२) द्वितीय भुजाकार बन्ध - ६/७ सूक्ष्मसांपराय में छह का बन्ध कर अनिवृत्तिकरण में आनेपर ७ कर्म का बन्ध किया।

३) तृतीय भुजाकार बन्ध - ७/८ अपूर्वकरण में सात का बन्ध था, नीचे के गुणस्थान में आठ का बन्ध किया।

अल्पतर बन्ध ३ प्रकार का -

१) प्रथम अल्पतर बन्ध - ८/७ आठ कर्म को बाँधकर सात कर्म का बन्ध किया।

२) द्वितीय अल्पतर बन्ध - ७/६ नववें गुणस्थान में सात कर्म को बाँधकर ऊपर चढ़नेपर दसवें गुणस्थान में छह का बन्ध किया।

३) तृतीय अल्पतर बन्ध - ६/१ दसवें गुणस्थान में छह को बाँधकर ग्यारहवें / बारहवें गुणस्थान में एक का बन्ध किया।

अवस्थित बन्ध ४ प्रकार का -

१) अवस्थित ८/८ आठ कर्म का बन्धकर द्वितीयादि समयों में आठ का बन्ध होनेपर एक बन्ध है।

२) अवस्थित ७/७ सात कर्म का बन्धकर द्वितीयादि समयों में सात का बन्ध होनेपर एक बन्ध है।

३) अवस्थित ६/६ छह कर्म का बन्धकर द्वितीयादि समयों में छह का बन्ध होनेपर एक बन्ध है।

४) अवस्थित १/१ एक कर्म का बन्धकर द्वितीयादि समयों में एक का बन्ध होनेपर एक बन्ध है। इसतरह अवस्थित बन्ध ४ हैं।

उपशान्त कषाय से उतरकर एकदम अनिवृत्तिकरण आदि में नहीं आ सकता अत: [१/७] [१/८] ये दो भुजाकर बन्ध नहीं होते। इसी प्रकार अप्रमत्त से या अनिवृत्तिकरण से एक साथ उपशांत कषाय में नहीं जाता अत: [८/१] [७/१] ये दो अल्पतर बंध नहीं होते।

शंका - जो उपशान्त कषाय से मरकर असंयत देव हुआ उसके एक से सात या आठ के बन्धरूप भुजाकार क्यों नहीं कहे ?

समाधान - अबद्धायु का मरण नहीं होता अत: एक से सात के बन्धरूप भुजाकार का अभाव हैं और बद्धायु का मरण होता है तो वह देव असंयत गुणस्थानवर्ती होता है। वहाँ अपनी आयु में छह महिना शेष रहनेपर ही आयु का बन्ध होता है। अत: एक से आठ के बन्धरूप भुजाकार बन्ध नहीं होता।

टिप्पणी - देवायु का बद्धायु जीव उपशान्तकषाय में मरणकर देव असंयत होता है तब एक से सात का बन्धरूप भुजाकार बन्ध होना चाहिए किन्तु यहाँ उसकी विवक्षा नहीं की ऐसा लगता है।

अट्ठुदयो सुहुमोत्ति य मोहेण विणा हु संतखीणेसु ।
घादिदराणचउक्कस्सुदओ केवलिदुगे णियमा ।।४५४।।

अन्वयार्थ - (सुहुमोत्ति) सूक्ष्मसांपराय पर्यंत **(अट्ठुदयो)** आठों प्रकृतियों का उदय है। **(संतखीणेसु)** उपशांतकषाय और क्षीणकषाय में **(मोहेण विणा)** मोह के बिना सात का ही उदय रहता है। **(केवलिदुगे)** सयोग और अयोग केवली में **(घादिदराण-चउक्कस्सुदओ)** चार अघातिकर्मों का ही उदय **(णियमा)** नियम से है।

गुणस्थान	उदय	अनुदय		उदयव्युच्छित्ति	
१ से १० गुणस्थान	८	०		१	मोहनीय
११, १२ गुणस्थान	७	१	मोहनीय	३	ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय
१३ , १४ गुणस्थान	४	४	घातिकर्म	४	अघातिकर्म

घादीणं छदुमट्ठा उदीरगा रागिणो य मोहस्स ।
तदिआऊण पमत्ता जोगंता होंति दोण्हंपि ।।४५५।।

अन्वयार्थ - (घादीणं) चार घातिकर्मों के **(उदीरगा)** उदीरक **(छदुमट्ठा)** छद्मस्थ ही हैं **(मोहस्स)** मोहनीय के उदीरक **(रागिणो)** रागी जीव ही हैं। **(तदिआऊण)** तृतीय वेदनीय कर्म और आयु की उदीरणा **(पमत्ता)** प्रमत्तसंयत गुणस्थानपर्यंत प्रमादी जीव ही करते हैं **(दोण्हंपि)** नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा **(जोगंता)** सयोगी पर्यन्त होती है।

मिस्सूणपमत्तंते आउस्सद्धा हु सुहुमखीणाणं ।
आवलिसिट्ठे कमसो सगपणदोच्चे उदीरणा होंति ।।४५६।।

अन्वयार्थ - (मिस्सूणपमत्तंते) मिश्र गुणस्थान के विना प्रमत्त पर्यन्त पाँच गुणस्थानों में **(आउस्सद्धा)** आयु का काल, **(सुहुमखीणाणं)** सूक्ष्मसांपराय और क्षीणकषाय का काल **(आवलिसिट्ठे)** आवली मात्र शेष रहनेपर **(कमसो)** क्रम से **(सगपणदोच्चे)** आयु बिना सात की, आयु, मोहनीय, वेदनीय बिना पाँच की और नाम गोत्र दो की **(उदीरणा)** उदीरणा **(होंति)** होती है।

विशेषार्थ - मिश्र गुणस्थान के बिना प्रमत्तपर्यन्त पाँच गुणस्थानों में एक आवलि प्रमाण आयु अवशेष रहने पर आयु को छोड़ सात कर्मों की ही उदीरणा होती है। सूक्ष्मसांपराय में आवलिकाल शेष रहनेपर आयु, वेदनीय, मोहनीय के बिना पाँच की उदीरणा होती है। क्षीणकषाय में आवलिकाल शेष रहनेपर नाम और गोत्र दो कर्मों की उदीरणा होती है क्योंकि कर्मों की स्थिति एक आवली शेष रहने पर उदीरणा करण नहीं होता।

कर्म	उदीरणा गुणस्थान
मोहनीय	१ से १० गुणस्थान
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय	१ से १२ गुणस्थान
आयु, वेदनीय	१ से ६ गुणस्थान
नाम, गोत्र	१ से १३ गुणस्थान

गुणस्थानों में उदीरणारूप प्रकृतियों की संख्या -

गुणस्थान	मि.	सा.	मिश्र.	असं.	दे.	प्र.	अप्र.	अपू.	अनि.	सू.	उ.	क्षी.	स.	अ.
उदीरणा प्रकृति	८।७	८।७	८	८।७	८।७	८।७	६	६	६	६।५	५	५।२	२	०

संतोत्ति अट्ठसत्ता खीणे सत्तेव होंति सत्ताणि ।
जोगिम्मि अजोगिम्मि य चत्तारि हवंति सत्ताइं ।।४५७।।

अन्वयार्थ - (संतोत्ति) उपशांत कषायपर्यन्त **(अट्ठसत्ता)** आठ मूलप्रकृतियों की सत्ता है **(खीणे)** क्षीणकषाय में मोहनीय के बिना **(सत्तेव)** सात प्रकृतियों का ही **(सत्ताणि)** सत्त्व **(होंति)** होता है। **(जोगिम्मि)** सयोगी में **(य)** और **(अजोगिम्मि)** अयोगी में **(चत्तारि)** चार अघाति कर्मों का ही **(सत्ताइं)** सत्त्व **(हवंति)** है।

गुणस्थान	सत्त्व	असत्त्व	सत्त्वव्युच्छित्ति	
१ से ११ गुणस्थान	८	०	१	मोहनीय
१२ क्षीणमोह	७	१ मोह	३	ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय
१३, १४	४ अघाति	४ घाति	४	नाम, गोत्र, वेदनीय, आयु

अब उत्तरप्रकृतिसंबंधी उदयादि स्थानों को कथन करते हैं -

तिण्णि दस अट्ठठाणाणि दंसणावरणमोहणामाणं ।
एत्थेव य भुजगारा सेसेसेयं हवे ठाणं ।।४५८।।

अन्वयार्थ - (दंसणावरणमोहणामाणं) दर्शनावरण, मोहनीय और नामकर्म के **(ठाणाणि)** बन्धस्थान क्रम से **(तिण्णि, दस अट्ठ)** तीन, दस और आठ होते हैं। **(एत्थेव)** इन्हीं स्थानों में **(भुजगारा)** भुजकार बन्ध भी होते हैं। **(सेसेसेयं)** शेष कर्मों में एक ही **(ठाणं)** बंधस्थान **(हवे)** है।

विशेषार्थ - दर्शनावरण के बन्धस्थान ३, मोहनीय के १०, नामकर्म के ८, अत: इनमें ही भुजाकार बंध होते हैं। ज्ञानावरण और अंतराय में पाँच प्रकृति का एक ही बन्धस्थान है। गोत्र, आयु और वेदनीय में एक प्रकृतिरूप एक एक ही बन्धस्थान है। इससे इन पाँच में भुजाकार बन्ध नहीं होते।

णव छक्क चउक्कं च य विदियावरणस्स बंधठाणाणि ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य जाणाहि ।।४५९।।

अन्वयार्थ - (विदियावरणस्स) दूसरे दर्शनावरण के **(बंधठाणाणि)** बंधस्थान **(णव, छक्क, चउक्कं च)** नौ प्रकृतिक, छह प्रकृतिक और चार प्रकृतिक हैं। उनमें **(भुजगारप्पदराणि य)** भुजकार, अल्पतर **(अवट्ठिदाणिवि)** अवस्थित और 'अपि' शब्द से अवक्तव्य बन्ध भी **(जाणाहि)** जानना।

णव सासणोत्ति बंधो छच्चेव अपुव्वपढमभागोत्ति ।
चत्तारि होंति तत्तो सुहुमकसायस्स चरिमोत्ति ।। ४६०।।

अन्वयार्थ - (सासणोत्ति) सासादनपर्यन्त दर्शनावरण के **(णव बंधो)** नौ प्रकृतियों का बंध है **(अपुव्वपढमभागोत्ति)** अपूर्वकरण के प्रथम भाग पर्यन्त स्त्यानगृद्धित्रिक के बिना **(छच्चेव)** छह प्रकृतियों का ही बंध है **(तत्तो)** उसके पश्चात् **(सुहुमकसायस्स)** सूक्ष्मसांपराय के **(चरिमोत्ति)** चरम समय तक **(चत्तारि)** चार प्रकृतियों का बंध **(होंति)** होता है।

विशेषार्थ - दर्शनावरण के बन्धस्थान तीन हैं -

१) ९ प्रकृतिरूप   २) ६ प्रकृतिरूप (स्त्यानगृद्धित्रिक के बिना शेष)

३) ४ प्रकृतिरूप (पाँच निद्रा के बिना शेष)

गुणस्थान	दर्शनावरण	बन्धस्थान
प्रथम द्वितीय गुणस्थान	९ प्रकृतिरूप	दर्शनावरण की सब प्रकृतियाँ
३ से अपूर्वकरण के प्रथमभाग तक	६ प्रकृतिरूप	चक्षुदर्शनादि ४, निद्रा,प्रचला
८ वें के दूसरे भाग से १० वें गुण.तक	४ प्रकृतिरूप	चक्षुदर्शनादि ४

दर्शनावरण के भुजाकार बन्ध २ हैं → १) $\frac{४}{६}$ २) $\frac{६}{९}$

१) प्रथम भुजाकार → उपशमश्रेणि से उतरनेवाला अपूर्वकरण के दूसरे भाग में चार प्रकृतियों का (चक्षुदर्शनादि) बन्ध करके प्रथम भाग में उतरनेपर छह प्रकृतियों का बन्ध करता है। $\frac{४}{६}$

१) द्वितीय भुजाकार→ ६,५,४,३ गुणस्थानवर्ती छह प्रकृतियों का बन्ध करके मिथ्यादृष्टि होकर अथवा प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि सासादन गुणस्थान में आकर नौ प्रकृतियों का बन्ध करता है। $\frac{६}{९}$

दर्शनावरण के अल्पतर बन्ध २ हैं → १) ९/६ २) ६/४

१) प्रथम अल्पतर → प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि अनिवृत्तिकरण के अन्तिम समय में नौ प्रकृतियों का बन्ध करके अनन्तर समय में ४,५ या ७ गुणस्थानवर्ती होकर छह प्रकृतियों का बन्ध करता है।

२) द्वितीय अल्पतर →उपशमक अथवा क्षपक अपूर्वकरण के प्रथम भाग के अन्तिम समय में छह प्रकृतियों को बाँधकर दूसरे भाग के प्रथम समय में चार प्रकृतियाँ बान्धता है।

दर्शनावरण के अवस्थित बन्ध ३ है → १) ९/९ २) ६/६ ३) ४/४

नौ, छह, चार प्रकृतिरूप स्थान को बाँधकर अनन्तर समय में उतनी ही प्रकृतियों को बाँधता है। इस तरह अवस्थित बन्ध तीन होते हैं।

दर्शनावरण के अवक्तव्य बन्ध २ हैं →१) ०/४ २) ०/६

१) प्रथम अवक्तव्य बन्ध→ उपशान्तकषाय में किंचित् भी बन्ध न करके उतरनेपर सूक्ष्म साम्पराय के प्रथम समय में चार प्रकृतिरूप स्थान बाँधता है। ०/४

२) दूसरा अवक्तव्य बन्ध →बद्धायुष्क जीव ग्यारहवे गुणस्थान में मरकर देव असंयत होकर छह प्रकृतिरूप स्थान बाँधता है। ०/६

दर्शनावरण का गुणस्थानों में बन्ध

गुणस्थान	मि.	सा	मिश्र	असं	दे.	प्र.	अप्र.	अपू प्र.भा.	शेष भा.	अनि.	सू.	उ.	क्षी.	स.	अ.
बन्ध प्रकृति	९	९	६	६	६	६	६	६	४	४	४	०	०	०	०

खीणोत्ति चारि उदया पंचसु णिद्दासु दोसु णिद्दासु ।
एक्के उदयं पत्ते खीणदुचरिमोत्ति पंचुदया ।।४६१।।

अन्वयार्थ - जाग्रत अवस्था में **(खीणोत्ति)** मिथ्यादृष्टि से क्षीणकषाय के अन्तिम समयपर्यन्त दर्शनावरण की **(चारि)** चक्षुदर्शनादि चार प्रकृतियाँ **(उदया)** उदयरूप होती हैं। प्रमत्तगुणस्थानपर्यंत **(पंचसु णिद्दासु)** पाँच निद्राओं में से और उसके आगे **(दोसु णिद्दासु)** दो निद्राओं में से **(एक्के उदयं पत्ते)** एक निद्रा का उदय प्राप्त होने पर **(खीणदुचरिमोत्ति)** क्षीण कषाय के द्विचरम समयपर्यन्त **(पंचुदया)** दर्शनावरण की पाँच प्रकृतियाँ उदयरूप होती हैं।

विशेषार्थ - दर्शनावरण के उदयस्थान २ हैं→ १)४ २) ५

१) जाग्रत जीव में १ से १२ गुणस्थानतक चक्षुदर्शनावरणादि चार प्रकृतियों का उदय होता है।

२) निद्रित जीव में छठे गुणस्थानतक स्त्यानगृद्ध्यादि ५ निद्राओं में से एक का उदय रहता है और ७ वें से १२ वें के द्विचरम समय पर्यन्त निद्रा-प्रचलामें से एक का उदय रहता है तब पाँच प्रकृतिरूप उदयस्थान होता है। उससे ऊपर दर्शनावरण का उदय नहीं है।

दर्शनावरण का गुणस्थानों में उदय

गुणस्थान	मि.	सा	मिश्र	असं	देश.	प्र.	अप्र.	अपू	अनि.	सू.	उप.	क्षी.	स.	अ.
उदय अनिद्रामें	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	०	०
उदय सनिद्रामें	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५।४	०	०

दर्शनावरण के सत्त्वस्थानों का कथन करते हैं -

मिच्छादुवसंतोत्तिय अणियट्टीखवगपढमभागोत्ति ।
णवसत्ता खीणस्स दुचरिमोत्ति य छच्चदू चरिमे ।। ४६२।।

अन्वयार्थ - (मिच्छादुवसंतोत्ति य) मिथ्यात्व से उपशान्त कषाय पर्यन्त **(य)** और **(अणियट्टीखवगपढमभागो त्ति)** क्षपकश्रेणि में अनिवृत्तिकरण के प्रथम भागपर्यन्त दर्शनावरण की **(णव सत्ता)** नौ प्रकृतियों का सत्त्वस्थान होता है **(खीणस्स)** उसके ऊपर क्षीणकषाय के **(दुचरिमोत्ति)** द्विचरम समयपर्यन्त **(छच्)** छह प्रकृतिक सत्त्वस्थान हैं **(चरिमे)** क्षीणकषाय के अन्तिम समय में **(चदू)** चार प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान है।

विशेषार्थ - दर्शनावरण के सत्त्वस्थान ३ हैं १) ९ २) ६ ३) ४

गुणस्थान	सत्त्वस्थान
उपशमश्रेणि में १ से ११ गुणस्थानतक	९ प्रकृतिरूप
क्षपकश्रेणि में १ से ९ वें के प्रथमभाग तक	९ प्रकृतिरूप
९ वें के द्वितीयभाग से १२ वें के द्विचरमसमयपर्यंत	६ प्रकृतिरूप (स्त्यानत्रिक बिना ९-३ =६)
१२ वें के चरमसमय में	४ प्रकृतिरूप (निद्रा प्रचला का क्षय द्विचरम समय में होता है।)

दर्शनावरण का गुणस्थानों में सत्त्व

गुणस्थान	मि.	सा	मिश्र	असं	दे.	प्र.	अप्र.	अपू	अनि.		सू.		उ.	क्षी.		स.	अ.
									उप.	क्ष.	उप.	क्ष.		द्वि.	च		
सत्त्वस्थान	९	९	९	९	९	९	९	९	९	६	९	६	९	६	४	०	०

अब मोहनीय के बन्धस्थानों को कहते हैं -

बावीसमेक्कवीसं सत्तारस तेरसेव णव पंच ।
चदु तिय दुगं च एक्कं बंधट्ठाणाणि मोहस्स ।।४६३।।

अन्वयार्थ - (मोहस्स) मोहनीय कर्म के **(बंधठाणाणि)** बन्धस्थान **(बावीसेक्कवीसं)** बाईस, इक्कीस, **(सत्तारस)** सतरह, **(तेरसेव)** तेरह, **(णव)** नौ, **(पंच)** पाँच, **(चदु)** चार, **(तिय)** तीन, **(दुगं)** दो **(च)** और **(एक्कं)** एक प्रकृतिरूप इस प्रकार कुल दस हैं।

बावीसमेक्कवीसं सत्तर सत्तार तेर तिसु णवयं ।
थूले पणचदु तियदुगमेक्कं मोहस्स ठाणाणि ।।४६४।।

अन्वयार्थ - मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानों में **(मोहस्स ठाणाणि)** मोहनीय के बंधस्थान क्रम से **(बावीसं)** बाईस **(एक्कवीसं)** इक्कीस **(सत्तर)** सतरह **(सत्तार)** सतरह

(तेर) तेरह प्रकृतिरूप **(तिसु)** प्रमत्तादि तीन गुणस्थानों में **(णवयं)** नौ प्रकृतिरूप **(थूले)** अनिवृत्तिकरण में **(पणचदुतियदुगमेक्कं)** पाँच, चार, तीन, दो और एक प्रकृतिरूप पाँच स्थान हैं।

उगुवीसं अट्‌ठारस चोद्दस चोद्दस य दस य तिसु छक्कं ।
थूले चदु तिदुगेक्कं मोहस्स य होंति धुवबंधी ।।४६५।।

अन्वयार्थ - मिथ्यादृष्टि से लेकर अनिवृत्तिकरण के भागपर्यन्त **(मोहस्स)** मोहनीय के जो स्थान कहे हैं उन स्थानों में क्रम से **(धुवबंधी)** ध्रुवबंधी प्रकृतियाँ **(उगुवीसं)** उन्नीस, **(अट्ठारस)** अठारह, **(चोद्दस)** चौदह, **(चोद्दस)** चौदह, **(दस य)** दस **(तिसु)** तीन गुणस्थानों में छह **(थूले)** अनिवृत्तिकरण में **(चदुतिदुगेक्कं)** चार, तीन, दो, एक हैं।

सगसंभवधुवबंधे वेदेक्के दोजुगाणमेक्के य ।
ठाणा वेदजुगाणं भंगहदे होंति तब्भंगा ।।४६६।।

अन्वयार्थ - (सगसंभवधुवबंधे) अपने अपने स्थानों में कही ध्रुवबंधी प्रकृतियों में यथासंभव **(वेदेक्के)** तीन वेदों में से एक वेद **(य)** और **(दोजुगाणमेक्के)** हास्यशोक युगल और रति-अरति के युगल में से एक युगल मिलाने पर **(ठाणा)** स्थान होते हैं। **(वेदजुगाणं)** वेदों के प्रमाण को युगल के **(भंगहदे)** भंगों से गुणा करनेपर **(तब्भंगा)** मोहनीय के बंधस्थानों के भंग **(होंति)** हैं।

छब्बावीसे चदुइगिवीसे दोद्दो हवंति छट्‌ठोत्ति ।
एक्केक्कमदो भंगो बंधट्‌ठाणेसु मोहस्स ।।४६७।।

अन्वयार्थ -(मोहस्स बंधट्‌ठाणेसु) मोहनीय के बन्धस्थानों में **(बावीसे)** बाईस प्रकृतिरूप स्थान में **(छब्)** छह **(इगिवीसे)** इक्कीस के स्थान में **(चदु)** चार **(छट्ठोत्ति)** ऊपरछठे प्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त **(दो द्दो)** दो-दो **(अदो)** उससे ऊपर सब स्थानों में **(एक्केक्कं)** एक-एक **(भंगा)** भंग **(हवंति)** होते हैं।

विशेषार्थ - मोहनीय के बन्धस्थान दस हैं

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
२२	२१	१७	१३	९	५	४	३	२	१

गुणस्थान	बंधस्थान	ध्रुवबन्धी प्रकृति		अध्रुवबन्धी प्रकृति		भंग	
		प्र.सं.	विवरण	प्र.सं.	विवरण	भं.सं.	विवरण
१ मि.	२२ प्र.	१९	मिथ्यात्व,१६ क. भय, जुगुप्सा	३	३वेदोंमेंसे१,२हा. अरतियुगलमेंसे १	६	३ वेद ×२ हा.अ.द्विक
२ सा.	२१	१८	१९-१ मिथ्यात्व	३	२वेदोंमेंसे१,२हा. अ.द्विकमेंसे १	४	२ वेद×२
३ मिश्र	१७	१४	१८-४ अनंतानुबंधी कषाय	३	१ पुंवेद,२हा.अ. द्विक में से १ यु.	२	१×२
४ असं.	१७	१४	१८-४ अनंतानुबंधी कषाय	३	१ पुंवेद,२हा.अ. द्विकमेंसे १ द्विक	२	१×२
५ देश.	१३	१०	१४-४ अप्रत्याख्यान कषाय	३	१ पुंवेद,२हा.अ. द्विकमेंसे १ द्विक	२	१×२
६ प्रमत्त.	९	६	१०-४ प्रत्याख्यान कषाय	३	१ पुंवेद,२हा.अ. द्विकमेंसे १ द्विक	२	१×२
७ अप्र.	९	६	१०-४ प्रत्या. क.	३	१पुंवेद,२हा.द्विक	१	१×१
८ अपू.	९	६	१०-४ प्रत्या. क.	३	१पुंवेद,२हा.द्विक	१	१×१
९ प्र.भा.	५	४	६-२ भयजुगुप्सा	१	१ पुंवेद	१	
९ द्वि.भा.	४	४	६-२ भयजुगुप्सा	०	×	१	
९ तृ.भा.	३	३	४-१ संज्वलनक्रोध	०	×	१	
९ च.भा.	२	२	३-१ संज्वलनमान	०	×	१	
९ पं.भा.	१	१	२-१ संज्वलनमाया	०	×	१	

प्रथम गुणस्थान में मिथ्यात्व, नपुंसकवेद की बन्धव्युच्छित्ति होती है, दूसरे में अनन्तानुबन्धी कषाय और स्त्रीवेद, चौथे में अप्रत्याख्यान कषाय, पाँचवें में प्रत्याख्यान कषाय, छठे में शोक, अरति, आठवें में भय जुगुप्सा, हास्य रति, नववें में क्रम से पुंवेद, सं. क्रोध, मान, माया, लोभ की बन्धव्युच्छित्ति होती है इसलिए बन्धस्थान, प्रकृति और भंग कम होते जाते हैं।

१) मिथ्यादृष्टिबंधकूट -

२	भयजुगुप्सा
२ । २	हास्यद्विक,अरतिद्विक
१ । १ । १	वेद
१६	कषाय
१	मिथ्यात्व

प्रकृति २२ भंग ६ = ३ वेद ×२ हास्ययुगल, अरतियुगल

२२ बंधस्थान के ६ भंगों का विवरण →

१) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ नपुंसक वेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
२) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ स्त्री वेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
३) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ पुरुषवेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
४) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ नपुंसक वेद + २ अरतिशोक + २ भयजुगुप्सा
५) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ स्त्री वेद + २ अरतिशोक + २ भयजुगुप्सा
६) १ मिथ्यात्व + १६ कषाय + १ पुंवेद + २ अरतिशोक + २ भयजुगुप्सा

२) सासादन बंधकूट -

२	भयजुगुप्सा
२।२	हास्यद्विक,अरतिद्विक
०।१।१	स्त्रीवेद, पुंवेद
१६	कषाय

२१ प्रकृति
२ वेद × २ हास्य, अरतियुगल = ४ भंग

२१ प्रकृतिक बंधस्थान के ४ भंगों का विवरण

१) १६ कषाय + १ स्त्रीवेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
२) १६ कषाय + १ पुंवेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
३) १६ कषाय + १ स्त्रीवेद + २ अरतिशोक + २ भयजुगुप्सा
४) १६ कषाय + १ पुंवेद + २ अरतिशोक + २ भयजुगुप्सा

३)मिश्रबंध और ४) असंयतबंधकूट - प्रकृति १७, भंग २

२	भयजुगुप्सा
२।२	हास्यद्विक,अरतिद्विक
०।०।१	पुंवेद
१२	अनंतानुबंधीबिना कषाय

१७ प्रकृति

१७ प्रकृतिक बंधस्थान के भंग २

१) १२ कषाय + १ पुंवेद + २ हास्यरति + २ भयजुगुप्सा
२) १२ कषाय + १ पुंवेद + २ शोकअरति +२ भयजुगुप्सा

५) देशसंयतबंधकूट
प्रकृति १३, भंग २

२	भयजुगुप्सा
२।२	हास्यद्विक,अरतिद्विक
१	पुंवेद
८	प्रत्याख्यान,संज्व.कषाय

१३ प्रकृति, भंग२ उपर्युक्त

६) प्रमत्तसंयतबंधकूट

२	भयजुगुप्सा
२।२	हास्यद्विक,अरतिद्विक
१	पुंवेद
४	संज्वलन

९ प्रकृति, भंग- २

७) अप्रमत्तसंयतबंधकूट
८) अपूर्वकरण

२	भयजुगुप्सा
२	हास्य ,रति
१	पुंवेद
४	संज्वलन

९ प्रकृति,भंग -१

शोक अरति की बन्धव्युच्छित्ति छठे गुणस्थान में हुई इसलिए सातवें गुणस्थान से भंग एक ही है।

९) अनिवृत्तिबंधकूट - प्रकृति ५, ४, ३, २, १, प्रत्येक में भंग १

प्रथमभाग	द्वितीयभाग	तृतीयभाग	चतुर्थभाग	पंचमभाग
१/४ पुंवेद संज्वलन	४ संज्वलन कषाय	३ क्रोधविना संज्वलनकषाय	२ संज्वलन मायालोभ	१ संज्वलन लोभ

दस वीसं एक्कारस तित्तीसं मोहबंधठाणाणि ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य सामण्णे ।।४६८।।

अन्वयार्थ - (मोहबंधठाणाणि) मोहनीय के बंधस्थान, **(भुजगारप्पदराणि य)** भुजकारबंध, अल्पतरबंध **(य)** और **(अवट्ठिदाणिवि)** अवस्थित बंधस्थान क्रम से सामान्यरूप से अर्थात् भंगों की विवक्षा किये बिना **(दस वीस एक्कारस तित्तीसं)** दस, बीस, ग्यारह और तैंतीस हैं।

विशेषार्थ - मोहनीय के बन्धस्थान १०, उनमें भंगों की विवक्षा न करके भुजाकारबंध २०, अल्पतरबंध ११, अवक्तव्य बंध २, अवस्थितबन्ध ३३ हैं।

अब भुजाकारादि बंधों का लक्षण कहते हैं -

अप्पं बंधंतो बहुबंधे बहुगा दु अप्पबंधेवि ।
उभयत्थ समे बंधे भुजकारादी कमे होंति ।।४६९।।

अन्वयार्थ - (अप्पं बंधंतो) अल्प प्रकृतियों का बंध करके **(बहुबंधे)** बहुत प्रकृतियों को बांधनेपर तथा **(बहुगा दु)** बहुत प्रकृतियों का बंध करके **(अप्पबंधे वि)** अल्प प्रकृतियों को बांधनेपर तथा **(उभयत्थ)** दोनों जगह **(समे बंधे)** समान प्रकृतियों को बांधनेपर **(कमे)** क्रम से **(भुजकारादि)** भुजाकारादि बंध **(होंति)** होते हैं।

सामण्ण अवत्तव्वो ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे ।
एक्कं च होदि एत्थवि दो चेव अवट्ठिदा भंगा ।।४७०।।

अन्वयार्थ - (सामण्ण) सामान्य से **(अवत्तव्वो)** अवक्तव्य बंध **(ओदरमाणम्मि)** उपशमश्रेणि से उतरने पर **(एक्क यं)** एक **(च)** और **(मरणे)** वहाँ मरणे पर **(एक्कं)** एक **(होदि)** है इस प्रकार दो हैं **(एत्थवि)** यहीं पर **(अवट्ठिदा भंगा)** अवस्थित भंग भी **(दो चेव)** दो ही होते हैं।

विशेषार्थ - अवक्तव्य बन्ध २ - १) उपशमश्रेणि से नीचे उतरनेपर नववे गुणस्थान के प्रथम समय में एक का बन्ध करता है अत: [०/१] यह एक अवक्तव्यबन्ध हुआ।

२) उपशान्तकषाय में मरनेपर देव असंयत हुआ वहाँ १७ का बन्ध करता है इसप्रकार [०/१७] यह दूसरा अवक्तव्यबन्ध हुआ।

मोहनीय के भुजाकारबंध २० का स्पष्टीकरण

१) [१/२] उपशमश्रेणि से उतरनेवाला अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती संज्वलन लोभ का बंध करके नीचे के भाग में उतरकर संज्वलन माया लोभ दो का बन्ध करता है अथवा

२) [१/१७] यदि वह बद्धायु मरण करे तो देव असंयत होकर सतरहका बन्ध करता है। इसप्रकार एक प्रकृतिरूप बन्धस्थान में दो भुजाकार हुये। १/१७ १/२

३) [२/३] वही जीव दो का बंध करके नीचे के भाग में उतरकर मान सहित तीन का बन्ध करता है।

४) [२/१७] अथवा दो का बन्ध करनेवाला मरकर देव असंयत होकर सतरह का बन्ध करता है इसप्रकार दो प्रकृतिरूप बन्धस्थान में दो भुजाकर हुये। २/३ २/१७

५) [३/४] पुन: तीन को बांधकर नीचे के भाग में उतरकर संज्वलन क्रोधसहित चार का बंध करता है।

६) $\frac{३}{१७}$ यदि वह मरण करे तो देव असंयत होकर सतरह का बन्ध करता है। इसप्रकार तीन प्रकृतिरूप बन्धस्थान में दो भुजाकर हुये। $\frac{३}{४}$ $\frac{३}{१७}$

७) $\frac{४}{५}$ पुनः चार का बंध करनेवाला नीचे उतरकर पुंवेदसहित पाँच का बंध करता है।

८) $\frac{४}{१७}$ अथवा मरण कर देव असंयत होकर सतरह का बन्ध करता है। इसप्रकार चार प्रकृतिरूप बन्धस्थान में दो भुजाकर हुये। $\frac{४}{५}$ $\frac{४}{१७}$

९) $\frac{५}{९}$ पाँच का बंध करनेवाला उतरकर अपूर्वकरण होकर हास्यरतिभयजुगुप्सा सहित नौ प्रकृतियों का बंध करता है।

१०) $\frac{५}{१७}$ अथवा मरण कर देव असंयत होकर सतरह का बन्ध करता है। इसप्रकार पाँच प्रकृतिरूप बन्धस्थान में दो भुजाकर हुये। $\frac{५}{९}$ $\frac{५}{१७}$

११) $\frac{९}{१३}$ अपूर्वकरण, अप्रमत्त, प्रमत्त नौ प्रकृतियों का बन्ध करके देशसंयत होकर तेरह का बन्ध करता है।

१२) $\frac{९}{१७}$ अथवा मरण कर देव असंयत होकर सतरह का बन्ध करता है।

१३) $\frac{९}{२१}$ अथवा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि सासादन होकर इक्कीस का बन्ध करता है।

१४) $\frac{९}{२२}$ अथवा वेदक या प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि होकर बाईस का बन्ध करता है। इसप्रकार नौ प्रकृति के चार भुजाकार हुये। $\frac{९}{१३}$ $\frac{९}{१७}$ $\frac{९}{२१}$ $\frac{९}{२२}$

१५) $\frac{१३}{१७}$ देशसंयत १३ को बाँधकर असंयत होकर सतरह को बान्धता है। अथवा

१६) $\frac{१३}{२१}$ प्रथमोपशम सम्यक्त्वी तेरह को बाँधकर सासादन होकर इक्कीस को बान्धता है।

१७) $\frac{१३}{२२}$ अथवा वेदक या उपशम सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि होकर बाईस का बंध करता है। इसप्रकार तेरह प्रकृति के तीन भुजाकार हुये। $\frac{१३}{१७}$ $\frac{१३}{२१}$ $\frac{१३}{२२}$

१८) $\frac{१७}{२१}$ प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सतरह को बाँधकर सासादन होकर इक्कीस का बन्ध करता है।

१९) $\frac{१७}{२२}$ अथवा वेदक या उपशम सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि होकर बाईस का बंध करता है। इसप्रकार सतरह के स्थान में दो भुजाकार हुये। $\frac{१७}{२१}$ $\frac{१७}{२२}$

२०) २१/२२ सासादन इक्कीस को बाँधकर मिथ्यादृष्टि होकर बाईस का बंध करता है।

इसप्रकार भुजाकार बंध बीस हुये जो नीचे के कोष्टक में दिखाये हैं।

१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	९	९	९	९	१३	१३	१३	१७	१७	२१
२	१७	३	१७	४	१७	५	१७	९	१७	१३	१७	२१	२२	१७	२१	२२	२१	२२	२२

मोहनीय के अल्पतरबन्ध ११ प्रकार के हैं -

१) २२/१७ अनादि या सादि मिथ्यादृष्टि जीव अन्तिमसमय में २२ प्रकृति का बन्ध करके अनन्तर समय में प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि होकर अथवा सादि मिथ्यादृष्टि वेदक-सम्यक्त्वी होकर दोनों ही असंयत गुणस्थानवर्ती होते हैं तो सतरह का बंध करते हैं।

२) २२/१३ अथवा उपर्युक्त दोनों देशसंयत होते हैं तो तेरह का बंध करते हैं । अथवा

३) २२/९ अप्रमत्तसंयत होते हैं तो नौ प्रकृति का बंध करते हैं। इसप्रकार बाईस प्रकृतिरूप बन्धस्थान में अल्पतर बन्ध तीन होते हैं। २१ से १७, १३ या ९ का अल्पतर बन्ध नहीं होता क्योंकि दूसरा गुणस्थान गिरने का ही है।

४) १७/१३
५) १७/९ वेदक या क्षायिकसम्यग्दृष्टि असंयत सतरह को बाँधकर देशसंयत होकर तेरह का बन्ध करता है। अथवा अप्रमत्त होकर नौ का बंध करता है। इस तरह सतरह के बन्धस्थान में अल्पतर बन्ध २ होते हैं।

६) १३/९ देशसंयत तेरह को बाँधकर अप्रमत्त होकर नौ का बंध करता है।

७) ९/५ नौ का बन्धक अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणके प्रथम भाग में पाँच को बाँधता है।

८) ५/४ पाँच को बान्धकर अनिवृत्तिकरण के दूसरे भाग में चार को बाँधता है।

९) ४/३ चार को बान्धकर अनिवृत्तिकरण के तीसरे भाग में तीन को बाँधता है।

१०) ३/२ तीन को बान्धकर अनिवृत्तिकरण के चौथे भाग में दो को बाँधता है।

११) २/१ दो को बान्धकर अनिवृत्तिकरण के पाँचवें भाग में एक को बाँधता है

इसप्रकार सब मिलकर अल्पतर बन्ध ग्यारह हुए -

२२	२२	२२	१७	१७	१३	९	५	४	३	२
१७	१३	९	१३	९	९	५	४	३	२	१

अवस्थित बन्ध ३३ = २ अवक्तव्य + २० भुजाकर + ११ अल्पतर

इन बन्धों में जितनी प्रकृतियों का बन्ध कहा है उतनी ही प्रकृतियों का बन्ध द्वितीयादि समयों में भी होता है अत: ये सब मिलकर अवस्थित बन्ध ३३ होते हैं।

सत्तावीससहियसयं पणदालं पंचहत्तरहियसयं ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि विसेसेण ।।४७१।।

अन्वयार्थ - (विसेसेण) विशेषरूप से **(भुजगारप्पदराणि)** भुजाकार, अल्पतर **(य)** और **(अवट्ठिदाणिवि)** अवस्थित भी क्रम से **(सत्तावीसहियसयं)** एक सौ सत्ताईस **(पणदालं)** पैंतालीस और **(पंचहत्तरहियसयं)** एक सौ पिचहत्तर होते हैं।

विशेषार्थ - भंगों की अपेक्षा भुजाकार बंध १२७, अल्पतर बंध ४५, अवक्तव्य बंध ३, अवस्थितबन्ध १७५

भुजाकार के बन्ध -

१) सासादन में $\frac{२१}{२२}$ २४ भंग ४ × ६ = २४ सासादन गुणस्थानवर्ती जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में जाता है। सासादन के २१ बंधस्थान के ४ भंग हैं मिथ्यात्व के २२ बंधस्थान के ६ भंग हैं अत: ४ × ६ = २४ भंग हुए क्योंकि सासादन के २१ प्रकृति के प्रथम भंग का बंध करनेवाला जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में ६ प्रकार से २२ का बन्ध कर सकता है इसीप्रकार शेष तीन भंगों के जीव भी २२ के ६ प्रकारों से बंध कर सकते हैं अत: २१ और २२ प्रकृतिक बंधस्थान के भंगों का परस्पर गुणा करने से दूसरे गुणस्थान की अपेक्षा २४ भंग होते हैं।

२) मिश्र गुणस्थान में - १२ भंग $\frac{१७}{२२}$ १७ के २ भंग, २२ के ६ भंग = २ × ६ = १२

३) असंयतगुणस्थान में २० भंग - $\frac{१७}{२१}$ १७ के २ भंग, २१ के ४ भंग = २ × ४ = ८

[१७/२२] १७ के २ भंग × २२ के ६ भंग = २ × ६ = १२ + ८ उपर्युक्त = २०

देशसंयत के २४ भंग

[१३/१७] १३ के २ भंग, १७ के २ भंग = २ × २ = ४ देशसंयत से असंयतमें

[१३/२१] १३ के २ भंग, २१ के ४ भंग = २ × ४ = ८ देशसंयत से सासादन में

[१३/२२] १३ के २ भंग,२२ के ६ भंग = २ × ६ = १२ देशसंयत से मिथ्यात्व में

भंग कुल = [२४]

प्रमत्तसंयत के २८ भंग

[९/१३] ९ के २ भंग, १३ के २ भंग अत: २ × २ = ४ प्रमत्त से देशसंयत में

[९/१७] ९ के २ भंग, १७ के २ भंग अत: २ × २ = ४ प्रमत्त से असंयत या मिश्र में

[९/२१] ९ के २ भंग, २१ के ४ भंग अत: २ × ४ = ८ प्रमत्त से सासादन में

[९/२२] ९ के २ भंग, २२ के ६ भंग अत: २ × ६ = १२ प्रमत्त से मिथ्यात्व में

भंग कुल = [२८]

अप्रमत्तसंयत के २ भंग -

अप्रमत्त मरकर चौथे में जाता है तो अप्रमत्त का १ भंग × १७ के २ भंग = २

अपूर्वकरण के २ भंग - अप्रमत्तवत्

अनिवृत्तिकरण के १५ भंग -

प्रथम भाग से ८ वे गुणस्थान में जाता है अत: [५/९] पाँच का १×९ का १ भंग १×१ = १

मरकर ४ थे गुणस्थान में जाता है अत: [५/१७] पाँच का १×१७ के २ भंग १×२ = २

द्वितीय भागसे ९ के प्रथम भाग में जाता है अत: [४/५] चार का १×५ का १ भंग १×१ = १

मरकर चौथे मे जाता है तब [४/१७] चार का १×१७ के २ भंग १×२ = २

तृतीय भाग से द्वितीय भाग में जाता है उसके [३/४] तीन का १×४ का १ भंग १×१ = १

मरकर चौथे में जाता है उसके	३/१७	तीन का १×१७ के २ भंग १×२ = २
चौथे भाग से तृतीय भाग में जाता है तब	२/३	दो का १×३ का १ भंग १×१ = १
मरकर चौथे में जाता है उसके	२/१७	दो का १×१७ के २ भंग १×२ = २
पाँचवें भाग से चौथे भाग में जाता है	१/२	एक का १×२ का १ भंग १×१ = १
मरकर चौथे में जाता है उसके	१/१७	एक का १×१७ के २ भंग १×२ = २
		१५

णभ चउवीसं बारस वीसं चउरट्ठवीस दो द्दो य ।

थूले पणगादीणं तिय तिय मिच्छादिभुजगारा ।।४७२।।

अन्वयार्थ - (मिच्छादिभुजगारा) मिथ्यादृष्टि आदि में भुजाकार भंग क्रम से **(णभ)** शून्य, **(चउवीसं)** चौबीस **(बारस)** बारह **(वीसं)** बीस **(चउरट्ठवीस)** चौबीस, अट्ठाईस **(दोद्दो)** दो-दो **(थूले पणगादीणं)** अनिवृत्तिकरण में पाँच आदि के **(तियतिय)** तीन-तीन होते हैं।

भुजाकार के १२७ भेदों का कोष्ठक

	सा.	मिश्र	असंयत		देशसंयत			प्रमत्तसंयत				अप्र	अपू.	अनिवृत्तिकरण									
स्था	२१	१७	१७	१७	१३	१३	१३	९	९	९	९	९	९	५	५	४	४	३	३	२	२	१	१
भंग	४	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
स्था	२२	२२	२१	२२	१७	२१	२२	१३	१७	२१	२२	१७	१७	९	१७	५	१७	४	१७	३	१७	२	१७
भंग	६	६	४	६	२	४	६	२	२	४	६	२	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२
			८	१२	४	८	१२	४	४	८	१२			१	२	१	२	१	२	१	२	१	२
कुल	२४	१२	२०		२४			२८				२	२	३		३		३		३		३=१५	
सर्वभंग	-	१२७																					

अब अल्पतर बंध कहते हैं -

अप्पदरा पुण तीसं णभ णभ छदोण्णि णभ एक्कं ।

थूले पणगादीणं एक्केक्कं अंतिमे सुण्णं ।।४७३।।

अन्वयार्थ - मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानों में **(अप्पदरा)** अल्पतर बन्ध क्रम से **(तीसं)** तीस **(णभ)** शून्य **(णभ)** शून्य **(छ)** छह **(दोण्णि)** दो-दो **(णभ)** शून्य **(एक्कं)** एक **(थूले)** अनिवृत्तिकरण में **(पणगादीणं)** पाँच आदि स्थानों के **(एक्केक्कं)** एक-एक **(अंतिमे)** अंतिम स्थान में **(सुण्णं)** शून्य है। इसप्रकार अल्पतर बंध पैंतालीस हैं।

अल्पतरबंध ४५ -

	मिथ्यात्व			असंयत		देशसंयत	प्रमत्त	अपूर्व	अनिवृत्तिकरण				सर्वभंग
स्थान भंग	२२ ६	२२ ६	२२ ६	१७ २	१७ २	१३ २	९ २	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	
स्थान भंग	१७ २	१३ २	९ १	१३ २	९ १	९ १	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	१ १	
भंगोंका गुणकार	१२	१२	६	४	२	२	२	१	१	१	१	१	
कुल	३०				६	२	२	१	४				४५

विशेषार्थ - मिथ्यात्वगुणस्थान के अल्पतर बन्ध ३० का स्पष्टीकरण -

मिथ्यात्वगुणस्थान के २२ प्र. के ६ भंग हैं वह मिश्र या असंयतगुणस्थान में जाता है उसके १७ प्रकृति के २ भंग होते हैं अत: — २२/१७ — ६ × २ = १२

वही जीव पाँचवे गुणस्थान में जाता है उसके १३ प्र. के २ भंग है अत: — २२/१३ — ६ × २ = १२

वही जीव सातवे गुणस्थान में जाता है उसके ९ प्र. का १ भंग है अत: — २२/९ — ६ × १ = ६

कुल ३० भंग

सासादन में से मिथ्यात्व गुणस्थान में ही जाता है इसलिए उसके अल्पतर बन्ध नहीं होते। केवल भुजाकार बन्ध होते हैं।

तीसरे गुणस्थान से चौथे गुणस्थान में जाता है वहाँ १७ का ही बन्ध करता है अत: मिश्र में अल्पतर बन्ध नहीं हैं।

२) असंयतगुणस्थान के अल्पतर बन्ध ६ -

चौथे में १७ के २ भंग वह पाँचवें में जाता है उसके १३ के २ भंग अत: २×२ = ४

चौथे में १७ के २ भंग वह सातवें में जाता है उसके ९ का १ भंग अत: २×१ = २

कुल ६ भंग

३) देशसंयतगुणस्थान के अल्पतर बन्ध २ -

पाँचवें के १३ प्र.के २ भंग वह सातवे में जाता है उसका १ भंग अत: २×१ = २

४) प्रमत्तसंयतगुणस्थान के अल्पतर बन्ध २ -

छठे के ९ प्र. के २ भंग हैं वह सातवें में जाता है उसके ९ का १ भंग अत: २×१ = २,

छठे और सातवे में ९ प्रकृति का ही बन्ध होता है फिर भी प्रमत्त में अरति और शोक की बन्धव्युच्छित्ति हुई है उसकी अपेक्षा प्रकृतिबन्ध अल्पतर होने से अल्पतर बंध लिया है।

सातवें से आठवें में जाता है किन्तु दोनों में समान ९ प्रकृति का बन्ध होता है अत: अल्पतर बन्ध नहीं है।

५) अपूर्वकरणगुणस्थान के अल्पतर बन्ध १ -

आठवें का ९ प्र.का १ भंग, वह नववे में जाता है उसके ५ प्र. का १ भंग अत: १×१ = १

४) अनिवृत्तिकरणगुणस्थान के अल्पतर बन्ध ४ -

नववें के प्र.भा. से द्वि. भाग में जाता है दोनों का (५और ४ का) १ ही भंग अत:१×१=१

नववें के दूसरे भाग से तीसरे में जाता है वहाँ ४ और ३ का १ भंग है अत: १×१ = १

नववें के तीसरे भाग से चौथे में जाता है वहाँ ३ और २ का १ भंग है अत: १×१ = १

नववें के चौथे भाग से पाँचवे में जाता है वहाँ २ और १ का १ भंग है अत: १×१ = १

कुल भंग ४

भेदेण अवत्तव्वा ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे ।

दो चेव होंति एत्थवि तिण्णेव अवट्ठिदा भंगा ।।४७४।।

अन्वयार्थ - (भेदेण) विशेष रूप से **(अवत्तव्वा)** अवक्तव्य बंध **(ओदरमाणम्मि)** उपशमश्रेणि से उतरकर अनिवृत्तिकरण में **(एक्कयं)** एक **(च)** और **(मरणे)** मरण करने पर **(दो एव)** दो ही **(होंति)** होते हैं **(एत्थवि)** यहींपर **(अवट्ठिदा भंगा)** अवस्थित भंग **(तिण्णेव)** तीन ही होते हैं।

विशेषार्थ - अवक्तव्यबंध के ३ भंग -

दसवें में मोहनीय का बन्ध नहीं है वह गिरकर नववें में एक संज्वलन लोभ का बंध करता है एक प्रकृतिक बन्धस्थान का भंग एक है अतः वह एक भंग अथवा दसवें गुणस्थान से बद्धायु जीव उपशम श्रेणी चढ़ते या उतरते समय मरण को प्राप्त होता है तो चौथे गुणस्थान में १७ प्रकृति का बंध करता है उसके भंग २ इसप्रकार अवक्तव्य बन्ध के भंग १+२ = ३ होते हैं।

अवस्थित बन्ध के भंग १७५ -

भुजाकार, अल्पतर और अवक्तव्य बन्ध के भंगों का जोड़ करने से अवस्थित बन्ध के भंगों की संख्या आती है १२७+४५+३ = १७५ अवस्थितबन्ध हैं।

गुणस्थान	बन्धस्थान प्र. संख्या	भंग	भुजाकार, सामान्य	विशेष	अल्पतर सामान्य	विशेष	अवक्तव्य सा.	विशेष
मिथ्यात्व	२२	६	×	×	३	३०		
सासादन	२१	४	१	२४	०	०		
मिश्र	१७	२	१ पुनः	१२	०	०		
असंयत	१७	२	२	२०	२	६		
देशसंयत	१३	२	३	२४	१	२		
प्रमत्तसंयत	९	२	४	२८	०	२		
अप्रमत्तसंयत	९	१	पुनः१	२	०	०		
अपूर्वकरण	९	१	पुनः१	२	१	१		
अनिवृत्तिकरण								
प्रथम भाग	५	१	२	३	१	१		
द्वितीय भाग	४	१	२	३	१	१		
तृतीय भाग	३	१	२	३	१	१		
चतुर्थ भाग	२	१	२	३	१	१		
पंचम भाग	१	१	२	३	०	०		
			२०	१२७	११	४५		
सूक्ष्मसांपराय							२	३

अब मोहनीय के उदयस्थान कहते हैं -

दस णव अट्ठ य सत्त य छप्पण चत्तारि दोण्णि एक्कं च ।
उदयट्ठाणा मोहे णव चेव य होंति णियमेण ।।४७५।।

अन्वयार्थ - **(दस)** दस **(णव)** नौ **(अट्ठ य)** आठ **(सत्त य)** सात **(छप्पण)** छह, पाँच **(चत्तारि)** चार **(दोण्णि)** दो **(च)** और **(एक्कं)** एक प्रकृतिरूप **(णियमेण)** नियम से **(मोहे)** मोहनीय के **(णव चेव)** नौ ही **(उदयट्ठाणा)** उदयस्थान **(होंति)** होते हैं।

मिच्छं मिस्सं सगुणे वेदगसम्मेव होदि सम्मत्तं ।
एक्का कसायजादी वेददुजुगलाणमेक्कं च ।।४७६।।

अन्वयार्थ - **(मिच्छं)** मिथ्यात्व और **(मिस्सं)** मिश्र का उदय **(सगुणे)** अपने अपने गुणस्थान में ही होता है। **(सम्मत्तं)** सम्यक्त्व प्रकृति का उदय **(वेदगसम्मेव)** वेदक सम्यग्दृष्टि के ही होता है। **(एक्का)** चार जाति में से एक **(कसायजादी)** कषायजाति **(च)** और **(वेददुजुगलाणमेक्कं)** तीन वेदों में से एक वेद तथा हास्य युगल और रतियुगल में से एक युगल का उदय होता है।

भयसहियं च जुगुंछासहियं दोहिवि जुदं च ठाणाणि ।
मिच्छादि अप्पुव्वंते चत्तारि हवंति णियमेण ।।४७७।।

अन्वयार्थ -(मिच्छादि अपुव्वंते) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यन्त **(भयसहियं)** भयसहित **(जुगुंछासहियं)** जुगुप्सासहित **(दोहिवि जुदं)** दोनों से सहित **(च)** दोनों से रहित इसप्रकार **(णियमेण)** नियम से **(चत्तारि)** चार **(ठाणाणि)** स्थान अर्थात् कूट **(हवंति)** होते हैं।

अणसंजोजिदसम्मे मिच्छं पत्ते ण आवलित्ति अणं ।
उवसमखयिए सम्मं ण हि तत्थवि चारि ठाणाणि ।।४७८।।

अन्वयार्थ -(अणसंजोजिदसम्मे) अनन्तानुबंधी का विसंयोजन करनेवाला सम्यग्दृष्टि **(मिच्छं पत्ते)** मिथ्यात्व को प्राप्त होने पर **(आवलित्ति)** आवलिकालपर्यन्त उसके **(अणं)** अनन्तानुबंधी का **(ण)** उदय नहीं होता **(उवसमखयिए)** उपशमसम्यक्त्व

और क्षायिक सम्यक्त्व में **(सम्मं ण)** सम्यक्त्व प्रकृति का उदय नहीं है। **(हि)** वास्तव में **(तत्थवि)** वहाँ पर भी **(चारि)** चार **(ठाणाणि)** स्थान होते हैं।

विशेषार्थ - मोहनीय के उदयस्थान ९ हैं -

१०	९	८	७	६	५	४	२	१

उदय के नियम -

१) मिथ्यात्व का मिथ्यात्वगुणस्थान में ही और सम्यग्मिथ्यात्वका मिश्र गुणस्थान में ही उदय होता है।

२) सम्यक्त्वप्रकृति का वेदकसम्यक्त्व में ही ४ से ७ गुणस्थान तक उदय रहता है।

३) अनन्तानुबन्ध्यादि क्रोध, मान, माया लोभरूप चार कषायजातियों में से किसी एक जाति का एक समय में उदय रहता है।

४) तीन वेदों में से एक वेद का और हास्य-रति, शोक-अरति इन दो युगलों में से किसी एक युगल का एक समय में उदय होता है।

५) एक जीव के एक काल में भय और जुगुप्सा में से किसी एक का उदय होता है। अथवा दोनों का उदय रहता है अथवा दोनोंका उदय नहीं रहता। इस अपेक्षा से चार कूट होते हैं।

गुणस्थानों में मोहनीय के उदयस्थानों के कूट

गुणस्थान	भयजुगुप्सासहित कूट		भयसहित	जुगुप्सा सहित	दोनों से रहित
मिथ्यात्व (अनंतानुबंधी सहित)	२ २।२ १।१।१ ४।४।४।४ १	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक, स्त्रीवेद,पुं वेद,नपुं.वेद अनंतानुबंधादि क्रो.४ मान४,माया४,लोभ ४, मिथ्यात्व	१ भय २।२ १।१।१ ४।४।४।४ १	१ जुगुप्सा २।२ १।१।१ ४।४।४।४ १	० २।२ १।१।१ ४।४।४।४ १
कुल प्रकृति	१०		९	९	८
मिथ्यात्व (अनंतानुबंधी रहित)	२ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक स्त्रीवेद, पुंवेद,नपुं.वेद अप्रत्याख्यानादि क्रोध, मान, माया, लोभ मिथ्यात्व	१ भय २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	१ जुगुप्सा २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	० २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १
कुल प्रकृति	९		८	८	७

गुणस्थान	भयजुगुप्सासहित कूट		भयसहित	जुगुप्सा सहित	दोनों से रहित
२ सासादन	२ २।२ १।१।१ ४।४।४।४	भयजुगुप्सा, हास्यद्विक,अरतिद्विक, स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद अनंतानुबंध्यादि क्रो. मान, माया, लोभ,	१ २।२ १।१।१ ४।४।४।४	१ २।२ १।१।१ ४।४।४।४	० २।२ १।१।१ ४।४।४।४
कुल प्रकृति	९		८	८	७
३ मिश्र	२ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	भयजुगुप्सा, हास्यद्विक, अरतिद्विक, स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद अप्रत्याख्यानादि३क्रोध, ३मान,३माया,३लोभ, सम्यग्मिथ्यात्व	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	० २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १
कुल प्रकृति	९		८	८	७
४ असंयत वेदक सम्यक्त्व सहित	२ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	भयजुगुप्सा, हास्यद्विक, अरतिद्विक, स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद अप्रत्याख्यानादि३क्रोध, ३मान,३माया,३लोभ, सम्यक्त्वप्रकृति	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १	० २।२ १।१।१ ३।३।३।३ १
कुल प्रकृति	९		८	८	७
४ असंयत वेदकरहित क्षायिक औप. सम्यक्त्व सहित	२ २।२ १।१।१ ३।३।३।३	भयजुगुप्सा, हास्यद्विक,अरतिद्विक, स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद अप्रत्याख्यानादि ३क्रो. ३मान, ३माया,३लोभ,	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३	१ २।२ १।१।१ ३।३।३।३	० २।२ १।१।१ ३।३।३।३
कुल प्रकृति	८		७	७	६
५ देशसंयत वेदकसम्यक्त्व सहित	२ २।२ १।१।१ २।२।२।२ १	भयजुगुप्सा, हास्यद्विक,अरतिद्विक, स्त्रीवेद, पुंवेद,नपुं.वेद प्रत्याख्यानादि २क्रोध, २मान,२माया,२लोभ, सम्यक्त्व	१ २।२ १।१।१ २।२।२।२ १	१ २।२ १।१।१ २।२।२।२ १	० २।२ १।१।१ २।२।२।२ १
कुल प्रकृति	८		७	७	६

गुणस्थान	भयजुगुप्सासहित कूट		भयसहित	जुगुप्सा सहित	दोनों से रहित
५ देशसंयत वेदक सम्यक्त्व रहित	२ २।२ १।१।१ २।२।२।२	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक, स्त्रीवेद, पुंवेद,नपुं.वेद प्रत्याख्यानादि २ क्रो. २ मान,२माया,२लोभ,	१ २।२ १।१।१ २।२।२।२	१ २।२ १।१।१ २।२।२।२	० २।२ १।१।१ २।२।२।२
कुल प्रकृति	७		६	६	५
६ प्रमत्त ७ अप्रमत्त वेदक सहित	२ २।२ १।१।१ १।१।१।१ १	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद संज्वलन क्रोध,मान, माया, लोभ, सम्यक्त्वप्रकृति	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१ १	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१ १	० २।२ १।१।१ १।१।१।१ १
कुल प्रकृति	७		६	६	५
६ प्रमत्त ७ अप्रमत्त वेदक रहित	२ २।२ १।१।१ १।१।१।१	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक स्त्रीवेद, पुंवेद,नपुं.वेद संज्वलन क्रोध,मान, माया, लोभ,	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१	० २।२ १।१।१ १।१।१।१
कुल प्रकृति	६		५	५	४
८ अपूर्व-करण	२ २।२ १।१।१ १।१।१।१	भयजुगुप्सा हास्यद्विक,अरतिद्विक स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद संज्वलन क्रोध,मान, माया, लोभ,	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१	१ २।२ १।१।१ १।१।१।१	० २।२ १।१।१ १।१।१।१
कुल प्रकृति	६		५	५	४

९ अनिवृत्ति-करण	**सवेदभाग** १।१।१ स्त्रीवेद,पुंवेद,नपुं.वेद १।१।१।१ संज्वलन क्रोध,मान माया, लोभ	**अवेदभाग** × १।१।१।१ संज्वलन क्रोध,मान, माया,लोभ	**क्रोधरहित** × १।१।१ संज्वलन मान,माया, लोभ
कुल प्रकृति	२	१	१
	मानरहित १।१ संज्वलन माया, लोभ	**मायारहित** १ संज्वलन बा.लोभ	**१० सूक्ष्मसांपराय** १ संज्वलन सूक्ष्मलोभ
कुल प्रकृति	१	१	१

१) अनंतानुबंधी की विसंयोजना किया हुआ वेदकसम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वगुणस्थान में आता है तब उसे एक आवलीपर्यंत अनन्तानुबन्धीकषाय का उदय नहीं रहता अत: उसे उदययोग्य १ प्रकृति कम हुई अत: उसके स्वतन्त्र चार कूट हुये।

२) क्षायिक और औपशमिक सम्यग्दृष्टि को सम्यक्त्व प्रकृति का उदय नहीं होता अत: ४, ५, ६,७ गुणस्थानों में क्षायिक औपशमिक सम्यग्दृष्टि के चार कूट हुये। वेदकसम्यग्दृष्टि को सम्यक्त्वप्रकृति का उदय रहता है उसके चार कूट होते हैं।

पुव्विल्लेसुवि मिलिदे अड चउ चत्तारि चदुसु अट्ठेव ।
चत्तारि दोण्णि एक्कं ठाणा मिच्छादिसुहुमंते ।।४७९।।

अन्वयार्थ -(मिच्छादिसुहुमंते) मिथ्यादृष्टि से लेकर सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान पर्यन्त **(पुव्विल्लेसुवि)** पूर्व कूटों में **(मिलिदे)** इन कूटों को मिलानेपर **(अड)** आठ **(चउ)** चार **(चत्तारि)** चार **(चदुसु)** असंयतादि चार में **(अट्ठेव)** आठ-आठ **(चत्तारि)** चार **(दोण्णि)** दो **(एक्कं)** एक **(ठाणा)** स्थान अर्थात् कूट होते हैं।

आगे अपुनरुक्तस्थानों को कहते हैं-

दस णव णवादिचउतिय तिट्ठाण णवट्ठ सग सगादिचऊ ।
ठाणा छादितियं च य चदुवीसगदा अपुव्वोत्ति ।।४८०।।

अन्वयार्थ - (अपुव्वोत्ति) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर अपूर्वकरण गुणस्थानपर्यन्त क्रम से **(दसणवणवादि चउतियतिट्ठाण)** मिथ्यात्व में दसादि चार, सासादन में नौ आदि तीन, मिश्र में नौ आदि तीन तथा **(णवट्ठसगसगादिचऊ)** असंयत में नौ आदि चार ,देशसंयत में आठ आदि चार , प्रमत्त में सात आदि चार, अप्रमत्त में सात आदि चार, **(छादितियं)** अपूर्वकरण में छह आदि तीन **(ठाणा)** स्थान हैं **(च)** और **(चदुवीसगदा)** सभी स्थान चौबीस-चौबीस भंगों से संयुक्त हैं।

गुणस्थानों की अपेक्षा अपुनरुक्त उदयस्थान

गुणस्थान	सर्व उदयस्थान	कुलस्थान	अपुनरुक्त स्था. सं.	अपु. प्रकृति की संख्या
१) मिथ्यात्व	१०,९,८,८।९-८-८-७	८	४	१०,९,८,७
२) सासादन	९-८-८-७। ०	४	३	९,८,७
३) मिश्र	९-८-८-७। ०	४	३	९,८,७
४) असंयत	९-८-८-७। ८-७-७-६	८	४	९,८,७,६
५) देशसंयत	८-७-७-६। ७-६-६-५	८	४	८,७,६,५
६) प्रमत्तसंयत	७-६-६-५। ६-५-५-४	८	४	७,६,५,४
७) अप्रमत्त	७-६-६-५। ६-५-५-४	८	४	७,६,५,४
८) अपूर्वकरण	६-५-५-४। ०	४	३	६,५,४
९) अनिवृत्ति.	२-१	२	२	२,१
१०) सूक्ष्मसां.	१	१	१	१

एक्क य छक्केयारं एयारेयारसेव णव तिण्णि ।
एदे चदुवीसगदा चदुवीसेयार दुगठाणे ।।४८१।।

अन्वयार्थ - मिथ्यात्वादि सर्व गुणस्थानों में दस प्रकृति स्थान का **(एक्क य)** एक, ९ प्रकृति स्थान के **(छक्के यारं)** छह, ८ प्रकृति स्थान के ग्यारह, **(एयारेयारसेव)** सात प्रकृतिस्थान के ग्यारह, छह प्रकृति स्थान के ग्यारह **(णव)** पाँच प्रकृतिस्थान के नौ, **(तिण्णि)** चार प्रकृतिस्थान के तीन प्रकार हैं। **(एदे)** ये सर्वस्थान **(चउवीसगदा)** चौबीस-चौबीस भंगों से सहित हैं। **(दुगठाणे)** दो प्रकृतिरूप और एक प्रकृतिरूप स्थान के क्रम से **(चदुवीसेयार)** चौबीस और ग्यारह भंग हैं।

गुणस्थान	**१० के प्रकार**	**९ के प्रकार**	**८ के प्रकार**	**७ के प्रकार**	**६ के प्रकार**	**५ के प्रकार**	**४ के प्रकार**	**२ के प्रकार**	**१ के प्रकार**
मिथ्यात्व	१	३	३	१	×	×	×		
सासादन	×	१	२	१	×	×	×		
मिश्र	×	१	२	१	×	×	×		
असंयत	×	१	३	३	१	×	×		
देशसंयत	×	×	१	३	३	१	×		
प्रमत्तसंयत	×	×	×	१	३	३	१		
अप्रमत्तसं.	×	×	×	१	३	३	१		
अपूर्वकरण	×	×	×	×	१	२	१		
अनिवृत्ति.	×	×	×	×	×	×	×	१	१
सूक्ष्म सा.	×	×	×	×	×	×	×	१	×
कुल प्र.	१	६	११	११	११	९	३	२	१

विशेषार्थ - मिथ्यादृष्टि आदि पाँच गुणस्थानों में अपुनरुक्त स्थान कहे हैं उनमें से किसीकी संख्या समान होते हुए भी प्रकृति भेद की अपेक्षा अपुनरुक्तपना जानना। जैसे नौ प्रकृतिरूप स्थान १, २, ३, ४ गुणस्थानों में है किन्तु उनमें प्रकृतियाँ अन्य अन्य हैं। मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में मिथ्यात्व सहित है। सासादन में मिथ्यात्व नहीं है। मिश्र में सम्यक्मिथ्यात्व है। असंयत में सम्यक्त्वप्रकृति है। अतः प्रकृतिभेद होने से अपुनरुक्तता है।

उदयट्ठाणं दोण्हं पणबंधे होदि दोण्हमेक्कस्स ।
चदुविहबंधट्ठाणे सेसेसेयं हवे ठाणं ।।४८२।।

अन्वयार्थ - (पणबंधे) पाँच प्रकृतिक बंधस्थान में **(दोण्हं)** दो प्रकृतिक **(उदयट्ठाणं)** उदयस्थान **(होदि)** है **(चदुविहबंधट्ठाणे)** चार प्रकृतिक बंधस्थान में **(एकस्स)** एक भाग में **(दोण्हं)** दो प्रकृतिक उदयस्थान है **(सेसेसेयं ठाणं)** शेष भागों में एक प्रकृतिक उदयस्थान **(हवे)** है।

विशेषार्थ - उदयस्थान के २४ भंग -

मिथ्यात्व गुणस्थान से अपूर्वकरण गुणस्थानपर्यंत जितने उदयस्थान कहे हैं उन प्रत्येक उदयस्थान के २४ (चौबीस) भंग होते हैं अर्थात् प्रत्येक उदयस्थान इतने प्रकार का हो सकता है क्योंकि प्रत्येक उदयस्थान में चार कषाय है। इन सब का एक समय में उदय नहीं होता। एक समय में एक कषाय का उदय होता है। उसी प्रकार तीनों वेदो में से एक समय में एक वेद का और हास्यद्विक और अरतिद्विक में से किसी एक द्विक का उदय रहता है। भिन्न भिन्न समयों में क्रम से सब का उदय होता है अत: ४ कषाय × ३ वेद × २ हा.अ. द्विक = २४ भंग होते हैं।

अणियट्टिकरणपढमा संढित्थीणं च सरिसउदयद्धा ।
तत्तो मुहुत्तअंते कमसो पुरिसादिउदयद्धा ।।४८३।।

अन्वयार्थ - (अणियट्टिकरणपढमा) अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के प्रथम भाग में **(संढित्थीणं)** नपुंसकवेद और स्त्रीवेद के **(उदयद्धा)** उदय का काल **(सरिस)** सदृश है **(तत्तो)** उसके पश्चात् **(पुरिसादिउदयद्धा)** पुरुषवेद और संज्वलनक्रोधादिकों का उदयकाल **(कमसो)** क्रम से **(मुहुत्तअंते)** अन्तर्मुहूर्त-अन्तर्मुहूर्त जानना।

विशेषार्थ - नववें गुणस्थान के प्रथम भाग के प्रथम समय से लगाकर नपुंसकवेद और स्त्रीवेद के उदय का काल समान है। उससे पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ के उदय का काल यथासम्भव अन्तर्मुहूर्त-अन्तर्मुहूर्त अधिक है।

आवली→ २ संख्यात → १ संख्यात आवली → अन्तर्मुहूर्त २१

सब में क्रम से एक एक अन्तर्मुहूर्त अधिक दिखाया है।

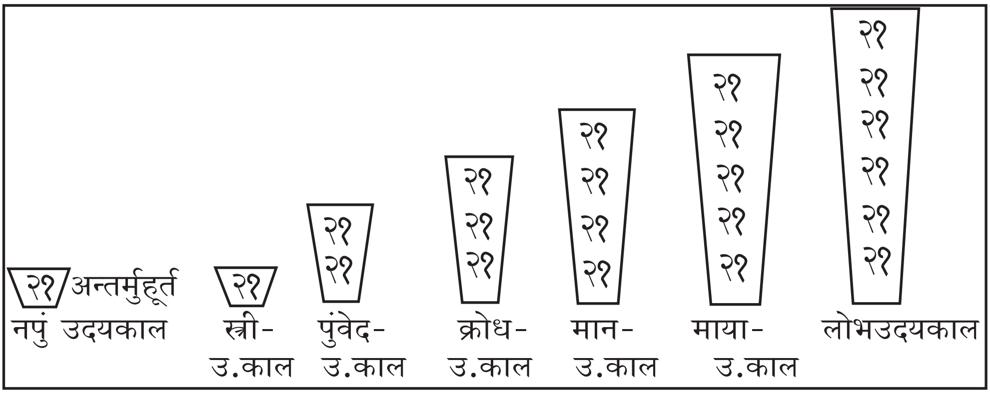

पुरिसोदयेण चडिदे बंधुदयाणं च जुगवदुच्छित्ती।

सेसोदयेण चडिदे उदयदुचरिमम्मि पुरिसबंधछिदी।।४८४।।

अन्वयार्थ - **(पुरिसोदयेण चडिदे)** जो पुरुषवेद के उदय के साथ श्रेणि चढ़ते हैं उनके पुरुषवेद के **(बंधुदयाणं)** बंध और उदय की **(जुगवदुच्छित्ती)** एकसाथ व्युच्छित्ति होती है। अथवा **(च)** च शब्द से बन्ध की व्युच्छित्ति उदय के द्विचरम समय में होती है। **(सेसोदयेण)** शेष वेद के उदय से जो श्रेणि **(चडिदे)** चढ़ते हैं उनके उन वेदों के **(उदयदुचरिमम्मि)** उदय के द्विचरमसमय में **(पुरिसबंधछिदी)**पुरुषवेद की बन्धव्युच्छित्ति होती है।

विशेषार्थ - जो पुरुषवेद के उदय से श्रेणी चढ़ते है उनके पुरुषवेद की बन्धव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति एक साथ होती है।

जो स्त्रीवेद और नपुंसकवेद के उदय के साथ श्रेणी चढ़ते है उनके उन वेदों के उदयव्युच्छित्ति के द्विचरमसमय में पुरुषवेद की बन्धव्युच्छित्ति होती है।

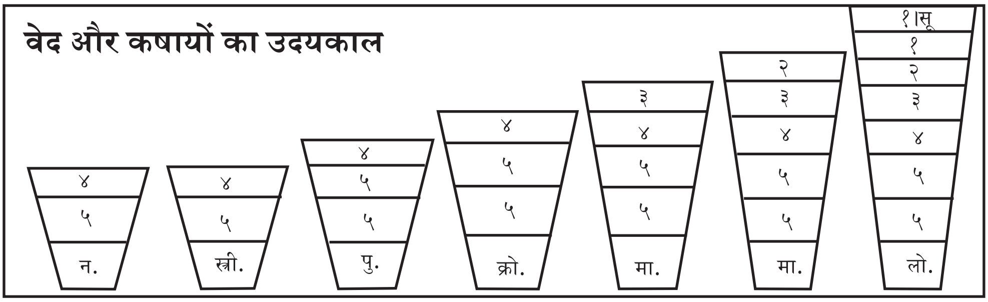

पीछे दिये कोष्टक में किस वेद का और कषाय का कितने काल उदय होता है वह दिखाया है। नपुंसक और स्त्रीवेद के उदयकाल के द्विचरम समय में पुरुषवेद की बंधव्युच्छित्ति होती है इसलिए नपुंसक और स्त्रीवेद के उदय में पाँच और अंतिमसमय में चार प्रकृतियों का बंध करता है। पुरुषवेद के उदय में केवल पाँच का बन्ध करता है फिर भी उसका उदयकाल अधिक है। क्रोध का उदय चार प्र. के बन्धतक होता है। यदि मान के उदय में श्रेणी चढ़ता है तो उसके उदयकाल में पाँच, चार और तीन का बन्ध करता है। माया के उदय से श्रेणी चढ़े हुए जीव के माया उदयकाल में ५,४,३,२ का बन्धक होता है। लोभ के उदय में ५,४,३,२,१ का बन्धक होता है और दसवें के अन्त तक उसके लोभकषाय का उदय रहता है।

पणबंधगम्मि बारस भंगा दो चेव उदयपयडीओ ।
दो उदये चदुबंधे बारेव हवंति भंगा हु ।।४८५।।

अन्वयार्थ - अनिवृत्तिकरण में **(पणबंधगम्मि)** पाँच प्रकृतियों के बंधक के **(दो-चेव उदयपयडीओ)** दो ही उदयप्रकृतियाँ हैं **(च)** और **(बारस भंगा)** चार कषाय और तीन वेदों के बारह भंग हैं। इसी प्रकार **(चदुबंधे हु)** चार के बन्धस्थान में भी **(दो उदये)** दो का उदय और **(बारेव)** बारह ही **(भंगा)** भंग **(हवंति)** हैं।

कोहस्स य माणस्स य मायालोहाणियट्टिभागम्मि ।
चदुतिदुगेक्कं भंगा सुहुमे एक्को हवे भंगो ।।४८६।।

अन्वयार्थ - (कोहस्स य) क्रोध के **(माणस्स य)** मान के **(मायालोहाणियट्टिभागम्मि)** माया और लोभ के उदयरूप अनिवृत्तिकरणगुणस्थान के चार भागों में क्रम से **(चदुतिदुगेक्कं)** चार, तीन, दो और एक **(भंगा)** भंग हैं। **(सुहुमे)** सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान में **(एक्को भंगो)** एक भंग **(हवे)** है।

विशेषार्थ - २ प्रकृति के २४ भंग

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में दो प्रकृति रूप स्थान के २४ भंग होते हैं - अनिवृत्तिकरण में ५ प्रकृति के बन्धस्थान में और चार प्रकृति के बन्धस्थान में कुछ काल तक वेदों का उदय रहता है। इन दोनों भागों में तीनो वेदों और चार कषायों में से एक एक का उदय होने से दो प्रकृति रूप उदयस्थान होता है। चार कषाय और तीन वेद के गुणा

करने से बारह भंग हुए। पाँच प्रकृतिक बंधस्थान और चार प्रकृतिक बंधस्थान में बारह-बारह भंग होने से दोनों भागों में मिलकर चौबीस भंग हुए।

१ प्रकृति के ११ भंगों का स्पष्टीकरण -

नववें गुणस्थान के ४ प्रकृतिक बन्धरूप दूसरे भाग के अन्त में वेद का उदय नहीं होता केवल ४ संज्वलन में से किसी एक का उदय होता है अत: उसके भंग ४

नववें गुणस्थान के तीसरे भाग में ३ संज्वलन में से किसी एक का उदय होता है अत: भंग ३

नववें गुणस्थान के चौथे भाग में २ संज्वलन में से किसी एक का उदय होता है अत: भंग २

नववें गुणस्थान के पांचवे भाग में १ संज्वलन का ही उदय होता है अत: भंग १

दसवें गुणस्थान में एक सूक्ष्मलोभ का उदय होता है अत: उसके भंग १

११

बारससयतेसीदी ठाणवियप्पेहिं मोहिदा जीवा ।
पणसीदिसदसगेहिं पयडिवियप्पेहिं ओघम्मि ।।४८७।।

अन्वयार्थ -(ओघम्मि) गुणस्थानों में मोहनीय कर्म के **(बारससयतेसीदी-ठाणवियप्पेहिं)** बारह सौ तिरासी उदयस्थानों के भेदों से तथा **(पणसीदिसदसगेहिं)** पिचासी सौ सात **(पयडिवियप्पेहिं)** प्रकृतिभेदों से **(जीवा)** जीव **(मोहिदा)** मोहित हैं।

उदयस्थान	१०	९	८	७	६	५	४	२	१
प्रकार	× १	× ६	× ११	× ११	× ११	× ९	× ३	× १	× १
प्रकृतिसंख्या	१०	५४	८८	७७	६६	४५	१२	२	१

प्रकार जोड ×भंग =कुलभंग
५३×२४ भंग = १२७२
१ प्रकृति के + ११
१२८३
= ३५४×२४ भंग = ८४९६
१ प्रकृति के ११ भंग + ११
सर्व प्रकृतियों के कुल भंग ८५०७

आगे अपुनरुक्तस्थानों की और उनमें पायी जानेवाली प्रकृतियों की संख्या कहते हैं-

एक्क य छक्केयारं दस सग चदुरेक्कयं अपुणरुत्ता ।
एदे चदुवीसगदा बारदुगे पंच एक्कम्मि ।।४८८।।

अन्वयार्थ - दश आदि प्रकृतिस्थान के क्रम से **(एक्क)** एक **(छक्केयारं)** छह, ग्यारह **(दससगचदुरेक्कयं)** दस, सात, चार और एक स्थान **(अपुणरुत्ता)** अपुनरुक्त हैं। **(एदे)** ये ४० स्थान **(चदुवीसगदा)** प्रत्येक २४-२४ भंगों से सहित हैं। **(दुगे)** दो प्रकृतिरूप स्थान के **(बार)** बारह भंग **(एक्कम्मि)** एक प्रकृतिरूप स्थान में **(पंच)** पाँच भंग हैं।

णवसयसत्तत्तरिहि ठाणवियप्पेहि मोहिदा जीवा ।

इगिदालूणत्तरिसय पयडिवियप्पेहि णायव्वा ।।४८९।।

अन्वयार्थ - इस प्रकार **(णवसयसत्तत्तरिहिं)** नौ सो सत्तहत्तर **(ठाणवियप्पे हिं)** स्थान विकल्पों से और **(इगिदालूणत्तरिसयपयडिवियप्पेहिं)** उनहत्तर सौ इकतालीस प्रकृतिविकल्पों से **(जीवा)** संसारी जीव **(मोहिदा)** मोहित हैं ऐसा **(णादव्वा)** जानना।

अपुनरुक्त स्थानों की संख्या और उनकी प्रकृतियाँ

उदयस्थान	१०	९	८	७	६	५	४
प्रकार	१	६	११	१०	७	४	१
प्रकृतिसंख्या	१०	५४	८८	७०	४२	२०	४
भंगसंख्या	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

प्रकार ४०×२४ भंग = ९६०
+१७
९७७

प्रकृति२८८ × भंग२४ = ६९१२
२ प्रकृति के + २४
१ प्रकृति के + ५
अपुनरुक्त भंग ६९४१

२ प्रकृति के १२ पुनरुक्त भंग छोड़े १ प्रकृति के छह पुनरुक्त छोड़े शेष १२ + ५ = १७

अपुनरुक्त स्थान व प्रकृति की अपेक्षा भंग

उदय स्थान	सर्व प्र. संख्या	अपुनरुक्त प्र.संख्या	पुनरुक्त प्रकारों का विवरण
१०	१	१	-
९	६	६	-
८	११	११	-
७	११	१०	१ वेदकसम्यक्त्वसहित प्रमत्त अप्रमत्त के ७ प्रकृति के दो स्थान समान होने से एक कम हुआ।

उदय स्थान	सर्व प्र. संख्या	अपुनरुक्त प्र.संख्या	पुनरुक्त प्रकारों का विवरण	
६	११	७	४	वेदकसहित ६,७ वें गुणस्थान में ६-६ प्रकृति के स्थान समान हैं अत: २ पुनरुक्त कम हुए। वेदकरहित ६,७,८ वें गुणस्थान में ६ प्रकृतिक स्थान समान है अत: ३ में से २ पुनरुक्त हुए। २+२=४
५	९	४	५	वेदकसहित ६,७ वें गुणस्थान में ५ प्रकृति के दो स्थान समान हैं अत: एक पुनरुक्त हुआ। वेदकरहित ६,७,८ वें गुणस्थान में ५-५ प्रकृतिके दो दो स्थान हैं वे सब समान हैं अत:६ स्थानों में से ४ पुनरुक्त हुए इसप्रकार ५ स्थान कम हुए।
४	३	१	२	वेदकरहित ६,७,८ वें गुणस्थान में ४ प्रकृतिका एक एक स्थान है उसमें से २ पुनरुक्त कम हुए।
	५२	४०		

४० स्थान अपुनरुक्त हैं प्रत्येक के २४-२४ भंग होते हैं इसलिए ४० × २४ = ९६०
दो प्रकृतियों के २४ भंग होते हैं उसमें पुनरुक्त १२ हैं वे कम हुए   २४-१२ =   १२
एक प्रकृति के ११ भंग कहे हैं उनमें ६ पुनरुक्त हैं वे कम हुए   ११-६ =   ५
अपुनरुक्त भंग स्थान अपेक्षा   ९७७

उपर्युक्त ४० उदयस्थानों की प्रकृतियाँ २८८ होती हैं प्रत्येक के भंग २४-२४
होते हैं अत: २८८ × २४ = ६९१२
दो प्रकृति के प्रत्येक भंग १२ अत: २ × १२ = २४
एक प्रकृति के अपुनरुक्त भंग ५ अत: १ × ५ = ५
६९४१ कुल भंग प्रकृति की अपेक्षा

इन स्थानभेद और प्रकृति के भेद से त्रिकाल और त्रिलोकवर्ती चराचर संसारी जीव मोहित हैं।

मोहनीय के उदयस्थान और उनकी प्रकृतियों के गुणस्थानों में उपयोग, योग, संयम, लेश्या और सम्यक्त्व की अपेक्षा स्थान व भंग दिखाते हैं -

उदयट्ठाणं पयडिं सगसगउवजोगजोगआदीहिं ।
गुणयित्ता मेलविदे पदसंखा पयडिसंखा च ।।४९०।।

अन्वयार्थ - (उदयट्ठाणं) उदयस्थान की संख्या और **(पयडिं)** उन स्थानों की प्रकृतियों की संख्या को **(सगसगउवजोगजोगआदीहिं)** अपने-अपने गुणस्थानों में संभव उपयोग, योग और आदि शब्द से संयम, देशसंयम, लेश्या और सम्यक्त्व से **(गुणयित्ता)** गुणा करके **(मेलविदे)** सबको जोड़ने पर **(पदसंखा)** स्थानसंख्या **(य)** और **(पयडिसंखा)** प्रकृतिसंख्या आती है।

विशेषार्थ - मोहनीय कर्म के उदयस्थान और उनकी प्रकृतियों को अपने अपने गुणस्थानों में पाये जानेवाले उपयोग, योग आदि से गुणा करके सबका जोड़ करनेपर जो प्रमाण आता है उतने स्थान और प्रकृतिसंख्या वहाँ जानना।

उपयोग के १२ प्रकार - ४ दर्शनोपयोग (चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल)
८ ज्ञानोपयोग (मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय, केवल, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि)
१२

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते जिणे य सिद्धे य ।
पणछस्सत्त दुगं च य उवजोगा होंति दोच्चेव ।।४९१।।

अन्वयार्थ -(मिच्छदुगे) मिथ्यात्वादि दो गुणस्थानों में **(पण)** पाँच उपयोग हैं **(मिस्सतिये)** मिश्र आदि तीन गुणस्थानों में **(छस्)** छह उपयोग **(पमत्तसत्ते)** प्रमत्तसंयतादि सात गुणस्थानों में **(सत्त)** सात उपयोग **(जिणे य)** सयोगी व अयोगीजिन में **(दुगं च)** दो तथा **(सिद्धे य)** सिद्धों में **(दोच्चेव)** दो ही **(उवजोगा)** उपयोग **(होंति)** होते हैं।

गुणस्थान	उपयोग संख्या	उपयोग का विवरण
मिथ्यात्व	५	१) चक्षुदर्शन २)अचक्षुदर्शन ३) कुमति ४) कुश्रुत ५) कुअवधि
सासादन	५	१) चक्षुदर्शन २)अचक्षुदर्शन ३) कुमति ४) कुश्रुत ५) कुअवधि
मिश्र	६	१) चक्षुदर्शन २)अचक्षुदर्शन ३) अवधिदर्शन ४) मति ५) श्रुत ६)अवधि मिश्र ज्ञान
असंयत	६	१) चक्षुद.२)अचक्षुद. ३)अवधिद.४)मति ५)श्रुत ६)अवधिज्ञान
देशसंयत	६	१) चक्षुद.२)अचक्षुद. ३)अवधिद.४)मति ५)श्रुत ६)अवधिज्ञान
प्रमत्तसंयत	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
अप्रमत्तसं.	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
अपूर्वकरण	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
अनिवृत्ति.	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
सूक्ष्म सां.	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
उप.मोह	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
क्षीणमोह	७	उपर्युक्त ६ उपयोग + १ मन:पर्ययज्ञान
सयोगि	२	केवलदर्शन, केवलज्ञान
अयोगि	२	केवलदर्शन, केवलज्ञान

णवणउदिसगसयाहिय सत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु उवजोगे मोहणीयस्स ।।४९२।।

अन्वयार्थ -इस प्रकार **(उवजोगे)** उपयोग के आश्रय से **(मोहणीयस्स)** मोहनीय के **(उदयस्स)** उदयस्थान के **(णवणउदिसगसयाहिय)** सात सौ निन्यानवे अधिक **(सत्तसहस्सप्पमाणं)** सात हजार **(ठाणवियप्पे)** स्थान विकल्प **(जाणसु)** जानो।

एक्कावण्णसहस्सं तेसीदिसमण्णियं वियाणाहि ।
पयडीणं परिमाणं उवजोगे मोहणीयस्स ।।४९३।।

अन्वयार्थ -(उवजोगे) उपयोग के आश्रय से **(मोहणीयस्स)** मोहनीय कर्म की **(पयडीणं परिमाणं)** प्रकृतियों का प्रमाण **(एक्कावण्णसहस्सं तेसीदिसमण्णियं)** तिरासी से सहित इक्यावन हजार अर्थात् इक्यावन हजार तिरासी **(वियाणाहि)** जानना।

गुणस्थान	उदयस्था. संख्या	उदयस्थानों की प्रकृतिसंख्या	उपयोग संख्या	उदयस्थान ×उपयोग	प्रकृति ×उपयोग
मिथ्यात्व	८	१०+९+९+८=३६ ९+८+८+७ =३२ } ६८	५	८×५=४०	६८×५=३४०
सासादन	४	९+८+८+७ =३२	५	४×५=२०	३२×५=१६०
मिश्र	४	९+८+८+७ =३२	६	४×६=२४	३२×६=१९२
असंयत	८	९+८+८+७ =३२ ८+७+७+६ =२८ } ६०	६	८×६=४८	६०×६=३६०
देशसंयत	८	८+७+७+६ =२८ ७+६+६+५=२४ } ५२	६	८×६=४८	५२×६=३१२
प्रमत्तसंयत	८	७+६+६+५=२४ ६+५+५+४=२० } ४४	७	८×७=५६	४४×७=३०८
अप्रमत्तसं.	८	उपर्युक्त प्रमत्तवत् ४४	७	८×७=५६	४४×७=३०८
अपूर्वकरण	४	६+५+५+४ =२०	७	४×७=२८	२०×७=१४०
कुल जोड़	५२	३५२	४९	३२०	२१२०
अनिवृत्ति. प्र.भाग	१	२	७	१×७=७	२×७=१४
अनिवृत्ति शेष भाग	१	१	७	१×७=७	१×७=७
सूक्ष्म सां.	१	१	७	१×७=७	१×७=७

विशेषार्थ -

आठवें गुणस्थानतक उपयोगापेक्षा से उदयस्थानों की संख्या ३२०×२४ भंग = ७६८०

अनिवृत्तिकरण के प्रथम भाग में उपयोगापेक्षा उदयस्थानों की संख्या ७×१२ भंग = ८४

अनिवृत्तिकरण के शेष भाग में उपयोगापेक्षा उदयस्थानों की संख्या ७×४ भंग = २८

सूक्ष्मसांपराय में उपयोगापेक्षा उदयस्थानों की संख्या ७×१ भंग = ७

इसप्रकार उपयोग के आश्रय से मोहनीय के उदयस्थानभेद ७७९९

सात हजार सातसौ निन्यानवे

उपयोग अपेक्षा से ८ वें गुणस्थान तक प्रकृतिसंख्या २१२०×२४ भंग प्रत्येक के	=	५०८८०
उपयोग अपेक्षा से ९ वें गुणस्थान के प्रथम भाग में प्रकृतिसंख्या १४ × १२ भंग	=	१६८
उपयोग अपेक्षा से ९ वें गुणस्थान के शेष भाग में प्रकृतिसंख्या ७ × ४ भंग	=	२८
उपयोग अपेक्षा से सूक्ष्मसांपराय की प्रकृतिसंख्या ७ × १ भंग	=	७
उपयोग के आश्रय से मोहनीय की प्रकृतियों का प्रमाण		५१,०८३

(इक्यावन हजार तिरासी)

आगे गुणस्थानों में योगों की संख्या कहते हैं -

तिसु तेरं दस मिस्से णव सत्तसु छट्ठयम्मि एक्कारा ।
जोगिम्मि सत्तजोगा अजोगिठाणं हवे सुण्णं ।।४९४।।

अन्वयार्थ - (तिसु) तीन गुणस्थानों में अर्थात् मिथ्यादृष्टि, सासादन और असंयत में **(तेरं)** तेरह-तेरह योग **(मिस्से)** मिश्र गुणस्थान में **(दस)** दस योग, **(सत्तसु)** देशसंयत आदि सात गुणस्थानों में **(णव)** नौ-नौ योग, **(छट्ठयम्मि)** छठे गुणस्थान में **(एक्कारा)** ग्यारह योग **(जोगम्मि)** सयोगी में **(सत्तजोगा)** सात योग होते हैं। **(अजोगिठाणं)** अयोगी स्थान **(सुण्णं हवे)** शून्य है अर्थात् अयोगी में योग नहीं है।

विशेषार्थ - योग पन्द्रह हैं (१५) - ४ मनोयोग, (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय) ४ वचनयोग (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय) ७ काययोग (औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्मण)

गुणस्थानापेक्षा योग का कोष्टक

गुण स्थान	योगसंख्या पर्या.अप.सर्व	विवरण
१	१०+३=१३	१०=४ मनोयोग, ४ वचन, १औदारिक १ वैक्रियिक ३= औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्मण
२	१०+३=१३	१०=४ मनोयोग, ४ वचन, १औदारिक १ वैक्रियिक ३= औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्मण
३	१० = १०	१०=४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १औदारिक १वैक्रियिक

गुण स्थान	योगसंख्या पर्या.अप.सर्व	विवरण
४	१०+३=१३	१०=४ मनोयोग, ४ वचन, १औदारिक १ वैक्रियिक ३= औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्मण
५	९ = ९	९= ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १औदारिक
६	१०+१=११	१०=४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिक १आहारक १ = आहारक मिश्र
७ से१२	९ = ९	९= ४ मनोयोग, ४ वचनयोग, १ औदारिक
१३	५+२=७	५=सत्यमन,अनुभयमन,सत्यवचन,अनुभयवचन,औदारिक २ = औदारिक मिश्र, कार्मणकाययोग
१४	०	--

मिच्छे सासण अयदे पमत्तविरदे अपुण्णजोगगदं ।
पुण्णगदं च य सेसे पुण्णगदे मेलिदं होदि ।।४९५।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यात्व में **(सासण)** सासादन में **(अयदे)** असंयत में **(पमत्तविरदे)** प्रमत्तविरत में **(अपुण्णजोगगदं)** अपर्याप्त योगसहित **(पुण्णगदं च)** पर्याप्त योग होते हैं **(सेसे)** शेष गुणस्थानों में **(पुण्णगदे)** पर्याप्त योग **(मेलिदं)** ही प्राप्त **(होदि)** होते हैं।

विशेषार्थ - १,२,४,६ इन चार गुणस्थानों में अपर्याप्त और पर्याप्त योग भी होते हैं अत: इनमें इन दोनों को मिलाकर स्थानों और प्रकृतियों का प्रमाण होता है। शेष गुणस्थानों में केवलपर्याप्त योग ही होते हैं अत: उन्हींको लेकर स्थान और प्रकृतिप्रमाण होता है।

गुण स्था.	उदय स्था.	प्रकृतिसंख्या	योगसंख्या	उदयस्थान × योग	प्रकृति × योग
१	४	१०+९+९+८=३६	१३	४×१३=५२	३६×१३=४६८
	४	९+८+८+७ = ३२	१० (१३-३मिश्र२,कार्मण१)	४×१०=४०	३२×१०=३२०
२	४	९+८+८+७ = ३२	१२ (१३-१वैक्रियिक मिश्र)	४×१२=४८	३२×१२=३८४
३	४	९+८+८+७ = ३२	१०	४×१०=४०	३२×१०=३२०
४	८	पूर्वोक्त३२+२८=६०	१० (१३-३मिश्र२,कार्मण१)	८×१०=८०	६०×१०=६००
५	८	पूर्वोक्त२८+२४=५२	९	८×९=७२	५२×९=४६८
६	८	पूर्वोक्त२४+२०=४४	९ (११-२आहारकद्विक)	८×९=७२	४४×९=३९६
७	८	पूर्वोक्त२४+२०=४४	९	८×९=७२	४४×९=३९६
८	४	२०	९	४×९=३६	२०×९=१८०
				५१२	३५३२
९सवे.	१	२	९	१ × ९ = ९	२×९=१८
९अवे.	१	१	९	१ × ९ = ९	१×९= ९
१०	१	१	९	१ × ९ = ९	१×९= ९

उपर्युक्त कोष्टक में योगसंख्या में जो योग कम किये हैं उनका आगे अलग कथन करेंगे क्योंकि उनके भंग कम होते हैं।

✻ विशेष - प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान में दूसरे ४ उदयस्थान अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन कर प्रथम गुणस्थान में आये हुये जीव की अपेक्षा है। अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन कर प्रथम गुणस्थान में आये हुये जीव का एक अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त मरण नहीं होता अत: इन उदयस्थानों में औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र और कार्मण काययोग नहीं पाये जाते इसलिए वहाँ १० पर्याप्त योग ही होते हैं।

उपर्युक्त उदयस्थान और प्रकृति के भंग -

	उदयस्थान	भंग	
प्रथम गुणस्थान से आठवें गुणस्थानपर्यंत योग अपेक्षा	५१२ ×	२४	१२,२८८
नववें गुणस्थान के सवेद भाग में योग अपेक्षा	९ ×	१२	१०८
नववें गुणस्थान के अवेद भाग में योग अपेक्षा	९ ×	४	३६
सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान में योग अपेक्षा	९ ×	१	९
योग अपेक्षा उदयस्थान के कुल भंग १२,४४१			

	प्रकृति	भंग	
प्रथम गुणस्थान से आठवें गुणस्थानपर्यंत योग अपेक्षा	३५३२ ×	२४	८४,७६८
नववें गुणस्थान के सवेद भाग में योग अपेक्षा	१८ ×	१२	२१६
नववें गुणस्थान के अवेद भाग में योग अपेक्षा	९ ×	४	३६
सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान में योग अपेक्षा	९ ×	१	९
योग अपेक्षा प्रकृति के कुल भंग ८५,०२९			

सासादन, असंयत और प्रमत्त इन गुणस्थानों के अकथित (न कहे हुये) योगों की अपेक्षा से उदयस्थान, प्रकृति और भंग :-

सासण अयदपमत्ते वेगुव्वियमिस्स तच्च कम्मइयं ।
ओरालमिस्सहारे अडसोलडवग्ग अट्ठवीससयं ।।४९६।।

अन्वयार्थ - (सासण) सासादन में **(वेगुव्विय मिस्स)** वैक्रियिक मिश्रयोग में, **(अयद)** असंयत गुणस्थान के **(तच्च कम्मइयं)** वैक्रियिक मिश्र और कार्मणकाययोग में तथा **(ओरालमिस्स)** असंयत के औदारिक मिश्रकाययोग में **(पमत्ते)** प्रमत्तसंयत के **(हारे)** आहारक काययोग और आहारकमिश्रकाययोग में क्रम से **(अडसोलडवग्ग अट्ठवीससयं)** आठ का वर्ग अर्थात् ६४, सोलह का वर्ग २५६, आठ का वर्ग ६४ और एक सौ अट्ठाईस स्थान हैं।

गुणस्थान	उदय स्थान	प्रकृति संख्या	योगसंख्या	उदयस्थान × योग	प्रकृति×योग
२ सासादन	४	३२	१ वैक्रियिक मिश्र	४×१=४	३२×१=३२
४ असंयत	८	६०	२ वैक्रि.मिश्र, कार्मण	८×२=१६	६०×२=१२०
४ असंयत	८	६०	१ औदारिक मिश्र	८×१=८	६०×१=६०
६ प्रमत्तसं.	८	४४	२ आहारक,आ.मिश्र	८×२=१६	४४×२=८८

णत्थि णउंसयवेदो इत्थीवेदो णउंसइत्थिदुगे ।
पुव्वत्तपुण्णजोगगचउसु ट्ठाणेसु जाणेज्ञो।। ४९७।।

अन्वयार्थ - (पुव्वुत्तपुण्णजोगगचदसु ट्ठाणेसु) पूर्व में कहे हुए अपर्याप्तयोग को प्राप्त चार स्थानों में क्रमसे **(णउंसयवेदो)** नपुंसकवेद, **(इत्थीवेदो)** स्त्रीवेद **(दुगे)** दो स्थानों में **(णउंसइत्थि)** नपुंसकवेद और स्त्रीवेद **(णत्थि)** नहीं है ऐसा **(जाणेज्ञो)** जानना चाहिए।

विशेषार्थ - सासादन गुणस्थान में वैक्रियिकमिश्रयोग में नपुंसकवेद का उदय नहीं होता क्योंकि इस गुणस्थान में मरकर नरक में नहीं जाता । इस गुणस्थान के उदयस्थान ४ हैं ९-८-८-७ परंतु तीन वेदों में से दो वेद का ही उदय होता है अत: वैक्रियिक मिश्रयोग में कषाय ४ ×२ वेद ×२ हास्यद्विक युगल = १६ ही भंग होते हैं।

असंयत गुणस्थान में वैक्रियिक मिश्र व कार्मण काययोगमें स्त्रीवेद का उदय नहीं होता क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर स्त्री पर्याय में उत्पन्न नहीं होता। इस गुणस्थान के उदयस्थान ९-८-८-७ और ८-७-७-६ ऐसे दो प्रकार के मिलकर ८ हैं। इसमें दो ही वेद का उदय होता है अत: वैक्रियिक मिश्र और कार्मणयोग में कषाय ४ × वेद २ ×२ हास्यद्विक युगल = १६ ही भंग होते हैं।

असंयत गुणस्थान में औदारिकमिश्र योग में स्त्रीवेद और नपुंसकवेद का उदय नहीं होता क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर देव, मनुष्य व तिर्यंच में पुरुषवेदसहित ही उत्पन्न होता है। नरक में ही नपुंसकवेद सहित जाता है अन्यत्र नही। इसके भी उपर्युक्त ८ उदयस्थान होते हैं। अत: औदारिकमिश्र योग में कषाय ४ × वेद १ ×२ हास्यद्विक युगल = ८ भंग होते हैं। प्रमत्त गुणस्थान में आहारकद्विक में स्त्री व नपुंसकवेद का उदय नहीं होता। इसके

उदयस्थान ८ हैं अत: आहारकद्विकयोग में कषाय ४ × वेद १ ×२ हास्यद्विक युगल = ८ भंग होते हैं।

उदयस्थान के भंग

	उदयस्थान	भंग	कुल भंग
सासादन वैक्रियिक मिश्र	४	१६	६४
असंयत वैक्रियिक मिश्र व कार्मण अपेक्षा	१६	१६	२५६
असंयत औदारिक मिश्र अपेक्षा	८	८	६४
प्रमत्त- आहारक, आहारक मिश्र अपेक्षा	१६	८	१२८
			५१२

तेवण्णणवसयाहियबारसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु जोगं पडि मोहणीयस्स ।। ४९८।।

अन्वयार्थ - इस प्रकार **(मोहणीयस्स)** मोहनीय कर्म के **(उदयस्स)** उदयस्थानों के **(जोगंपडि)** योगों की अपेक्षा **(ठाणविय्यप्पे)** स्थान विकल्प **(तेवण्णणवसयाहिय-बारसहस्सप्पमाणं)** बारह हजार नौ सो त्रेपन मात्र **(जाणसु)** जानना।

विशेषार्थ - पूर्वोक्त उदयस्थान के भंग १२४४१ + ५१२ = १२९५३ भंग योग की अपेक्षा से उदयस्थान के होते हैं।

बिदिए बिगि पणगयदे खदु णव एक्कं ख अट्ठ चउरो य।
छट्ठे चउ सुण्ण सगं पयडिवियप्पा अपुण्णम्मि ।।४९९।।

अन्वयार्थ - (अपुण्णम्मि) अपर्याप्तअवस्था में **(बिदिये)** दूसरे गुणस्थान में **(बिगिपणं)** दो, एक, पाँच अर्थात् ५१२ **(अयदे)** असंयत में वैक्रियिक मिश्र और कार्मणकाययोग में **(खदुणवएक्कं)** शून्य, दो, नौ, एक अर्थात् १९२० **(य)** च शब्द से असंयत गुणस्थान के औदारिकमिश्रकाययोग में **(खअट्ठचउरो)** शून्य आठ चार अर्थात् ४८० तथा **(छट्ठे)** छठे गुणस्थान के आहारक-आहारकमिश्रकाययोग में **(चउसुण्णसगं)** चार शून्य सात अर्थात् ७०४ **(पयडिवियप्पा)** प्रकृतियों के भेद होते हैं।

प्रकृत्यपेक्षा से भंग

	प्रकृति	भंग	कुल भंग
सासादन वैक्रियिक मिश्र अपेक्षा	३२ ×	१६ =	५१२
असंयत वैक्रियिक मिश्र व कार्मण अपेक्षा	१२० ×	१६ =	१९२०
असंयत औदारिक मिश्र अपेक्षा	६० ×	८ =	४८०
प्रमत्त-आहारक, आहारक मिश्र अपेक्षा	८८ ×	८ =	७०४
			३६१६

पणदालछस्सयाहिय अट्ठासीदीसहस्समुदयस्स ।
पयडीणं परिसंखा जोगं पडि मोहणीयस्स ।।५००।।

अन्वयार्थ - इस प्रकार **(जोगं पडि)** योग की अपेक्षा **(मोहणीयस्स)** मोहनीय कर्म के **(उदयस्स)** उदयस्थान के **(पयडीणं परिसंखा)** प्रकृतियों की संख्या **(पणदालछस्सयाहियअट्ठासीदीसहस्सं)** छहसौ पैतालीस अधिक अठ्यासी हजार अर्थात् ८८६४५ होती है ऐसा जानना।

विशेषार्थ - प्रकृति की अपेक्षा से पूर्वोक्त भंग ८५०२९ + ३६१६ उपर्युक्त = ८८६४५ भंग। योग की अपेक्षा प्रकृति के सर्व भंग ८८६४५ होते हैं।

संयम के आश्रय से मोहनीय के उदयस्थान और प्रकृतिभंग कहते हैं -

तेरस सयाणि सत्तरि सत्तेव य मेलिदे हवंति त्ति ।
ठाणवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ।। ५०१।।

अन्वयार्थ -(संजमलंबेण) संयम के अवलंबन से **(मोहस्स)** मोहनीय के **(ठाणवियप्पे मेलिदे)** उदयस्थानों के सब भेद मिलाने पर **(तेरससयाणि सत्तरिसत्तेव)** तेरह सो सतहत्तर ही **(हवंति)** होते हैं **(त्ति जाणसु)** ऐसा तू जान।

तेवण्णतिसदसमहिय सत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
पयडिवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ।।५०२।।

अन्वयार्थ - (संजमलंबेण) संयम के अवलंबन से **(मोहस्स)** मोहनीय की

(उदयस्स पयडिवियप्पे) उदयप्रकृतियों के भेद **(तेवण्णतिसदसमहिय)** तीन सो त्रेपन से सहित **(सत्तसहस्सप्पमाणं)** सात हजार प्रमाण अर्थात् ७३५३ **(जाणसु)** जानो।

विशेषार्थ - संयम ५ प्रकार का है -

१) सामायिक २) छेदोपस्थापना ३) परिहारविशुद्धि ४) सूक्ष्मसांपराय ५) यथाख्यात

गुणस्थानापेक्षा से संयम

गुणस्थान	संयमसंख्या	विवरण
प्रमत्तसंयत	३	सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि
अप्रमत्तसं.	३	सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि
अपूर्वकरण	२	सामायिक, छेदोपस्थापना
अनिवृत्ति.	२	सामायिक, छेदोपस्थापना
सूक्ष्म सां.	१	सूक्ष्म सांपराय
११ से १४	१	यथाख्यात संयम

संयम की अपेक्षा से मोहनीय के उदयस्थान और प्रकृति

गुणस्थान	उदयस्थान	प्रकृति	संयम	उदयस्था.×संयम	प्रकृति ×संयम
प्रमत्तसंयत	८	२४+२०=४४	३	८×३ =२४	४४×३ =१३२
अप्रमत्तसं.	८	२४+२०=४४	३	८×३ =२४	४४×३ =१३२
अपूर्वकरण	४	२०=२०	२	४×२ =८	२०×२ = ४०
				५६	३०४
अनिवृत्ति.सवेद	१	२	२	१×२ =२	२×२ =४
अनिवृत्ति.अवेद	१	१	२	१×२ =२	१×२ =२
सूक्ष्म सां.	१	१	१	१×१ =१	१×१ =१

गुणस्थान	उदयस्थान	भंग	
६-७-८ वें गुणस्थान के संयम की अपेक्षा	५६ ×	२४ =	१३४४
९ वें गुणस्थानके सवेद भाग के संयम की अपेक्षा	२ ×	१२ =	२४
९ वें गुणस्थानके अवेद भाग के संयम की अपेक्षा	२ ×	४ =	८
१० वें गुणस्थान के संयम की अपेक्षा	१ ×	१ =	१
संयम की अपेक्षा मोहनीय के उदयस्थान के भंग =			१३७७

गुणस्थान	प्रकृति	भंग	
६-७-८ वें गुणस्थान में संयम की अपेक्षा मोहनीय की प्रकृति	३०४ ×	२४ =	७२९६
९ वें गुणस्थान के सवेद भाग में संयम की अपेक्षा मोहनीय की प्रकृति	४ ×	१२ =	४८
९ वें गुणस्थान के अवेद भाग में संयम की अपेक्षा मोहनीय की प्रकृति	२ ×	४ =	८
१० वें गुणस्थान में संयम की अपेक्षा मोहनीय की प्रकृति	१ ×	१ =	१
संयम की अपेक्षा मोहनीय के प्रकृति भंग =			७३५३

मिच्छचउक्के छक्कं देसतिये तिण्णि होंति सुहलेस्सा ।
जोगित्ति सुक्कलेस्सा अजोगिठाणं अलेस्सं तु ।।५०३।।

अन्वयार्थ - (मिच्छचउक्के) मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानों में प्रत्येक में **(छक्कं)** छह लेश्या होती हैं। **(देसतिये)** देशसंयत आदि तीन गुणस्थानों में **(तिण्णि सुहलेस्सा)** तीन शुभलेश्या ही **(होंति)** होती हैं **(जोगित्ति)** अपूर्वकरण से सयोगीपर्यन्त **(सुक्कलेस्सा)** शुक्ललेश्या ही है **(तु)** किंतु **(अजोगिठाणं)** अयोगी गुणस्थान **(अलेस्सं)** लेश्या से रहित है।

गुणस्थानों में लेश्या

गुणस्थान	लेश्यासंख्या	लेश्यानाम
१-२-३-४	६	कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल
५-६-७	३	पीत, पद्म, शुक्ल
८ से १३	१	शुक्ल
१४	०	

पंचसहस्सा बेसय सत्ताणउदी हवंति उदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु लेस्सं पडि मोहणीयस्स ।। ५०४।।

अन्वयार्थ - (लेस्सं पडि) लेश्याओं के आश्रय से **(मोहणीयस्स)** मोहनीय कर्म के **(उदयस्स ठाणवियप्पे)** उदयस्थान के भेद **(पंचसहस्सा बेसय सत्ताणउदी)** पाँच हजार दो सौ सत्तानवे ५२९७ **(जाणसु)** जानो।

अट्ठत्तीससहस्सा बेण्णिसया होंति सत्ततीसा य ।
पयडीणं परिमाणं लेस्सं पडि मोहणीयस्स ।।५०५।।

अन्वयार्थ - (लेस्सं पडि) लेश्याओं के आश्रय से **(मोहणीयस्स)** मोहनीय की **(पयडीणं परिमाणं)** उदयप्रकृतियों का परिमाण **(अट्ठत्तीससहस्सा बेण्णिसया सत्ततीसा)** अड़तीस हजार दो सौ सैंतीस ३८२३७ **(होंति)** है।

गुणस्थानों में लेश्या की अपेक्षा मोहनीय के उदयस्थान और प्रकृति

गुणस्थान	उदयस्थान	प्रकृति	लेश्या	उदयस्था.×लेश्या	प्रकृति × लेश्या
१	८	६८	६	८×६ =४८	६८×६ =४०८
२	४	३२	६	४×६ =२४	३२×६ =१९२
३	४	३२	६	४×६ =२४	३२×६ =१९२
४	८	६०	६	८×६ =४८	६०×६ =३६०
५	८	५२	३	८×३ =२४	५२×३ =१५६
६	८	४४	३	८×३ =२४	४४×३ =१३२
७	८	४४	३	८×३ =२४	४४×३ =१३२
८	४	२०	१	४×१ = ४	२०×१ = २०
				२२०	१५९२
९ सवेद	१	२	१	१×१ =१	२×१ =२
९ अवेद	१	१	१	१×१ =१	१×१ =१
१०	१	१	१	१×१ =१	१×१ =१

लेश्या अपेक्षा से १ से ८ गुणस्थानपर्यंत उदयस्थान २२० × भंग २४ = ५२८०
लेश्या अपेक्षा से नववें के सवेदभाग में उदयस्थान १× भंग १२ = १२
लेश्या अपेक्षा से नववें के अवेदभाग में उदयस्थान १× भंग ४ = ४
लेश्या अपेक्षा से दसवें गुणस्थान में उदयस्थान १× भंग १ = १
लेश्या अपेक्षा से मोहनीय के उदयस्थान के भंग **५२९७**

लेश्या अपेक्षा से १ से ८ गुणस्थानपर्यंत प्रकृतिसंख्या १५९२ × भंग २४ = ३८२०८
लेश्या अपेक्षा से नववें के सवेदभाग में प्रकृतिसंख्या २× भंग १२ = २४
लेश्या अपेक्षा से नववें के अवेदभाग में प्रकृतिसंख्या १× भंग ४ = ४
लेश्या अपेक्षा से दसवें गुणस्थान में प्रकृतिसंख्या १× भंग १ = १
लेश्या अपेक्षा से मोहनीय के प्रकृति के भंग **३८२३७**

अट्ठुत्तरीहि सहिया तेरसयसया हवंति उदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु सम्मत्तगुणेण मोहस्स ।।५०६।।

अन्वयार्थ -(सम्मत्तगुणेण) सम्यक्त्व गुण से सहित **(मोहस्स)** मोहनीय कर्म के **(उदयस्स)** उदय के **(ठाणवियप्पे)** स्थानविकल्प **(अट्ठुत्तरीहिं सहिया तेरससया)** तेरह सौ अट्ठहत्तर **(हवंति)** हैं **(जाणसु)** ऐसा जानो।

अट्ठेव सहस्साइं छव्वीसा तह य होंति णादव्वा।

पयडीणं परिमाणं सम्मत्तगुणेण मोहस्स ।।५०७।।

अन्वयार्थ -(तह य) उसी प्रकार **(सम्मत्तगुणेण)** सम्यक्त्वगुण के साथ **(मोहस्स)** मोहनीय की **(पयडीणं परिमाणं)** उदयप्रकृतियों का परिमाण **(अट्ठेव सहस्साइं छव्वीसा)** आठ हजार छव्वीस **(होंति)** हैं ऐसा **(णादव्वा)** जानना चाहिए।

विशेषार्थ - **गुणस्थानों में सम्यक्त्व**

गुणस्थान	सम्यक्त्व	
४ से ७	३	औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक
८ से ११	२	औपशमिक, क्षायिक
१२ से १४	१	क्षायिकसम्यक्त्व

सम्यक्त्वापेक्षा से मोहनीय के उदयस्थान और प्रकृतिसंख्या

गुणस्थान	उदयस्थान	प्रकृति	सम्यक्त्व	उदयस्था.×सम्य.	प्रकृति×सम्य.
४	४	३२	१ वेदक	४×१ =४	३२×१ =३२
४	४	२८	२ औप.,क्षायिक	४×२ =८	२८×२ =५६
५	४	२८	१ वेदक	४×१ =४	२८×१ =२८
५	४	२४	२ औप.,क्षायिक	४×२ =८	२४×२ =४८
६	४	२४	१ वेदक	४×१ =४	२४×१ =२४
६	४	२०	२ औप.,क्षायिक	४×२ =८	२०×२ =४०
७	४	२४	१ वेदक	४×१ =४	२४×१ =२४
७	४	२०	२ औप.,क्षायिक	४×२ =८	२०×२ =४०
८	४	२०	२ औप.,क्षायिक	४×२ =८	२०×२ =४०
				५६	३३२
९ सवेद	१	२	२ औप.,क्षायिक	१×२ =२	२×२ =४
९ अवेद	१	१	२ औप.,क्षायिक	१×२ =२	१×२ =२
१०	१	१	२ औप.,क्षायिक	१×२ =२	१×२ =२

गुणस्थान	उदयस्थान	भंग	
सम्यक्त्व की अपेक्षा से चौथे से आठवें गुणस्थानतक	५६ ×	२४ =	१३४४
सम्यक्त्व की अपेक्षा से नववें गुणस्थान के सवेदभाग में	२ ×	१२ =	२४
सम्यक्त्व की अपेक्षा से नववें गुणस्थान के अवेदभाग में	२ ×	४ =	८
सम्यक्त्व की अपेक्षा से दसवें गुणस्थान में	२ ×	१ =	२
सम्यक्त्व की अपेक्षा से मोहनीय के उदयस्थान के भंग =			१३७८

गुणस्थान	प्रकृति	भंग	
सम्यक्त्व की अपेक्षा से चौथे से आठवें गुणस्थानतक	३३२ ×	२४ =	७९६८
सम्यक्त्व की अपेक्षा से नववें गुणस्थान के सवेदभाग में	४ ×	१२ =	४८
सम्यक्त्व की अपेक्षा से नववें गुणस्थान के अवेदभाग में	२ ×	४ =	८
सम्यक्त्व की अपेक्षा से दसवें गुणस्थान में	२ ×	१ =	२
सम्यक्त्व की अपेक्षा से मोहनीय के उदयप्रकृति के भंग =			८०२६

अब मोहनीय कर्म के सत्त्वस्थानों का कथन ११ गाथाओं से करते हैं -

अट्ठ य सत्त य छक्क य चदु तिदुगेगाधिगाणि वीसाणि ।
तेरस बारेयारं पणादिएगूणयं सत्तं ।।५०८।।

अन्वयार्थ - मोहनीयकर्म के **(अट्ठ य सत्त य छक्क य चदुतिदुगेगाधिगाणि)** आठ, सात, छह, चार, तीन, दो और एक से अधिक **(वीसाणि)** बीस अर्थात् २८, २७,२६,२४,२३,२२,२१ **(तेरस बारेयारं)** तेरह, बारह, ग्यारह **(पणादि एगूणयं)** पाँच से लेकर एक-एक कम अर्थात् ५, ४, ३,२ और १ प्रकृतिक **(सत्तं)** सत्त्वस्थान हैं।

मोहनीय के सत्त्वस्थान १५ हैं -

२८	२७	२६	२४	२३	२२	२१	१३	१२	११	५	४	३	२	१

सत्त्व स्थान क्र.	प्रकृतियों का विवरण	प्रकृति संख्या
१	दर्शनमोहनीय की ३ + चारित्रमोहनीय की २५ प्रकृतियाँ	२८
२	मिथ्यादृष्टि में सम्यक्त्वप्रकृति की उद्वेलना होनेपर उपर्युक्त२८-१सम्य.प्र.	२७
३	मिथ्यादृष्टि में मिश्रप्रकृति की उद्वेलना होनेपर उपर्युक्त २७-१ मिश्र	२६
४	सम्यक्त्व में अनंतानुबंधी का विसंयोजन होनेपर २८-४ अनंता.कषाय	२४
५	४ से ७ गुणस्थान में मिथ्यात्व का क्षय होनेपर २४-१ मिथ्यात्व	२३
६	४ से ७ गुणस्थान में मिश्रप्रकृति का क्षय होनेपर २३-१ मिश्र	२२
७	४ से ७ गुणस्थान में सम्यक्त्व का क्षय होनेपर २२-१ सम्यक्त्व प्र.	२१
८	९ वें गुण.में ८ मध्यम कषायोंका क्षय होनेपर २१-८ अप्रत्या.प्रत्या.क.	१३
९	९ वें गुणस्थान में नपुंसकवेद का क्षय होनेपर १३-१ नपुंसकवेद	१२
१०	९ वें गुणस्थान में स्त्रीवेद का क्षय होनेपर १२-१ स्त्रीवेद	११
११	९ वें गुण. में हास्यादि ६ नोकषायों का क्षय होनेपर११-६ हास्यादि	५
१२	९ वें गुणस्थान में पुरुषवेद का क्षय होनेपर ५-१ पुरुषवेद	४
१३	९ वें गुणस्थान में संज्वलनक्रोध का क्षय होनेपर ४-१ संज्व.क्रोध	३
१४	९ वें गुणस्थान में संज्वलनमान का क्षय होनेपर ३-१ संज्व.मान	२
१५	९ वें गुणस्थान में संज्वलनमाया का क्षय होनेपर २-१ संज्व.माया	१

तिण्णेगे एगेगं दो मिस्से चदुसु पण णियट्ठीए।
तिण्णि य थूलेक्कारं सुहुमे चत्तारि तिण्णि उवसंते ।।५०९।।

अन्वयार्थ - (एगे) एक (मिथ्यादृष्टि गुणस्थान) में **(तिण्ण)** तीन **(एगेगं)** एक (सासादन गुणस्थान) में एक **(मिस्से)** मिश्र में **(दो)** दो **(चदुसु)** असंयत आदि चार गुणस्थानों में **(पण)** पाँच **(णियट्ठीए)** निवृत्ति अर्थात् अपूर्वकरण में **(तिण्णि)** तीन **(थूलेक्कारं)** बादर अर्थात् अनिवृत्तिकरण में **(एक्कारं)** ग्यारह **(सुहुमे)** सूक्ष्मसांपराय में **(चत्तारि)** चार **(य)** और **(उवसंते)** उपशांतकषाय गुणस्थान में **(तिण्णि)** तीन सत्त्वस्थान होते हैं।

गुण स्थान	सत्त्व स्था.सं.	सत्त्वस्थान प्रकार	विवरण
१ मि.	३	२८-२७-२६	प्रथमगुणस्थान में ही सम्यक्त्व व मिश्र प्रकृति की उद्वेलना होती है। अनादि मिथ्यादृष्टि के २६ का सत्त्व होता है।
२ सा.	१	२८	प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टिही दूसरे गुण.मेंआता है अत: इसके २८ का ही सत्त्व होता है।
३ मिश्र	२	२८-२४	अनंतानुबंधी का विसंयोजन होने के पश्चात् इस गुणस्थान में आ सकता है।
४ से ७	५	२८-२४-२३-२२-२१	इन्ही ४ गुण.में अनंता. का विसंयोजन और क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है।
८ अपूर्व.	३	२८-२४-२१	उपशमश्रेणीपर २८,२४,२१ क्षपकश्रेणीपर २१ का सत्त्व
९ अनिवृत्ति.	११	२८-२४-२१-१३-१२ ११-५-४-३-२-१	उपशमश्रेणीपर २८,२४,२१ क्षपकश्रेणीपर उपर्युक्त क्रम से क्षय होनेपर २१,१३,१२, ११,५,४,३,२,१ का सत्त्व पाया जाता है।
१० सू. सां.	४	२८-२४-२१-१	उपशमश्रेणी २८,२४,२१, क्षपकश्रेणी १
११उप.मोह	३	२८-२४-२१	

पढमतियं च य पढमं पढमच्चवुवीसयं च मिस्सम्मि ।
पढमं चउवीस चऊ अविरददेसे पमत्तिदरे ।।५१०।।

अन्वयार्थ - (पढमतियं) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में प्रथम तीन (२८,२७,२६) सत्त्वस्थान हैं। **(पढमं)** सासादन में प्रथम २८ **(मिस्सम्मि)** मिश्रगुणस्थान में **(पढमच्चवुवीसयं)** प्रथम और चौबीस (२८,२४) का सत्त्वस्थान है **(अविरददेसेपमत्ति-दरे)** असंयत, देशसंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत में **(पढमं चउवीसचऊ)** प्रथम और चौवीसादि चार अर्थात् २८, २४, २३, २२, २१ ये पाँच सत्त्वस्थान हैं।

अडचउरेक्कावीसं उवसमसेढिम्मि खवगसेढिम्मि ।
एक्कावीसं सत्ता अट्ठकसायाणियट्टित्ति ।।५११।।

अन्वयार्थ - (उवसमसेढिम्मि) उपशमश्रेणी में प्रत्येक में **(अडचउरेक्कावीसं)** अट्ठाईस, चौबीस और इक्कीस प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान हैं **(खवगसेढिम्मि)** क्षपक श्रेणि में **(अट्ठकसायाणियट्टित्ति)** अनिवृत्तिकरण में आठ कषायों के सत्त्व तक **(एक्कावीसं)** इक्कीस प्रकृतिक ही सत्त्वस्थान है।

तेरसबारेयारं तेरसबारं च तेरसं कमसो ।
पुरिसित्थिसढंवेदोदयेण गदपणगबंधम्मि ।।५१२।।

अन्वयार्थ - अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के **(गदपणगबंधम्मि)** पाँच प्रकृतिक बंधस्थान को प्राप्त होनेपर **(पुरिसित्थिसंढवेदोदयेण)** पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद उदय से श्रेणी चढ़नेवाले जीव के **(कमसो)** क्रम से **(तेरसबारेयार)** तेरह, बारह, ग्यारह **(तेरस बारं)** तेरह, बारह **(च)** और **(तेरसं)** तेरह प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होते हैं। अर्थात् पुरुषवेद के सहित १३, १२, ११ प्रकृतिक, स्त्रीवेद सहित के १३, १२ प्रकृतिक और नपुंसकवेदसहित के १३ प्रकृतिक सत्त्वस्थान हैं।

विशेषार्थ - नववें गुणस्थान में पाँच के बन्धस्थान में आठ कषायों का क्षय होने के अनन्तर पुरुषवेद के उदय से श्रेणिपर आरूढ हुए जीव को १३-१२-११ प्रकृतिरूप तीन सत्त्वस्थान होते हैं क्योंकि आठ कषायों के क्षय के पश्चात् नपुंसकवेद व स्त्रीवेद का क्रम से नाश होता है।

स्त्रीवेद के उदय के साथ श्रेणी चढ़े हुए जीव को वहाँ पर १३ और १२ प्रकृतिरूप दो सत्त्वस्थान होते हैं। यह जीव भी आठ कषायों के क्षय होने के पश्चात् प्रथम नपुंसकवेद का क्षय करता हैं उसके बाद स्त्रीवेद का नाश करता है।

नपुंसकवेद के उदय के साथ श्रेणि चढ़े हुए जीव के वहाँपर १३ प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान पाया जाता है क्योंकि वह नपुंसकवेद और स्त्रीवेद का क्षय एकसाथ करता है।

पुरिसोदयेण चडिदे अंतिमखंडंतिमोत्ति पुरिसुदओ ।
तप्पणिधिम्मिदराणं अवगदवेदोदयं होदि ।।५१३।।

अन्वयार्थ - (पुरिसोदयेण चडिदे) पुरुषवेद के उदयसहित श्रेणी चढ़नेवाले जीव के **(अंतिमखंडंतिमोत्ति)** अंतिमखण्ड के चरमसमय पर्यन्त **(पुरिसुदओ)** पुरुषवेद का उदय रहता है **(इदराणं)** स्त्रीवेद और नपुंसकवेद के उदयसहित श्रेणी चढ़नेवाले जीव के **(तप्पणिधिं)** अंतिमखंड के अंतिमसमय के पास अर्थात् द्विचरमसमय में **(अवगदवेदोदयं)** अपगतवेद का उदय **(होदि)** होता है।

तट्ठाणे एक्कारस सत्ता तिण्होदयेण चडिदाणं ।
सत्तण्हं समगं छिदी पुरिसे छण्हं च णवगमत्थित्ति ।।५१४।।

अन्वयार्थ - (तट्ठाणे) उपर्युक्त स्त्रीवेद और नपुंसकवेद के अपगतवेदरूप स्थान में पाँच के बंध में **(एक्कारस सत्ता)** ग्यारह प्रकृतिक सत्त्वस्थान पाया जाता है **(तिण्होदयेण चडिदाणं)** तीनों वेदों में से किसी भी वेद के उदय के साथ श्रेणि चढ़नेवालों के **(सत्तण्णं समगं छिदी)** सात नोकषायों की एकसाथ सत्त्वव्युच्छित्ति होती है किंतु **(पुरिसे)** पुरुषवेद के उदयसहित जीव के **(छण्हं च)** छह नोकषाय की ही सत्त्वव्युच्छित्ति होती है क्योंकि उसके अभी **(णवगमत्थित्ति)** नवक समयप्रबद्ध सत्ता में रहते हैं।

इदि चदुबंधं खवगे तेरस बारस एगार चउसत्ता ।
तिदुइगिबंधे तिदु इगि णवगुच्छिट्ठाणमविवक्खा ।।५१५।।

अन्वयार्थ - (इदि) इस प्रकार **(चदुबंधं खवगे)** चार प्रकृतिक बंधक क्षपक में **(तेरस बारस एगार चउसत्ता)** तेरह, बारह, ग्यारह और चार प्रकृतिक सत्त्वस्थान होते हैं। **(तिदुइगिबंधे)** तीन प्रकृतिक, दो प्रकृतिक और एक प्रकृतिक बंधस्थान में **(तिदुइगि)** क्रम से ३ प्रकृतिक, दो प्रकृतिक और एक प्रकृतिक सत्त्वस्थान होता है, किन्तु यहाँ **(णवगुच्छिट्ठाणमविवक्खा)** नवकसमयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली की विवक्षा नहीं की है।

विशेषार्थ - पुरुषवेद के उदयसहित जो जीव श्रेणि चढ़ता है उसके अन्तिमसमयपर्यंत पुरुषवेद का उदय और बन्ध निरन्तर होता है। उस पुरुषवेद की क्षपणा के अंतिम खंड के निकट नपुंसक व स्त्रीवेद के उदय के साथ श्रेणि चढ़े हुए जीव के वेद के उदय का अभाव होता है।

तीन वेदों में से किसी एक वेद के उदयसहित श्रेणी चढ़नेवाले जीव को पुरुषवेद व हास्यादिक ६ नोकषाय इन ७ प्रकृतियों के क्षपणा का प्रारंभ युगपत् होता है और अंतिमखंड के अंतसमय में ७ प्रकृतियों की सत्त्वव्युच्छित्ति एकसाथ होती है। विशेष यह है कि जो जीव पुरुषवेद के उदयसहित श्रेणी चढ़ता है उसके अंतिम एक समय कम दो आवलियों में बाँधे हुए नवीन समयप्रबद्ध सत्ता में रहते हैं। इसलिए उसके छह नोकषायों की ही सत्त्वव्युच्छित्ति होती है और पाँच का सत्त्व पाया जाता है।

जिनका बन्ध हुए थोड़ा समय हुआ हो और जो संक्रमण आदि करने के योग्य न हों ऐसे नवीन समयप्रबद्ध के निषेकों को नवक समयप्रबद्ध कहते हैं। कोई भी समयप्रबद्ध अपने अपने बन्ध के प्रथम समय से लेकर आवलिप्रमाण कालतक अन्य अवस्था को प्राप्त नही होते अत: इस आवलि काल को अचलावली कहते हैं। उस अचलावली के बीतनेपर प्रत्येक समय में उन नवक समयप्रबद्ध में से एक एक फालि परमुखरूप से संक्रमित होती है। जब पुरुषवेद की बंधव्युच्छित्ति हुई तब एक समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध संक्रमण के बिना शेष रहे थे उनका क्षय होने के लिए भी एक समय कम दो आवलिमात्र काल लगता है। पुरुषवेद की प्रथमस्थिति के आवली प्रमाण निषेक शेष रहते हैं उनको उच्छिष्टावलि कहते हैं। वे उच्छिष्टावली के निषेक भी आवलिकाल में पररूप से स्तिबुक संक्रमण द्वारा उदय में आकर क्षय को प्राप्त होते हैं। अत: ७ नोकषायों की क्षपणाकाल के अंतिम समय में पुरुषवेद से श्रेणी चढ़नेवाले के एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध व उच्छिष्टावली मात्र निषेक सत्ता में रहते हैं इसलिए उसके केवल ६ नोकषायों की सत्त्वव्युच्छित्ति होकर पाँच प्रकृतियों का सत्त्व रहता है। एक समय कम दो आवलीप्रमाण समयप्रबद्ध संक्रमण के बिना शेष रहते हैं। जैसे नवकसमयप्रबद्ध की संदृष्टि चार का अंक आवली का प्रमाण भी चार माना।

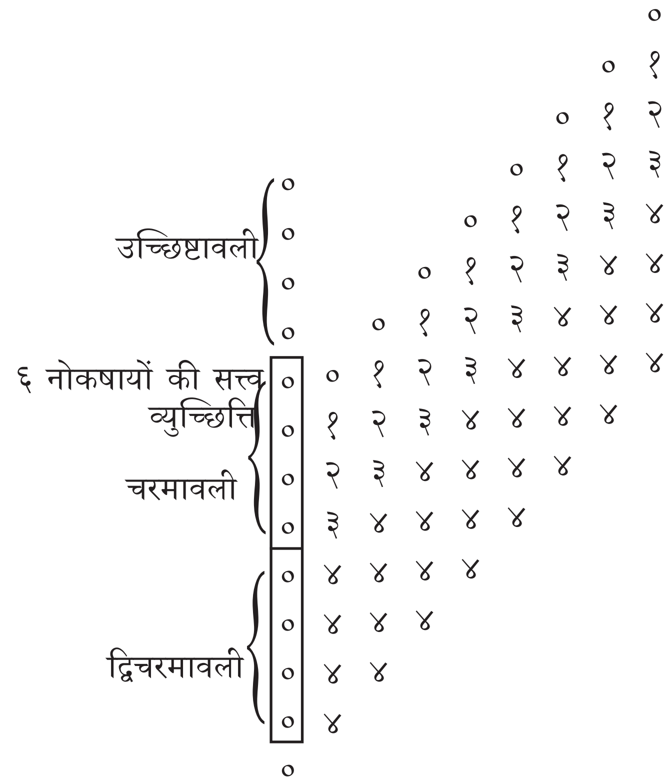

द्विचरमावली के प्रथम समय में बंधा हुआ समयप्रबद्ध ४, उसका बंधसमय से लेकर एक आवली कालतक संक्रमण नहीं हुआ। चरमावली के प्रथम समय में एक फाली का संक्रमण होकर क्षय हुआ, शेष तीन फाली का सत्त्व रहा। फिर क्रम से एक एक समय में एक एक फाली का संक्रमण होकर चरमावली के अन्तिम समय में अन्तिम फाली का संक्रमण होकर वह समयप्रबद्ध क्षीण हुआ। द्विचरमावली के द्वितीय समय में एक समयप्रबद्ध का बंध हुआ उसका अचलावली बीतनेपर चरमावली के द्वितीय समय से संक्रमण प्रारंभ हुआ एक एक समय में एक एक फाली का संक्रमण होकर चरमावली के अंतिम समय में एक अंतिम फाली को छोड़कर शेष सर्व द्रव्य संक्रमित हो गया। इसीप्रकार द्विचरमावली के तीसरे समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का चरमावली के तीसरे समय से संक्रमण प्रारंभ होकर अंतिम समय में दो फाली शेष रहकर शेष सर्व द्रव्य संक्रमित हुआ। द्विचरमावली के अंतिम समय में बंधे समयप्रबद्ध की एक फाली ही संक्रमित हुई, शेष सर्व सत्त्व रहता है। चरमावली के प्रत्येक समय में बंधे सर्व समयप्रबद्ध संक्रमित नहीं हुए। सर्व सत्ता में रहते हैं,

इसप्रकार पुरुषवेद के उदयव्युच्छित्ति और क्षपणा के अंतिम समय में एक समय कम दो आवलीप्रमाण समयप्रबद्ध सत्ता में शेष रहते हैं। यहाँ गलने के पश्चात् अवशेष समयप्रबद्ध के जो निषेक रहतें है वे समयप्रबद्ध के अंश हैं लेकिन उनको भी समयप्रबद्ध कहा है।

वे एक समय कम दो आवलीप्रमाण समयप्रबद्ध उतने ही काल में क्रोधरूप परिणमन करके नष्ट होते हैं। अत: एक समय कम दो आवलीमात्र कालतक पाँच का सत्त्व पाया जाता है। नपुंसकवेद और स्त्रीवेद के साथ श्रेणी चढ़नेवाले के पाँच का सत्त्वस्थान नहीं पाया जाता क्योंकि उनके ७ नोकषाय का क्षय युगपत् होता है। क्योंकि उनके पुरुषवेद की बंधव्युच्छित्ति होती है अनन्तर नपुंसक या स्त्रीवेद की उदयव्युच्छित्ति होती है उसके अनन्तर ७ नोकषायों की क्षपणा का प्रारंभ होता है। और ७ नोकषायों का क्षय भी एकसाथ होता है। बंध का अभाव होने से नवक समयप्रबद्ध का सत्त्व नहीं रहता है।

नपुंसकवेदसहित श्रेणि में			**स्त्रीवेदसहित श्रेणि में**			**पुरुष वेदसहित श्रेणि में**		
क्षपणाकाल	**बंध स्थान**	**सत्त्व स्थान**	**क्षपणाकाल**	**बंध स्थान**	**सत्त्व स्थान**	**क्षपणाकाल**	**बंध स्थान**	**सत्त्व स्थान**
सं. बा.लोभ	१	१	सं. बा.लोभ	१	१	सं. बा.लोभ	१	१
सं. माया	२	२	सं. माया	२	२	सं. माया	२	२
सं. मान	३	३	सं. मान	३	३	सं. मान	३	३
सं. क्रोध	४	४	सं. क्रोध	४	४	सं. क्रोध अपगतवेद	४ ४	४ ५
७ नोकषाय	४	११	७ नोकषाय	४	११	७ नोकषाय क्षपणा	५	११
पुरुषवेद की बंधव्युच्छित्ति द्विचरम. समय अंतिम समय में	५ ४	१३ १३	स्त्रीवेद अंतिम समय द्विचर.समयतक	४ ५	१२ १२	स्त्रीवेदक्षपणा	५	१२
स्त्री व नपुं. युगपत्क्षपणा	५	१३	नपुंसकवेद	५	१३	नपुंसकवेद. क्षपणा	५	१३
८ मध्यम कषाय	५	२१	८ मध्यम कषाय	५	२१	८ मध्यम कषाय	५	२१

जो नपुंसकवेदसहित श्रेणि चढ़ता है उसके वेदसहित अन्तिम समय में चार का बन्ध और तेरह का सत्त्व होता है। जो स्त्रीवेद के उदयसहित श्रेणि चढ़ता है उसके उसी समय में बारह प्रकृतियों का सत्त्व होता है। दोनों के वेदरहित चार प्रकृतियों के बन्धवाले स्थान में ग्यारह का सत्त्व होता है। पुनः सात नोकषायों का क्षय होनेपर चार प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होता है।

तीनों ही वेदों के उदयसहित श्रेणी चढ़नेवालों के जहाँ तीन, दो और एक प्रकृति का बन्ध पाया जाता है ऐसे तीन भागों में क्रम से तीन, दो और एक प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होता है। यहाँ पूर्ववत् नवकबन्ध के एक समय कम दो आवलीप्रमाण समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली मात्र उदय से शेष प्रथम स्थिति के निषेक यद्यपि हैं तथापि यहाँ उनकी विवक्षा नहीं है।

उनकी विवक्षा करनेपर तीन के बन्धस्थान में चार और तीनका सत्त्व, दो के बन्धस्थान में तीन और दो का सत्त्व, एक के बन्धस्थान में दो और एक प्रकृति का सत्त्व पाया जायेगा। परन्तु उनकी विवक्षा नहीं की।

मोहनीय कर्म के बन्धस्थानों में सत्त्वस्थान कहते हैं -

तिण्णेव दु बावीसे इगिवीसे अट्ठवीस कम्मंसा ।
सत्तर तेरे णवबंधगेसु पंचेव ठाणाणि ।।५१६।।
पंचविधचदुविधेसु य छसत्त सेसेसु जाण चत्तारि ।
उच्छिट्ठावलिनवकं अविवक्खिय सत्तठाणाणि ।।५१७।।

अन्वयार्थ - मोहनीयकर्म के **(बावीसे)** बाईस प्रकृतिरूप बन्धस्थान में **(कम्मंसा)** कर्मांश अर्थात् सत्त्वस्थान **(तिण्णेव)** २८, २७, २६ प्रकृतिक तीन ही हैं **(इगिवीसे)** इक्कीस प्रकृतिक बन्धस्थान में **(अट्ठवीस)** अट्ठाईस प्रकृतिक एक सत्त्वस्थान है **(सत्तरतेरेणवबंधगेसु)** सतरह, तेरह और नौ प्रकृतिक बंधस्थान में **(पंचेव ठाणाणि)** २८-२४-२३-२२ और २१ प्रकृतिक पाँच ही सत्त्वस्थान हैं। **(पंचविधचदुविधेसु)** पाँच प्रकृतिक बंधस्थान में और चार प्रकृतिक बंधस्थान में क्रम से **(छ सत्त)** २८-२४-२१-१३-१२-११ प्रकृति रूप से छह और २८,२४,२१,१३,१२,११ और ४ प्रकृतिरूप सात सत्त्वस्थान हैं **(सेसेसु)** शेष अर्थात् तीन, दो और एक प्रकृतिक बन्धस्थान में **(चत्तारि)** २८-२४-२१ ये तीन तथा क्रमशः ३,२,१ प्रकृतिरूप एक-एक इसप्रकार चार-चार

सत्त्वस्थान **(जाण)** जानो। **(उच्छिट्ठावलिणवकं)** यहाँ पर उच्छिष्टावली और नवकसमयप्रबद्ध की **(अविवेक्खिय)** विवक्षा न करके **(सत्तठाणाणि)** सत्त्वस्थान कहे हैं।

बन्धस्थान	सत्त्वस्थान संख्या	सत्त्वस्थान
२२	३	२८-२७-२६
२१	१	२८
१७	५	२८,२४,२३,२२,२१
१३	५	२८,२४,२३,२२,२१
९	५	२८,२४,२३,२२,२१
५	६	२८,२४,२१,१३,१२,११
४	७	२८,२४,२१,१३,१२,११,४
३	४	२८,२४,२१,३
२	४	२८,२४,२१,२
१	४	२८,२४,२१,१

विशेषार्थ - उपर्युक्त सत्त्वस्थान भी उच्छिष्टावली तथा नवक समयप्रबद्ध की विवक्षा के बिना कहे हैं। अत: चार के बन्धस्थान में पाँच प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान नहीं कहा। उसीप्रकार तीन, दो, एक प्रकृतिरूप बन्धस्थान में क्रम से चार, तीन, दो प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान नहीं कहा।

दस णव पण्णरसाइं बंधोदयसत्तपयडिठाणाणि ।
भणिदाणि मोहणिज्झे एत्तो णामं परं वोच्छं ।। ५१८।।

अन्वयार्थ - इस प्रकार **(मोहणिज्झे)** मोहनीय में **(दसणवपण्णरसाइं बंधोदयसत्त पयडिठाणाणि)** दस बन्धस्थान, नौ उदयस्थान और पन्द्रह सत्त्वस्थान **(भणिदाणि)** कहे। **(एत्तो परं)** आगे **(णामं)** नामकर्म के बन्ध उदय सत्त्वस्थान **(वोच्छं)** कहेंगे।

विशेषार्थ - इसप्रकार मोहनीय के बन्धस्थान १०, उदयस्थान ९, सत्त्वस्थान १५ कहे हैं।

बन्धस्थान १०	२२	२१	१७	१३	९	५	४	३	२	१						
उदयस्थान ९	१०	९	८	७	६	५	४	२	१							
सत्त्वस्थान १५	२८	२७	२६	२४	२३	२२	२१	१३	१२	१२	११	५	४	३	२	१

अब नामकर्म के स्थानों के आधारभूत इकतालीस जीवपदों को कहते हैं -

णिरया पुण्णा पण्हं बादरसुहुमा तहेव पत्तेया ।
वियलासण्णी सण्णी मणुवा पुण्णा अपुण्णा य ।।५१९।।
सामण्णतित्थकेवलि उहय समुग्घादगा य आहारा ।
देवावि य पज्जत्ता इदि जीवपदा हु इगिदाला ।।५२०।।

अन्वयार्थ - (णिरया पुण्णा) सब नारकी जीव पर्याप्त ही हैं। **(पण्हं)** पाँच अर्थात् पृथ्वी, जल, तेज, वायु और साधारण वनस्पति ये पाँचो ही **(बादर सुहुमा)** बादर और सूक्ष्म तथा **(पत्तेया)** प्रत्येक वनस्पति, **(वियला सण्णी)** विकलत्रय अर्थात् द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय **(सण्णी)** संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच **(मणुवा)** मनुष्य ये १७ **(पुण्णा अपुण्णा य)** पर्याप्त और अपर्याप्त हैं अत: चौंतीस हुए। **(सामण्णतित्थकेवली)** सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली **(उहयसमुग्घादगा य)** दोनों समुद्घातगत अर्थात् सामान्य समुद्घात केवली, तीर्थंकर समुद्घातगत केवली **(आहारा)** आहारक शरीरी **(देवावि)** देव ये ६ **(पज्जत्ता)** पर्याप्त ही होते हैं **(इदि)** इस प्रकार **(जीवपदा हु)** जीवपद **(इगिदाला)** इकतालीस हैं।

नामकर्म के स्थानों के आधारभूत इकतालीस ४१ जीवपद

जीवपद क्र.	जीवपद	पर्याप्त	अपर्याप्त
१	नारकी	पर्याप्त	
२,३	पृथ्वीकायिक बादर	पर्याप्त	अपर्याप्त
४,५	पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	पर्याप्त	अपर्याप्त
६,७	अप्कायिक बादर	पर्याप्त	अपर्याप्त
८,९	अप्कायिक सूक्ष्म	पर्याप्त	अपर्याप्त
१०,११	तेजस्कायिक बादर	पर्याप्त	अपर्याप्त
१२,१३	तेजस्कायिक सूक्ष्म	पर्याप्त	अपर्याप्त
१४,१५	वायुकायिक बादर	पर्याप्त	अपर्याप्त
१६,१७	वायुकायिक सूक्ष्म	पर्याप्त	अपर्याप्त
१८,१९	साधारणवनस्पति बादर	पर्याप्त	अपर्याप्त
२०,२१	साधारणवनस्पति सूक्ष्म	पर्याप्त	अपर्याप्त
२२,२३	प्रत्येक वनस्पति	पर्याप्त	अपर्याप्त
२४,२५	द्वीन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२६,२७	त्रीन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२८,२९	चतुरिन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३०,३१	असंज्ञी पंचेन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३२,३३	संज्ञी पंचेन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३४,३५	मनुष्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
३६	सामान्य केवली	पर्याप्त	-
३७	तीर्थंकर केवली	पर्याप्त	-
३८	समुद्धातगत सा. केवली	पर्याप्त	-
३९	समुद्धातगत तीर्थ.केवली	पर्याप्त	-
४०	आहारक	पर्याप्त	-
४१	देव	पर्याप्त	-

नामकर्म के बन्धस्थानों के आधारभूत कर्मपद ३६

कर्मपद क्र.	कर्मपद	पर्याप्त	अपर्याप्त
१	नरकगति नामकर्म	पर्याप्त	-
२,३	पृथ्वीकायिक स्था. बादर एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
४,५	पृथ्वीकायिक स्था. सूक्ष्म एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
६,७	अप्कायिक स्था. बादर एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
८,९	अप्कायिक स्था. सूक्ष्म एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
१०,११	तेजस्कायिक स्था. बादर एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
१२,१३	तेजस्कायिक स्था. सूक्ष्म एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
१४,१५	वायुकायिक स्था. बादर एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
१६,१७	वायुकायिक स्था. सूक्ष्म एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
१८,१९	साधारणवनस्पति स्था. बादर एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२०,२१	साधारणवनस्पति स्था. सूक्ष्म एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२२,२३	प्रत्येक वनस्पति स्था. एकेंन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२४,२५	त्रसविशिष्ट द्वीन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२६,२७	त्रसविशिष्ट त्रीन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
२८,२९	त्रसविशिष्ट चतुरिन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३०,३१	त्रसविशिष्ट असंज्ञी पंचेन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३२,३३	त्रसविशिष्ट संज्ञी पंचेन्द्रिय	पर्याप्त	अपर्याप्त
३४,३५	मनुष्यगति नाम	पर्याप्त	अपर्याप्त
३६	देवगति नाम	पर्याप्त	-

विशेषार्थ - ४१ जीवपद में से ४ केवली और आहारक ये पाँच पद कम करनेपर ३६ कर्मपद होते हैं। नामकर्म के बन्धस्थानों की विवक्षा होनेपर ये कर्मपद हैं क्योंकि इन प्रकृतिरूप नामकर्म का बन्ध होता है।

उदय तथा सत्त्व की विवक्षा में जीवपद हैं क्योंकि इनका उदय और सत्त्व जीव में पाया जाता है।

अब नामकर्म के बन्धस्थानों को कहते हैं-

तेवीसं पणुवीसं छव्वीसं अट्ठवीसमुगतीसं ।
तीसेक्कतीसमेवं एक्को बंधो दु सेढिम्मि ।।५२१।।

अन्वयार्थ -(तेवीसं) तेईस **(पणवीसं)** पच्चीस **(छव्वीसं)** छब्बीस **(अट्ठवीसं)** अट्ठाईस **(उगतीसं)** उनतीस **(तीसेक्कतीसं)** तीस, एकतीस प्रकृतिरूप ये ७ बन्धस्थान **(दुसेढिम्मि)** दोनों श्रेणियों में **(एक्को बंधो)** एक प्रकृतिरूप एक बन्धस्थान इस प्रकार नामकर्म के ८ बन्धस्थान हैं।

विशेषार्थ - नामकर्म के बन्धस्थान आठ ८ हैं -

२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१

प्रथम सात बन्धस्थान प्रथम गुणस्थान से आठवें गुणस्थान के छठेभागतक यथायोग्य होते हैं। एक प्रकृतिक बन्धस्थान आठवें गुणस्थान के सातवें भाग से दसवें गुणस्थानतक दोनों श्रेणियों में होता है।

पूर्वोक्त बन्धस्थान किस किस कर्मपद सहित बंधते हैं वह कहते हैं-

ठाणमपुण्णेण जुदं पुण्णेण य उवरि पुण्णगेणेव ।
तावदुगाणण्णदरेणण्णदरेणमरणिरयाणं ।।५२२।।
णिरयेण विणा तिण्हं एक्कदरेणेवमेव सुरगइणा ।
बंधंति विणा गइणा जीवा तज्जोग्गपरिणामा ।।५२३।।

अन्वयार्थ - (ठाणमपुण्णेण जुदं) तेईस प्रकृतिरूप स्थान अपर्याप्त सहित **(पुण्णेण य)** पच्चीस प्रकृतिक स्थान पर्याप्त सहित और च शब्द से अपर्याप्तसहित **(उवरि पुण्णगेणेव तावदुगाणण्णदरेण)** ऊपर का छब्बीस का स्थान पर्याप्त के साथ ही तथा आतप उद्योत में से किसी एक प्रकृतिसहित **(अमरणिरयाणं अण्णदरेण)** अट्ठाईस प्रकृतिरूप स्थान देव नरक में से किसी एक गतिसहित **(णिरयेण विणा तिण्हं एक्कदरेण)** उनतीस और तीस प्रकृतिरूप स्थान नरकगति के बिना तीन गतियों में से किसी एक गति के साथ **(एवमेव सुरगइणा)** इकतीस प्रकृतिक स्थान देवगति के साथ **(बंधंति)** बंधते हैं और **(गइणा विणा)** एक प्रकृतिरूप स्थान गति के बिना बंधता है। **(तज्जोगपरिणामा)** इन स्थानों के योग्य परिणामवाले **(जीवा)** जीव इन स्थानों को बांधते हैं।

किस किस कर्मपद के साथ इनका बंध होता है वह कहते हैं :-

बन्धस्थान	कर्मपद
२३	अपर्याप्त (एकेन्द्रिय) सहित
२५	एकेन्द्रिय पर्याप्त, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरि., पंचे., मनुष्य अपर्याप्तयुत
२६	एकेन्द्रिय पर्याप्त आतप अथवा उद्योतयुत
२८	पर्याप्त देव, नारकयुत
२९	द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, मनुष्य पर्याप्तयुत, देवतीर्थयुत
३०	द्वी., त्री., चतु., पंचे.,पर्याप्त उद्योतयुत, मनुष्यतीर्थयुत, देवआहारकयुत
३१	पर्याप्त देव तीर्थ आहारकयुत
१	पर्याप्तयुत गतिरहित

भूबादरपज्ञत्तेणादावं बंधजोग्गमुज्ञोवं ।
तेउतिगूणतिरिक्खपसत्थाणं एगदरगेण ।।५२४।।

अन्वयार्थ - (आदावं) आतप प्रकृति **(भूबादर पज्ञत्तेण)** बादर पर्याप्त पृथ्वीकाय के साथ ही **(बंधजोग्गं)** बन्धयोग्य है। **(उज्ञोवं)** उद्योत प्रकृति **(तेउतिगूणतिरिक्खपसत्थाणं)** तेजत्रिक अर्थात् तेज वायु, साधारण वनस्पति से रहित तिर्यंच संबंधी पुण्य प्रकृतियों में से **(एगदरगेण)** किसी एक प्रकृति के साथ बन्धयोग्य है।

णरगइणामरगइणा तित्थं देवेण हारमुभयं च ।
संजदबंधट्ठाणं इदराहि गईहि णत्थि त्ति ।।५२५।।

अन्वयार्थ - (तित्थं) तीर्थंकर प्रकृति **(णरगइणा अमरगइणा)** मनुष्यगति के साथ और देवगति के साथ ही बन्धयोग्य है **(हारं)** आहारकद्विक का **(देवेण)** देवगति के साथ **(च)** और **(उभयं)** आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृति का भी देवगति के साथ **(संजदबंधट्ठाणं)** संयत मनुष्य ही बन्ध करते हैं। **(इदराहि गईहि)** इतर गतियों के साथ **(णत्थित्ति)** बंध नहीं होता ऐसा जानना।

विशेषार्थ - जिस स्थान को जो परिणाम योग्य हो उस परिणामसहित जीव उस उस स्थान को बांधता है।

प्रकृति	किस कर्मपद के साथ बंधने का नियम
आतप	पृथ्वीकाय बादर पर्याप्त के साथ
उद्योत	बादर पृथ्वी, जल, प्रत्येकवनस्पति पर्याप्त के साथ (२६ का बंधस्थान) द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी, पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्त के साथ (३० का बंधस्थान)
तीर्थंकर	मनुष्यगति के साथ ३० का बंधस्थान देव नारकी करते हैं, देवगति के साथ २९ का बं.स्था. ४ से ८ वें के छठे भागतक मनुष्य करते हैं।
आहारक	देवगति के साथ ३० का बं.स्था. संयमी मुनि ७,८ गुण.वर्ती करते हैं।
आहारक } तीर्थंकर }	देवगति के साथ ३१ का बंधस्थान संयमी मुनि ७, ८ गुणस्थानवर्ती करते हैं।

आगे तेईस आदि स्थानों की प्रकृतियाँ जानने के लिये प्रकृतियों के बंध का नियम कहते हैं-

णामस्स णव धुवाणि य सरूणतसजुम्मगाणमेक्कदरं ।
गइजाइदेहसंठाणाणूणेक्कं च सामण्णा ।। ५२६।।

अन्वयार्थ - (णामस्स) नामकर्म की **(णव)** नौ **(धुवाणि)** ध्रुवबन्धी प्रकृतियाँ तथा **(सरूणतसजुम्मगाणमेक्कदरं)** स्वर के युगल बिना त्रसादि नवयुगलों में से एक-एक ये ९ प्रकृतियाँ **(गइजाइदेहसंठाणाणूणेक्कं)** चार गति, पाँच जाति, तीन शरीर, छह संस्थान, चार आनुपूर्वी इनमें से एक-एक का बन्ध होता है। इस प्रकार २३ प्रकृतियाँ **(सामण्णा)** सामान्य से सभी जीवों के बंधती हैं।

तसबंधेण य संहदि अंगोवंगाणमेगदरगं तु ।
तप्पुण्णेण य सरगमणाणं पुण एगदरगं तु ।।५२७।।

अन्वयार्थ - (तसबंधेण) त्रस प्रकृति के बंध के साथ **(संहदिअंगोवंगाणमेगदरगं)** छह संहनन और अंगोपांग में से किसी एक प्रकृति का बंध होता है **(तप्पुण्णेण)** त्रसपर्याप्त के बंध के साथ **(सरगमणाणं पुण एगदरगं)** स्वरयुगल

और विहायोगतियुगल में से एक-एक प्रकृति का बन्ध होता है।

पुण्णेण समं सव्वेणुस्सासो णियमसा दु परघादो ।
जोग्गट्ठाणे तावं उज्जोवं तित्थमाहारं ।।५२८।।

अन्वयार्थ - (सव्वेण पुण्णेण समं) सभी पर्याप्त प्रकृति के साथ **(उस्सासो परघादो)** उच्छ्वास और परघात **(णियमसा)** नियम से बंधयोग्य हैं। **(जोग्गट्ठाणं)** अपने योग्य नामपद में **(तावं उज्जोवं तित्थमाहारं)** आतप, उद्योत, तीर्थंकर और आहारकद्विक बन्धयोग्य हैं।

तित्थेणाहारदुगं एक्कसराहेण बंधमेदीदी ।
पक्खित्ते ठाणाणं पयडीणं होदि परिसंखा ।।५२९।।

अन्वयार्थ - (तित्थेणाहारदुगं) तीर्थंकर के साथ आहारकद्विक का **(एक्कसराहेण)** एकसाथ **(बंधमेदि)** बन्ध होता है। **(इदि)** इस प्रकार **(पक्खित्ते)** यथासंभव प्रकृतियों को मिलाने पर **(ठाणाणं पयडीणं)** स्थानों की और प्रकृतियों की **(परिसंखा)** संख्या **(होदि)** होती हैं।

विशेषार्थ - नामकर्म की ध्रुवबंधी ९ प्रकृति - तैजस शरीर, कार्मणशरीर (तैजसद्विक) अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णचतुष्क

बंधयोग्य सामान्य २३ प्रकृति- ९ ध्रुवप्रकृति, स्वरयुगल छोड़कर त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय, यश:कीर्तियुगलों में से एक एक ये नौ, गति, जाति, शरीर, संस्थान, आनुपूर्वी इन पाँच पिण्डप्रकृतियों में से एक एक। इसप्रकार ९ ध्रुवप्रकृति + ९ युगलों में से एक एक + ५ पिंडप्रकृतियों में से एक एक =२३ का बंध सर्व जीवों को होता है।

प्रकृति	बंध का नियम
६ संहनन, ३ अंगोपांग में से एक-एक	त्रसपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त के साथ
स्वरयुगल, विहायोगतियुगल	त्रसपर्याप्त के साथ
उच्छ्वास, परघात	त्रस अथवा स्थावर पर्याप्तसहित
आतप, उद्योत, तीर्थंकर, आहारक	उपर्युक्त कोष्टक में बताया है।

नामकर्म की ९३ प्रकृतियों में से ६७ प्रकृतियाँ बंधयोग्य मानी हैं।

९३-२६ (५ बंधन, ५ संघात, १६ वर्णादिक) = ६७ बंधयोग्य

सामान्य बंधयोग्य प्रकृतियाँ २३ में यथायोग्य प्रकृति मिलाने से बंधस्थान व प्रकृतियों की संख्या निकलती है। तीर्थंकर व आहारकद्विक का युगपत् भी बंध होता है।

एयक्ख अपज्जत्तं इगिपज्जत्तबितिचपणराऽपज्जत्तं ।
एइंदियपज्जत्तं सुरणिरयगईहि संजुत्तं ।।५३०।।
पज्जत्तगबितिचप-मणुस्स-देवगदिसंजुदाणि दोण्णि पुणो।
सुरगइजुदमगइजुदं बंधट्ठाणाणि णामस्स ।।५३१।।

अन्वयार्थ - २३ प्रकृतिक स्थान **(एयक्खअपज्जत्तं)** एकेन्द्रिय अपर्याप्तसहित है, २५ प्रकृतिक स्थान **(इगिपज्जत्तबितिचपणराऽपज्जत्तं)** एकेन्द्रिय पर्याप्त, द्वीन्द्रिय-त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय-पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य अपर्याप्त सहित है, २६ प्रकृतिक स्थान **(एइंदियपज्जत्तं)** एकेन्द्रिय पर्याप्तयुक्त, २८ प्रकृतिक स्थान **(सुरणिरयगईहिं सुजुत्तं)** देवगति और नरकगति से संयुक्त है, **(दोण्णि पुणो)** २९ और ३० प्रकृतिक दो स्थान **(पज्जत्तगवितिचपमणुसदेवगदिसंजुदाणि)** पर्याप्त द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्यगति और देवगति संयुक्त हैं **(पुणो)** पुनः इकतीस प्रकृतिरूप स्थान **(सुरगदिजुदं)** देवगतिसंयुक्त है, एक प्रकृतिक स्थान **(अगदिजुदं)** गति रहित है इस प्रकार **(णामस्स)** नामकर्म के **(बंधट्ठाणाणि)** बंधस्थान जानना।

नामकर्म के बंधस्थान व प्रकृतियों का विवरण

बंध स्थान	प्रकार	संकेताक्षर	प्रकृति विवरण
१) २३	एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत	ए. अ.	९ ध्रुवप्रकृति, स्थावर, अपर्याप्त, बादर सूक्ष्म में से १, प्रत्येक साधारण में १, अस्थिर १, अशुभ १, दुर्भग, अनादेय, अयश ये ९ और तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय, औ. शरीर, हुंडकसंस्थान, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी

बंध स्थान	प्रकार	संकेताक्षर	प्रकृति विवरण
२)२५ १)	एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत	ए. प.	२५=उपर्युक्त २३-१ अपर्याप्त +३ पर्याप्त, उच्छ्वास,परघात यहाँ स्थिरअस्थिर में से१ शुभअशुभ में से १, यशअयश में से १, ऐसा कहना चाहिए।
२)	द्वीन्द्रिय अपर्याप्तयुत	द्वि. अ.	२५=उपर्युक्त २३-२ स्थावर, एकेन्द्रिय+४ त्रस, द्वीन्द्रिय, सृपाटिका संहनन, औदारिक अंगोपांग
३)	त्रीन्द्रियअपर्याप्त	त्री. अ.	२५=उपर्युक्त द्वीन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५-१ द्वीन्द्रिय + १ त्रीन्द्रिय
४)	चतुरिन्द्रियअपर्याप्त	च. अ.	२५=उपर्युक्त त्रीन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५-१ त्रीन्द्रिय + १ चतुरिन्द्रिय
५)	पंचेन्द्रियअपर्याप्त	पं. अ.	२५=उपर्युक्त चतुरिन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५-१ चतुरिन्द्रिय + १ पंचेन्द्रिय
६)	मनुष्यअपर्याप्तयुत	म. अ.	२५=उपर्युक्त पंचेन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५-२ तिर्यंचगति, तिर्यंचानुपूर्वी + २मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी
३)२६ १)	एकेंद्रियपर्याप्त आतपयुत	ए.प.आ.	२६ = उपर्युक्त एकेन्द्रियपर्याप्तयुत २५+१ आतप
२)	एकेंद्रियपर्याप्त उद्योतयुत	ए.प.उ.	२६ = उपर्युक्त एकेंद्रियपर्याप्तयुत २५+१ उद्योत
४)२८ १)	देवगतियुत	दे.	२८ = ९ध्रुवप्रकृति +१०त्रस,बादर,पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिरअस्थिर में से१,शुभाशुभ में से १, सुभग,सुस्वर, आदेय, यशअयशमें से १+९ देवगति,देवगत्यानुपूर्वी, पंचेन्द्रिय, वैक्रियिक शरीर,वै.अंगोपांग, समचतुरस्र संस्थान,परघात, उच्छ्वास, प्र.विहायोगति

बंध स्थान	प्रकार	संकेताक्षर	प्रकृति विवरण
४)२८	२) नरकगतियुत	न.	२८ = ९ ध्रुवप्रकृति +१०त्रस,बादर,पर्याप्त, प्रत्येक,अस्थिर,अशुभ,दुर्भग,दुस्वर,अनादेय, अयश+९ नरकगति,नरकानुपूर्वी, पंचेन्द्रिय, वैक्रियिक शरीर,वै.अंगोपांग, हुंडकसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्तविहायोगति
५)२९	१) द्वीन्द्रियपर्याप्तयुत	द्वि. प.	२९=९ ध्रुव+१० त्रस,बादर,पर्याप्त,प्रत्येक, स्थिरअस्थिर में से १,शुभाशुभ में से १, दुर्भग,दुस्वर,अनादेय,यशअयश में से १ + १० तिर्यंचगति,तिर्यंचानुपूर्वी,द्वीन्द्रिय, औ. शरीर,औ.अंगोपांग,हुंडकसंस्थान,सृपाटिका संहनन,परघात,उच्छ्वास,अप्र.विहायोगति
	२) त्रीन्द्रियपर्याप्तयुत	त्री. प.	२९= उपर्युक्त द्वि.प. २९ में से द्वीन्द्रिय निकालकर १ त्रीन्द्रिय मिलाना
	३)चतुरिन्द्रियपर्याप्तयुत	च. प.	२९= उपर्युक्त त्री.प. २९ में से त्रीन्द्रिय निकालकर १ चतुरिन्द्रिय मिलाना
	४) पंचेन्द्रियपर्याप्तयुत	पं. प.	२९= उपर्युक्त च.प. २९ में से चतुरिन्द्रिय निकालकर + १ पंचेन्द्रिय। विशेष यहाँ सुभगदुर्भग में से १, सुस्वरदुःस्वर में से १, आदेय अनादेय में से १, ६ संस्थानों में से १,६ संहननों में से १,विहायोगतियुगल में से एक ऐसा कहना चाहिए।
	५) मनुष्यपर्याप्तयुत	म. प.	२९= उपर्युक्त पं.प. २९-२ तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी +२ मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी
	६) देवतीर्थयुत	दे. ती.	२९ =देवगतियुत २८ + १ तीर्थंकर

बंध स्थान	प्रकार	संकेताक्षर	प्रकृति विवरण
६)३०	द्वीन्द्रियपर्याप्तउद्योतयुत	द्वि. प. उ.	३०=उपर्युक्त २९ द्वी.प.प्रकार +१ उद्योत
२)	त्रीन्द्रियपर्याप्तउद्योतयुत	त्री. प.उ.	३०=उपर्युक्त त्री.प.प्रकार २९ +१ उद्योत
३)	चतुरिन्द्रियप.उद्योतयुत	च. प.उ.	३०=उपर्युक्त च.प.प्रकार २९ +१ उद्योत
४)	पंचेन्द्रिय प.उद्योतयुत	पं. प.उ.	३०=उपर्युक्त पं.प.प्रकार २९ +१ उद्योत
५)	मनुष्यतीर्थयुत	म. ती.	३०=उपर्युक्त म.प.प्रकार २९ +१ तीर्थंकर इस प्रकार का बंध चौथे गुणस्थानवर्ती देव अथवा नारकी जीव को होगा।
६)	देव आहारकयुत	दे. आ.	३०= २९ के छट्ठे प्रकार देवतीर्थयुत में तीर्थंकर निकालना, आहारकद्विक मिलाना २९-१+२=३०
७)३१	देवआहारक तीर्थयुत	दे.आ.ती.	३१ = २९ के छट्ठे प्रकार देवतीर्थयुत में + आहारकद्विक मिलाना
८)१	यश:कीर्ति	य.	इसका बंध ८ वें के सातवें भाग से १० वें गुणस्थानतक होता है।

अब नामकर्म के बन्धस्थानों के भंग कहते हैं -

संठाणे संघडणे विहायजुम्मे य चरिममछज्जुम्मे ।
अविरुद्धेक्कदरादो बंधट्ठाणेसु भंगा हु ।।५३२।।

अन्वयार्थ - **(संठाणे)** ६ संस्थान **(संघडणे)** ६ संहनन **(विहायजुम्मे)** विहायोगतियुगल **(य)** और **(चरिमछज्जुम्मे)** स्थिरादि अंतिम छह युगल इन सभी में से **(अविरुद्धेक्कदरादो)** अविरुद्ध एक-एक प्रकृति का बन्ध होने से **(बंधट्ठाणेसु)** बंधस्थानों में **(भंगा हु)** ४६०८ भंग होते हैं। (६×६×२×२×२×२×२×२×२ = ४६०८)

यशस्कीर्ति	अयशस्कीर्ति	१	१				
आदेय	अनादेय	१	१				
सुस्वर	दुस्वर	१	१				
सुभग	दुर्भग	१	१				
शुभ	अशुभ	१	१				
स्थिर	अस्थिर	१	१				
प्रशस्त	अप्रशस्त विहायोगति	१	१				
संहनन ६		१	१	१	१	१	१
संहनन ६		१	१	१	१	१	१

इन पिण्ड प्रकृतियों में से एक-एक प्रकृति का बंध एक समय में होता है अत: प्रकृति के परिवर्तन से भंग होते हैं। इनको परस्पर गुणा करनेपर
६×६×२×२×२×२×२×२×२
= ६×६×१२८
=६×७६८
=४६०८ भंग होते हैं।

तत्थासत्थो णारयसव्वापुण्णेण होदि बंधो दु ।
एक्कदराभावादो तत्थेक्को चेव भंगो दु ।।५३३।।

अन्वयार्थ - (णारयसव्वापुण्णेण) नरकगति और सब अपर्याप्त के साथ **(तत्थ)** उनमें से **(असत्थो)** अप्रशस्त प्रकृति का ही **(बंधो)** बंध **(होदि)** होता है इसलिए **(एक्कदराभावादो)** किसी एक प्रकृति के बंध का अभाव होने से **(तत्थ)** नरक और सब अपर्याप्त सहित बंधस्थानों में **(एक्को चेव भंगो)** एक ही भंग होता है।

तत्थासत्थं एदि हु साहारणथूलसव्वसुहुमाणं ।
पज्जत्तेण य थिरसुहजुम्मेक्कदरं तु चदुभंगा ।।५३४।।

अन्वयार्थ - (तत्थ) उनमें **(साहारणथूलसव्वसुहुमाणं)** बादर साधारण और सब सूक्ष्मों के स्थान में **(पज्जत्तेण य)** पर्याप्त के साथ **(असत्थं एदि)** अप्रशस्त प्रकृतियों का बंध होता है **(तु)** किंतु **(थिरसुहजुम्मेक्कदरं)** स्थिरयुगल और शुभयुगल में से किसी एक प्रकृति का बंध होता है अत: यहाँ चार भंग हैं।

पुढवी आऊ तेऊ वाऊ पत्तेय वियलसण्णीणं ।
सत्तेण असत्थं थिरसुहजसजुम्मट्ठभंगा हु।।५३५।।

अन्वयार्थ - **(पुढवीआऊतेऊवाऊपत्तेयवियलसण्णीणं)** पृथ्वी, जल, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय-त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय युत स्थानों में **(सत्थेण असत्थं)** प्रशस्त के साथ अप्रशस्त का बंध होता है इसलिए **(थिरसुहजसजुम्मट्ठभंगा)** स्थिरयुगल, शुभयुगल और यश:कीर्ति युगल के आठ भंग होते हैं।

विशेषार्थ - नरकगति के साथ हुण्डक संस्थान, अप्रशस्त विहायोगति आदि अप्रशस्त प्रकृतियों का ही बंध होता है। उसीप्रकार त्रसस्थावर सहित अपर्याप्तके साथ अप्रशस्त प्रकृतियों का ही बंध होता है। अत: नरकगतिसहित अट्ठाईस के स्थान में और एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित ग्यारह पदों के २३ बन्धक स्थान में, त्रससहित छह पदों के अपर्याप्तयुत पच्चीस के स्थानों में एक एक ही भंग होता है।

इकतालीस जीवपद की अपेक्षा भेद करनेपर एकेन्द्रिय के ११ भेद हैं अत: २३ का ग्यारह पदों के साथ बन्ध होगा, त्रस पंचेन्द्रिय में असंज्ञी भेद करने से ६ भेद होते है। अत: पच्चीस अपर्याप्तयुत बन्धस्थान के छह भेद होते हैं।

एकेन्द्रिय के ग्यारह भेदों में से साधारण वनस्पति बादर पर्याप्त और सब सूक्ष्मों के पर्याप्त सहित पच्चीस के बन्धस्थान में स्थिर अस्थिर और शुभ अशुभ में से एक-एक का बन्ध होता है। शेष सब अप्रशस्त का ही बन्ध होता है। अत: इनके २×२ =४ चार-चार भंग होते हैं।

पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञीपंचेन्द्रियसहित २५,२६,२९,३० के बन्धस्थान में स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यश-अयश इन तीन युगलों में से किसी एक प्रकृति का बन्ध होता है। शेष दुर्भगादि अप्रशस्त प्रकृतियों का ही बंध होता है अत: २×२×२=८ भंग होते हैं।

सण्णिस्स मणुस्सस्स य ओघेक्कदरं तु मिच्छभंगा हु ।
छादालसयं अट्ठ य बिदिये बत्तीससयभंगा ।।५३६।।

अन्वयार्थ - **(सण्णिस्स)** संज्ञी के उनतीस के स्थान में और उद्योतसहित तीस के स्थान में **(मणुस्सस्स)** मनुष्यगति के उनतीस के स्थान में **(ओघेक्करं)** सामान्य ६ संस्थान, ६ संहनन और ७ युगलों में से एक-एक का बन्ध होता है अत: **(मिच्छभंगा)**

मिथ्यात्व गुणस्थान में भंग **(छादालसयं अट्ठ य)** छियालीस सौ आठ होते हैं **(य)** और **(बिदिये)** दूसरे गुणस्थान में **(बत्तीससयभंगा)** बत्तीस सौ भंग होते हैं। ५×५×२×२×२×२×२×२×२ =३२००

मिस्साविरदमणुस्सट्ठाणे मिच्छादिदेवजुदठाणे ।
सत्थं तु पमत्तंते थिरसुहजसजुम्मगट्ठभंगा हु ।।५३७।।

अन्वयार्थ - (मिस्साविरदमणुस्सट्ठाणे) मिश्र और असंयतगुणस्थानवर्ती देव नारकी के मनुष्यगतिसहित उनतीस प्रकृतिक स्थान में और ३० प्रकृतिक स्थान में तथा **(मिच्छादिदेवजुदठाणे)** मिथ्यात्वादि गुणस्थानों में देवगतिसंयुक्त बन्धस्थानों में **(सत्थं)** प्रशस्त प्रकृतियों का बंध होता है **(तु)** किंतु **(पमत्तंते)** प्रमत्तसंयत गुणस्थानपर्यन्त **(थिरसुहजसजुम्मगट्ठभंगा हु)** स्थिर, शुभ, यश:कीर्ति युगलों की अपेक्षा आठ भंग होते हैं।

बंध स्थान	गुण- स्थान	प्रकार-कौनसे कर्मपदसहित	भंगों का विवरण	कुल भंग
१)२३	मिथ्यात्व	एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत ग्यारह सहित	अप्रशस्त का ही बन्ध	१
२)२५	मिथ्यात्व	एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत साधारण वन. बादर,पृथ्वी,अप्,तेज,वायु साधारण सूक्ष्म इन ६ पद सहित	२ × २ स्थिरयुगल, शुभयुगल	४
	मिथ्यात्व	एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत पृथ्वी,अप्,तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति बादर इन ५ पद सहित	स्थिरयुग्म × शुभयुग्म × यशयुग्म २ × २ × २	८
	मिथ्यात्व	द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय,असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्रिय, मनुष्य अपर्याप्तपद सहित में	अप्रशस्त का ही बन्ध	१
३)२६	मिथ्यात्व	पृथ्वीकाय बादर पर्याप्त आतपयुत में पृथ्वी,अप्,प्रत्येक वनस्पति पर्याप्त उद्योतयुत में	स्थिर२ × शुभ२ × यश२ स्थिर२ × शुभ२ × यश२	८ ८

बंध स्थान	गुण-स्थान	प्रकार-किस कर्मपद के साथ	भंगों का विवरण	कुल भंग
४)२८	मिथ्यात्व	नरकगतियुत पद में	अप्रशस्त का ही बन्ध	१
	१से६गुण.	देवगतियुत पद में	स्थिर२ × शुभ२ × यश२	८
	७से८गुण.	देवगतियुत पद में अस्थिर,अशुभ,अयश की बंधव्युच्छि. छठे गुणस्थान में होती है।अत: यहाँ पर स्थिर,शुभ,यशयुग्म कृत भंग नहीं होते।	प्रशस्त का ही बन्ध	१
५)२९	मिथ्यात्व	द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत ५पदोंमें	स्थिर२ × शुभ२ × यश२	८
६)३०	मिथ्यात्व	उपर्युक्त ५ पद उद्योतयुत	स्थिर२ × शुभ२ × यश२	८
५)२९	मिथ्यात्व	संज्ञी पंचेन्द्रियपर्याप्तयुत	संहनन६×संस्थान६×स्थिर२×शुभ२×सुभग२×सुस्वर२×आदेय२×यश २×विहायोगति २	४६०८
५)२९	मिथ्यात्व	मनुष्य पर्याप्त युत	संहनन६×संस्थान६×स्थिर२×शुभ२×सुभग२×सुस्वर२×आदेय२×यश २×विहायोगति २	४६०८
६)३०	मिथ्यात्व	संज्ञी पंचेन्द्रियपर्याप्त उद्योतयुत	संहनन६×संस्थान६×स्थिर२×शुभ२×सुभग२×सुस्वर२×आदेय२×यश २×विहायोगति २	४६०८
५)२९	सासादन	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत	संहनन५×संस्थान५×स्थिरादि सात युगल २×२×२×२×२×२×२	३२००
५)२९	सासादन	मनुष्यपर्याप्तयुत	संहनन५×संस्थान५×स्थिरादि सात युगल २×२×२×२×२×२×२	३२००
६)३०	सासादन	संज्ञी पंचेन्द्रियपर्याप्त उद्योतयुत (अंतिम संहनन व संस्थान की बंध व्युच्छित्ति प्रथमगुणस्थान में हुओ)	संहनन५×संस्थान५×स्थिरादि सात युगल २×२×२×२×२×२×२	३२००

बंध स्थान	गुण-स्थान	प्रकार-कौनसे कर्मपदसहित	भंगों का विवरण	कुल भंग
५)२९	मिश्र	मनुष्यगतियुत दूसरे गुणस्थान में ४ संहनन, ४ संस्थान (दुर्भगत्रय की बंध-व्युच्छित्ति हुई)	स्थिर२× शुभ२ × यश२	८
५)२९	असंयत	मनुष्यगतियुत (देव नारकी ३रे,४थे गुणस्थान में २९,मनुष्यगति का बन्ध करते हैं)	२ × २ × २ उपर्युक्त	८
६)३०	असंयत	मनुष्यतीर्थंकरयुत (देव, नारकी बंध करते हैं)	२ × २ × २ उपर्युक्त	८
५)२९	४से६गुण.	देवतीर्थयुत	२ × २ × २ उपर्युक्त	८
	७व८गुण.	देवतीर्थयुत (छठे गुणस्थान में अस्थिर,अशुभ अयश की बंधव्युच्छित्ति होती है)	प्रशस्तका ही बंध होता है	१
६)३०	७व८गुण.	देव आहारकयुत	प्रशस्तका ही बंध होता है	१
७)३१	७व८गुण.	देवतीर्थआहारकयुत	प्रशस्तका ही बंध होता है	१
८)१	८से१०गुण.	यशस्कीर्ति	प्रशस्तका ही बंध होता है	१

आगे जीवों की गति-आगति का कथन छह गाथाओं में करते हैं-

णेरइयाणं गमणं सण्णीपज्ञत्तकम्म तिरियणरे ।
चरिमचऊ तित्थूणे तेरिच्छे चेव सत्तमिया ।।५३८।।

अन्वयार्थ - (णेरइयाणं गमणं) नारकियों का मरण करके गमन **(सण्णीपज्ञत्तकम्म- तिरियणरे)** गर्भज संज्ञी पर्याप्त कर्मभूमिजतिर्यंच और मनुष्यों में होता है **(चरमचऊ तित्थूणे)** अन्तिम चार नरकवाले जीव तीर्थंकरत्वादि के बिना मनुष्य और तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं **(सत्तमिया)** सप्तमनरकवाले जीव **(तेरिच्छे चेव)**

कर्मभूमिज गर्भज तिर्यंचों में ही उत्पन्न होते हैं।

तत्थतणऽविरदसम्मो मिस्सा मणुवदुगमुच्चयं णियमा।
बंधदि गुणपडिवण्णा मरंति मिच्छेव तत्थ भवा ।।५३९।।

अन्वयार्थ - (तत्थतणऽविरदसम्मो मिस्सो) सातवी पृथ्वी में उत्पन्न नारकी अविरत सम्यग्दृष्टी और मिश्र गुणस्थानवर्ती **(णियमा)** नियम से **(मणुवदुगमुच्चयं)** मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र का **(बंधदि)** बंध करते हैं। **(तत्थभवा गुणपडिवण्णा)** वहाँ द्वितीयादि गुणस्थान को प्राप्त हुए जीव **(मिच्छेव)** मिथ्यात्व गुणस्थान में जाकर ही **(मरंति)** मरते हैं।

तेउदुगं तेरिच्छे सेसेग अपुण्ण वियलगा य तहा ।
तित्थूणणरेवि तहाऽसण्णी घम्मे य देवदुगे ।।५४०।।

अन्वयार्थ - (तेउदुगं) तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव मरकर **(तेरिच्छे)** नियम से तिर्यंचगति में ही उत्पन्न होते हैं **(सेसेगअपुण्णवियलगा)** पर्याप्त अपर्याप्त शेष एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय मरकर तिर्यंचों में तथा **(तित्थूणणरेवि)** तीर्थंकरादि रहित मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। **(तहा)** तथा **(असण्णी)** असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच **(घम्मे)** घर्मा नामक प्रथम नरक **(य)** और **(देवदुगे)** भवनवासी और व्यंतरदेवों में उत्पन्न होते हैं।

सण्णीवि तहा सेसे णिरये भोगेवि अच्चुदंतेवि ।
मणुवा जांति चउग्गदिपरियंतं सिद्धिठाणं च ।।५४१।।

अन्वयार्थ - (तहा) उसी प्रकार **(सण्णीवि)** संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच **(सेसे णिरये)** सभी नरकों में **(भोगे)** सब भोगभूमियों में **(अच्चुदंते वि)** अच्युतपर्यंत सर्व देवों में उत्पन्न होते हैं। **(मणुवा)** कर्मभूमिज पर्याप्त मनुष्य **(चउग्गदि परियंतं)** चारों गतियों में जाते हैं। **(च)** और **(सिद्धिठाणं)** सिद्धिस्थान को भी **(जांति)** प्राप्त करते हैं।

आहारगा दु देवे देवाणं होदि कम्म तिरियणरे ।
पत्तेयपुढवि आऊ बादरपज्जत्तगे गमणं ।।५४२।।

भवणतियाणं एवं तित्थूणणरेसु चेव उप्पत्ती।
ईसाणंता एगे सदरदुगंता हु सण्णीसु ।।५४३।।

अन्वयार्थ - (आहारगा दु) आहारक शरीर सहित मरण करके **(देवे)** देवों में उत्पन्न होते हैं। **(देवाणं)** देवों का **(कम्मतिरियणरे)** संज्ञी पंचेन्द्रिय कर्मभूमिज तिर्यंच और मनुष्यों में तथा **(पत्तेयपुढविआऊबादरपज्जत्तगे)** प्रत्येक वनस्पति बादरपर्याप्त, पृथ्वीकायिक और जलकायिक में **(गमणं)** गमन होता है **(एवं)** इसी प्रकार **(भवणतियाणं)** भवनत्रिकदेवों का है किंतु **(तित्थूणणरेसु)** तीर्थंकरादिक त्रेसठशलाकारहित मनुष्यों में उनकी **(उप्पत्ती)** उत्पत्ति होती है। **(ईसाणंताएगे)** ईशानस्वर्गपर्यंत के ही देव एकेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं **(सदरदुगंत्ता)** शतारसहस्रारतक के ही देव **(सण्णीसु)** संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं।

	कौन जीव	**किस पर्याय में जन्म लेता है।**
नारक-गति	प्रथम तीन नरक के नारकी घर्मा, वंशा, मेधा	गर्भज पंचेन्द्रिय पर्याप्त संज्ञी १५ कर्म-भूमिज मनुष्य व तिर्यंचों में, लवणोद, कालोद, अर्ध स्वयंभूरमणद्वीप,स्वयंभू-रमणसमुद्र,उसके बाहर चार कोनों में जलचर,थलचर,नभचर तिर्यंचों में (चक्रवर्ती,बलभद्र,नारायण,प्रतिनारायण, ३०भोगभूमि,९६ कुभोगभूमि,असंख्यात द्वीप समुद्र के जघन्य भोगभूमि में उत्पन्न नहीं होते)
अंजना अरिष्टा मघवी माघवी	चौथे नरक के नारकी पांचवें नरक के नारकी छठे नरकके नारकी सातवें नरक के नारकी (तिर्यंचायु बिना अन्य आयु का बंध नहीं होता)	तीर्थंकर रहित पूर्वोक्त मनुष्य तिर्यंचों में चरमशरीरीबिना पूर्वोक्त मनुष्य तिर्यंचों में सकलसंयमी बिना पूर्वोक्त मनुष्य तिर्यंचों में देशसंयत, असंयत, मिश्र और सासादन बिना पूर्वोक्त मिथ्यादृष्टि तिर्यंचों में

	कौन जीव	किस पर्याय में जन्म लेता है।
तिर्यंच-गति	१)बादर,सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त अग्निकायिक व वायुकायिक	भोगभूमि पंचे.तिर्यंचको छोड़कर शेष सर्व एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रियतक तिर्यंचों में
	२)बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त पृथ्वी,जल,नित्यनिगोद, इतर निगोद पर्याप्त अपर्याप्त सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति,पर्याप्त अपर्याप्त द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय	भोगभूमि पंचेन्द्रिय तिर्यंच के बिना शेष सर्व तिर्यंचोंमें, त्रेसष्ठशलाका पुरुष व भोगभूमि मनुष्यको छोड़कर सर्व मनुष्योंमें (नित्य नि.व इतर निगोद जीव मनुष्य होकर देशसंयम व सम्यक्त्व ग्रहण करते हैं किन्तु सकल-संयम नहीं ग्रहण करते)
	३)असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच	उपर्युक्त(पृथ्वीकायिकवत्) सर्व तिर्यंच मनुष्यों में, प्रथम नरक में, भवनवासी व व्यन्तर देवों में(असंज्ञी के आयु का उत्कृष्ट स्थितिबंध पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है अत: अन्य देव व नारकियों में उत्पन्न नहीं होता।)
	४) संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच	सर्व तिर्यंच, त्रेसष्ठशलाका पुरुष छोड़कर सर्व मनुष्य, सर्व नारकी, अच्युतस्वर्ग पर्यन्त सर्व देव व सर्व भोगभूमियों में
	५)तीस भोगभूमि व असंख्यात द्वीपसमुद्रके जघन्य भोगभूमिके तिर्यंच सम्यग्दृष्टि	सौधर्म व ऐशानस्वर्ग के देवों में
	६) उपर्युक्त पाँचवें नंबर के तिर्यंच मिथ्यादृष्टि,सासादन	भवनत्रिक देवों में

	कौन सा जीव	किस पर्याय में जन्म लेता है
मनुष्य-१ गति	कर्मभूमिज पर्याप्त मनुष्य -	सर्व तिर्यंच,मनुष्य,नारकी, सर्व देवोंमें
२	कर्मभूमिज अपर्याप्त मनुष्य -	कर्मभूमि तिर्यंचों में,त्रेसठ शलाका छोड़कर कर्मभूमि मनुष्यों में
३	तीस भोगभूमिज मनुष्य सम्यग्दृष्टि-	सौधर्म ईशानस्वर्ग के देवों में
४	तीस भोगभूमिज मनुष्य मिथ्यादृष्टि, सासादन	भवनत्रिक देवों में
५	कुभोगभूमिज मनुष्य -	भवनत्रिक देवों में
६	चरमशरीरी मनुष्य -	मोक्ष को प्राप्त होते हैं।
७	आहारक देहसहित मृत संयमी -	वैमानिक देवों में
देवगति१	भवनत्रिक, सौधर्म ऐशानपर्यन्त देव (भवनत्रिक देव मनुष्यों में त्रेसठ शलाका पुरुषों में उत्पन्न नहीं होते)	१५ कर्मभूमि मनुष्यों में,१५ कर्मभूमि, लवणसमुद्र, कालोदसमुद्र, स्वयंभूरमण द्वीप का अपरार्ध, स्वयंभूरमण समुद्र में संज्ञी पर्याप्त जलचर,थलचर,नभचर, तिर्यंचों में, बादर पर्याप्त पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पति एकेन्द्रियों में
२	सानत्कुमार से सहस्रार पर्यन्त देव	उपर्युक्त मनुष्य तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं (एकेन्द्रियों में उत्पन्न नहीं होते)
३	आनत १३ वे स्वर्ग से सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त के देव	पन्द्रह कर्मभूमियों के मनुष्यों में

अब चौदह मार्गणाओं में नामकर्म के बन्धस्थान ८ गाथाओं से कहते हैं -

णामस्स बंधठाणा णिरयादिसु णवयवीस तीसमदो।
आदिमछक्कं सव्वं पण छण्णव वीस तीसं च ।।५४४।।

अन्वयार्थ - (णामस्स) नामकर्म के **(बंधठाणा)** बंधस्थान **(णिरयादिसु)** नरकादि गतियों में क्रम से नरकगति में **(णवयवीस तीसं)** उनतीस और तीस प्रकृतिक

(आदिमछक्कं) तिर्यंचगति में आदि के छह **(सव्वं)** मनुष्यगति में सर्व **(पणछण्णववीस तीसं च)** देवगति में पच्चीस, छव्वीस, उनतीस और तीस प्रकृतिक हैं।

गुणस्थान की अपेक्षा से नामकर्म के बन्धस्थानों का विवरण

गुणस्थान	बंधस्था. संख्या	बंधस्थान के प्रकार
१ मिथ्यात्व	६	२३ २५ २६ २८ के सब प्रकार २९ के प्रथम पाँच प्रकार, ३० के प्रथम चार प्रकार
२ सासादन	३	२८ देवयुत, २९ सं.पंचे.युत,मनुष्यपर्याप्त, ३० पंचे.उद्योयुत
३ मिश्र	२	२८ देवयुत, २९ मनुष्यपर्याप्तयुत
४ असंयत	३	२८ देवयुत, २९ मनुष्यपर्याप्तयुत,देवतीर्थयुत, ३० मनुष्यतीर्थयुत
५ देशसंयत	२	२८ देवयुत, २९ देवतीर्थयुत
६ प्रमत्तसंयत	२	२८ देवयुत, २९ देवतीर्थयुत
७ अप्रमत्तसं.	४	२८ देवयुत, २९ देवतीर्थयुत, ३० देवआहारक, ३१ देवतीर्थआ.
८ अपूर्वकरण	५	२८ देवयुत, २९ देवतीर्थयुत, ३० देवआहारक, ३१ देवतीर्थआ. १ यशस्कीर्ति
९ अनिवृत्ति.	१	१ यशस्कीर्ति
१० सूक्ष्म सां.	१	१ यशस्कीर्ति

पंचक्खतसे सव्वं अडवीसूणादि छक्कयं सेसे ।
चदुमणवयणोराले सड देवं वा विगुव्वदुगे ।।५४५।।

अन्वयार्थ - (पंचक्खतसे) पंचेन्द्रिय और त्रसकाय मार्गणा में **(सव्वं)** सर्व बंधस्थान हैं। **(सेसे)** शेष एकेन्द्रियादिक चार में और पृथ्वीकायादि पाँच स्थावरकाय में **(अडवीसूणादिछक्कयं)** अट्ठाईस बंधस्थान से रहित आदि के छह बंधस्थान हैं **(चउमणवयणोराले)** चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिक काययोग में **(सड)** आठों बंधस्थान है। **(विगुव्वदुगे)** वैक्रियिक काययोग और वैक्रियिक मिश्र काययोग में **(देवं वा)** देवों के समान चार बंधस्थान हैं।

अडवीसदु हारदुगे सेसदुजोगेसु छक्कमादिल्लं ।
वेदकसाए सव्वं पढमिल्लं छक्कमण्णाणे ।।५४६।।

अन्वयार्थ - (हारदुगे) आहारक, आहारक मिश्रकाययोग में **(अडवीस दु)** अट्ठाईस और उनतीस प्रकृतिक दो स्थान हैं **(सेसदुजोगेसु)** शेष औदारिक मिश्र और कार्मण काययोग में **(आदिल्लं छक्कं)** आदि के छह स्थान हैं **(वेदकसाए)** ३ वेद और ४ कषायों में **(सव्वं)** सर्व स्थान हैं **(अण्णाणे)** तीन अज्ञानों में **(पढमिल्लं छक्कं)** आदि के छह बन्धस्थान हैं।

सण्णाणे चरिमपणं केवलजहखादसंजमे सुण्णं ।
सुदमिव संजमतिदये परिहारे णत्थि चरिमपदं ।।५४७।।

अन्वयार्थ - (सण्णाणे) चार सम्यग्ज्ञानों में **(चरिमपणं)** अन्तिम पाँच बन्धस्थान हैं। **(केवलजहखादसंजमे)** केवलज्ञान और यथाख्यातसंयम में **(सुण्णं)** शून्य है **(संजमतिदये)** तीन संयमों में **(सुदमिव)** श्रुतज्ञान के समान अंतिम पाँच बन्धस्थान हैं किंतु **(परिहारे)** परिहारविशुद्धि संयम में **(चरिमपदं)** अंतिम स्थान **(णत्थि)** नहीं है।

अंतिमठाणं सुहुमे देसाविरदीसु हारकम्मं वा ।
चक्खूजुगले सव्वं सगसगणाणं व ओहिदुगे ।।५४८।।

अन्वयार्थ -(सुहुमे) सूक्ष्मसांपराय संयम में **(अंतिमठाणं)** अंतिम एक स्थान है **(देसाविरदीसु हारकम्मं वा)** देशसंयत गुणस्थान में आहारककाययोग के समान २८, २९ प्रकृतिरूप दो स्थान हैं और असंयत गुणस्थान में कार्मणकाययोग के समान आदि के छह स्थान हैं **(चक्खूजुगले)** चक्षु-अचक्षुदर्शन में **(सव्वं)** सर्व स्थान हैं **(ओहिदुगे)** अवधिदर्शन और केवलदर्शन में **(सगसगणाणंव)** अपने अपने ज्ञान के समान जानना।

कम्मं वा किण्हतिये पणवीसा छक्कमट्ठवीस चऊ ।
कमसो तेऊजुगले सुक्काए ओहिणाणंवा ।।५४९।।

अन्वयार्थ - (किण्हतिये) कृष्णादि तीन अशुभलेश्याओं में **(कम्मं वा)** कार्मण काययोग के समान आदि के ६ स्थान हैं **(तेऊजुगले)** तेज और पद्मलेश्या में **(कमसो)**

क्रम से **(पणवीसाछक्कं)** पच्चीसादि छह और **(अट्ठवीसचउ)** अट्ठाईस आदि चार स्थान हैं **(सुक्काए)** शुक्ललेश्या में **(ओहिणाणं वा)** अवधिज्ञान के समान २८, २९, ३०,३१ और १ प्रकृतिरूप पाँच बन्धस्थान हैं।

भव्वे सव्वमभव्वे किण्हं वा उवसमम्मि खइए य ।
सुक्कं वा पम्मं वा वेदगसम्मत्त ठाणाणि ।।५५०।।

अन्वयार्थ - (भव्वे सव्वं) भव्यमार्गणा में सर्व **(अभव्वे)** अभव्य मार्गणा में **(किण्हं वा)** कृष्ण लेश्या के समान आदि के छह स्थान हैं **(उवसमम्मि खइए य)** औपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व में **(सुक्कं वा)** शुक्ललेश्या के समान २८,२९,३०,३१ व १ ये ५ स्थान और **(वेदगसम्मत्तठाणाणि)** वेदक सम्यक्त्व के स्थान **(पम्मं वा)** पद्मलेश्या के समान २८,२९,३०,३१ प्रकृतिरूप चार हैं।

अडवीसतिय दु साणे मिस्से मिच्छे दु किण्हुलेस्सं वा ।
सण्णी आहारिदरे सव्वं तेवीसछक्कं तु ।।५५१।।

अन्वयार्थ - (साणे) सासादन सम्यक्त्व में **(अडवीसतिय)** अट्ठाईस, उनतीस और तीस प्रकृतिक तीन स्थान हैं। **(मिस्से दु)** मिश्रसम्यक्त्व में २८, २९ प्रकृतिरूप दो स्थान तथा **(मिच्छे किण्हलेस्सं वा)** मिथ्यात्व में कृष्णलेश्या के समान आदि के छह स्थान हैं **(सण्णी आहार)** संज्ञी और आहारमार्गणा में **(सव्वं)** सर्व बन्धस्थान हैं **(तु)** और **(इदरे)** असंज्ञी और अनाहारमार्गणा में **(तेवीसछक्कं)** तेईस आदि छह बन्धस्थान हैं।

विशेषार्थ - मार्गणाओं में बन्धस्थान जानने के लिए कुछ ध्यान रखने योग्य नियम -

१) कार्मणकाययोग और औदारिक मिश्रकाययोग में मिथ्यात्व व सासादन गुणस्थान में देवद्विक व नरकद्विक का बन्ध नहीं होता। अत: मनुष्य तिर्यंच के निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्था में मिथ्यादृष्टि व सासादन में २८ प्रकृति का बन्धस्थान नही होता। निर्वृत्त्यपर्याप्त सम्यग्दृष्टि को २८ का देवगतियुत बंधस्थान होता है।

२) पर्याप्त मनुष्य वेद के उदय से भाव पुरुषवेदी, भावस्त्रीवेदी और भावनपुंसकवेदी होते हैं उनके गुणस्थान सवेद अनिवृत्तिकरणतक नौ होते हैं।

३) भावस्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी को क्षपकश्रेणिपर देवगति तीर्थयुत २९ का और ३१ का बन्ध नहीं होता। क्योंकि तीर्थंकर की सत्तासहित जीव पुरुषवेद के साथ ही क्षपकश्रेणी चढ़ता है। तीर्थंकर के बंध का प्रारंभ तीनों वेदों में होता है किन्तु उदय पुरुषवेदवाले को ही होता है।

यदि चरमशरीरियों के तीर्थंकर प्रकृति बन्ध का प्रारंभ असंयत और देशसंयत गुणस्थानों में होता है तब उनके तप आदि तीन ही कल्याणक होते हैं। यदि प्रमत्त अप्रमत्त में तीर्थंकर का बन्ध होता है तो उनके ज्ञान, निर्वाण ये दो ही कल्याणक होते हैं। यदि पूर्वभव में तीर्थंकर का बन्ध किया है तो गर्भादि पाँचों कल्याणक होते हैं।

४) मति, श्रुत, अवधि ये तीन ज्ञान पर्याप्त, अपर्याप्त नारक, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य और देव को हो सकते हैं।

५) १२ वें स्वर्ग के आगे तिर्यंचद्विक ,तिर्यंचायु और उद्योत का बन्ध नहीं होता।

६) पर्याप्त, अपर्याप्त एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रियों में और लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय में नरकगति, देवगति सहित अट्ठाईस का बन्ध नहीं होता।

७) बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त अपर्याप्त तेजकाय वायुकाय में मनुष्यगतियुत २५ और २९ का बन्ध नहीं होता क्योंकि वे मरकर वहाँ उत्पन्न नहीं होते।

८) कर्मभूमि (तीर्थरहित) व भोगभूमि का मनुष्य व तिर्यंच मिश्र और असंयत गुणस्थान में देवगति सहित २८ का बन्ध करते हैं, क्योंकि उनके मनुष्य व तिर्यंचगति की बन्धव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में ही हो जाती है।

९) तीर्थंकर यदि विग्रहगति में हो या निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्था में हो, या गर्भ जन्म और कुमार अवस्था में हो, या पूर्वभव में तीर्थंकर के बन्ध का प्रारंभ किया है ऐसा नरकायु या देव बद्धायुष्क जीव और चरमशरीरी तीर्थंकरसहित मनुष्य असंयत देवतीर्थयुत २९ का ही बन्ध करता है।

१०) वंशा और मेघा (२,३ रा नरक) में उत्पन्न हुए नारकी, जिनकी तीर्थंकर की सत्ता होती है वे पर्याप्ति पूर्ण होनेपर नियम से मिथ्यात्व को छोड़कर सम्यग्दृष्टि होकर मनुष्य तीर्थयुत ३० का ही बन्ध करते हैं। अपर्याप्त में २९ का बन्ध करते हैं।

आगे के कोष्टक में बन्धस्थानों का प्रकार कहने के लिए संकेताक्षरों का उपयोग किया उनका अर्थ समझने के लिए पूर्व बन्धस्थान के कोष्टक में देखे। उस प्रकार का नंबर भी दिया है यथा २९- ५ पं.प

चौदह मार्गणाओं में नामकर्म के बन्धस्थान

मार्गणा के भेद	मार्गणाओं में गुणस्थान और गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
गतिमार्गणा			
१)नरकगति		२	२९- ४) पं.प.,५) मनुष्य पर्याप्त
			३०-४)पं.प उद्योत ५) मनुष्यतीर्थयुत
	प्रथम ३ नरक	२	२९- ४) पं.प.,५) मनुष्य पर्याप्त
			३०-४)पं.प उद्योत ५) मनुष्यतीर्थयुत
	४ से ६ ठे नरकतक	२	२९-४) पं.प.,५) मनुष्य पर्याप्त
			३०-४) पं.प उद्योत
	७ वें नरक मिथ्यादृष्टि	२	२९-४) पं.प.,३०-४) पं.प उद्योत
	७ वें नरक सम्यग्दृष्टि	१	२९-५) मनुष्य पर्याप्त
सामान्य	मिथ्यादृष्टि	२	२९-४) पं.प.,५) मनुष्य पर्याप्त
नरकगति			३०-४) पं.प उद्योत
में गुणस्थान	सासादन	२	२९-४) पं.प.,५) मनुष्य पर्याप्त
			३०-४) पं.प उद्योत
	मिश्र	१	२९-५) मनुष्य पर्याप्त
	असंयत	२	२९-५) मनुष्य पर्याप्त
			३०-५) मनुष्यतीर्थयुत.
२)तिर्यंचगति		६	२३, २५, २६, २८ के सब प्रकार
			२९-१) द्वी.प.२) त्री.प.३) च.प.
			४) पं.प ५) म.प. ३०-१) द्वी.प.उ.
			२) त्री.प.उ. ३)च.प.उ. ४) पं.प उ.
	लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच	५	२३,२५,२६,२९,३०
			२९,३० के उपर्युक्त प्रकार
३)मनुष्यगति		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१
			सब प्रकार (३० मनुष्यतीर्थ बिना)

मार्गणा के भेद	मार्गणाओंमें गुण.स्थान	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
४) देवगति		४	२५-१) ए.प. २६-१) ए.प.आ. २) ए.प.उ. २९-४) पं.प.५) म.प., ३०-४) पं.प.उ.५) म.ती.
२.इंद्रियमार्गणा			
१से४)एकें.- से चतुरिन्द्रिय		५	२३,२५,२६,२९,३०/२९ के१ से५ प्र. ३० के १ से ४ प्रकार
५)पंचेन्द्रिय		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१सब प्र.
३.कायमार्गणा			
पृथ्व्यादि ५ स्थावर		५	२३,२५,२६,२८,२९,३०,एकेन्द्रियवत् तेजो वायुकाय में २५ म.अपर्याप्त व२९ का मनुष्यपर्याप्तयुत बन्ध नहीं होगा
त्रसकाय		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१ सब प्र.
३.योगमार्गणा			
४ मनोयोग,४ वचनयोग,औदा.काययोग		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१सब प्र.
वैक्रि.काययोग,वैक्रि.मिश्र काययोग		४	२५,२६,२९,३०, देववत्
आहारक काययोग, आहा.मिश्रकाययोग		२	२८ देवगतियुत, २९ देवतीर्थयुत
कार्मण,औदा. मिश्रकाययोग		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०, २८ देवगतियुत, ३० - प्रथम ५ प्रकार
कार्मण व औदा.मिश्र काययोग	मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३० २९ के प्रथम ५ प्रकार,३० के ४ प्रकार
	सासादन	२	२९,३०.२९-४) पं.प. ५) म.प., ३०-४) पं.प.उद्योत
	तिर्यंच असंयत	१	२८-१) देवगतियुत
	मनुष्य असंयत	२	२८ देवगतियुत, २९ -देवतीर्थयुत

मार्गणा के भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
५)वेदमार्गणा			
स्त्री, पुं, नपुं.		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१
	नपुं.वेद-१)नरकगति	२	२९-४) पं.प. ५) म.प., ३०-४) पं.प.उ. ५) म.ती
	एके.से चतु.२)तिर्यंगति	५	२३,२५,२६,२९,३०,२९ के प्रथम ५ प्रकार, ३० के प्रथम ४ प्रकार
	पंचेन्द्रिय तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य	५	२३,२५,२६,२९,३०,२९ के प्रथम ५ प्रकार, ३० के प्रथम ४ प्रकार
	स्त्री, पुरुष, तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०, २९ के प्र. ५ प्रकार, ३० के प्रथम ४ प्रकार
	स्त्री,नपुं.क्षपकश्रेण्यारुढ	२	२८-१)देवयुत, ३०-६)देवआहारकयुत देवतीर्थयुत २९ का और देवतीर्थ-आहारक ३१ का बंध नहीं होता
	स्त्री,पुरुष,नपुं. मनुष्य	८	सर्व
६)कषायमार्गणा			
क्रोध, मान,माया, लोभ		८	सर्व
	क्रोधकषाय-नरकगति	२	२९,३०,
	तिर्यंचगति	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	मनुष्य	८	सर्व
	देव	४	२५,२६,२९,३०
	क्रोधके समान मानमायालोभ में जानना।		

मार्गणा के भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
७) ज्ञानमार्गणा			
कुमति,कुश्रुत,कुअवधि		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	१)नारकी	२	२९-४ और ५ प्रकार, ३०का ४था प्र.
	कुमति,कुश्रुत-एकें से चतु.	५	२३,२५,२६,२९,३०.
	अपर्याप्त पंचे.ति. व मनुष्य	५	२३,२५,२६,२९,३०.
	तीन कुज्ञान-पर्याप्त पंचे. ति. व मनुष्य	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०. २९-१ से ५ प्रकार ३०-१से४ प्रकार
	भवनत्रिक व सौधर्मद्वय	४	२५-१)ए.प.,२६,२९-४)प.प.५)म.प ३०-४)पं.प.उद्योत
	सानत्कुमारसे सहस्रारतक	२	२९-४) पं.प.५)म.प.,३०-४)पं.प.उ.
	१३वें स्वर्ग से नौग्रैवेयकतक	१	२९-५) मनुष्यपर्याप्त
मति,श्रुत,अवधि,मन:पर्ययज्ञान		५	२८, २९, ३० ३१, १ २८-१)दे.२९-५)म.प.६)दे.ती, ३०-५)म.ती ६)दे.आ. ३१ - दे.ती.आ.,१
	मति,श्रुत,अवधि-१)नारकी	२	२९- ५) म.प., ३०-५) म.ती -प्रथम ३ नरक
	२)सौधर्मादि वैमानिक देव	२	२९- ५) म.प., ३०-५) म.ती
	३) भवनत्रिक	१	२९- ५) म.प.
	४) तिर्यंच	१	२८-देवगतियुत
	५) मनुष्य	२	२८-देवगतियुत, २९ देवतीर्थयुत
	मन:पर्ययज्ञानसहित प्रमत्त	२	२८-देवगतियुत, २९ देवतीर्थयुत
	अप्रमत्त, अपूर्वकरण	४	२८,२९,३० दे.आ., ३१ दे.ती. आ.
	८ वें के ७ वें भाग से१० वें गुणतक	१	यशस्कीर्ति १
केवलज्ञान		०	नामकर्म का बन्ध नहीं होता

मार्गणा के भेद	मार्गणाओं में गुण.गति		बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
८) संयममार्गणा				
सामायिक छेदोपस्थापना			५	२८,२९,३०,३१,१ अवधिज्ञानवत्
परिहारविशुद्धि			४	२८,२९,३०,३१
सूक्ष्मसांपराय			१	१
यथाख्यातसंयम			०	-
देशसंयम		मनुष्य	२	२८-देवयुत,२९-६) देवतीर्थयुत
		तिर्यंच	१	२८-देवयुत
असंयम			६	२३,२५,२६,२८,२९,३० देवआहारक विना सर्व प्रकार
	१)नारकी मिथ्यादृष्टि,सासादन		२	२९-४)पं.प ५)म.प.,३०-४) पं.प उ.
	मिश्र		१	२९- ५) म.प.
	असंयत प्रथम तीन नरक		२	२९- ५) म.प., ३०-५) म.ती
	असंयत शेष चार नरक		१	२९- ५) म.प.
	२) तिर्यंच मिथ्यादृष्टि		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	पर्याप्त,अपर्याप्त एके.विकलत्रय व अपर्याप्त पंचेन्द्रिय		५	२३,२५,२६,२९,३० २८ का बंध नहीं होता
	तेजकाय, वायुकाय		५	२३,२५,२६,२९,३० मनुष्यसहित २५ व २९ का बंध नहीं होता
	तिर्यंच सासादन		३	२८-१)दे. २९-४) पं.प ५) म.प., ३०-४) पं.प उ.
	सासादन अपर्याप्त		२	२९- ४) पं.प.५) म.प.३०-४)पं.प.
	मिश्र, असंयत		१	२८-देवयुत,
	३) मनुष्य - लब्ध्यपर्याप्तक		५	२३, २५, २६, २९, ३०
	पर्याप्तक		६	२३, २५, २६, २८, २९, ३०
	४-५-६ गुणस्थान से सासादन में आनेपर		३	२८, २९, ३०

मार्गणा के भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
	सासादन अपर्याप्तावस्था	२	२९,३०,
	मिथ्यात्व में आनेपर अपर्याप्तावस्था में पर्याप्त होनेपर	४ ५	२५,२६,२९,३० २५,२६,२८,२९,३०
	कर्मभूमि,भोगभूमि मनुष्य मिश्र व असंयत	१	२८-देवगतियुत
	तीर्थसहित कर्मभूमि मनुष्य	१	२९ देवतीर्थयुत
४)	देवगति भवनत्रिक,सौधर्मयुगलपर्याप्त मिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९,३० - पं.प. उद्योत
	सानत्कुमारादि सहस्रारपर्यंत मिथ्यादृष्टि	२	२९-४)पं.प ५)म.प., ३०-४) पं.प उ.
	आनतादि नौग्रैवेयकतक मिथ्यादृष्टि	१	२९- ५) म.प.
	भवनत्रिकदेव,कल्पस्त्री,सौ.द्विक निर्वृत्त्यपर्याप्त - मिथ्यादृष्टि सासादन	४	२५,२६,२९,३०
	३ से १२ स्वर्ग	२	२९,३०
	१३ से नौग्रैवेयक	१	२९ - ५) मनुष्यपर्याप्तयुत
	पर्याप्त भवनत्रिक से नौग्रैवेयक पर्यंत मिश्र	१	२९ - ५) मनुष्यपर्याप्तयुत
	पर्याप्त भवनत्रिक से कल्पस्त्री असंयत	१	२९ - ५) मनुष्यपर्याप्तयुत
	पर्याप्त सब वैमानिक देव असंयत	२	२९ - ५) मनुष्यपर्याप्तयुत ३० - ५) मनुष्य तीर्थयुत

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
९) दर्शनमार्गणा			
चक्षु-अचक्षुदर्शन		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१ सब
	चक्षुदर्शन - नारकी	२	२९,३०
	तिर्यंच - चतुरिन्द्रिय	५	२३,२५,२६,२९,३०
	पंचेन्द्रिय	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०,
	मनुष्य	८	सब
	देव	४	२५,२६,२९,३०
	अचक्षुदर्शन - नारकी	२	२९,३०
	तिर्यंच एकें.से चतुरिन्द्रिय	५	२३,२५,२६,२९,३०
	पंचेन्द्रिय	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	मनुष्य	८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१
	देव	४	२५,२६,२९,३०
अवधिदर्शन		५	२८,२९,३०,३१,१ अवधिज्ञानवत्
	घर्मादि३नरकके नारकीतीर्थयुत	१	३० - ५) मनुष्य तीर्थयुत
	तीर्थरहित शेष सर्व नारकी	१	२९ - ५) मनुष्य पर्याप्त
	तिर्यंच	१	२८ - १) देवगतियुत
	मनुष्य	५	२८,२९,३०,३१,१ अवधिज्ञानवत्
	देव	२	२९-५)म.प. ३०-५)म.ती.
केवलदर्शन		०	नामकर्म के बन्ध का अभाव है।
१०)लेश्यामार्गणा			
कृष्ण,नील,कापोत		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
तेजोलेश्या		६	२५,२६,२८,२९,३०,३१
पद्मलेश्या		४	२८,२९,३०,३१
शुक्ललेश्या		५	२८,२९,३०,३१,१
	तीन अशुभलेश्या१-६नरकमि.सा.	२	२९-४)पं.प.५)म.प.-३०-४)पं.प.उद्योत
	७ नरक मि.सा.	२	२९-४)पं.प.-३०-४)पं.प.उद्योत

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
	मिश्र,असंयत	१	२९-५) म.प.
	प्रथम नरक,निर्वृत्त्यपर्याप्त,पर्याप्त क्षायिक,वेदक कृतकृत्त्य तीर्थंकररहित	१	२९-५) म.प.
	तीर्थंकर सहित	१	३०- ५) म.ती.
	२ रे३ रे नरक तीर्थबन्धसहित पर्याप्त होकर सम्यग्दृष्टी होनेके पश्चात् ही	१	३०- ५) म.ती.
	१९ प्रकार के तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्त	५	२३,२५,२६,२९,३०
	चारों गतिसे आये तिर्यंच निर्वृत्त्य. मिथ्या.	५	२३,२५,२६,२९,३०
	तिर्यंच निर्वृत्त्य.सासादन	२	२९-३० २९-४)पं.प ५)म.प., ३०)-४ पं.प.उ.
	पर्याप्तक तिर्यंच मिथ्या.	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	पर्याप्त तिर्यंच सासादन	३	२८-१)देव, २९-४)पं.प.,५)म.प. ३० -४)पं.प.उ.
	६ लेश्या :- पर्याप्त तिर्यंच, मिश्र, असंयत, देशसंयत	१	२८- १) देव देशसंयतमें ३ शुभलेश्या होती हैं।
	भोगभूमि तिर्यंच निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्या	२	२९-४) ५), ३०-४)
	निर्वृत्त्यपर्याप्त सासादन	२	२९-४) ५), ३०-४)
	कापोतलेश्या निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	१	२८-१)देव
३ शुभलेश्या	भोगभूमि ३ शुभलेश्या तिर्यंच पर्याप्त मिथ्यात्व सासादन	३	२८-१)देव,
	भोगभूमि पर्याप्त तिर्यंच मिश्र व असंयत	१	२८-१) देवगतियुत
	३ अशुभलेश्या मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त	५	२३,२५,२६,२९,३०

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
	६ लेश्या मनुष्य नि.पर्याप्त मिथ्यात्व	५	२३,२५,२६,२९,३०
	निर्वृत्त्यपर्याप्त सासादन	२	२९,३० २९-४-५ प्र. ३०-४ प्र.
	निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	२	२८-१), २९-६) देवतीर्थ
	६ लेश्या में पर्याप्त मनुष्य मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
	सासादन	३	२८-१,२९-४) ५)प्र.३०-४प्र.
	मिश्र	१	२८-१देव
	असंयत	२	२८-१देव,२९-६दे.ती.
	तीन शुभलेश्यायुत देशसंयत, प्रमत्त	२	२८-१देव,२९-६दे.ती.
	अप्रमत्त	४	२८,२९,३०,३१ } गुणस्थानवत् जानना
	अपूर्व	५	२८,२९,३०,३१,१ } गुणस्थानवत् जानना
	९,१० गुणस्थान	१	१ } गुणस्थानवत् जानना
	भोगभूमि मनुष्य		भोगभूमि तिर्यंचवत्
३अशुभलेश्या	भवनत्रिक निर्वृत्त्यपर्याप्त		
	मिथ्यादृष्टि	४	२५-१)ए.-प,२६,२९-४-५प्र ३०-४थाप्र.
	निर्वृत्त्यपर्याप्त सासादन	२	२९-४)था ५) वा प्रकार,३०-४ था प्र.
तेजो लेश्या	सौधर्मद्विक निर्वृत्त्यपर्याप्त		
	मिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९,३० } भवनत्रिक के समान
	निर्वृत्त्यपर्याप्त सासादन	२	२९,३० } भवनत्रिक के समान
	निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	२	२९-५)म.प. ३०-५)म.ती.
पद्म लेश्या	३ से १२ स्वर्ग		
	निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्यात्व	२	२९-४)पं.प ५)म.प.३० प.प.उ
	निर्वृत्त्यपर्याप्त सासादन	२	२९-४)पं.प ५)म.प.३० प.प.उ
	निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	२	२९-५)म.प. ३०-५)म.ती
शुक्ल लेश्या	१३ से नौग्रैवेयक		
	निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्यात्व, सासादन	१	२९-५)म.प.
	असंयत	२	२९-५)म.प. ३०)-५)म.ती
	नौ अनुदिश, पाँच अनुत्तर असंयत	२	२९-५)म.प. ३०)-५)म.ती

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
११)भव्य मार्गणा			
भव्य		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१सर्व प्रकार
अभव्य		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०(तीर्थ.आहारक छोड़कर)
१२) सम्यक्त्व मार्गणा			
औपशमिक		५	२८,२९,३०,३१,१ (विकलत्रय व पंचेन्द्रिय तिर्यंच छोड़कर शेषप्रकार)
क्षायिक		५	२८,२९,३०,३१,१
वेदक		४	२८,२९,३०,३१
	१ से ३ नरक असंयत	२	२९-५) म.प., ३०-५) म.ती
	शेष नरक असंयत	१	२९-५) म.प.,
प्रथमोपशम सम्यक्त्व	तिर्यंच असंयत, देशसंयत	१	२८ - १) देव
	मनुष्य असंयत,देशसंयत, प्रमत्त	२	२८ -१) देव, २९-६) दे.ती
	अप्रमत्त	४	२८-१) देव,२९-६)दे.ती ३०-६) दे. आ., ३१
	देव-नौग्रैवेयकपर्यंत असंयत	२	२९-५) म.प. ३०)-५ म. ती
द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	उत्पन्नहोनेपर ७वें गुण.में	४	२८-१)दे.२९-६)दे.ती३०-६)दे.आ.,३१
	८ वें के छठे भागतक	४	२८-१)दे.२९-६)दे.ती३०-६)दे.आ.,३१
	८ वें के ७ वें भाग से १० वें गुणस्थानतक	१	१
	उपशमश्रेणी उतरकर ६,५,४ थे गुणस्थान में	२	२८-१) देव, २९-६) दे.ती,
	मरकर वैमा.देव में निर्वृत्यप.	२	२९-५) म.प., ३०-५) म.ती.

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
क्षायिकसम्यक्त्व		५	२८,२९,३०,३१,१
वेदक सम्यक्त्व	मनुष्य ४,५,६ गुणस्थान	२	२८-१)दे. २९-६)दे. ती.
	मनुष्य ७ वा गुणस्थान	४	२८,२९,३०,३१
	प्रथम ३ नरक	२	२९-५) म.प., ३०- म.ती
	शेष नरक	१	२९-५) म.प.,
	कर्मभूमि तिर्यंच ४,५ गुण.	१	२८-१) दे.
	भोगभूमि तिर्यंच व मनुष्य असंयत	१	२८-१)दे.
	कृतकृत्यवेदक देव	२	२९-५) म.प., ३०- म.ती
	भवनत्रिक से नौग्रैवेयकतक वहाँपर वेदकसम्यग्दर्शन होनेपर वेदक असंयत	१	२९-५) म.प.
सासादनसम्यक्त्व		३	२८-१) दे.,२९-४) पं.प. ५)म.प.३०-४) पं.प.उ
	निर्वृत्त्यपर्याप्तक बा.पृथ्वी,जल,प्रत्येक वनस्पति.द्वी,त्री,चतु.,असंज्ञी, तिर्यंच, मनुष्य,पर्याप्त नारकी,पर्याप्त,अपर्याप्त भवनत्रिक से १२ वे स्वर्गपर्यंत के	२	२९-४)पं.प.५)म.प.३०-४)पं.प.उ
	पर्याप्त संज्ञी तिर्यंच व मनुष्य सासादन	३	२८-१)दे., २९-४)पं.प.५)म.प. ३०-पं.प.उ
	१३ वे स्वर्ग से ९ वे ग्रैवेयक पर्याप्त, अपर्याप्त सासादन	१	२९-५) म.प.
मिश्रसम्यक्त्व		२	२८-१) देव, २९-म.प.
	देव नारकी	१	२९- म.प.
	मनुष्य तिर्यंच	१	२८-१) देव
मिथ्यात्व			
	नरक १ से ६ पर्याप्त अपर्याप्त	२	२९-४)पं.प.५)म.प.३०-४)पं.प.उ

मार्गणा भेद	मार्गणाओं में गुण.गति	बंधस्था. संख्या	बन्धस्थानों का विवरण
७ वा नरक पर्याप्त अपर्याप्त		२	२९-४)पं.प.,३०-४) पं.प.उ
लब्ध्यपर्याप्त,निर्वृ.अपर्याप्त बा.सू.पृथ्वी, जल,अग्नि, वायु, सा.वन.,प्रत्येक वन. द्वी,त्री,चतु.,असं,सं.,तिर्यंच,मनुष्य,		५	२३,२५,२६,२९,३०(तीर्थ,आहारक छोड़कर)अग्नि व वायुकायिक में २५-म.प.,२९-म. प. बंध नहीं होता
पर्याप्त असंज्ञी व संज्ञी तिर्यंच,मनुष्य		६	२३,२५,२६,२८,२९,३० (तीर्थ,आहारकविना)
भवनत्रिक व सौधर्मयुगल		४	२५,२६,२९,३०
सानत्कुमारसे सहस्रारतक		२	२९-पं.प.,म.प., ३०-पं.प.उ
१३ वें स्वर्ग से ९ वें ग्रैवेयकतक		१	२९-५) म.प.
१३ संज्ञी मार्गणा			
संज्ञी		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१
असंज्ञी		६	२३,२५,२६,२८,२९,३०(तीर्थ,आहारकविना)
संज्ञी में -	नारकी	२	२९,३०
	तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८,२९,३० (तीर्थ,आहारकविना)
	मनुष्य	८	सर्व
	देव	४	२५,२६,२९,३०
१४)आहारकमार्गणा			
आहारक		८	२३,२५,२६,२८,२९,३०,३१,१
	नारकी	२	२९-पं.प.,म.प.,३०-पं.प.उ,म.ती.
	तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८,२९,३० (तीर्थ,आहारकविना)
	मनुष्य	८	सर्व
	देव	४	२५,२६,२९,३०
अनाहारक	नारकी	२	२९-पं.प.,म.प.,३०-४),५)प्रकार
	तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०(४गुण.मेंही२८ के
	मनुष्य	६	२३,२५,२६,२८,२९,३० प्रथम प्रकारका
	देव	२	२९,३० बंध होता है)

संस्कृत टीका में आयी हुई कुछ विशेष बातें-

कषायमार्गणा - क्रोध, मान ,माया, लोभ ये कषायमार्गणा के चार ही भेद किये हैं।

क्रोधादि के अनन्तानुबन्धी आदि के भेद से यद्यपि चार चार भेद होते हैं तथापि क्रोधादि जाति के आश्रय से एकपना स्वीकार किया है क्योंकि यहाँ शक्ति की प्रधानता से भेदों की विवक्षा नहीं की। बारह कषायों के स्पर्धक सर्वघाती ही होते हैं, देशघाती नहीं। संज्वलन के स्पर्धक देशघाति भी होते हैं और सर्वघाती भी होते हैं। अत: अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी एक का उदय होनेपर अप्रत्याख्यानादि तीनों का भी उदय है ही, क्योंकि अनन्तानुबन्धी के उदयसहित अन्य कषायों के उदय के भी सम्यक्त्व और संयमगुण का घातकपना है। इसी प्रकार अप्रत्याख्यान क्रोधादि में से किसी एक का उदय होनेपर प्रत्याख्यानादि दो का और प्रत्याख्यान क्रोधादि में से किसी एक का उदय होनेपर संज्वलन का उदय है ही। किन्तु केवल संज्वलन का उदय होनेपर अनन्तानुबन्धि आदि तीन कषायोंका उदय नहीं है। इसीप्रकार प्रत्याख्यानादि में लगाना।

पहले अनुभाग बंध के प्रकरण में १७ सर्वघाति प्रकृतियों का चार प्रकार का अनुभाग, मिश्र बिना सर्वघाति २० प्रकृति, ८ नोकषाय, ७५ अघातिया प्रकृतियों के तीन प्रकार के अनुभाग का स्पष्टीकरण किया है वहाँ से (गाथा १८२) जान लेना।

अनुभाग शक्ति की विशेषता से अनन्तानुबन्धी की तरह अन्य कषायों के भी सम्यक्त्व आदिका घात करने से समानता होती है और समान कार्य करने से कषाय के ४ भेद किये हैं।

कौनसी कषाय	किस का घात करती है
मिथ्यात्वसहित उदयागत कषाय	सम्यक्त्व
अनन्तानुबन्धी के साथ उदयागत कषाय	सम्यक्त्व और संयम
अप्रत्याख्यान के साथ उदयागत कषाय	देशसंयम और सकलसंयम
प्रत्याख्यानसहित उदयागत कषाय	सकलसंयम
संज्वलन के देशघाति स्पर्धकों का उदय	यथाख्यातसंयम

अकामनिर्जरा - अपनी इच्छा के बिना बन्धन में पड़ने पर भूख-प्यास को सहना, ब्रह्मचर्य धारण करना, पृथ्वीपर सोना, मलधारण, परिताप आदि के द्वारा जो निर्जरा होती

है वह अकाम निर्जरा है।

बालतप - मिथ्यादर्शनसहित और मोक्ष उपायरहित, बहुत कायक्लेश पूर्वक कपटरूप व्रत धारण करना बालतप है।

कौन जीव	**किस प्रकार के देवों में उत्पन्न होते हैं**
१. १५ कर्मभूमि, स्वयंभूरमणार्ध द्वीप, स्वयंभूरमण समुद्र, लवणोद कालोद समुद्रों के वासी जलचर, स्थलचर, नभचर संज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	भवनत्रिक से १२ वे स्वर्गपर्यंत
२. उत्कृष्ट तापसी	भवनत्रिक
३. चरक (नग्नाण्डक) परिव्राजक (एकदण्डी, त्रिदण्डी साधु)	भवनत्रिक से ब्रह्मोत्तर छठे स्वर्गतक
४. आजीवक (कांजी का आहार करनेवाले सन्यासी)	भवनत्रिक से अच्युतपर्यन्त
५. गर्भज असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच (पीतलेश्याधारक)	व्यंतर व भवनवासी
६. भोगभूमि का सम्यग्दृष्टि	सौधर्मयुगल
७. भोगभूमि का मिथ्यादृष्टि	भवनत्रिक
८. असंयत और देशसंयत मनुष्य व तिर्यंच	सौधर्मयुगल से अच्युतपर्यन्त
९. द्रव्य से निर्ग्रन्थ, भाव से मिथ्यादृष्टि, असंयत व देशसंयत	उपरिम ग्रैवेयकतक
१०. सम्यग्दृष्टि भावलिंगी महाव्रती	सौधर्मयुगल से सर्वार्थसिद्धिपर्यंत

१) अनुदिश अनुत्तर विमानवासी देव द्विचरम शरीरी होते हैं अत: वे मरकर नरकगामी नारायण प्रतिनारायण नहीं होते।

२) सौधर्मदेव की इन्द्राणी शची, लोकपालसहित दक्षिण दिशा के इन्द्र, लौकान्तिक देव और सर्वार्थसिद्धि के देव एक भवावतारी होते हैं। अर्थात् मनुष्य होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

३) मनुष्यगति, तिर्यंचगति और भवनत्रिक से निकले हुए जीव त्रेसठ शलाका पुरुष नहीं होते।

तिर्यंच और मनुष्य	प्रथमोपशम प्राप्ति में निमित्त
१. बीच के असंख्यात द्वीपसमुद्र में पायी जानेवाली तिर्यक् भोगभूमि में उत्पन्न हुए तिर्यंच	जातिस्मरण व देवों का संबोधन
२. ३० भोगभूमि में उत्पन्न हुए तिर्यंच व मनुष्य	जातिस्मरण,देवसंबोधन,चारण-ऋद्धि के धारकमुनि संबोधन
३. स्वयंप्रभाचल के बाहर की कर्मभूमि का तिर्यंच	जातिस्मरण, देवसंबोधन
४. १५ कर्मभूमियों में उत्पन्न तिर्यंच व मनुष्य	जातिस्मरण, देव तथा मनुष्यों का संबोधन, जिनबिंबदर्शन

कर्मभूमिज तिर्यंच प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ देशव्रत ग्रहण करके देशसंयमी हो सकता है। कर्मभूमिज मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ देशसंयत या अप्रमत्त होता है।

लेश्यामार्गणा -

१) द्रव्यलेश्या - वर्णनामकर्म के उदय से उत्पन्न शरीर का वर्ण द्रव्यलेश्या है।

२) भावलेश्या - मोह के उदय, उपशम, क्षय या क्षयोपशम से उत्पन्न जीव की चंचलता भावलेश्या है। यहाँ भावलेश्या की विवक्षा है, द्रव्यलेश्या की नहीं।

किस गति में कहाँ कहाँ पर कौन कौन सी लेश्या होती है उसका दिग्दर्शक कोष्टक-

गति	कहाँपर	कौन सी लेश्या
नरक	प्रथम नरक के प्रथम इंद्रक बिल में	कपोत लेश्या का जघन्य अंश
	तीसरे नरक के द्विचरम इंद्रक बिल में	कपोत लेश्या का उत्कृष्ट अंश
	तीसरे नरक के चरम इंद्रक बिल में	नील लेश्या का जघन्य अंश
	पंचम नरक के द्विचरम इंद्रक बिल में	नील लेश्या का उत्कृष्ट अंश
	पंचम नरक के अन्तिम इंद्रक बिल में	कृष्ण लेश्या का जघन्य अंश
	सप्तम नरक के अवधिस्थान इंद्रक में	कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट अंश
	दोनों के बीच के नरकों में	उस उस लेश्या का मध्यम अंश

गति	कहाँपर	कौन सी लेश्या
तिर्यंच	१.पर्याप्त, निर्वृत्य, लब्ध्य, एकें.,द्वी.,त्री., चतु.,लब्ध्य व निर्वृत्यपर्याप्त असंज्ञी, संज्ञीपंचेन्द्रिय, निर्वृत्यपर्याप्त संज्ञीमिथ्यादृष्टी व सासादन गुण. में	कृष्ण, नील, कापोत ३ अशुभलेश्या
	२. पर्याप्त असंज्ञी मिथ्यादृष्टि	कृष्ण, नील, कापोत, पीत
	३. पर्याप्त संज्ञी सासादन और मिश्र	छहों लेश्या
	४. पर्याप्त संज्ञी असंयत	छहों लेश्या
	५. भोगभूमि निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	जघन्य कापोत लेश्या
	६. भोगभूमि पर्याप्त मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि	पीत, पद्म, शुक्ल
मनुष्य	१. लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य	कृष्ण, नील, कापोत
	२. निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्यादृष्टी, सासादन	कृष्ण, नील, कापोत
	३. निर्वृत्त्यपर्याप्त असंयत	छहों लेश्या
	४. पर्याप्त मनुष्य १ से ४ गुणस्थान	छहों लेश्या
	५. पर्याप्त मनुष्य ५ से ७ गुणस्थान	पीत, पद्म, शुक्ल
	६. पर्याप्त मनुष्य ८ से १३ गुणस्थान	शुक्ल
	७. भोगभूमिज पर्याप्त मनुष्य	पीत, पद्म, शुक्ल
देवगति	१. भवनत्रिक अपर्याप्त देव	अशुभलेश्या३→कृष्ण,नील,कापोत
	२. भवनत्रिक पर्याप्त देव	पीतलेश्या का जघन्य अंश
	३. सौधर्म ऐशान प्र.इंद्रक, श्रेणीबद्ध प्रकीर्णक विमान में	पीतलेश्या का जघन्य अंश
	४. सौधर्मद्विक के द्वि.इंद्रक से सानत्कुमार के ६ ठे इंद्रक तक	पीतलेश्या का मध्यम अंश
	५. सानत्कुमारके ७वा इंद्रक व श्रेणीबद्धविमानों में	पीतलेश्या का उत्कृष्ट अंश व पद्म का जघन्य अंश
	६. ब्रह्मयुगल के ४ इंद्रक, लान्तवयुगल के दो इन्द्रक व शुक्रयुगल के एक इन्द्रक में	पद्मलेश्या का मध्यम अंश
	७. शतारयुगल के एक इन्द्रक में	पद्मलेश्या का उत्कृष्ट व शुक्ल लेश्या का जघन्य अंश
	८. आनतादि चार स्वर्गों के छह इन्द्रकों में	शुक्ललेश्या का मध्यम अंश
	९. नौ ग्रैवेयक व ९ अनुदिश,अनुत्तरों के श्रेणीबद्ध	शुक्ललेश्या का मध्यम अंश
	१०. सर्वार्थसिद्धि में	शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट अंश

कौन से जीव मरकर किस नरक में जाते हैं उसका कोष्टक

नरक	जीव
१.प्रथम नरक में	मिथ्यादृष्टि कर्मभूमिज छहों संहननधारक १) असंज्ञी पंचेन्द्रिय २)सरीसृप ३)पक्षी ४)सर्प ५)सिंह ६)स्त्री ७)मत्स्य ८)मनुष्य
२.दूसरे नरक में	असंज्ञी पंचेद्रिय छोड़कर उपर्युक्त सर्व जीव
३.तीसरे नरक में	असंज्ञी पंचेद्रिय व सरीसृप छोड़कर उपर्युक्त सर्व जीव
४.चौथे नरक में	असंप्राप्तासृपाटिका छोड़कर पाँचसंहननधारी सर्प से मनुष्यतक
५.पाँचवें नरक में	सिंह से मनुष्यतक के जीव
६.छठे नरक में	प्रथम चार संहननधारी, स्त्री, मत्स्य व मनुष्य
७.सातवें नरक में	वज्रवृषभनाराच संहननधारी मत्स्य व मनुष्य

संक्षेप में असंज्ञी प्रथम नरकतक, सरीसृप दूसरे नरक तक, पक्षी तीसरे नरक तक, सर्प चौथे नरकतक, सिंह पाँचवे नरकतक, स्त्री छठे नरकतक, मत्स्य व मनुष्य सातवें नरकतक गमन कर सकता है।

असंप्राप्तासृपाटिका संहननवाला तीसरे नरकतक, कीलक संहननधारी पाँचवे नरक तक, २,३,४ था संहननधारी छठे नरकतक, वज्रवृषभनाराच संहननवाला सातवें नरकतक गमन कर सकता है।

लेश्या में आयुबन्ध के ८ मध्यम अंश, इतर १८ अंश (६ लेश्या के उत्कृष्ट मध्यम जघन्य) लेश्या का परिवर्तन, स्वस्थान परस्थान संक्रमण इन सब का वर्णन जीवकाण्ड की लेश्या प्ररूपणा अधिकार में किया है अत: वहीं से जानना।

सम्यक्त्वमार्गणा का विशेष - कौनसा सम्यक्त्व किन जीवों को होता है

सम्यक्त्व	सम्यक्त्वधारी जीव
१.प्रथमोपशम सम्यक्त्व	भोगभूमिज कर्मभूमिज गर्भज मनुष्य तिर्यंच, सर्व नारकी व नौग्रैवेयकतक के देव सभी पर्याप्त
२.द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	पर्याप्त मनुष्य व निर्वृत्त्यपर्याप्त वैमानिक देव
३.क्षायिक सम्यक्त्व	पर्याप्त व निर्वृत्त्यपर्याप्त प्रथम नरक के नारकी, भोगभूमिज तिर्यंच व मनुष्य, कर्मभूमिज मनुष्य,वैमानिक देव
४.वेदक सम्यक्त्व	पर्याप्त व निर्वृत्त्यपर्याप्तक चारों गति के जीव

चारों गति का आयुबंध होने पर प्रथमोपशम सम्यक्त्व हो सकता है परंतु मनुष्य, तिर्यंच व नरकायु का बंध होनेपर अणुव्रत, महाव्रत नहीं हो सकते। देवायु का बन्ध होनेपर अणुव्रत, महाव्रत हो सकते हैं।

प्रथमोपशम व द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में यदि ३१ प्रकृतिक (देव तीर्थ आहारकसहित) बन्धस्थान सत्ता में हो तो वह जीव प्रमत्तगुणस्थान से मिथ्यात्व में नहीं जाता।

४,५,६ गुणस्थान में यदि तीर्थंकर अथवा आहारक प्रकृति की सत्ता हो तो वह जीव सासादन में नहीं आता। तीर्थंकर की सत्ता हो तो मिश्र गुणस्थान में नहीं आता।

क्षायिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति -

दर्शनमोह की क्षपणा का प्रारम्भ तो कर्मभूमिया मनुष्य, तीर्थंकर, केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में करता है और निष्ठापक वही, या वैमानिक देवों में या भोगभूमि में या प्रथम नरक में होता है क्योंकि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि चारों गति में जन्म लेता है।

क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करने की विधि लब्धिसार में आयेगी। वहीं उसका स्पष्टीकरण करेंगे।

असंयतादि चार गुणस्थानवर्ती या उपशमश्रेणी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वी बद्धायुष्क मनुष्यजीव मरकर वैमानिक देवों में असंयत होता है उपशम सम्यक्त्व का काल पूर्ण होनेपर वेदकसम्यग्दृष्टि होता है। द्वितीयोपशम सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

नामकर्म के बन्धस्थानों में पुनरुक्त भंगों को कहते हैं -

णिरयादिजुदट्ठाणे भंगेणप्पप्पणम्मि ठाणम्मि।
ठविदूण मिच्छभंगे सासणभंगा हु अत्थित्ति ।।५५२।।
अविरदभंगे मिस्स य देसपमत्ताण सव्वभंगा हु ।
अत्थित्ति ते दु अवणिय मिच्छाविरदापमादेसु ।।५५३।।

अन्वयार्थ - (णिरयादिजुदट्ठाणे) नरकादि गति सहित स्थानों को **(अप्पप्पणम्मि ठाणम्मि)** अपने अपने गुणस्थानों में **(भंगेण)** भंगों के साथ **(ठविदूण)**

स्थापन करके **(मिच्छभंगे)** मिथ्यादृष्टि के भंगों में **(सासणभंगा हु अत्थित्ति)** सासादन के भंग गर्भित हैं और **(अविरदभंगे)** असंयत के भंगों में **(मिस्सयदेसपमत्ताण)** मिश्र, देशसंयत और प्रमत्तसंयत के **(सव्वभंगा)** सर्व भंग **(अत्थित्ति)** आते हैं इसलिए **(ते)** उन भंगों को **(अवणिय)** घटाकर **(मिच्छा विरदापमादेसु)** मिथ्यादृष्टि, अविरत और अप्रमत्त में बंधस्थानों के भंग होते हैं।

बन्धस्थानों के अपुनरुक्त भंग -

नरक आदि गतिसहित बन्धस्थानों को अपने अपने भंगोसहित अपने अपने गुणस्थानों में स्थापित करें तो मिथ्यादृष्टि के बन्धस्थानों के भंगों में सासादन के बन्धस्थानों के भंग गर्भित होते हैं क्योंकि उनमें समानता है और असंयत के बन्धस्थानों के भंगों में मिश्र, देशसंयत व प्रमत्त गुणस्थानों के भंग गर्भित होते है क्यों कि उनमें समानता है।

अपुनरुक्त भंग

गुणस्थान	बंधस्थान	बन्धस्थान के भंग
मिथ्यात्व	२८ नरकगतियुत	१
मिथ्यात्व	२३ तिर्यंच एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत	१
मिथ्यात्व	२५ तिर्यंच एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत	८
मिथ्यात्व	२६ तिर्यंच एकेन्द्रिय आतप वा उद्योतयुत	८
मिथ्यात्व	२९ तिर्यंच पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत	४६०८
मिथ्यात्व	३० तिर्यंच पंचेन्द्रिय उद्योतयुत	४६०८
मिथ्यात्व	२५ मनुष्य अपर्याप्तयुत	१
मिथ्यात्व	२९ मनुष्य पर्याप्तयुत	४६०८
मिथ्यात्व	२८ देवगतियुत	८
असंयत	२९ मनुष्य पर्याप्तयुत	८
असंयत	३० मनुष्य तीर्थंकरयुत	८
असंयत	२८ देवगतियुत	८
असंयत	२९ देवतीर्थयुत	८

गुणस्थान	बंधस्थान		बन्धस्थान के भंग
पुनरुक्त भंग			
सासादन	२९ तिर्यंच पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत	३२००	मिथ्या.के ४६०८ में गर्भित
सासादन	३० तिर्यंच पंचेन्द्रियपर्याप्त उद्योतयुत	३२००	मिथ्या.के ४६०८ में गर्भित
सासादन	२९ मनुष्य पर्याप्त	३२००	मिथ्या.के ४६०८ में गर्भित
सासादन	२८ देवगतियुत	८	मिथ्यात्वके ८ में गर्भित
मिश्र	२९ मनुष्य पर्याप्त	८	असंयतके ८ में गर्भित
मिश्र	२८ देवगतियुत	८	असंयतके ८ में गर्भित
देशसंयत व	२८ देव	८	असंयतके ८ में गर्भित
प्रमत्तसंयत	२९ देव.तीर्थयुत	८	असंयतके ८ में गर्भित

उपर्युक्त भंगों का स्पष्टीकरण गा.५३१ से ५३७ के विशेषार्थ में बंधस्थानों के भंगों के कोष्टक में देखें।

अब बंधस्थानों में भुजाकारादि भेदों को कहते हैं -

भुजगारा अप्पदरा अवट्ठिदावि य सभंगसंजुत्ता ।
सव्वपरट्ठाणेण य णेदव्वा ठाणबंधम्मि ।।५५४।।

अन्वयार्थ - पूर्वोक्त बन्धस्थानों के **(भुजगारा)** भुजकार **(अप्पदरा)** अल्पतर **(अवट्ठिदावि)** अवस्थित और **(य)** च शब्द से अवक्तव्य **(सभंगसंजुत्ता)** अपने अपने भंगों से सहित **(ठाणबंधम्मि)** नामकर्म के बन्धस्थानों में **(सव्वपरट्ठाणेण य)** स्वस्थान, परस्थान और सर्वस्थान के साथ **(णेदव्वा)** लाने चाहिये।

अप्पपरोभयठाणे बंधट्ठाणाण जो दु बंधस्स ।
सट्ठाण परट्ठाणं सव्वपरट्ठाणमिदि सण्णा ।।५५५।।

अन्वयार्थ - (अप्पपरोभयठाणे) आत्मस्थान अर्थात् अपना गुणस्थान, परस्थान

अर्थात् विवक्षित गुणस्थान से अन्य गुणस्थान, उभयस्थान अर्थात् अन्य गति और अन्य गुणस्थान इन तीनों में **(बंधट्ठाणाण)** बन्धस्थानों के **(जो दु)** जो **(बंधस्स)** भुजाकारादि बंध हैं। उनकी क्रम से **(सट्ठाण)** स्वस्थान **(परट्ठाणं)** परस्थान और **(सव्वपरट्ठाणं)** सर्व परस्थान **(इदि)** ऐसी **(सण्णा)** संज्ञा है।

विशेषार्थ - नामकर्म के भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्य बंधस्थानों के भंगों की गणना

१) स्वस्थान २) परस्थान ३) सर्वपरस्थान ऐसे तीन प्रकार से की हैं।

१) स्वस्थान - अपना गुणस्थान २) परस्थान - अपने गुणस्थान से अन्य गुणस्थान में

३) सर्वपरस्थान - एकगतिसंबंधी गुणस्थान से दूसरी गति के गुणस्थान में

अब किस गुणस्थान से कितने गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं यह कहते हैं -

चदुरेक्कदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता ।
तिसु उवसमगे संतेति य तिय तिय दोण्णि गच्छंति ।।५५६।।

अन्वयार्थ - **(अप्पमत्तंता)** मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर अप्रमत्तगुणस्थानपर्यन्त के जीव क्रम से **(चदुरेक्कदुपणपंच य छत्तिगठाणाणि)** चार, एक, दो, पाँच, पाँच, छह और तीन गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं। **(तिसु उवसमगे)** अपूर्वकरणादि तीन उपशमक क्रम से **(तिय तिय ति)** तीन, तीन, तीन को और **(संते)** उपशान्त कषायवर्ती **(दोण्णि)** दो गुणस्थानों को **(गच्छंति)** प्राप्त होते हैं।

सासणपमत्तवज्जं अपमत्तंतं समल्लियइ मिच्छो ।
मिच्छत्तं बिदियगुणो मिस्सो पढमं चउत्थं च ।।५५७।।

अन्वयार्थ - (मिच्छो) मिथ्यादृष्टि जीव **(सासण पमत्तवज्जं)** सासादन और प्रमत्त गुणस्थान को छोड़कर **(अपमत्तंतं)** अप्रमत्त पर्यन्त गुणस्थानों को प्राप्त होता है। **(विदियगुणो)** दूसरे गुणस्थानवर्ती **(मिच्छत्तं)** मिथ्यात्व गुणस्थान को ही प्राप्त होता है **(मिस्सो)** मिश्रगुणस्थानवर्ती **(पढमं चउत्थं च)** पहले और चौथे गुणस्थान को प्राप्त होता है।

अविरदसम्मो देसो पमत्तपरिहीणमप्पमत्तंतं ।
छट्ठाणाणि पमत्तो छट्ठगुणं अप्पमत्तो दु ।।५५८।।

अन्वयार्थ - **(अविरदसम्मो देसो)** असंयत सम्यग्दृष्टि और देशसंयत **(पमत्तपरिहीणमप्पमत्तंतं)** प्रमत्त के बिना अप्रमत्तपर्यन्त पाँच पाँच गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं **(पमत्तो)** प्रमत्तसंयत **(अप्पमत्तंतं छट्ठाणाणि)** अप्रमत्तपर्यन्त छह गुणस्थानों को और **(अप्पमत्तो)** अप्रमत्तसंयत **(छट्ठगुणं)** छठे गुणस्थान को प्राप्त होता है। **(दु)** तु शब्द से अप्रमत्तसंयत अपूर्वकरण को और मरण होने पर देवअसंयत को प्राप्त होता है।

उवसामगा दु सेढिं आरोहंति य पडंति य कमेण ।
उवसामगेसु मरिदो देवतमत्तं समल्लियइ ।। ५५९।।

अन्वयार्थ - **(उवसामगा)** उपशमक जीव **(सेढिं)** श्रेणीपर **(कमेण)** क्रम से **(आरोहंति)** चढ़ते हैं **(य)** और श्रेणि से **(पडंति)** गिरते हैं **(उवसामगेसु मरिदो)** उपशमश्रेणिपर मरे हुए जीव **(देवतमत्तं)** महर्द्धिक देवपने को **(समल्लियइ)** प्राप्त होते हैं।

विशेषार्थ -

किस गुणस्थान से	किस गुणस्थान में जाता है	कुल स्थानसंख्या
१. मिथ्यात्व	३,४,५,७	४
२. सासादन	१ मिथ्यात्व	१
३. मिश्र	१, ४	२
४. असंयत	१,२,३,५,७	५
५. देशसंयत	१,२,३,४,७	५
६. प्रमत्त	१,२,३,४,५,७	६
७. अप्रमत्त	६,८, मरनेपर ४ देवासंयत	३
८. अपूर्वकरण उपशमक	७,९, मरनेपर ४ देवासंयत	३
९. अनिवृत्तिकरण उपशमक	८,१०, मरनेपर ४ देवासंयत.	३
१०. सूक्ष्मसांपराय	९,११, मरनेपर ४ देवासंयत	३
११. उपशांतमोह	१०, मरनेपर ४ देवासंयत	२
नारकी मिथ्यादृष्टि	३,४	२

किस गुणस्थान से	किस गुणस्थान में जाता है	कुल स्थानसंख्या
नारकी सासादन	१	१
मिश्र	१,४	२
असंयत	१,२,३	३
तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	३,४,५	३
सासादन	१	१
मिश्र	१,४	२
असंयत	१,२,३,५	४
देशसंयत	१,२,३,४	४
मनुष्यगति में	सामान्य गुणस्थानवत्	
देवगति में	नारकी के समान	

विशेषार्थ - क्षपकश्रेणि में चढ़ना ही है, उतरना या मरण नहीं होता अत: ८ वा, ९ वें को, ९ वाँ १० वें को, १० वा १२ वें को, १२ वा १३ वें को, १३ वा १४ वें को, अयोगी सिद्धपद को प्राप्त होता है।

अब मरणरहित स्थानों को कहते हैं -

मिस्सा आहारस्स य खवगा चडमाण पढमपुव्वा य ।
पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ।।५६०।।
अणसंजोजिदमिच्छे मुहुत्त अंतोत्ति णत्थि मरणं तु ।
कदकरणिज्जं जाव दु सव्वपरट्ठाण अत्थपदा ।।५६१।।

अन्वयार्थ - **(मिस्सा)** मिश्रगुणस्थानवर्ती **(आहारस्स)** आहारक मिश्रकाय-योगी **(खवगा)** क्षपक श्रेणीवाले **(चडमाणपढमपुव्वा य)** उपशमश्रेणी चढ़ते हुए प्रथम भागवर्ती अपूर्वकरण **(पढमुवसम्मा)** प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि **(य)** और **(तमतमगुणपडिवण्णा)** सप्तमनरक के द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव **(ण मरंति)** मरण को प्राप्त नहीं होते। **(अणसंजोजिद मिच्छे)** अनंतानुबंधी की विसंयोजना कर मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त जीव का **(मुहुत्तअंतो त्ति)** अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त**(मरणं**

णत्थि) मरण नहीं होता **(कदकरणिज्जं जाव दु)** दर्शन मोहनीय का क्षय करनेवाला कृतकृत्यवेदक होने तक मरण को प्राप्त नहीं होता। इस प्रकार **(सव्वपरट्ठाण)** सर्वपरस्थान के **(अट्ठपदा)** आठ पद हैं।

विशेषार्थ - मरणरहित ८ स्थान -

१) मिश्र गुणस्थान २) निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्थारूप मिश्रकाययोग ३) क्षपकश्रेणी
४) चढ़ते अपूर्वकरण उपशमश्रेणि का प्रथम भाग ५) प्रथमोपशम सम्यक्त्व
६) सातवें नरक का सासादन, मिश्र, असंयत गुणस्थान
७) अनन्तानुबन्धीका विसंयोजनकर मिथ्यात्व को प्राप्त होनेपर एक अन्तर्मुहूर्त पर्यंत।
८) दर्शनमोह के क्षय का प्रारम्भ करनेपर कृतकृत्यवेदक होनेतक मरण नहीं होता।

देवेसु देवमणुवे सुरणरतिरिये चउग्गईसुंपि ।
कदकरणिज्जुप्पत्ती कमसो अंतोमुहुत्तेण ।। ५६२।।

अन्वयार्थ - (कदकरणिज्जुप्पत्ती) कृतकृत्यवेदक की उत्पत्ति **(कमसो)** क्रम से **(अंतोमुहुत्तेण)** अन्तर्मुहूर्त में प्रथम भाग में मरकर **(देवेसु)** देवों में **(देवमणुवे)** दूसरे भाग में मरकर देव और मनुष्यों में **(सुरणरतिरिये)** तीसरे भाग में मरकर देव, मनुष्य या तिर्यंचों में, चौथे भाग में मरकर **(चउग्गईसुंपि)** चारों गतियों में होती है।

विशेषार्थ - कृतकृत्यवेदक का काल अन्तर्मुहूर्त है। उसके चार भाग करना। उसके प्रथम भाग में मरकर देवगति में ही उत्पन्न होता है। दूसरे भाग में मरकर देव और मनुष्य में, तीसरे भाग में मरकर देव, मनुष्य, तिर्यंचों में और चौथे भाग में मरकर चारों गति में उत्पन्न होता है। सम्यक्त्व होने के पूर्व आयु बंधी है तो यहाँ मरण होगा। देवायु को छोडकर अन्य तीन आयु का बन्ध मिथ्यात्व और सासादन गुणस्थान में ही करता है। सम्यक्त्व में नहीं।

किस गुणस्थान में मरकर जीव किस गति में जाता है उसका कोष्टक

गुणस्थान	१ मि	२ सा	३ मि	४ असं.	५ दे	६ प्र	७ अप्र	८ अपू
गति	४ गति	नरक विना ३	०	४ गति	देव	देव	देव	देव

गुणस्थान	९ अ.	१० सू.	११ उप	१२	१३	१४
गति	देव	देव	अहमिन्द्र देव	०	०	शिवगति

तीसरे, बारहवें और तेरहवें गुणस्थान में मरण नहीं है।

अब नामकर्म के बन्धस्थानों के भुजाकारादि भेदों को भंग सहित कहते हैं -

तिविहो दु ठाणबंधो भुजगारप्पदरवट्ठिदो पढमो ।
अप्पं बंधंतो बहुबंधे बिदियो दु विवरीयो ।।५६३।।
तदियो सणामसिद्धो सव्वे अविरुद्धठाणबंधभवा ।
ताणुप्पतिं कमसो भंगेण समं तु वोच्छामि ।।५६४।।

अन्वयार्थ - (ठाणबंधो) नामकर्म के बन्धस्थान **(तिविहो)** तीन प्रकार के हैं **(भुजगारप्पदरवट्ठिदो)** भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित। **(अप्पं बंधंतो)** पहले थोडी प्रकृतियों को बांधकर **(बहुबंधे)** बहुत प्रकृतियों को बांधने पर **(पढमो)** प्रथम भुजाकार बन्ध होता है। **(विवरीयो)** इसके विपरीत अर्थात् पहले बहुत प्रकृतियों को बांधकर अल्प प्रकृतियों को बांधने पर **(बिदियो)** दूसरा अल्पतर बंध होता है। **(तदियो)** तीसरा **(सणामसिद्धो)** अपने नाम से ही सिद्ध है। पहले समय में जितनी प्रकृति बांधी उतनी ही दूसरे समय में बांधनेपर अवस्थित बंध होता है। **(सव्वे)** ये सब भुजाकार आदि **(अविरुद्ध ठाणबंधभवा)** अविरुद्ध बन्धस्थान द्वारा होते हैं। **(ताणुप्पत्तिं)** उनकी उत्पत्ति को आगे **(कमसो)** क्रम से **(भंगेण समं तु)** भंगों के साथ **(वोच्छामि)** कहूंगा।

विशेषार्थ - भुजाकारबंध - पहले थोड़ी प्रकृतियों को बांधकर अनन्तर बहुत प्रकृतियों को बाँधना।

अल्पतर बंध - पहले बहुत प्रकृतियों को बांधकर अनन्तर थोडी प्रकृतियों को बाँधना।

अवस्थित बंध - जितनी प्रकृति पूर्व समय में बाँधी उतनी ही दूसरे समय में बाँधना।

अवक्तव्य बंध - कुछ भी प्रकृतियों को न बाँधकर पुनः कुछ प्रकृतियों को बाँधना।

भूबादर तेवीसं बंधंतो सव्वमेव पणुवीसं ।
बंधदि मिच्छाइट्ठी एवं सेसाणमाणेज्जो ।।५६५।।

अन्वयार्थ - (भूबादर) बादर पृथ्वीकायिकादि जीव **(तेवीसं)** तेईस प्रकृतिरूप

बन्धस्थान के सर्वभंगों का **(बंधंतो)** बन्ध करते हुए **(पणुवीसं)** पच्चीस प्रकृतिरूप स्थान के **(सव्वमेव)** सभी भंगों को **(बंधदि)** बांधते हैं। **(एवं)** इसी प्रकार **(मिच्छाइट्ठी)** मिथ्यादृष्टि के **(सेसाणं)** शेष सभी बंधस्थानों के भंग **(आणेज्जो)** लाना चाहिये।

विशेषार्थ - पूर्व में बन्धस्थानों के भंगों का खुलासा किया है उसको जानकर यह कोष्टक समझना **मिथ्यात्व गुणस्थान में बन्धस्थानों के भंग**

बंध स्थान	बंधस्थानों के प्रकारों का विवरण	प्रकार संख्या	प्रत्येक के भंग	सर्वभंग प्रकार×भंग
२३	एकेन्द्रिय अपर्याप्त पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, साधारण वनस्पति प्रत्येक के बादर सूक्ष्म ५×२=१०+१ प्रत्येक के वनस्पति	११	१	११×१=११
	२३ बंधस्थान के कुलभंग			११
२५	१)एकेन्द्रिय पर्याप्त-१)बादर साधारण वनस्पति २) सूक्ष्म पृथ्वी३)सूक्ष्म जल ४) सूक्ष्म अग्नि ५) सूक्ष्म वायु ६) सूक्ष्म साधारण	६	४	६×४=२४
	२)बादर पर्याप्त- १) पृथ्वी २) जल ३) अग्नि ४) वायु ५)प्रत्येक वनस्पति	५	८	५×८=४०
	३)अपर्याप्त-१)द्वीन्द्रिय२)त्रीन्द्रिय ३)चतुरिन्द्रिय ४) असंज्ञी पंचे. ५) संज्ञी पंचे. ६) मनुष्य	६	१	६×१=६
	२५ बंधस्थान के कुलभंग			७०
२६	१) बादर पृथ्वी आतपयुत २) बादर पृथ्वी उद्योत ३) बादर जल उद्योत ४) बादर वनस्पति उद्योतयुत	४	८	४×८ =३२
	कुलभंग			३२
२८	१) देवगतियुत	१	८	१×८ = ८
	२) नरकगतियुत	१	१	१×१ = १
	कुलभंग			९

बंध स्थान	बंधस्थानों के प्रकारों का विवरण	प्रकार संख्या	प्रत्येक के भंग	सर्वभंग प्रकार×भंग
२९	१) पर्याप्त द्वीन्द्रिय २) त्रीन्द्रिय ३) चतुरिन्द्रिय ४) असंज्ञी पंचेन्द्रिय	४	८	४×८ =३२
	२) संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	१	४६०८	१×४६०८ =४६०८
	३) मनुष्य पर्याप्त युत	१	४६०८	१×४६०८ =४६०८
				कुलभंग ९२४८
३०	१) पर्याप्त द्वीन्द्रिय उद्योत २)त्रीन्द्रिय उद्योत ३) चतुरिन्द्रिय उद्योत ४)असंज्ञी पंचेन्द्रिय उद्योत	४	८	४×८ =३२
	२) संज्ञी पंचेन्द्रिय उद्योत युत	१	४६०८	१×४६०८ =४६०८
				कुलभंग ४६४०

भुजकार भंग निकालने की विधि

मिथ्यात्व गुणस्थान में स्वस्थान के आश्रय से भुजाकार बंध व उनके भंग

२३ प्रकृतियों को बाँधकर २५ का, या २६ का, या २८ का, या २९ का, या ३० का बंध करेगा तो ये २३ के भुजाकार बंध ५ प्रकार के होंगे।

२५ प्रकृतियों को बाँधकर २६का, या २८ का, या २९ का, या ३० का बंध करेगा तो इसप्रकार २५ बन्धस्थान के भुजाकार बंध ४ प्रकार के होंगे।

२६ प्रकृतियों को बाँधकर २८ या २९ या ३० का बंध करेगा तो इसप्रकार २६ प्रकृतिक बंधस्थान के भुजाकार बंध ३ प्रकार के होंगे।

२८ प्रकृतियों को बाँधकर २९ या ३० प्रकृतियों का बंध करता है तो इसप्रकार २८ प्रकृतिक बन्धस्थान के भुजाकार बंध २ प्रकार के होंगे।

२९ प्रकृतियों को बाँधकर ३० प्रकृतियों का बंध करता है यह २९ का १ भुजाकार बंध है।

२३ स्थान के एके. अप. बादर पृथ्वीकायसहित को बाँधकर पीछे २५ के ७० भंगों को बाँधता है तो २३ तेईस के ग्यारह भंगों को बाँधकर २५ के कितने भंगों का बंध करेगा?

इसप्रकार प्रमाणराशि - २३ का १ भंग फलराशि - २५ के ७० भंग,२६ के ३२ भंग इ.
इच्छाराशि सर्वत्र तेईस के ग्यारह भंग $\frac{\text{फल} \times \text{इच्छा}}{\text{प्रमाण}}$ = लब्धराशि
सब भंगों का प्रमाण होता है।

तेवीसट्ठाणादो मिच्छत्तीसोत्ति बंधगो मिच्छो ।
णवरि हु अट्ठावीसं पंचिंदियपुण्णगो चेव ।।५६६।।

अन्वयार्थ - (मिच्छो) मिथ्यादृष्टि जीव **(तेवीसट्ठाणादो)** तेईस प्रकृतिस्थान से **(मिच्छत्तीसोत्ति)** मिथ्यात्वगुणस्थान में बन्धयोग्य तीस प्रकृतिरूप स्थान पर्यंत कहे भुजाकारों का **(बंधगो)** बंधक है। **(णवरि हु)** विशेष यह है कि **(अट्ठावीसं)** अट्ठाईस प्रकृतिस्थान को **(पंचिंदियपुण्णगो चेव)** पंचेन्द्रिय पर्याप्तजीव ही बांधता है।

विशेषार्थ - २३ से ३० पर्यंत के भुजाकार बंधस्थानों का बंध मिथ्यादृष्टि को होता है, परंतु २८ का बंध पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीव को ही होता है।

भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो मिच्छो य मिच्छगअपुण्णो ।
तिरि उगुतीसं तीसं णर उगुतीसं च बंधदि हु ।।५६७।।

अन्वयार्थ - (भोगे) भोगभूमि में **(सम्मो मिच्छो य)** पर्याप्त सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि च शब्द से निवृत्त्यपर्याप्त सम्यग्दृष्टि **(सुरट्ठवीसं)** देवगति सहित अट्ठाईस को ही बांधता है। **(मिच्छगअपुण्णो)** निवृत्त्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि **(तिरि उगतीसं तीसं)** तिर्यंचगति सहित उनतीस या तीस को **(च)** और **(णर उगुतीसं)** मनुष्यगति सहित उनतीस को **(बंधदि हु)** बांधता है।

विशेषार्थ - भोगभूमियों में बन्धस्थान - भोगभूमि में पर्याप्त पंचेन्द्रिय सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और निर्वृत्त्यपर्याप्त सम्यग्दृष्टि देवगतिसहित अठाईस का ही बंध करता है और निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्यादृष्टि तिर्यंचगतिसहित उनतीस या तीस को और मनुष्यगतिसहित उनतीस को बाँधता है।

मिच्छस्स ठाणभंगा एयारं सदरि दुगुण सोल णवं ।
अडदालं बाणउदी सदाण छादाल चत्तधियं ।।५६८।।

अन्वयार्थ - (मिच्छस्स) पूर्वोक्त मिथ्यादृष्टि जीव के **(ठाणभंगा)** स्थानों के भंग तेईस के **(एयारं)** ग्यारह **(सदरि)** पच्चीस के सत्तर **(दुगुण सोल)** छब्बीस के बत्तीस **(णवं)** अट्ठाईस के नौ **(अडदालं बाणउदी सदाण)** उनतीस के बानवे सौ अड़तालीस **(छादाल चत्तधियं)** तीस के छियालीस सौ चालीस होते हैं।

स्थान	२३	२५	२६	२८	२९	३०
भंग	११	७०	३२	९	९२४८	४६४०

पीछे कहे हुए भुजाकार भंग संक्षेप में कोष्टक के रूप में -

	प्र.	फ.	इ.	प्र.	फ.	इ.	प्र.	फ.	इ.	प्र.	फ.	इ.	प्र.	फ.	इ.
स्थान	२३	३०	२३	२५	३०	२५	२६	३०	२६	२८	३०	२८	२९	३०	२९
भंग	१	४६४०	११	१	४६४०	७०	१	४६४०	३२	१	४६४०	९	१	४६४०	९२४८
स्थान	२३	२९	२३	२५	२९	२५	२६	२९	२६	२८	२९	२८			
भंग	१	९२४८	११	१	९२४८	७०	१	९२४८	३२	१	९२४८	९			
स्थान	२३	२८	२३	२५	२८	२५	२६	२८	२६						
भंग	१	९	११	१	९	७०	१	९	३२						
स्थान	२३	२६	२३	२५	२६	२५									
भंग	१	३२	११	१	३२	७०									
स्थान	२३	२५	२३												
भंग	१	७०	११												

प्र. = प्रमाण , फ. = फल , इ. = इच्छा

विशेषार्थ - ऊपर के कोष्टक में जैसा दिखाया है वैसे ही यहांपर सब फलराशियों का एकसाथ जोड़ करके उसे गुण्य करके इच्छाराशिरूप गुणाकार से गुणा करने से सर्व भुजाकार बंध आते हैं। सो पूर्व कोष्टक से जान लेना।

मिथ्यात्व गुणस्थान के भुजाकार भंग

प्रमाणराशि	फलराशि	इच्छाराशि	लब्धराशि
१. २३ का १ भंग बांधकर	२५ के ७० भंगों को बांधता है तो	२३के ११ भंगों को बांधकर कितना?	७०×११ = ७७०
२. २३ का १ भंग	२६ के ३२ भंग	२३ के ११ भंग	३२×११ = ३५२
३. २३ का १ भंग	२८ के ९ भंग	२३ के ११ भंग	९×११ = ९९
४. २३ का १ भंग	२९ के ९२४८ भंग	२३ के ११ भंग	९२४८×११ =१०१७२८
५. २३ का १ भंग	३० के ४६४० भंग	२३ के ११ भंग	४६४०×११ = ५१०४०
			१३९९९×११=१५३९८९
			सर्वभंग १,५३,९८९
१. २५ का १ भंग बांधकर	२६ के ३२ भंगों का बंध करता है	२५ के ७०भंगों को बांधकर कितना?	३२×७० =२२४०
२. २५ का १ भंग	२८ के ९ भंग	२५ के ७०भंग	९×७० = ६३०
३. २५ का १ भंग	२९ के ९२४८ भंग	२५ के ७०भंग	९२४८×७० =६४७३६०
४. २५ का १ भंग	३० के ४६४० भंग	२५ के ७०भंग	४६४०×७० =३२४८००
			१३९२९×७०=९७५०३०
			सर्वभंग ९,७५,०३०
१. २६ का १ भंग बांधकर	२८ के ९ भंगों का बंध करता है	२६ के ३२भंगों को बांधकर कितना?	९×३२ = २८८
२. २६ का १ भंग	२९ के ९२४८ भंग	२६ के ३२भंग	९२४८×३२=२९५९३६
३. २६ का १ भंग	३० के ४६४० भंग	२६ के३२ भंग	४६४०×३२ = १४८४८०
			१३८९७×३२=४,४४,७०४
			सर्वभंग ४,४४,७०४

प्रमाणराशि	फलराशि	इच्छाराशि	लब्धराशि
१. २८ का १ भंग बांधकर २. २८ का १ भंग	२९ के ९२४८ भंगोंको बांधता है ३० के ४६४० भंग	२८ के ९ भंगों को बांधकर कितना? २८ के ९ भंग	९२४८×९ =८३२३२ ४६४०×९ = ४१७६० १३८८८×९=१२४९९२ **सर्वभंग** १,२४,९९२
१. २९ का १ भंग बांधकर	३० के ४६४० भंगों को बंधता है	२९ के ९२४८ भंगों को बांधकर कितना?	४६४०×९२४८ =४२९१०७२० **सर्वभंग** ४,२९,१०७२०
मिथ्यात्व गुणस्थान के सर्व भुजाकारभंग			४,४६,०९,४३५

चार कोटी छियालीस लाख नौ हजार चारसौं पैंतीस भुजाकार भंग होते हैं।

विवरीयेणप्पदरा होंति हु तेरासिएण भंगा हु ।
पुव्वपरट्ठाणाणं भंगा इच्छा फलं कमसो ।।५६९।।

अन्वयार्थ - **(विवरीयेण तेरासिएण)** भुजाकार भंग लाने के लिए जो त्रैराशिक किये थे उनसे विपरीत क्रम से त्रैराशिक करने से **(अप्पदरा भंगा)** अल्पतर भंग **(होंति हु)** होते हैं। **(पुव्वपरट्ठाणाणं भंगा कमसो इच्छा फलं)** पूर्वस्थान के भंगों को इच्छाराशि और पिछले स्थान के भंगों को फलराशि करने पर क्रम से अल्पतर भंग होते हैं।

विशेषार्थ - भुजाकार भंग लाने के लिए जो त्रैराशिक किये थे उनको विपरीत करने से अल्पतर भंग होते हैं। अर्थात् पहले स्थान रूप भंगों को इच्छाराशि और पिछले स्थान के भंगों को फलराशि करनेपर क्रम से अल्पतर भंग होते हैं। भुजाकार के फलराशियों को इच्छाराशि करना और इच्छा राशि को फलराशि करना।

तीस का बन्ध करके उनतीस आदि का बन्ध करनेपर अल्पतर बंध होता है। तीस के एक भेद का बन्ध करके उनतीस आदि के सब भेदों का बन्ध करे तो तीस के छियालीस सौ चालीस भेदों का बन्ध करके उनका बन्ध करनेपर कितने अल्पतर बन्ध होंगे। तीसके पाँच त्रैराशिक, उनतीस के चार त्रैराशिक, अठ्ठाइस के तीन त्रैराशिक, छब्बीस के दो और पच्चीस के एक त्रैराशिक करना।

मिथ्यादृष्टि के अल्पतर बन्धस्थानों के भंग -

३०/१ २३/११ ३०/४६४०				
३०/१ २५/७० ३०/४६४०	२९/१ २३/११ २९/९२४८			
३०/१ २६/३२ ३०/४६४०	२९/१ २५/७० २९/९२४८	२८/१ २३/११ २८/९		
३०/१ २८/९ ३०/४६४०	२९/१ २६/३२ २९/९२४८	२८/१ २५/७० २८/९	२६/१ २३/११ २६/३२	
३०/१ २९/९२४८ ३०/४६४०	२९/१ २८/९ २९/९२४८	२८/१ २६/३२ २८/९	२६/१ २५/७० २६/३२	२५/१ २३/११ २५/७०
प्रमाण फल इच्छा	प्रमाण फल इच्छा	प्रमाण फल इच्छा	प्रमाण फल इच्छा	प्रमाण फल इच्छा

बन्धस्थान	फलराशि	फल.जोड़ × इच्छाराशि	सर्वभंग
३० के	९२४८+९+३२+७०+११	= ९३७० × ४६४०	४३४७६८००
२९ के	९+३२+७०+११	= १२२ × ९२४८	११२८२५६
२८	३२+७०+११	= ११३ × ९	१०१७
२६	७०+११	= ८१ × ३२	२५९२
२५	११	= ११ × ७०	७७०
मिथ्यादृष्टि गुणस्थान के अल्पतर भंग ४,४६,०९,४३५ चार करोड छियालीस लाख नौ हजार चारसौ पैंतीस			

लहुकरणं इच्छंतो एयारादीहि उवरिमं जोगं ।

संगुणिदे भुजगारा उवरीदो होंति अप्पदरा ।।५७०।।

अन्वयार्थ - (लहुकरणं इच्छंतो) थोडे में जानने की इच्छावाले को **(एयारादीहिं)** ग्यारह आदि अंकों के द्वारा **(उपरिमं जोगं)** ऊपर के अंकों के जोड़ को **(संगुणिदे)** गुणा करनेपर **(भुजगारा)** भुजाकार के भंगों का प्रमाण आता है **(उवरीदो)** ऊपर के तीस आदि स्थानों के भंगों को नीचे के सब स्थानों के सब भंगों को जोड़कर गुणा

करनेपर **(अप्पदरा)** अल्पतर भंग **(होंति)** होते हैं।

विशेषार्थ - भुजाकार और अल्पतर भंग निकालने का लघुकरण

प्रथम बन्धस्थान के भंगों को गुणाकार करना और उसके ऊपर के बन्धस्थान के भंगों का जोड़ करके उसे गुण्य करना। परस्पर गुणा करने से उस उस स्थान के भुजाकार व अल्पतर भंग निकलते हैं। भुजाकार के लिए नीचे से ऊपर जाना अर्थात् २३ से ३० तक और अल्पतर के लिए ऊपर से नीचे अर्थात् ३० से २३ तक जाना।

बन्धस्थान	भंग	भुजाकार भंगों का विवरण			अल्पतर भंगों का विवरण		
		गुण्य	गुणकार	लब्ध	गुण्य	गुणकार	लब्ध
३०	४६४०						
२९	९२४८	४६४०	९२४८	४२९१०७२०	९३७०	४६४०	४३४७६८००
२८	९	१३८८८	९	१२४९९२	१२२	९२४८	११२८२५६
२६	३२	१३८९७	३२	४४४७०४	११३	९	१०१७
२५	७०	१३९२९	७०	९७५०३०	८१	३२	२५९२
२३	११	१३९९९	११	१५३९८९	११	७०	७७०
				४४६०९४३५			४४६०९४३५

भुजगारप्पदराणं भंगसमासो समो हु मिच्छस्स।
पणतीसं चउणवदी सट्ठी चोदालमंककमे ।।५७१।।

अन्वयार्थ - (मिच्छस्स) मिथ्यादृष्टि के **(भुजगारप्पदराणं)** भुजाकार और अल्पतर **(भंगसमासो)** भंगों का जोड़ **(समो हु)** समान है **(अंककमे)** उसकी संख्या अंकों के क्रम से **(पणतीसं)** पैतीस **(चउणवदी)** चौरानवे **(सट्ठी)** साठ **(चोदालं)** चवालीस है। इन्हें उलटे क्रम से लिखने पर ४,४६,०९,४३५ होती है।

विशेषार्थ - मिथ्यादृष्टि गुणस्थान के अवस्थित बंध के भंग -

भुजाकार भंग + अल्पतर भंग = अवस्थित भंग

४४६०९४३५ + ४४६०९४३५ = **८,९२,१८,८७०** अवस्थित भंग

भुजाकार या अल्पतर भंगों में जिस जिस प्रकृति भंग का बन्ध होता है उसी का ही बन्ध द्वितीयादि समय में होनेपर अवस्थित बन्ध होता है।

चौथे गुणस्थान के भुजाकार बंधस्थानों के भंग कहते हैं-

देवट्ठवीस णरदेउगुतीस मणुस्स तीस बंधयदे ।
ति छ णव णव दुग भंगा तित्थविहीणा हु पुणरुत्ता ।।५७२।।

अन्वयार्थ - (देवट्ठवीस) देवगतिसहित अठाईस **(णरदेउगुतीस)** मनुष्यगति सहित और देवगतिसहित उनतीस **(मणुस्स तीस)** मनुष्यगतिसहित तीस में **(तिछणवणवदुगभंगा)** तीन, छह, नौ नौ दो अर्थात् छत्तीस हजार नौ सौ बानवें भुजाकार बंध होते हैं। **(तित्थविहीणा)** तीर्थंकर रहित भंग **(पुणरुत्ता)** पुनरुक्त है।

देवट्ठवीसबंधे देउगुतीसंमि भंग चउसट्ठी ।
देउगुतीसे बंधे मणुवत्तीसे वि चउसट्ठी ।।५७३।।

अन्वयार्थ - (देवट्ठवीसबंधे) देवगतिसहित अठाईस को बांधकर **(देउगुतीसंमि)** देवगतिसहित उनतीस को बांधनेपर **(चउसट्ठी)** चौसठ **(भंग)** भंग होते हैं। **(देउगुतीसे)** देवगतिसहित उनतीस को बांधकर **(मणुवत्तीसे)** मनुष्यगतिसहित तीस का **(बंधे वि)** बंध करने पर भी **(चउसट्ठी)** चौसठ भंग होते हैं।

तित्थयरसत्तणारयमिच्छ णरऊण तीसबंधो जो ।
सम्मम्मि तीसबंधो तियछक्कडछक्कचउभंगा ।।५७४।।

अन्वयार्थ - (तित्थयरसत्तणारयमिच्छ) तीर्थंकर की सत्तावाला नारकी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त अवस्था में **(जो)** जो **(णरऊणतीसबंधो)** मनुष्यगतिसहित उनतीस को (४६०८ भंगों के साथ) बांधता है। वह **(सम्मम्मि)** सम्यक्त्व होनेपर **(तीसबंधो)** मनुष्य तीर्थंकर सहित तीस को बांधता है। उसके (४६०८×८) = **(तियछक्कडछक्कचउभंगा)** तीन, छह, आठ, छह, चार अर्थात् ३६८६४ भुजाकार भंग होते हैं।

विशेषार्थ - असंयत गुणस्थान में भुजाकार बंध तीन प्रकार से संभव है -
स्वस्थान रूप १) असंयत मनुष्य देवगतिसहित अठाईस को बांधकर तीर्थंकर के बन्ध का प्रारम्भ करे तो तीर्थंकर सहित उनतीस को बांधता है तब एक भुजाकार बंध २८ - २९

सर्वपरस्थान रूप २) देवतीर्थयुत उनतीस को बांधकर मनुष्य असंयत मरकर देव या नारकी असंयत होता है वहाँ मनुष्य तीर्थयुत तीस को बांधता है यह दूसरा भुजाकार २९-३०

परस्थान रूप ३) तीर्थंकर की सत्तावाला नारकी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त अवस्था में मनुष्य पर्याप्तयुत उनतीस को बांधकर पर्याप्त होनेपर सम्यक्त्व को पाकर मनुष्यतीर्थयुत तीस का बंध करता है उसके तीसरा भुजाकार २९-३० होता है।

भुजाकार बंध के भंग

भुजाकार प्र.	बंध स्थान	प्रकार	भंग	बन्ध स्थान	प्रकार	भंग	भुजाकारभंग
१	२८	देवगतियुत	८	२९	देवतीर्थयुत	८	८×८ = ६४
२	२९	देवतीर्थयुत	८	३०	मनुष्यतीर्थयुत	८	८×८ = ६४
३	२९	मनुष्यपर्याप्तयुत	४६०८	३०	मनुष्यतीर्थयुत	८	४६०८ × ८ =३६८६४
					असंयत गुणस्थान के भुजाकार भंग		३६,९९२

मनुष्य असंयत देवगतियुत २८ का बंध करके मरनेपर देव या नारक असंयत होकर मनुष्यपर्याप्तयुत २९ का बंध करता है यह भुजाकार भी चौथे गुणस्थान में संभव है किन्तु मिथ्यादृष्टी के भुजाकार में यह बंध आया है अत: पुनरुक्त होने से उसको यहाँ नहीं गिनाया उसके $\frac{२८}{८} \times \frac{२९}{८} = ६४$ ये भंग पुनरुक्त हैं।

बावत्तरि अप्पदरा देउगुतीसा दु णिरय अडवीसं ।
बंधंत मिच्छभंगेणवगयतित्था हु पुणरुत्ता ।।५७५।।

अन्वयार्थ - असंयत गुणस्थान के **(अप्पदरा)** अल्पतर भंग **(बावत्तरि)** बहत्तर होते हैं। असंयतमनुष्य **(देउगुतीसा)** देवतीर्थंकर सहित २९ प्रकृति का ८ भंगसहित बन्ध करके मिथ्यादृष्टि होकर **(णिरयअडवीसं)** नरकगतिसहित अठाईस का **(बंधंत)** बंध करता है उसके ८ भंग और (तीर्थंकर मनुष्यगतिसहित तीस को बांधकर तीर्थंकरदेव सहित

उनतीस का बंध करता है उसके ८×८=६४ भंग होते हैं इसप्रकार असंयत के ७२ भंग हैं) **(अवगयतित्था)** तीर्थंकर रहित के (मनुष्यगतिसहित २९ को बांधकर देवगतिसहित २८ प्रकृति को बांधता है उसके ६४ भंग) **(मिच्छभंगेण)** मिथ्यादृष्टिसंबंधी भंगों के साथ **(हु पुणरुत्ता)** पुनरुक्त हैं।

विशेषार्थ - १) नरकायु का प्रथम गुणस्थान में बन्ध किया हुआ असंयत मनुष्य यदि तीर्थंकर का बंध प्रारम्भ करता है तो देवतीर्थयुत २९ का बन्ध करता है और मरते समय नरकगति में जाने के अभिमुख हुआ तो अन्तर्मुहूर्त के लिए मिथ्यादृष्टि होकर नरकगतिसहित २८ का बन्ध करता है तब एक अल्पतर बंध हुआ। यह परस्थान आश्रित है।

२) देव या नारकी असंयत मनुष्यतीर्थयुत ३० का बन्ध करके मरनेपर माता के गर्भ में अवतरण करके तीर्थंकर देवसहित उनतीस का बन्ध करता है यह दूसरा अल्पतर बन्ध है। यह बन्ध सर्वपरस्थान है।

चौथे गुणस्थान के अल्पतर बन्ध के भंग ७२

अल्पतर प्र.	बंध स्थान	प्रकार	भंग	बन्ध स्थान	प्रकार	भंग	अल्पतरभंग
१	२९	देवतीर्थयुत	८	२८	नरकगतियुत	१	८×१=८
२	३०	मनुष्यतीर्थयुत	८	२९	देवतीर्थयुत	८	८×८ = ६४
							७२

देव या नारकी असंयत मनुष्यपर्याप्तयुत २९ का बंध करके मरनेपर मनुष्य असंयत होकर देवगतियुत २८ का बंध करता है उसके भंग ८×८ = ६४ होते हैं किन्तु ये भंग पुनरुक्त हैं मिथ्यादृष्टि के अल्पतर भंगों में इनका समावेश होने से पुनरुक्त हैं।

चौथे गुणस्थान के अवस्थित भंग

भुजाकार भंग ३६९९२ + अल्पतर भंग ७२ = ३७०६४ अवस्थित भंग

आगे अप्रमत्तादि गुणस्थानों में भुजाकारभंगों को कहते हैं -

देवजुदेक्कट्ठाणे णरतीसे अप्पमत्त भुजगारा ।
पणदालिगिहारुभये भंगा पुणरुत्तगा होंति ।।५७६।।

अन्वयार्थ -(देवजुदेक्कठाणे) देवगतिसहित एकस्थान में और **(णरतीसे)** मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीस के स्थान में **(अप्पमत्त)** अप्रमत्तगुणस्थान में **(पणदाल भुजगारा)** पैंतालीस भुजाकार होते हैं **(इगिहारुभये)** एक तीर्थंकरसहित, आहारकद्वयसहित और तीर्थंकर आहारक दोनों सहित तीन स्थानों में **(भंगा)** जो भंग हैं वे **(पुणरुत्तगा)** पुनरुक्त **(होंति)** हैं।

अब उन ४५ भुजाकार भंगों को कहते हैं-

इगि अड अट्ठिगि अट्ठिगि
भेदड अट्ठड दु णव य वीस तीसेक्के ।
अडिगिगि अडिगिगिविह उण
खिगि खिगि इगितीस देवचउ कमसो ।५७७।।

अन्वयार्थ - प्रथम पंक्ति के **(इगि)** एक **(अड)** आठ **(अट्ठिगि)** आठ, एक **(अट्ठिगिभेद)** आठ, एक, एक, एक, एक, एक भंगसहित **(अड अट्ठड दुणव य वीस)** अठाईस, अठाईस अठाईस, उनतीस, उनतीस **(तीसेक्के)** तीस इकतीस, इकतीस, इकतीस, इकतीस रूप स्थानों को बांधकर दूसरी पंक्ति के **(अडिगिगि)** आठ, एक, एक **(अडिगिगिविह)** आठ, एक, एक, एक, एक, एक, एक भंगसहित **(उणखिगिखिगि-इगितीस)** दो बार तीस अर्थात् अठाईस, उणतीस, तीस, इकतीस, तीस, इकतीस इकतीस और **(देवचउ)** देवगतिसहित चार स्थानों को **(कमसो)** क्रम से बांधने पर सब पैंतालीस भुजाकार भंग होते हैं। दूसरी पंक्ति के स्थान भंगों से प्रथम पंक्ति के स्थान भंगों को गुणा करना।

अप्रमत्तादि में भुजाकार भंग ४५ का कोष्टक

गुणस्थान में	बंधस्थान प्रकार	भंग	बांधकर	गुणस्थान में	बंधस्थान प्रकार	भंग	भुजाकार भंग
अप्रमत्त	२८ देवगतियुत	१	बांधकर	प्रमत्त	२९ देवतीर्थयुत	८	१×८=८
प्रमत्त	२८ देवगतियुत	८	बांधकर	अप्रमत्त	३० देवआहारक	१	८×१=८
प्रमत्त	२८ देवगतियुत	८	बांधकर	अप्रमत्त	३१ देवतीर्थाहारक	१	८×१=८
अप्रमत्त	२९ देवतीर्थयुत	१	बांधकर, मरकर	असंयत देव	३० मनुष्यतीर्थ	८	१×८=८

गुणस्थान में	बंधस्थान प्रकार	भंग	बांधकर	गुणस्थानमें	बंधस्था.प्रकार	भंग	भुजाकार भंग
प्रमत्त	२९ देवतीर्थयुत	८	बांधकर	अप्रमत्त	३१ देवतीर्थाहारक	१	८×१=८
अप्रमत्त	३०देवआहारक	१	बांधकर	अप्रमत्त	३१ देवतीर्थाहारक	१	१×१=१
अपूर्वकरण ७ वेंभागमें	१ यशस्कीर्ति	१	बांधकर	अपूर्वकरण ६ठे भागमें	२८ देवगतियुत	१	१×१=१
अपूर्वकरण	१ यशस्कीर्ति	१	बांधकर	अपूर्वकरण	२९ देवतीर्थ	१	१×१=१
अपूर्वकरण	१ यशस्कीर्ति	१	बांधकर	अपूर्वकरण	३० देवआहारक	१	१×१=१
अपूर्वकरण	१ यशस्कीर्ति	१	बांधकर	अपूर्वकरण	३१ देवतीर्थाहारक	१	१×१=१
							४५
अप्रमत्त	२८ देवयुत	१	बांधकर	अप्रमत्त	२९ देवतीर्थ	१	१×१=१
अप्रमत्त	२८ देवयुत	१	बांधकर	अप्रमत्त	३० देवआहारक	१	१×१=१
अप्रमत्त	२८ देवयुत	१	बांधकर	अप्रमत्त	३१ देवतीर्थाहारक	१	१×१=१
					ये तीन पुनरुक्त भंग हैं		३

आगे अप्रमत्त में अल्पतर भंग कहते हैं-

इगिविहिगिगिखखतीसे दस णव णवडधियवीसमट्ठविहं ।
देवचउक्केक्कं अपमत्तप्पदरछत्तीसा ।।५७८।।

अन्वयार्थ - (इगिविह) एक एक भंगसहित **(इगिगिखखतीसे)** एक, एक, शून्य, शून्य से अधिक तीस अर्थात् ३१, ३१, ३० और ३० प्रकृतिक स्थानों को बांधता हुआ **(अट्ठविहं)** आठ-आठ भंगों से संयुक्त **(दसणवणवडधियवीसं)** दस, नौ, नौ आठ से अधिक बीस अर्थात् ३०, २९, २९, २८ प्रकृतिरूप स्थानों को तथा **(एक्केक्के)** एक-एक भंगसहित **(देवचउक्क)** देवगतिसंयुक्त चार स्थानों को बांधता है **(अपमत्तप्पदर छत्तीसा)** इस प्रकार अप्रमत्तगुणस्थान में अल्पतर भंग छत्तीस होते हैं। ८+८+८+८+१+१+१+१=३६

अप्रमत्तादि में अल्पतर भंग ३६ उसका कोष्टक

गुणस्थान में	बंधस्थान प्रकार	भंग	बांधकर	गुणस्थान में	बंधस्थान प्रकार	भंग	अल्पतर भंग
अप्रमत्त	३१ देवतीर्थ आहारक	१	बांधकर मरकर	देवअसंयत	३० मनुष्यतीर्थ	८	१×८=८
अप्रमत्त	३१ देवतीर्थ आहारक	१	बांधकर	प्रमत्त	२९ देवतीर्थ	८	१×८=८
अप्रमत्त	३० देवआहारक	१	बांधकर	प्रमत्त	२९ देवतीर्थ	८	१×८=८
अप्रमत्त	३० देवआहारक	१	बांधकर	प्रमत्त	२८ देवगति	८	१×८=८
अपूर्वकरण	२८ देवगतियुत	१	बांधकर	अपूर्वकरण	१ यशस्कीर्ति	१	१×१=१
६ठेभागमें	२९ देवतीर्थ	१	बांधकर	७वेंभागमें	१ यशस्कीर्ति	१	१×१=१
६ठेभागमें	३० देवआहारक	१	बांधकर	७वेंभागमें	१ यशस्कीर्ति	१	१×१=१
६ठेभागमें	३१ देवतीर्थाहारक	१	बांधकर	७वेंभागमें	१ यशस्कीर्ति	१	१×१=१
अप्रमत्तादि में अल्पतर भंग → ३६							

अप्रमत्तादि में अवस्थित बंधभंग → ८१

अप्रमत्तादि में भुजाकार भंग ४५ + अल्पतर भंग ३६ = अवस्थित भंग ८१

सव्वपरट्ठाणेण य अयदपमत्तिदरसव्वभंगा हु ।
मिच्छस्स भंगमज्झे मिलिदे सव्वे हवे भंगा ।।५७९।।

अन्वयार्थ -(सव्वपरट्ठाणेण) सर्व परस्थान सहित **(य)** च शब्द से स्वस्थान और स्वपरस्थानसहित **(अयदपमत्तिदरसव्वभंगा हु)** असंयत और अप्रमत्तादि गुणस्थानों के जो सर्व भुजाकारादि भंग है उनको **(मिच्छस्स भंगमज्झे)** मिथ्यादृष्टि के भंगों में **(मिलिदे)** मिलाने पर **(सव्वे भंगा)** नामकर्म के सर्व भंग **(हवे)** होते हैं।

भुजगारा अप्पदरा हवंति पुव्ववरठाणसंताणे ।
पयडिसमोऽसंताणोऽपुणरुत्तोत्ति य समुद्दिट्ठो ।।५८०।।

अन्वयार्थ - (पुव्ववरठाणसंत्ताणे) थोडी प्रकृतिरूप पूर्वस्थान को बहुप्रकृतिरूप

स्थान के साथ लगाने पर **(भुजगारा)** भुजाकार होते हैं। बहुप्रकृतिरूप पिछले स्थान को थोडी प्रकृतिरूप स्थान के साथ लगाने पर **(अप्पदरा)** अल्पतर **(हवंति)** होते हैं। **(पयडिसमो)** प्रकृतियों की संख्या समान होते हुए भी **(असंताणो)** जो असन्तान है अर्थात् प्रकृतिभेद युक्त है तो उसे **(अपुणरुत्तोत्ति)** अपुनरुक्त ऐसा **(समुद्दिट्ठो)** कहा है।

भुजगारे अप्पदरेऽवत्तव्वे ठाइदूण समबंधे ।
होदि अवट्ठिदबंधो तब्भंगा तस्स भंगा हु ।।५८१।।

अन्वयार्थ - (भुजगारे) भुजाकार **(अप्पदरे)** अल्पतर और **(अवत्तव्वे)** अवक्तव्य भंगों को **(ठाइदूण)** स्थापित करके **(समबंधे)** द्वितीयादि समयों में समान बन्ध करनेपर **(अवट्ठिदबंधो)** अवस्थित बंध **(होदि)** होता है। **(तस्स भंगा)** उन तीनों के जितने भंग हैं **(तब्भंगा)** उतने ही अवस्थित भंग होते हैं।

नामकर्म के भुजाकारादि सर्व बंधस्थानों के भंग

गुणस्थान	भुजाकार	अल्पतर	अवस्थित	अवक्तव्य
मिथ्यात्व	४४६०९४३५	४४६०९४३५	८९२१८८७०	
असंयत	३६९९२	७२	३७०६४	
अप्रमत्त	४५	३६	८१	
उपशांतमोह			१७	१७
जोड़	४४६४६४७२	४४६०९५४३	८९२५६०३२	१७

आगे अवक्तव्य भंगों को कहते हैं-

पडिय मरिएक्कमेक्कूणतीस तीसं च बंधगुवसंते ।
बंधो दु अवत्तव्वो अवट्ठिदो बिदियसमयादी ।।५८२।।

अन्वयार्थ - (उवसंते) उपशान्तकषाय में किसी भी नामकर्म प्रकृति को न बांधकर **(पडिय)** सूक्ष्मसांपराय में गिरकर **(एक्कं बंधग)** एक प्रकृति को बांधता है और **(मरिय)** मरकर देव होकर **(एक्कूणतीस)** मनुष्यगतिसहित उनतीस **(च)** अथवा **(तीसं)** मनुष्यतीर्थसहित तीस को आठभंगसहित बांधता है वह **(अवत्तव्वो बंधो)**

अवक्तव्य बंध है उसके १+१६=१७ भंग जानना **(विदियसमयादी)** द्वितीयादिक समय में भी उतना ही बन्ध होने पर **(अवट्ठिदो)** अवस्थित भंग भी उतने ही जानना।

विशेषार्थ - अवक्तव्य भंग → १७ १) उपशान्त कषाय में किसी भी नामकर्म का बंध न करके सूक्ष्मसांपराय में आकर एक को बांधता है।

२) उपशान्त कषाय में किसी भी नामकर्म का बंध न करके मरकर देव असंयत होकर मनुष्यगति सहित उनतीस अथवा मनुष्यतीर्थसहित तीस को बांधता है। २९ और ३० के ८-८भंग है अत: अवक्तव्य बन्ध के भंग १+८+८ =१७ सतरह होते हैं।

द्वितीयादि समय में भी उतना ही बन्ध होनेपर उतने ही अवस्थित बन्ध होते हैं।

घोरसंसारवाराशितरंगनिकरोपमै:।
नामबन्धपदैर्जीवा वेष्टितास्त्रिजगद्भवा:।

श्लोकार्थ - घोरसंसारसमुद्र के तरंगों के समूह के समान नामकर्म के बन्धस्थानों के द्वारा तीनों लोकों के जीव व्याप्त हैं।

अब नामकर्म के उदयस्थान बाईस गाथाओं से कहते हैं-

विग्गहकम्मसरीरे सरीरमिस्से सरीरपज्जत्ते ।
आणावचिपज्जत्ते कमेण पंचोदये काला ।।५८३।।

अन्वयार्थ - (उदये) नामकर्म के उदय में **(विग्गहकम्मसरीरे)** विग्रहगति अथवा कार्मण शरीर **(सरीरमिस्से)** मिश्रशरीर **(सरीरपज्जत्ते)** शरीरपर्याप्ति **(आणावचिपज्जत्ते)** श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति और भाषापर्याप्ति ये **(कमेण)** क्रम से **(पंच काला)** पाँच काल नियत हैं।

एक्कं व दो व तिण्णि व समया अंतोमुहुत्तयं तिसुवि ।
हेट्ठिमकालूणाओ चरिमस्स य उदयकालो दु ।।५८४।।

अन्वयार्थ - इन पाँच उदयकालों का प्रमाण क्रम से **(एक्कं व दो व तिण्णि व समया)** विग्रहगति का एक, दो अथवा तीन समय है **(तिसु वि)** मिश्रशरीर, शरीरपर्याप्ति और श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति इन तीनों में प्रत्येक का **(अंतोमुहुत्तयं)** अन्तर्मुहूर्त काल है। **(हेट्ठिमकालूणाओ)** नीचे के पूर्वोक्त चार कालों से कम भुज्यमानआयुप्रमाण **(चरिमस्स)**

अंतिम भाषापर्याप्ति का **(उदयकालो दु)** उदयकाल है।

विशेषार्थ - नामकर्म के उदयस्थान के पाँच नियतकाल हैं -

१) विग्रहगति या कार्मणशरीर २) मिश्रशरीर ३)शरीरपर्याप्ति ४)श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति ५) भाषापर्याप्ति काल

५ नियतकालों का स्वरूप	कालमर्यादा
१) विग्रहगति अथवा कार्मणशरीर केवलिसमुद्घात अपेक्षा	१,२,३ समय
२) मिश्रशरीर- शरीरपर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक	अन्तर्मुहूर्त
३) शरीरपर्याप्तिकाल - शरीरपर्याप्ति पूर्ण होनेपर श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक	अन्तर्मुहूर्त
४) श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति - श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति की पूर्णता से भाषापर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक	अन्तर्मुहूर्त
५) भाषापर्याप्ति - भाषापर्याप्ति की पूर्णता से अवशेष आयुपर्यंत	भुज्यमान आयु-उपर्युक्त ४ काल

मनुष्य व तिर्यंच की अपेक्षा उत्कृष्ट भाषापर्याप्ति काल →

३ पल्य - (३ अन्तर्मुहूर्त + ३ समय) = प ३ - (२१३ + स ३)

सव्वापज्जत्ताणं दोण्णिवि काला चउक्कमेयक्खे ।
पंच वि होंति तसाणं आहारस्सुवरिमचउक्कं ।।५८५।।

अन्वयार्थ - (सव्वापज्जत्ताणं) सब लब्ध्यपर्याप्तकों में **(दोण्णि वि काला)** आदि के दो ही काल हैं। **(एयक्खे)** एकेन्द्रियों में **(चउक्कं)** आदि के चार काल हैं। **(तसाणं)** त्रसों में **(पंचवि)** पाँचो ही काल हैं। **(आहारस्स)** आहारकशरीर में **(उवरिमचउक्कं)** प्रथम काल के बिना ऊपर के चार काल हैं।

कम्मोरालियमिस्सं ओरालुस्सासभास इदि कमसो ।
काला हु समुग्घादे उवसंहरमाणगे पंच ।।५८६।।

अन्वयार्थ - (समुग्घादे) समुद्घात केवली में **(कम्मोरालियमिस्सं)** कार्मणशरीर, औदारिक मिश्र **(ओरालुस्सासभास)** औदारिकशरीर पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास

पर्याप्ति, भाषापर्याप्ति **(इदि)** इस प्रकार **(कमसो)** क्रम से **(उवसंहरमाणगे)** आत्मप्रदेशों के संकोच के समय **(पंच काला हु)** पाँचों काल होते हैं।

किस जीव के	सं.	कितने काल होते हैं।
१.लब्ध्यपर्याप्तजीव	२	१) विग्रहगति २) मिश्रशरीर
२.एकेन्द्रिय	४	१) विग्रहगति २) मिश्रशरीर ३)शरीरपर्याप्ति ४) श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति
३.सर्व त्रस	५	उपर्युक्त पाँचों काल
४.आहारकशरीर	४	विग्रहगति छोड़कर शेष ४ काल
५.समुद्घातकेवलि	५	१) कार्मणशरीर २)औदा.मिश्र ३)औदारिक शरीर पर्याप्ति ४)श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति ५)भाषापर्याप्ति (संकोचन के समय) प्रसरण के समय -३ काल १) औदा.शरीर पर्याप्ति २) औदा.मिश्र ३) कार्मण

ओरालं दंडदुगे कवाडजुगले य तस्स मिस्सं तु ।
पदरे य लोगपूरे कम्मे व य होदि णायव्वो ।।५८७।।

अन्वयार्थ - (दंडदुगे) दो दंडसमुद्घात में **(ओरालं)** औदारिक शरीरपर्याप्ति **(कवाडजुगले)** दो कपाटसमुद्घात में **(तस्स मिस्सं तु)** औदारिक मिश्रकाल **(पदरे य लोगपूरे)** प्रतर और लोकपूरण समुद्घात में **(कम्मेव)** कार्मणशरीर काल **(होदि)** है ऐसा **(णायव्वो)** जानना चाहिये।

समुद्घातकेवली के ८ समय व योग

प्रसरण	योग	संकोचन	योग
१) दंड	औदारिक	५) प्रतर	कार्मण
२) कपाट	औदारिकमिश्र	६) कपाट	औदारिकमिश्र
३) प्रतर	कार्मण	७) दंड	औदारिक
४) लोकपूरण	कार्मण	८) मूलशरीरप्रमाण	औदारिक

विशेषार्थ - मूलशरीर में प्रवेश करने के समय से संज्ञी पंचेन्द्रिय के समान क्रमसे पर्याप्ति पूर्ण करते हैं अत: समुद्घात केवली के ५ काल होते हैं।

णाम धुओदय बारस गइजाईणं च तसतिजुम्माणं ।
सुभगादेज्जजसाणं जुम्मेक्कं विग्गहे वाणू ।।५८८।।

अन्वयार्थ - (विग्गहे) विग्रहगति में **(णामधुओदयबारस)** नामकर्म की ध्रुवोदयी (तैजस कार्मण, वर्णादि ४, स्थिरयुगल, शुभयुगल, अगुरुलघु और निर्माण) बारह प्रकृति **(गइजाईणं)** ४ गति, ५ जाति **(तसतिजुम्माणं)** त्रसत्रिकयुगल अर्थात् त्रस स्थावर, बादरसूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त **(सुभगादेज्जजसाणं)** सुभगयुगल, आदेय युगल, यश:कीर्ति युगल **(वाणू)** ४ आनुपूर्वी इन प्रकृतियों में से **(एक्कं)** किसी एक प्रकृति का उदय होता है अत: १२+९=२१ प्रकृतिरूप स्थान का उदय विग्रहगति में होता है।

मिस्सम्मि तिअंगाणं संठाणाणं च एगदरगं तु ।
पत्तेयदुगाणेक्को उवघादो होदि उदयगदो ।।५८९।।

अन्वयार्थ - (मिस्सम्मि) मिश्रशरीरकाल में **(तिअंगाणं)** तीन शरीरों में से **(च)** और **(संठाणाणं)** छह संस्थानों में से **(एगदरगं तु)** किसी एक प्रकृति का तथा **(पत्तेयदुगाणेक्को)** प्रत्येक साधारणशरीर में से एक और **(उवघादो)** उपघात ये चार प्रकृति **(उदयगदो)** उदय को प्राप्त **(होदि)** होती हैं। अत: (२१-१ आनुपूर्वी) + ४ = २४

तसमिस्से ताणि पुणो अंगोवंगाणमेगदरगं तु ।
छण्हं संहडणाणं एगदरो उदयगो होदि ।।५९०।।

अन्वयार्थ -(तसमिस्से) त्रसजीव के मिश्रकाल में **(ताणि)** वे पूर्वोक्त चार प्रकृतियाँ **(पुणो)** और **(अंगोवंगाणमेगदरगं)** तीन अंगोपांगों में से कोई एक **(तु)** और **(छण्हं संहडणाणं)** छह संहननों में से **(एगदरो)** कोई एक **(उदयगो)** उदयागत **(होदि)** होती हैं इस प्रकार त्रसमिश्र में २०+६=२६ उदय योग्य हैं।

परघादमंगपुण्णे आदावदुगं विहायमविरुद्धे ।
सासवची तप्पुण्णे कमेण तित्थं च केवलिणि ।।५९१।।

अन्वयार्थ - (अंगपुण्णे) शरीरपर्याप्ति काल में **(परघादं)** परघात उदययोग्य है। **(आदावदुगं)** आतप उद्योत **(विहायं)** प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति **(अविरुद्धे)** अविरुद्ध योग्य त्रस स्थावरों के पर्याप्तिकाल में ही उदययोग्य है। **(सासवची)** उच्छ्वास और स्वर युगल **(तप्पुण्णे)** अपने-अपने पर्याप्तिकाल में **(च)** और **(तित्थं)** तीर्थंकर **(केवलिणि)** केवली में ही उदययोग्य है।

प्रकृतियों के उदय का नियम

इन कालों में ही		इन प्रकृतियों का उदय होता है।
सामान्य उदययोग्य अर्थात् सभी कालों में उदययोग्य	२०	ध्रुवोदयी १२- तैजस, कार्मण, वर्णादि ४, स्थिरद्विक, शुभद्विक, अगुरुलघु, निर्माण। ४ गति,५ जाति,त्रस-बादर -पर्याप्ति-सुभग-आदेय-यशस्कीर्ति इन ६ युगलों में से एक-एक का उदय। १२ ध्रुवोदयी + ८ पिण्डप्रकृतियों में से एक एक
विग्रहगतिकाल	१	१ आनुपूर्वी (४ आनुपूर्वियों में से एक)
शरीरमिश्र	४	३ शरीर[१], ६ संस्थान[२], प्रत्येकसाधारण[३] इन तीन पिण्ड प्रकृतियों में से एक-एक, उपघात[४]
त्रसमिश्र	२	३ अंगोपांग और ६ संहननों में से एक-एक
शरीरपर्याप्ति	३	परघात; आतप,उद्योतमेंसे एक,विहायोगतियुग्ममेंसे एक
उच्छ्वासपर्याप्ति	१	उच्छ्वास
भाषापर्याप्ति में	१	स्वरद्विक में से कोई एक
केवलि में	१	तीर्थंकर प्रकृति

वीसं इगि चउवीसं तत्तो इगितीसओत्ति एयधियं ।
उदयट्ठाणा एवं णव अट्ठ य होंति णामस्स ।।५९२।।

अन्वयार्थ - (णामस्स) नामकर्म के **(उदयट्ठाणा)** उदयस्थान **(वीसं)** वीस **(इगिचउवीसं)** इक्कीस, चौवीस **(तत्तो)** उसके आगे **(एयधियं)** एक-एक अधिक **(इगितीसओत्ति)** इकतीस पर्यन्त तथा **(णव अट्ठ य)** नौ और आठ प्रकृतिरूप **(एवं)**

इसप्रकार १२ स्थान **(होंति)** हैं।

नामकर्म के उदयस्थान १२ हैं

२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८

अब उदयस्थानों के स्वामी कहते हैं -

चदुगदिया एइंदी विसेसमणुदेवणिरय एइंदी ।
इगिबितिचपसामण्णा विसेससुरणारगेइंदी ।।५९३।।
सामण्णसयलवियलबिसेसमणुस्ससुरणारया दोण्हं ।
सयलवियलसामण्णा सजोगपंच्चक्खवियलया सामी।५९४।।

अन्वयार्थ - २१ प्रकृतिरूप स्थान के **(सामी)** स्वामी **(चदुगदिया)** चारों गति के जीव हैं। २४ प्रकृतिक स्थान के स्वामी **(एइंदी)** एकेन्द्रिय जीव, २५ के स्वामी **(विसेसमणुदेवणिरणयइंदी)** विशेष मनुष्य अर्थात् आहारक द्विकवाले, देव, नारकी, एकेन्द्रिय जीव हैं। छब्बीस के स्वामी **(इगिबितिचपसामण्णा)** एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय सामान्य जीव हैं। सत्ताईस के स्वामी **(विसेससुरणारगेइंदी)** विशेषमनुष्य, देव, नारकी और एकेन्द्रिय जीव हैं **(दोण्हं)** अठाईस और उनतीस इन दो के स्वामी **(सामण्णसयलवियलविसेसमणुस्ससुरणारया)** सामान्य मनुष्य, पंचेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, विशेष मनुष्य, देव और नारकी जीव हैं। ३० के स्वामी **(सयलवियलसामण्णा)** सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सामान्य मनुष्य हैं। इकतीस के स्वामी **(सजोग पंचक्खवियलया)** सयोगकेवली, पंचेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव हैं। (नौ और आठ के स्वामी अयोगकेवली हैं)

उदय स्थान	स्वामी	काल प्रकार	प्रकृतियों का विवरण
२०	सामान्यसमुद्घातकेवलि	कार्मणशरीर	उपर्युक्त सामान्य उदययोग्य २०
२१	१) चारों गति के जीव	विग्रहगति	सामान्य उदययोग्य २० + चार में से १ आनुपूर्वी
	२) तीर्थंकर समुद्घात केवलि	कार्मणशरीर	सामान्य उदययोग्य २० + १ तीर्थंकर
२४	एकेन्द्रिय जीव	शरीरमिश्र	सामान्य उदययोग्य २० +४ १) हुंडकसंस्थान, २) औदारिक शरीर, ३) प्रत्येक साधारण में से एक, ४) उपघात
२५	१) एकेन्द्रिय	शरीरपर्याप्ति	उपर्युक्त मिश्रकालकी २४+१ परघात
	२) आहारशरीरधारी	मिश्रकाल	सा.उदय २०+५ १) समचतुरस्र संस्थान २) आहारकशरीर ३) आहारकांगोपांग४) प्रत्येक शरीर ५)उपघात
	३) देव व नारकी	मिश्रकाल	सा.उ.२०+५ १) संस्थान २) वैक्रि.शरीर ३) वैक्रियिक अंगोपांग ४) प्रत्येक ५)उपघात
२६	१)एकेन्द्रिय(आत.उद्यो)	शरीरपर्याप्ति	एके.शरीरपर्याप्ति की उपर्युक्त २५+१(आतप उद्योत में से एक)
	२) एकेन्द्रिय	उच्छ्वासपर्याप्ति	एके.शरीरपर्याप्ति की उपर्युक्त २५+१ उच्छ्वास
	३) द्वी. त्री. चतु. पंचे. मनुष्य, सामान्य.समु. केवली	मिश्रकाल	एके.मिश्रकाल की उपर्युक्त २४+२, १) ६ संहननों में से एक, २) औदारिक अंगोपांग

उदय स्थान	स्वामी	काल प्रकार	प्रकृतियों का विवरण
२७	१)आहारकशरीरधारी	शरीरपर्याप्ति	आहारकमिश्रकालकी २५+२परघात, प्रशस्तविहायोगति
	२)तीर्थ.समुद्घातकेवली	मिश्रकाल	सा.केवली मिश्रकालकी२६+१तीर्थंकर
	३) देव नारकी	शरीरपर्याप्ति	देवनारकी मिश्रकालकी २५+२ १) परघात २)अविरुद्ध विहायोगति
	४) एकेन्द्रिय (आतप उद्योतयुत)	उच्छ्वासपर्याप्ति	उपर्युक्त एके.उच्छ्वास की २६+१ आतप अथवा उद्योत
२८	१)मनुष्य,सा.समु.केवली द्वी,त्री,चतु.पंचेद्रियतिर्यंच	शरीरपर्याप्ति	इनकी मिश्रकालकी २६+२ परघात, विहायोगति युगल में से एक
	२)आहारकशरीरधारी	उच्छ्वासपर्याप्ति	आहारकशरीर प.कालकी२७+१उच्छ्वास
	३) देव नारकी	उच्छ्वासपर्याप्ति	देव,ना.शरीर प.कालकी२७+१उच्छ्वास
२९	१)सा.केवली,मनुष्य	उच्छ्वासपर्याप्ति	इनकी शरीरपर्याप्ति की२८+१ उच्छ्वास
	२)द्वी,त्री,चतु,पंचे तिर्यंच उद्योतयुत	शरीरपर्याप्ति	इनकी शरीरपर्याप्ति की २८+१ उद्योत
	३)द्वी,त्री,चतु,पंचे तिर्यंच	उच्छ्वासपर्याप्ति	इनकी शरीरपर्याप्ति की२८+१ उच्छ्वास
	४)समुद्घाततीर्थ.केवली	शरीरपर्याप्ति	इनकी शरीरपर्याप्ति की२८+१ उच्छ्वास
	५)आहारकशरीरधारी	भाषापर्याप्ति	इनकी उच्छ्वासपर्याप्तिकी २८+१सुस्वर
	६) देव नारकी	भाषापर्याप्ति	देवनारकी उच्छ्वासपर्याप्तिकी २८+१ स्वरयुगल में से एक। देव में सुस्वर, नरक में दु:स्वर

उदय स्थान	स्वामी	काल प्रकार	प्रकृतियों का विवरण
३०	१)द्वी,त्री,चतु,पंचे तिर्यंच उद्योतयुत २)सा.मनुष्य,समु.केवली, पंचेन्द्रिय, विकलत्रय ३)तीर्थं.,समु.केवली	उच्छ्वासपर्याप्ति भाषापर्याप्ति उच्छ्वासपर्याप्ति	इनकी शरीरपर्याप्ति की २९+१उच्छ्वास इनकी उच्छ्वासपर्याप्तिकी २९+१ सुस्वर दुस्वर में से एक तीर्थं.समु. केवली शरीरपर्याप्ति की २९+१उच्छ्वास
३१	१)तीर्थं.,समु.केवली २)विकलत्रय,पंचेन्द्रिय उद्योतयुत	भाषापर्याप्ति भाषापर्याप्ति	तीर्थं.समु.केवली उच्छ्वासपर्याप्तिकी ३०+१ सुस्वर इनकी उच्छ्वासपर्याप्तिकी ३०+१ सुस्वर दुस्वर में से एक
९	तीर्थंकर,अयोग केवली		१)मनुष्यगति २)पंचेन्द्रिय ३)त्रस ४)बादर ५)पर्याप्त ६)सुभग,७)आदेय ८) यशस्कीर्ति ९) तीर्थंकर
८	सामान्य अयोग केवली		उपर्युक्त ९-१ तीर्थंकर

एगे इगिवीस पणं इगिछव्वीसट्ठवीस तिण्णि णरे ।
सयले वियलेवि तहा इगितीसं चावि वचिठाणे ।।५९५।।
सुरणिरयविसेसणरे इगि पण सगवीस तिण्णि समुघादे ।
मणुसं वा इगिवीसे वीसं रूवाहियं तित्थं ।।५९६।।

अन्वयार्थ - पूर्वोक्त पाँच कालों में क्रम से **(एगे)** एकेन्द्रियों में उदययोग्य **(इगिवीसपणं)** इक्कीस आदि पाँच स्थान है २१,२४,२५,२६,२७ **(णरे)** मनुष्यों में **(इगिछब्बीसट्ठवीसतिण्णि)** इक्कीस, छब्बीस और अठाईस आदि तीन स्थान उदययोग्य हैं। **(सयले वियलेवि)** सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय तिर्यंचों में भी **(तहा)** उसीप्रकार

२१,२६,२८,२९,३० **(च)** और **(वचिठाणे)** भाषापर्याप्तिकाल में **(इगितीसं अवि)** इकतीस का स्थान भी है। **(सुरणिरयविसेसणरे)** देव, नारकी और विशेष मनुष्यों में (आहारकशरीरधारी) **(इगिपणसगवीसतिण्णि)** इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस आदि तीन स्थान २१,२५,२७,२८,२९ **(समुघादे)** सामान्य समुद्घात केवली में **(मणुसं वा)** मनुष्यों के समान २१, २६,२८,२९,३० हैं **(इगिवीसे वीसं)** कार्मणकाल में इक्कीस के स्थानपर वीस है। इन्हीं पाँच स्थानों में **(तित्थं रुवाहियं)** एक तीर्थंकरप्रकृति अधिक करने पर तीर्थंकर समुद्घात केवली में क्रम से २१,२७,२९,३०,३१ ये पाँच उदयस्थान हैं।

वीस दु चउवीसचऊ पण छव्वीसादि पंचयं दोसु ।
उगुतीस तिपण काले गयजोगे होंति णव अट्ठ ।।५९७।।

अन्वयार्थ - (पणकाले) पाँच कालों में क्रम से कार्मण शरीर और विग्रहगति काल में **(बीसदु)** वीस, इक्कीस दो उदयस्थान है, मिश्रकाल में **(चउवीसचऊ)** चौबीस आदि चार स्थान हैं २४, २५, २६, २७ **(दोसु)** शरीरपर्याप्ति काल और श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकाल में क्रम से **(पणछव्वीसादिपंच य)** पच्चीस आदि पाँच और छब्बीस आदि पाँच स्थान हैं। भाषापर्याप्ति काल में **(उगुतीसति)** उनतीस आदि तीन स्थान हैं **(गयजोगे)** अयोगकेवली में **(णव अट्ठं)** नौ और आठ प्रकृतिक दो उदयस्थान **(होंति)** हैं।

काल	**एकेन्द्रिय**		**देव**		**नारकी**		**आहारक**		**द्वी.से पंचे.ति.**		**मनुष्य**		**सामान्य केवली**		**तीर्थं केवली**	
भाषापर्याप्ति	०		२९	प्र.६	२९	प्र.६	२९	प्र.५	३१ ३०	प्र.२ प्र.२	३०	प्र.२	३०	प्र.४	३१	प्र.१
उच्छ्वास पर्याप्ति	२७ २६	प्र.४ प्र.२	२८	प्र.३	२८	प्र.३	२८	प्र.२	३० २९	प्र.१ प्र.३	२९	प्र.१	२९	प्र.१	३०	प्र.३
शरीर पर्याप्ति	२६ २५	प्र.१ प्र.१	२७	प्र.३	२७	प्र.३	२७	प्र.१	२९ २८	प्र.२ प्र.१	२८	प्र.१	२८	प्र.१	२९	प्र.४
मिश्रकाल	२४		२५	प्र.३	२५	प्र.३	२५	प्र.२	२६	प्र.३	२६	प्र.३	२६	प्र.३	२७	प्र.२
विग्रहगति या का.शरीर	२१		२१		२१		२१		२१		२१		२०		२१	

प्र अर्थात् प्रकार। उपर्युक्त कोष्टक में किस काल में उदयस्थान का कौनसा प्रकार है यह सूचित किया है।

गयजोगस्स य बारे तदियाउगगोद इदि विहीणेसु ।
णामस्स य णव उदया अट्ठेव य तित्थहीणेसु ।।५९८।।

अन्वयार्थ - **(गयजोगस्स य)** अयोगकेवली के **(बारे)** बारह प्रकृतियों में से **(तदियाउगगोद इदि)** तीसरा कर्म अर्थात् वेदनीय, आयु और गोत्र तीन प्रकृतियाँ **(विहीणेसु)** कम करने पर **(णामस्स)** नामकर्म की **(णव उदया)** नौ प्रकृतियाँ उदयरूप हैं **(तित्थहीणेसु)** तीर्थंकर प्रकृति कम करनेपर **(अट्ठेव)** आठ ही प्रकृतियाँ उदयरूप हैं।

नामकर्म के उदयस्थानों में भंग कहते हैं -

संठाणे संहडणे विहायजुम्मेव चरिमचदुजुम्मे ।
अविरुद्धेक्कदरादो उदयट्ठाणेसु भंगा हु ।।५९९।।

अन्वयार्थ - (संठाणे) छह संस्थान **(संहडणे)** छह संहनन **(विहायजुम्मे)** विहायोगतियुगल **(य)** और **(चरिमचदुजुम्मे)** अन्तिम चार युगल इनमें से **(अविरुद्धेक्कदरादो)** अविरुद्ध एक-एक का उदय होने से **(उदयट्ठाणेसु भंगा हु)** उदयस्थानों में (६×६×२×२×२×२×२ = ११५२) **(भंगा हु)** भंग होते हैं।

विशेषार्थ - ६ संस्थान × ६ संहनन × २ विहायोगति × २ सुभगदुर्भग × २ स्वर × आदेय अनादेय × यशअयश = ११५२ ग्यारहसौ बावन भंग होते हैं, क्योंकि इनमें से अविरुद्ध एक-एक का उदय होता है।

उनमें से नारक आदि इकतालीस जीवपदों में संभव भंगों को तीन गाथाओं से कहते हैं -

तत्थासत्था णारयसाहारणसुहुमगे अपुण्णे य ।
सेसेगविगलऽसण्णिजुदठाणे जसजुगे भंगा ।।६००।।

अन्वयार्थ - (तत्थ) उन उदयप्रकृतियों में से **(णारयसाहारणसुहुमगे)** नारकी, साधारणवनस्पति, सर्व सूक्ष्मजीव **(य)** और **(अपुण्णे)** लब्ध्यपर्याप्तकों में **(असत्था)** अप्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय है **(सेसेगवियलऽसण्णि जुदठाणे)** शेष एकेन्द्रिय,

विकलत्रय और असंज्ञी पंचेन्द्रिययुक्त स्थान में केवल **(जसजुगे)** यशकीर्तियुगल की अपेक्षा **(भंगा)** दो भंग होते हैं, शेष सब अप्रशस्तप्रकृतियों का ही उदय रहता है।

सण्णिम्मि मणुस्सम्मि य ओघेक्कदरं तु केवले वज्जं ।
सुभगादेज्जजसाणि य तित्थजुदे सत्थमेदीदि ।।६०१।।

अन्वयार्थ - (सण्णिम्मि) संज्ञी जीव **(य)** और **(मणुस्सम्मि)** मनुष्य में **(ओघेक्कदरं)** सामान्य के समान संस्थान, संहनन, विहायोगति आदि पाँच युगलों में से एक-एक का ही उदय है। **(तु केवले)** किंतु केवली में **(वज्जं सुभगादेज्जजसाणि)** वज्रर्षभनाराचसंहनन, सुभग, आदेय, यश:कीर्ति का ही उदय होता है। **(तित्थजुदे)** तीर्थंकरयुत स्थान में **(सत्थमेदीदि)** सभी प्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होता है।

देवाहारे सत्थं कालवियप्पेसु भंगमाणेज्जो ।
वोच्छिण्णं जाणित्ता गुणपडिवण्णेसु सव्वेसु ।।६०२।।

अन्वयार्थ -(देवाहारे) चारनिकाय के देवों में और आहारकसहित प्रमत्तसंयत में **(सत्थं)** प्रशस्त प्रकृतियों का उदय होता है **(गुणपडिवण्णेसु)** सासादन आदि गुणस्थानों को प्राप्त हुए जीवों में तथा **(सव्वेसु कालवियप्पेसु)** सब काल के प्रकारों में **(वोच्छिण्णं)** व्युच्छिन्न प्रकृतियों को **(जाणित्ता)** जानकर **(भंगमाणेज्जो)** भंग लाने चाहिए।

विशेषार्थ - नारकी, साधारण वनस्पति, सर्व सूक्ष्म, सर्व लब्ध्यपर्याप्तक इनके पाँचो कालों में अप्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होता है अत: इनके उदयस्थानों में भंग १ ही होता है।

२) शेष एकेन्द्रिय, विकलत्रय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय इनको यशअयश छोड़कर शेष सर्व अप्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होता है अत: इनके उदयस्थानों में यशअयशकृत २ भंग होते हैं।

३) संज्ञी पंचेन्द्रिय व मनुष्य इनके उपर्युक्त ११५२ भंग होते हैं।

४) सामान्य केवली में ६ संस्थान× २ विहायोगति × २ स्वरयुग्म में से एक-एक का उदय होता है अत: ६×२×२ = २४ भंग होते हैं। शेष प्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होता है।

५) तीर्थंकर केवली में सर्व प्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होता है अत: भंग १ ही होता है।

६) देवों में और आहारकशरीरधारी मुनियों में सर्व प्रशस्त प्रकृतियों का उदय होनेसे भंग १ ही है।

उदयस्थानों के भंग संक्षेप में

नारकी	सा.व.	सूक्ष्म	लब्ध्य.	शेष एके.	विकलत्रय	असंज्ञी
१ अप्रशस्त	१ अप्रशस्त	१ अप्रशस्त	१ अप्रशस्त	२ यश २	२ यश २	२ यश २

संज्ञी	मनुष्य	सा.केवली	ती. केवली	देव	आहारक
११५२	११५२	२४ ६संस्थान× २वि ×२ स्व	१ प्रशस्त	१ प्रशस्त	१ प्रशस्त

वीसादीणं भंगा इगिदालपदेसु संभवा कमसो ।
एक्कं सट्ठिं चेव य सत्तावीसं च उगुवीसं ।।६०३।।
वीसुत्तरछच्चसया बारसपण्णत्तराहिं संजुत्ता ।
एक्कारससयसंखा सत्तरससयाहिया सट्ठी ।।६०४।।
ऊणत्तीससयाहिय एक्कावीसा तदो वि एकट्ठी ।
एक्कारससयसहिया एक्केक्कविसरिसगा भंगा।।६०५।।

अन्वयार्थ - **(वीसादीणं)** वीसादि उदयस्थानों के **(इगिदालपदेसु)** इकतालीस जीवपदों में **(संभवा भंगा)** संभव भंग **(कमसो)** क्रम से बीस प्रकृतिक स्थान में **(एक्कं)** एक भंग, इक्कीस के स्थान में **(सट्ठिं)** साठ भंग, चौवीस प्रकृतिक स्थान में **(सत्तावीसं)** सत्ताईस भंग, पच्चीस के स्थान में **(उगवीसं)** उन्नीस भंग, छब्बीस के स्थान में **(वीसुत्तरछच्चसया)** छह सौ बीस भंग, सत्ताईस के स्थान में **(बारस)** बारह भंग, अठाईस के स्थान में **(पण्णत्तरीहिं संजुत्ता एक्कारससयसंखा)** ग्यारहसौ पिचहत्तर भंग, उनतीस के स्थान में **(सत्तरससयाहिया सट्ठी)** सतरह सौ साठ भंग, तीस के स्थान में **(ऊणतीससयाहिय एक्कावीसा)** उनतीस सौ इक्कीस भंग, इकतीस के स्थान में **(एकट्ठी एक्कारससय सहिया)** ग्यारह सौ इकसठ भंग, नौ और आठ के स्थान में **(एक्केक्क)** एक एक भंग हैं इसप्रकार ये **(विसरिसगा भंगा)** विसदृश अर्थात् अपुनरुक्त भंग (७७५८) होते हैं।

इकतालीस जीवपदों की अपेक्षा से बीस आदि उदयस्थानों के भंग

उदय स्थान	भंगों का विवरण	भंगसंख्या अंतर्गत	भंगसंख्या सर्व
१) २०	१)सामान्य समुद्घात केवली कार्मणकाल में	१	१
२) २१	१) देवगति के विग्रहगति में एक भंग (प्रशस्त)	१	
	२)तीर्थंकर समुद्घातकेवली कार्मण काल में एक भंग (प्रशस्त)	१	
	३)मनुष्यगति के विग्रहकाल में २ सुभग×२ आदेय×२ यश=८	८	
	४)संज्ञी पंचे. तिर्यंच विग्रहकाल में २सुभग×२आदेय×२यश=८	८	
	५)द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय,चतु.,असंज्ञी चारोंके विग्रहकालमें ४×२यश	८	
	६)बादर पृथ्वी,जल,तेज,वायु,प्र.वन.इन पाँचों के विग्रहकाल में ५×२यश	१०	
	७)सूक्ष्म पृथ्वी,जल,तेज,वायु,सा.वन.,बादर सा. वनस्पति इन छहों के विग्रहगति में एक एक भंग	६	
	८) नारकी के विग्रहगतिकाल में एक भंग (अप्रशस्त)	१	
	९) पृथ्वी,जल,तेज,वायु,सा.वन.,इनके बादर सूक्ष्म ५×२=१० +प्र.वन.,३ विकलत्रय,१)असंज्ञी पंचे १)संज्ञी पंचे.१)मनुष्य= १७ प्रकार के लब्ध्य पर्याप्तकों के विग्रहगति में एक एक भंग	१७	
	२१ उदयस्थान के भंग		६०
३) २४	१)पर्याप्त बादर, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति इन ५ के शरीरमिश्रकाल में ५×२ (यशयुगल)	१०	
	२) सूक्ष्म पर्याप्तपृथ्वी, अप्, तेज, वायु सा. वनस्पति, बादर सा. वनस्पति इन ६ के मिश्र काल में	६	
	३)११ एकेन्द्रियोंके लब्ध्यपर्याप्तकके मिश्रकाल में एक एक भंग	११	
	२४ उदयस्थान के भंग		२७
४) २५	१) देव, नारक, आहारकमुनि के मिश्रकाल में एक एक भंग	३	
	२) बादर पृथ्वी,जल,तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति इन ५ के शरीरपर्याप्ति काल में ५×२	१०	
	३) सूक्ष्म पृथ्वी,जल,तेज,वायु,बादर सूक्ष्म साधारण इन ६ के शरीरपर्याप्ति काल में	६	
	२५ उदयस्थान के भंग		१९

उदय स्थान	प्रकार	भंगों का विवरण	भंगसंख्या अंतर्गत	भंगसंख्या सर्व
५)२६	मिश्र काल	१) द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय,चतु.,असंज्ञी चारों के में ४×२ यश	८	
	मिश्र काल	२) संज्ञी पंचे. तिर्यंच, मनुष्य में ६ सं ×६ सं×२ सुभग × २ आदेय ×२ यश २८८× २ = ५७६	५७६	
	मिश्र काल	३) सा.केवली में ६ संस्थानकृत ६ भंग	६	
	मिश्र काल	४) ६ लब्ध्यपर्याप्तक (३विकलत्रय,१असंज्ञी,१संज्ञी, १ मनुष्य) में एक-एक	६	
	शरीरपर्याप्ति काल	५) बादरपृथ्वीकाय में आतप व उद्योत २ उदय स्थानों के यश अयश के विकल्प से दो दो भंग २×२	४	
	शरीरपर्याप्ति. उद्योतयुत	६) बादर जलकाय, प्रत्येक वनस्पति यश अयश कृत २-२ भंग	४	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	७) बादर पृथ्वी,जल,तेज, वायु,प्रत्येक वन. इन ५ के यशकृत ५×२	१०	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	८) सूक्ष्म पृथ्वी,जल,तेज, वायु,बादर सूक्ष्म सा. वनस्पति इन ६ के एक एक	६	
		२६ उदयस्थान के सर्वभंग		६२०
६)२७	शरीरमिश्र	१) तीर्थंकर समुद्घात केवली एक भंग	१	
	शरीरपर्याप्ति	२) देव, नारक, आहारकमुनि एक एक भंग	३	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	३) बादर पृथ्वी आतप व उद्योत इनके यशकृत २ भंग २×२	४	
	शरीरपर्याप्ति	४) बादर ज़ल, प्रत्येक वनस्पति उद्योतयुत के, प्रत्येक २×२ भंग	४	
		२७ उदयस्थान के सर्वभंग		१२

उदय स्थान	प्रकार	भंगों का विवरण	भंगसंख्या अंतर्गत	भंगसंख्या सर्व
७)२८	शरीरपर्याप्ति	१) सामान्य समुद्घात केवली ६ संस्थान× २ विहायोगति	१२	
	शरीरपर्याप्ति	२) संज्ञी तिर्यंच व मनुष्य ६ सं.×६ सं×२ सुभग × २ आदेय × २ यश × २ विहायोगति = ५७६ × २ संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य	११५२	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	३) द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरि,असंज्ञी,इन चारों के २-२ भंग यश ४×२	८	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	४) देव, नारक, आहारकमुनि इन तीनों के १-१ भंग १×३	३	
		२८ उदयस्थान के सर्वभंग		११७५
८)२९	शरीरपर्याप्ति	१) तीर्थंकर समुद्घात केवली १ भंग	१	
	शरीरपर्याप्ति	२) द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय, चतु.,असंज्ञी उद्योतयुत इन ४ के × २ भंग यश	८	
	शरीरपर्याप्ति	३) संज्ञी तिर्यंच उद्योतयुत के उपर्युक्त २८ के समान ५७६ भंग	५७६	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	४) सामान्य समुद्घात केवली ६ संस्थान× २ विहायोगति	१२	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	५) संज्ञी पंचे. तिर्यंच व मनुष्य पूर्वोक्त ५७६×२	११५२	
	भाषापर्याप्ति	६) देव, नारक,आहारकमुनि इनके १-१भंग१×३	३	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	७) द्वी.,त्री.,चतु., असंज्ञी पंचे. इन ४ के २-२ भंग यशकृत ४×२	८	
		२९ उदयस्थान के सर्वभंग		१७६०
९)३०	उच्छ्वासपर्याप्ति	१) तीर्थंकर समुद्घात केवली के एक भंग	१	
	उच्छ्वासपर्याप्ति	२) संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच उद्योतयुत के उपर्युक्त ५७६ भंग	५७६	

उदय स्थान	प्रकार	भंगों का विवरण	भंगसंख्या अंतर्गत	भंगसंख्या सर्व
९)३०	उच्छ्वासपर्याप्ति	३) द्वी,त्री,चतु,असंज्ञी पंचे.,उद्योतयुत के २-२ भंग ४×२	८	
	भाषापर्याप्ति	१) सामान्य केवली के ६ संस्थान ×२विहा.× २ स्वर = २४	२४	
	भाषापर्याप्ति	२) मनुष्य, संज्ञी पंचेन्द्रिय प्रत्येक के ११५२×२	२३०४	
	भाषापर्याप्ति	३) द्वी,त्री,चतु,असंज्ञी पंचे ४×२ यशकृत = ८	८	
		३० उदयस्थान के भंग		२९२१
१०) ३१	भाषापर्याप्ति	१) तीर्थंकर केवली का एक भंग	१	
	भाषापर्याप्ति	२) संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच उद्योतसहित के पूर्वोक्त ११५२ भंग	११५२	
	भाषापर्याप्ति	३) द्वी, त्री, चतु. असंज्ञी पंचेन्द्रिय उद्योतसहित के चारों के २-२ भंग यशअयश ४×२	८	
		३१ उदयस्थान के सर्वभंग		११६१
११)९		तीर्थंकरसहित अयोगकेवली में एक भंग	१	
				१
१२)८		सामान्य अयोगकेवली में एक भंग यहाँ संस्थान, विहायोगति, स्वर का उदय न होने से एकही भंग होता है।	१	१
		सर्व उदयस्थानों के मिलकर सर्वभंग		७७५८

सामण्णकेवलिस्स समुग्घादगदस्स तस्स वचि भंगा ।
तित्थस्सवि सगभंगा समेदि तत्थेक्कमवणिज्जो ।।६०६।।

अन्वयार्थ - (वचि) भाषापर्याप्ति काल में **(सामण्णकेवलिस्स)** सामान्य केवलि के **(समुग्घादगदस्स)** समुद्घातगत सामान्य केवलि के **(भंगा)** तीस स्थान के २४ भंग तथा **(तित्थस्स वि)** तीर्थंकर केवली और समुद्घातगत तीर्थंकर केवली के इकतीस के स्थान में **(सगभंगा)** अपने-अपने भंग परस्पर **(समेदि)** समान हैं इसलिए **(तत्थेक्कमवणिज्जो)** उनमें से एक के भंग कम करना चाहिये।

विशेषार्थ - भाषापर्याप्तिकाल में सामान्यकेवली व समुद्घातसहित सामान्य केवली इनके ३० प्रकृति के उदयस्थान में चौबीस चौबीस भंग समान हैं। उसी प्रकार तीर्थंकर केवली व समुद्घात तीर्थंकर केवली इनके ३१ प्रकृति के उदयस्थान में एक-एक भंग समान है अत: २४+१=२५ भंग पुनरुक्त होने से उपर्युक्त भंगों में नहीं गिनाये हैं।

णारयसण्णिमणुस्ससुराणं उवरिमगुणाण भंगा जे।
पुणरुत्ता इदि अवणिय भणिया मिच्छस्स भंगेसु ।।६०७।।

अन्वयार्थ - (णारयसण्णिमणुस्ससुराणं) नारकी, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य और देव इन के **(उवरिमगुणाण)** सासादनादि ऊपर के गुणस्थानों के **(जे भंगा)** जो भंग हैं वे **(पुणरुत्ता)** पुनरुक्त हैं **(इदि)** इसलिए **(मिच्छस्स भंगेसु)** मिथ्यादृष्टि के भंगों में **(अवणिय)** कम कर **(भणिया)** कहे हैं अर्थात् मिथ्यादृष्टि के भंगों में उन्हें अंतर्भूत कर कहा है।

विशेषार्थ - नारक, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य व देव इन चारों के सासादनादि गुणस्थानों में जो भंग होते हैं वे पुनरुक्त हैं क्योंकि वे मिथ्यादृष्टि के भंगों के समान हैं। अत: उन पुनरुक्त भंगों को कम करके मिथ्यादृष्टि के भंग गिनती में लेना चाहिए।।

गुणस्थानों में उदयस्थान के भंग

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति प्रकार		भंग संख्या	भंगों का विवरण
१.मिथ्यात्व	२१	०	५९	पूर्वोक्त २१ उदयस्थान के ६० भंग-१ तीर्थंकरसंबंधी भंग
	२४	०	२७	पूर्वोक्त २४ उदयस्थान के सब भंग है
	२५	१,२रा,३रा	१८	पूर्वोक्त २५ उदयस्थान के १९ भंग-१ आहारक मिश्रकालसंबंधी
	२६	१,२रा,३रा	६१४	पूर्वोक्त ६२० भंग-६ समुद्घातकेवलीसंबंधी
	२७	३रा,४था	१०	पूर्वोक्त कुल भंग १२-२ आहारकमुनि व तीर्थंकरसंबंधी
	२८	१,३रा	११६२	पूर्वोक्त कुल भंग ११७५-१३ (सामान्य केवली के १२ भंग आहारकमुनिसंबंधी 1 भंग)
	२९	१,२रा, ३रा,६ठा	१७४६	कुल भंग १७६०-१४(१२ सा.केवली के, १ तीर्थंकर,१ आहारकमुनि)
	३०	१,२रा	२८९६	कुलभंग २९२१-२५ (२४ सामान्य केवली के, १ तीर्थं.केवली के)
	३१	२रा	११६०	कुलभंग ११६१-१ तीर्थंकरसंबंधी
			७६९२	मिथ्यात्व गुणस्थान के सर्व उदयस्थानों के भंग
२. सासादन	२१	०	६	१) बादर पृथ्वी,जल, प्रत्येक वनस्पति के यशअयश के २-२, ३×२ = ६
			८	२) द्वी.त्री.चतु,असंज्ञी इन चार के २-२ भंग यशअयशकृत ४×२
			८	३) संज्ञी पंचेन्द्रिय के २ सुभग ×२ आदेय × २ यश = ८ भंग

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति	प्रकार	भंग संख्या	भंगों का विवरण
			८ १	४) मनुष्य के २ सुभग× २ आदेय × २ यश ५) देवगति का १ भंग
			३१	ये भंग मिथ्यात्व गुणस्थान में गर्भित हैं।
२.सासादन	२४	० ०	६ ६	१) शरीरमिश्रकाल में बादरपृथ्वी,जल, प्रत्येक वन. इन तीनों के यश अयश की अपेक्षा २-२ भंग ३×२(शेष एकेन्द्रिय इस गुणस्थान में नहीं पाये जाते)
२.सासादन	२५	३रा	१ १	१) शरीरमिश्रकाल में देवों की अपेक्षा १ भंग
२.सासादन	२६	३रा	८ ५७६	१) शरीरमिश्रकाल में द्वी.त्री.चतु.असंज्ञी के २-२ भंग ४×२ २) शरीरमिश्रकाल में संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्य के प्रत्येक के २८८×२=५७६ २६ के उदयस्थान में कहे हुये जानना
			५८४	
२.सासादन	२९	६ठा	२ २	देव व नारकी के भाषापर्याप्तिकाल में प्रत्येक १+१=२ २७ व २८ उदयस्थान के भंग यहाँ नहीं दिखाये क्योंकि सासादन का काल छोटा होने से शरीरपर्याप्ति आदि काल इसमें नहीं पाये जाते। मिश्रकाल में ही मिथ्यात्वगुणस्थान में चला जाता है।
२.सासादन	३०	२रा	२३०४	भाषापर्याप्तिकालमें सभी संज्ञी तिर्यंच व मनुष्यके प्रत्येक के ११५२ सामान्यवत् ११५२×२=२३०४
२.सासादन	३१	२रा	११५२	भाषापर्याप्तिकाल में संज्ञी तिर्यंच उद्योतयुत के सामान्यवत् ११५२ भंग होते हैं।
			४०८०	सासादन गुणस्थान में उदयस्थानों के सर्व भंग
				ये सब भंग मिथ्यात्व गुणस्थान में गर्भित हैं।

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति	प्रकार	भंग संख्या अंतर्गत	सर्व	भंगों का विवरण
३. मिश्र	२९	६ठा		२	भाषापर्याप्तिकाल में देव, नारकी का १-१ भंग
	३०	२रा		२३०४	भाषापर्याप्तिकाल में संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच व मनुष्य के प्रत्येक के ११५२ भंग ११५२×२
	३१	२रा		११५२	भाषापर्याप्ति काल में संज्ञी पंचेन्द्रिय उद्योतसहित के ११५२
				३४५८	मिश्रगुण. के सर्वभंग ये मिथ्यात्वगुण. में गर्भित
४.असंयत	२१	०		४	चार गतिकी अपेक्षा १-१ भंग (मनुष्यतिर्यंच असंयतके विग्रहगतिमें प्रशस्त का उदय रहता है)
	२५	३रा		२	शरीरमिश्रकाल में प्रथम नरक व वैमानिक देव के १-१ भंग
	२६	३रा	१		१)शरीरमिश्रकालमें भोगभूमि तिर्यंच का एक भंग
		३रा	३६	३७	२) शरीरमिश्रकाल कर्मभूमि ६ संहनन × ६ संस्थान = ३६ भंग होते हैं।
	२७	३रा		२	शरीरपर्याप्ति में प्रथम नरक व वैमानिक देव के १-१ भंग
	२८	१ला	१		१) शरीरपर्याप्ति में भोगभूमि तिर्यंच
			२		२) उच्छ्वासपर्याप्ति में देव व प्रथम नारकी के १-१ भंग
			७२		३) शरीरपर्याप्तिमें मनुष्यके ६संस्थान×६संहनन
				७५	×२ विहायोगति = ७२ भंग
	२९	१ला, ३रा	२		१) उच्छ्वासपर्याप्ति में भोगभूमि तिर्यंच मनुष्यके १-१ भंग
			७२		२) उच्छ्वास कर्मभूमि मनुष्य के उपर्युक्त ७२ भंग
			२		३)भाषापर्याप्ति में देव व नारकी का १-१ भंग
				७६	

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति	प्रकार	भंग संख्या अंतर्गत सर्व	भंगों का विवरण
४.असंयत	३०	१ला	१	१) उच्छ्वासपर्याप्ति में भोगभूमि तिर्यंच उद्योत सहित के १ भंग
			२३०४	२) भाषापर्याप्ति में संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के प्रत्येक के ११५२ भंग ११५२×२
			२३०५	
	३१	२रा	११५२	१)भाषापर्याप्ति में संज्ञी पंचे. तिर्यंच उद्योतयुत के ११५२ भंग
			३६५३	असंयत गुणस्थान के सर्वभंग ये मिथ्यात्व गुणस्थान में गर्भित
देशसंयत	३०	२रा	२८८	भाषापर्याप्ति में संज्ञी पंचेन्द्रिय व मनुष्य के प्रत्येक के ६ संस्थान×६ संहनन ×२ स्वर × २ विहायोगति = १४४ भंग १४४×२
	३१	२रा	१४४	भाषापर्याप्ति में संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के उद्योतसहित के उपर्युक्त
			४३२	देशसंयत गुणस्थान के सर्वभंग
६ प्रमत्त	२५	२रा	१	शरीरमिश्रकालमें आहा.शरीरधारी मुनिका१ भंग
	२७	१ला	१	शरीरपर्याप्ति आहारकशरीरधारी मुनिका १ भंग
	२८	२रा	१	उच्छ्वासपर्याप्ति में आहारकशरीरधारी मुनि का एक भंग
	२९	६ठा	१	भाषापर्याप्ति में आहा.शरीरधारी मुनि का १भंग
	३०	२रा	१४४	भाषापर्याप्ति में सामान्यमुनि के ६ संस्थान×६ संहनन ×२ वि × २ स्वर
			१४८	प्रमत्तसंयत में उदयस्थान के सर्वभंग
७ अप्रमत्त	३०	२ रा	१४४	भाषापर्याप्ति में सा.मुनिके प्रमत्तवत् १४४ भंग

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति	प्रकार	भंग संख्या अंतर्गत सर्व	भंगों का विवरण
८.अपूर्व-उपशमक	३०	२रा	७२	भाषापर्याप्तिमें ६ संस्थान × ३ संहनन × २ वि × २ स्वर = ७२
९ अनि-उपशमक	३०	२रा	७२	भाषापर्याप्तिमें ६ संस्थान × ३ संहनन × २ वि × २ स्वर = ७२
१०सू.सां उपशमक	३०	२रा	७२	भाषापर्याप्तिमें ६ संस्थान × ३ संहनन × २ वि × २ स्वर = ७२
११उपशांत मोह	३०	२रा	७२	भाषापर्याप्तिमें ६ संस्थान × ३ संहनन × २ वि × २ स्वर = ७२
८अपूर्व क्षपक	३०	२रा	२४	भाषापर्याप्तिमें मुनिके ६ संस्थान × १ संहनन × २ वि × २ स्वर = २४ वज्रर्षभनाराचसंहननके साथही क्षपकश्रेणी चढ़ता है।
९अनि. क्षपक	३०	२रा	२४	अपूर्वकरण के समान
१०सू.सां क्षपक	३०	२रा	२४	अपूर्वकरण के समान
१२क्षीण मोह	३०	२रा	२४	अपूर्वकरण के समान
१३सयोग केवली	२०	०	१	१)सा.समुद्घात केवली कार्मणशरीर में १ भंग
	२१	०	१	१)तीर्थ.समुद्घात केवली कार्मणशरीरमें १ भंग
	२६	३रा	६	औदारिकमिश्र में सामान्य केवली के ६ संस्थान की अपेक्षा
	२७	२रा	१	औदारिकमिश्र में तीर्थकेवली के १ भंग
	२८	१ला	१२	शरीरपर्याप्ति में सामान्य केवली के ६ संस्थान ×२ विहायोगति

गुणस्थान	उदयस्थान प्रकृति	प्रकार	भंग संख्या अंतर्गत	सर्व	भंगों का विवरण
	२९	४था	१		शरीरपर्याप्ति में तीर्थ.केवली के एक भंग
	२९	१ला	१२	१३	उच्छ्वासपर्याप्तिमें सा.केवली के उपर्युक्त १२ भंग
	३०	३रा	१		उच्छ्वासपर्याप्तिमें तीर्थ.केवली के एक भंग
	३०	४था	२४	२५	भाषापर्याप्ति में सा.केवली के ६ संहनन × २ वि.× २ स्व.
	३१	१ला		१	भाषापर्याप्तिमें तीर्थ.केवली के एक भंग
				६०	सयोगकेवली के सर्वभंग
१४अयोग केवली	९			१	
	८			१	
				२	अयोगकेवली के सर्वभंग

अडवण्णा सत्तसया सत्तसहस्सा य होंति पिंडेण ।

उदयट्ठाणे भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ।।६०८।।

अन्वयार्थ - (असहायपरक्कम) असहाय पराक्रमवाले श्री वर्धमान स्वामी ने **(उदयट्ठाणे)** नामकर्म के १२ उदयस्थानों में **(पिंडेण)** सब मिलाकर **(अडवण्णा सत्तसया सत्तसहस्सा य)** सात हजार सात सौ अठावन **(भंगा)** भंग **(होंति)** होते हैं ऐसा **(उद्दिट्ठा)** कहा है।

विशेषार्थ - अपुनरुक्त भंग

१) मिथ्यात्व के ७६९२ + प्रमत्त आहारकमुनि के ४ + सयोगकेवली के ६० + अयोगी के २ = ७७५८

नामकर्म के उदयस्थानों के भंग -७७५८

उदयस्थान	२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८
भंग	१	६०	२७	१९	६२०	१२	११७५	१७६०	२९२१	११६१	१	१

इकतालीस जीव पदों में नाम कर्म के उदयस्थानों के भंग

	नरक	बा. पृथ्वी	सू. पृथ्वी	बा. अप्	सू. अप्	बा. तेज	सू. तेज	बा. वायु	सू. वायु	बा. सा.	सू. सा.	बा. प्र.	द्वी	त्री.	चतु	असंज्ञी	संज्ञी पं	मनुष्य	सा. के.	ती. के	समु सा.	समु ती	आहारक	देव
शरीर स्था मिश्र भं.	२५ १	२४ २	२४ १	२४ २	२४ १	२४ २	२४ १	२४ २	२४ १	२४ १	२४ १	२४ २	२६ २	२६ २	२६ २	२६ २	२६ २८८	२६ २८८	०	०	२६ ६	२७ १	२५ १	२५ १
विग्रहगति कार्मण भं.	२१ १	२१ २	२१ १	२१ २	२१ १	२१ २	२१ १	२१ २	२१ १	२१ १	२१ १	२१ २	२१ २	२१ २	२१ २	२१ २	२१ ८	२१ ८	०	०	२० १	२१ १	०	२१ १
लब्ध्य स्था शरीरमिश्र भं.		२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२६ १	२६ १	२६ १	२६ १	२६ १	२६ १	२६ १						
लब्ध्य स्था विग्रहगतिभं.		२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १						

इकतालीस जीव पदों में नाम कर्म के उदयस्थानों के भंग

	नरक	बा. पृथ्वी	सू. पृथ्वी	बा. अप्	सू. अप्	बा. तेज	सू. तेज	बा. वायु	सू. वायु	बा. सा.	सू. सा.	बा. प्र.	द्वी	त्री.	चतु	असंज्ञी	संज्ञी पं.	मनुष्य	सा. के.	ती. के	समु सा.	समु ती	आहारक	देव
भाषा पर्याप्ति स्था													३१	३१	३१	३१	३१		८	९				
भं.													२	२	२	२	११५२		१	१				
स्था	२९												३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३०	३१	२९	२९
भं.	१												२	२	२	२	११५२	११५२	२४	१	२४	१	१	१
उच्छ्वास पर्याप्ति स्था		२७		२७		२७		२७				२७	३०	३०	३०	३०	३०							
भं.		२		२		२		२				२	२	२	२	२	५७६							
स्था	२८	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२९	२९	२९	२९	२९	२९	०	०	२९	३०	२८	२८
भं.	१	२	१	२	१	२	१	२	१	१	१	२	२	२	२	२	५७६	५७६			१२	१	१	१
शरीर पर्याप्ति स्था	२७	२६		२६		२६		२६				२६	२९	२९	२९	२९	२९							
भं.	१	२		२		२		२				२	२	२	२	२	५७६							
स्था	२७	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२८	२८	२८	२८	२८	२८	०	०	२८	२९	२७	२७
भं.	१	२	१	२	१	२	१	२	१	१	१	२	२	२	२	२	५७६	५७६			१२	१	१	१

नामकर्म के सत्त्वस्थान का प्रकरण उन्नीस गाथाओं से कहते हैं -

तिदुइगिणउदी णउदी अडचउदोअहियसीदि सीदी य
ऊणासीदट्ठुत्तरि सत्तत्तरि दस य णव सत्ता ।।६०९।।

अन्वयार्थ - **(तिदुइगिणउदी)** तिरानवे, बानवें, इक्यानवें **(णउदी)** नब्बे, **(अडचउदो अहियसीदि)** आठ, चार, दो अधिक अस्सी अर्थात् अठासी, चौरासी, बयासी **(सीदीय)** अस्सी, **(ऊणासीदट्ठुत्तरि)** उन्यासी, अठहत्तर **(सत्तत्तरि)** सतहत्तर **(दस)** दस **(य)** और **(णव)** नौ प्रकृतिरूप **(सत्ता)** नामकर्म के तेरह सत्त्वस्थान हैं।

नामकर्म के सत्त्वस्थान तेरह हैं -

९३	९२	९१	९०	८८	८४	८२	८०	७९	७८	७७	१०	९

सव्वं तित्थाहारुभऊणं सुरणिरयणरदुचारिदुगे ।
उव्वेल्लिदे हदे चउ तेरेऽजोगिस्स दस णवयं ।।६१०।।

अन्वयार्थ - **(सव्वं)** सर्व ९३ प्रकृतिरूप प्रथम सत्त्वस्थान है **(तित्थाहारुभऊणं)** तीर्थंकररहित, आहारकद्विक रहित और तीर्थंकर आहारकद्विक दोनों से रहित क्रम से तीन स्थान, ९२, ९१, ९० **(सुरणिरयणरदुचारिदुगे)** देवद्विक, नारकचतुष्क, मनुष्यद्विक **(उव्वेल्लिदे)** इनकी क्रमसे उद्वेलना होने पर तीन स्थान ८८, ८४, ८२ **(तेरे हदे)** नामकर्म की तेरह प्रकृतियों का नाश होने पर **(चउ)** चार स्थान ८०,७९,७८,७७ **(अजोगिस्स)** अयोगकेवली के **(दस णवयं)** दस और नौ प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होता है।

गयजोगस्स दु तेरे तदियाउगगोद इदि विहीणेसु ।
दस णामस्स य सत्ता णव चेव य तित्थहीणेसु ।।६११।।

अन्वयार्थ - **(गयजोगस्स)** अयोगकेवली की **(तेरे)** तेरह सत्त्व प्रकृतियों में से **(तदियाउगगोद)** वेदनीय, आयु और गोत्र **(इदि विहीणेसु)** इन प्रकृतियों को कम करने पर **(णामस्स)** नामकर्म का **(दस सत्ता)** दस प्रकृतिक सत्त्वस्थान होता है **(तित्थहीणेसु)** दस में से तीर्थंकर प्रकृति कम करने पर **(णव चेव)** नौ प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होता है।

नामकर्म के तेरह सत्त्वस्थानों का विवरण

सत्त्व क्रमांक	प्रकृति संख्या	हीन प्रकृति	प्रकृतियों का विवरण
१	९३	०	नामकर्म की सभी प्रकृतियाँ हैं।
२	९२	१	१= तीर्थंकर प्रकृति
३	९१	२	२ = आहारकद्विक
४	९०	३	३ = आहारकद्विक और तीर्थंकर
५	८८	५	५ = आहारकद्विक, तीर्थंकर, देवद्विक (उद्वेलना देवद्विक की होनेपर)
६	८४	९	९ = पूर्वोक्त ५+४ नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रि.शरीर, वैक्रि.अंगोपांग
७	८२	११	११ = पूर्वोक्त ९+२ मनुष्यद्विक
८	८०	१३	१३ नरकद्विक, तिर्यंचद्विक, विकलत्रय, उद्योत, आतप, एकेंद्रिय, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर (इन तेरह प्रकृतियों का क्षय ९वें गुणस्थानमें होता है)
९	७९	१४	१४ = पूर्वोक्त १३+१ तीर्थंकर
१०	७८	१५	१५ = पूर्वोक्त १३+२ आहारकद्विक
११	७७	१६	१६ = पूर्वोक्त १३+३ आहारकद्विक, तीर्थंकर
१२	१०	८३	१०= मनुष्यद्विक, पंचेन्द्रिय, सुभग, त्रस,बादर, पर्याप्त आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकर
१३	९	८४	९ = पूर्वोक्त १०-१ तीर्थंकर

गुणसंजादं पयडिं मिच्छे बंधुदयगंधहीणम्मि ।
सेसुव्वेल्लणपयडिं णियमेणुव्वेल्लदे जीवो ।।६१२।।

अन्वयार्थ - **(मिच्छे)** मिथ्यादृष्टि में **(बंधुदयगंधहीणम्मि)** बन्ध और उदय की गंध से रहित और **(गुणसंजादं)** सम्यग्दर्शनादि गुणों के कारण उत्पन्न **(पयडिं)** प्रकृतियों

की (सम्यक्त्व, मिश्र और आहारकद्विक) तथा **(सेसुव्वेल्लणपयडिं)** शेष उद्वेलन प्रकृतियों की **(जीवो)** मिथ्यादृष्टि जीव **(णियमेण)** नियम से **(उव्वेल्लदे)** उद्वेलना करता है।

सत्थत्तादाहारं पुव्वं उव्वेल्लदे तदो सम्मं ।
सम्मामिच्छं तु तदो एगो विगलो य सयलो य ।।६१३।।

अन्वयार्थ - (आहारं) आहारकद्विक **(सत्थत्ताद्)** प्रशस्त प्रकृति होने से इनकी **(पुव्वं)** पहले **(उव्वेल्लदे)** उद्वेलना होती है। **(तदो)** तत्पश्चात् **(सम्मं)** सम्यक्त्व प्रकृति की **(तदो तु)** उसके पश्चात् **(सम्मामिच्छं)** सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना **(एगो विगलो य सयलो य)** एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव करते हैं।

वेदगजोग्गे काले आहारं उवसमस्स सम्मत्तं ।
सम्ममिच्छं चेगे वियले वेगुव्वछक्कं तु ।।६१४।।

अन्वयार्थ - (वेदगजोग्गे काले) वेदक सम्यक्त्व के योग्यकाल में **(आहारं)** आहारकद्विक की **(उवसमस्स)** उपशमसम्यक्त्व के योग्यकाल में **(सम्मत्तं)** सम्यक्त्व प्रकृति की और **(सम्मामिच्छं)** सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उद्वेलना होती है **(एगे च वियले)** एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय पर्याय में **(वेगुव्वछक्कं तु)** वैक्रियिक षट्क की उद्वेलना होती है।

उदधिपुधत्तं तु तसे पल्लासंखूणमेगमेयक्खे ।
जाव य सम्मं मिस्सं वेदगजोग्गो य उवसमस्स तदो ।।६१५।।

अन्वयार्थ - (सम्मं) सम्यक्त्वप्रकृति **(य)** और **(मिस्सं)** मिश्रप्रकृति का स्थितिसत्त्व **(जाव)** जबतक **(तसे तु)** त्रस जीव के तो **(उदधिपुधत्तं)** पृथक्त्वसागरप्रमाण शेष रहता है और **(एयक्खे)** एकेन्द्रिय जीव के **(पल्लासंखूणमेगं)** पल्य के असंख्यातवें भाग कम एक सागरप्रमाण शेष रहता है तबतक के काल को **(वेदगजोग्गो)** वेदक योग्य काल कहते हैं **(तदो)** उससे आगे **(उवसमस्स)** उपशम योग्य काल है।

तेउदुगे मणुवदुगं उच्चं उव्वेल्लदे जहण्णिदरं ।
पल्लासंखेज्जदिमं उव्वेल्लणकालपरिमाणं ।।६१६।।

अन्वयार्थ -(तेउदुगे) तेजकाय और वायुकाय में **(मणुवदुगं उच्चं)** मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र इन तीन की **(उव्वेलदे)** उद्वेलना होती है। **(जहण्णिदरं)** जघन्य और उत्कृष्ट **(उव्वेल्लणकालपरिमाणं)** उद्वेलना काल का प्रमाण **(पल्लासंखेज्जदिमं)** पल्य के असंख्यातवें भाग मात्र है।

पल्लासंखेज्जदिमं ठिदिमुव्वेल्लदि मुहुत्तअंतेण ।
संखेज्जसायरठिदिं पल्लासंखेज्जकालेण ।।६१७।।

अन्वयार्थ - (पल्लासंखेज्जदिमं ठिदिं) पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण स्थिति की **(मुहुत्तअंतेण)** अन्तर्मुहूर्तकाल के द्वारा **(उव्वेल्लदि)** उद्वेलना करता है तो **(संखेज्जसायरठिदिं)** संख्यातसागरप्रमाण स्थिति की उद्वेलना **(पल्लासंखेज्जकालेण)** पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल के द्वारा करता है।

विशेषार्थ - १) मिथ्यात्व गुणस्थानमें जिनका बंध व उदय नही हैं ऐसी १) सम्यक्त्वमोहनीय २) सम्यग्मिथ्यात्व ३) आहारकद्विक इन चार प्रकृतियों की उद्वेलना मिथ्यात्व गुणस्थान में होती है। शेष प्रकृतियों की उद्वेलना भी वह जीव करता है।

२) जिनके उन प्रकृतियों का बंध अथवा उदय नहीं होता वे उन प्रकृतियों की उद्वेलना करते हैं। एकेन्द्रिय व विकलत्रय के देवद्विक, नरकद्विक व वैक्रियिकद्विक का बन्ध और उदय नही हैं अत: वे जीव वैक्रियिकषट्क की उद्वेलना करते हैं।

३) तेजोकायिक व वायुकायिक के मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र का बन्ध व उदय नहीं होता अत: तेजोकायिक व वायुकायिक जीव मनुष्यद्विक व उच्चगोत्र की उद्वेलऩा करते हैं।

वेदकयोग्यकाल में आहारकद्विक की उद्वेलना होती है और उपशमकाल में सम्यक्त्व प्रकृति व सम्यङ्मिथ्यात्व की उद्वेलना होती है।

वेदकयोग्यकाल - प्रथमोपशम सम्यक्त्व से च्युत होकर मिथ्यात्व को प्राप्त होनेपर जबतक वेदक सम्यक्त्व प्राप्त होने की योग्यता है उतना काल वेदक योग्य काल है।

उपशमकाल - वेदकयोग्यकाल बीतनेपर यदि सम्यक्त्व की प्राप्ति हुई तो प्रथमोशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होगी अत: वेदकयोग्य काल के अनन्तर के काल को उपशमकाल कहते हैं।

वेदककाल में उपशमसम्यक्त्व नहीं होता और उपशमकाल में वेदक सम्यक्त्व नहीं होता।

वेदकयोग्यकाल - सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की स्थिति घटकर त्रस जीव के तो पृथक्त्वसागरप्रमाण शेष रहे तथा एकेन्द्रिय के एक सागर को पल्य का असंख्यातवाँ भागकम इतनी शेष रहे तबतक का काल 'वेदकयोग्यकाल' है और सत्तारूप स्थिति उससे भी कम हो जावे तो वह उपशम योग्य काल है।

उद्वेलना काल - जघन्य और उत्कृष्ट = पल्य का असंख्यातवा भाग इतने काल में सर्वस्थिति को उद्वेलनरूप करता है।

अन्तर्मुहूर्तकाल में पल्य के असंख्यातवें भागरूप स्थिति की उद्वेलना करता है तो संख्यातसागरोपम स्थिति की उद्वेलना कितने काल में करेगा? ऐसा त्रैराशिक करनेपर पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग काल लब्ध आता है।

एक उद्वेलन काण्डक का प्रमाण - पल्य के अर्धच्छेद का असंख्यातवाँ भाग अर्थात् एक अन्तर्मुहूर्त में इतनी स्थिति के निषेकों का गलन करता है।

एक उद्वेलनकाण्डक का उद्वेलनकाल - अन्तर्मुहूर्त

इन दोनों को प्रमाणराशि करना अर्थात् पल्य के अर्धच्छेद प्रमाण राशि को गलन करने के लिए जो काल लगा उतनी स्थिति भी सत्ता में से कम हुई। $\underset{\partial}{\text{छे}}$ + २१

इच्छाराशि - संख्यात सागरोपम स्थिति प१ (संख्यातसागर में संख्यात पल्य होते हैं।)

फलराशि - अन्तर्मुहूर्त २१

प्रमाण	फल	इच्छा	लब्ध
$\left(\frac{\text{पल्य अर्धच्छेद}}{\text{असंख्यात}} + \text{अन्तर्मुहूर्त}\right)$	अन्तर्मुहूर्त	संख्यात सागर	$\frac{\text{फल} \times \text{इच्छा}}{\text{प्रमाण}}$
२१ छे ∂	२१	प१	$\frac{\cancel{२१} \times \text{प१}}{\underset{\partial}{\text{छे}} + \cancel{२१}} = \boxed{\frac{\text{प}}{\partial}}$

पल्य के अर्धच्छेद के असंख्यातवे भाग से संख्यात पल्य में भाग देनेपर पल्य का असंख्यातवाँ भाग लब्ध आता है।

स्थिति संख्यात सागरोपम प १

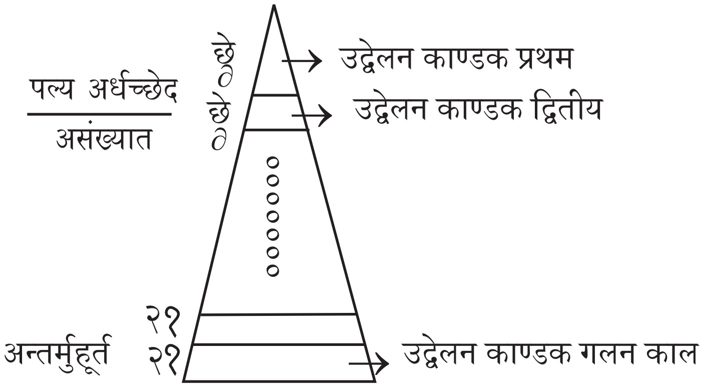

प्रत्येक अन्तर्मुहूर्त में एक-एक उद्वेलना काण्डकप्रमाण स्थिति का उद्वेलना के द्वारा घात होता है।

सम्यक्त्व आदि के विराधना वार कहते हैं -

सम्मत्तं देसजमं अणसंजोजणविहिं च उक्कस्सं ।
पल्लासंखेज्जदिमं वारं पडिवज्जदे जीवो ।।६१८।।

अन्वयार्थ - **(सम्मत्तं)** प्रथमोपशम सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व, **(देसजमं)** देशसंयम, **(अणसंजोजणविहिं)** अनन्तानुबंधी की विसंयोजना की विधि को **(उक्कस्सं)** उत्कृष्टरूप से **(पल्लासंखेज्जदिमं)** पल्य के असंख्यातवें भाग **(वारं)** बार **(जीवो)** जीव **(पडिवज्जिदे)** प्राप्त करता है।

चत्तारि वारमुवसमसेढिं समरुहदि खविदकम्मंसो ।
बत्तीसं वाराइं संजममुवलहिय णिव्वादि ।।६१९।।

अन्वयार्थ - (उवसमसेढिं) उपशमश्रेणिपर **(चत्तारि वारं)** चार बार ही **(समरुहदि)** चढ़ता है। बाद में **(खविदकम्मंसो)** क्षपित कर्मांश होता है अर्थात् क्षपक श्रेणिपर चढ़ता है। **(संजमं)** सकलसंयम को **(बत्तीसं वाराइं)** बत्तीस बार **(उवलहिय)** प्राप्त करके **(णिव्वादि)** मोक्ष को प्राप्त करता है।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व देशसंयम, अनंतानुबंधी विसंयोजन } →	पल्योपम के असंख्यातवे भागके जितने समय है उतनी बार छोड़कर ग्रहण करता है।
उपशमश्रेणि →	चार बार (उसके बाद क्षपकश्रेणी चढ़कर मोक्ष प्राप्त करेगा।)
सकलसंयम →	३२ बार (बत्तीसवें बार क्षपकश्रेणी चढ़कर मोक्ष प्राप्त करेगा।)

उपर्युक्त संख्या उत्कृष्टता की अपेक्षा से बतायी है। कम से कम एक बार ही सम्यक्त्व, सकल संयम धारण करके क्षपकश्रेणिपर आरोहण कर मोक्ष जा सकता है।

किस गुणस्थान में किसका सत्त्व नहीं होता -

१) मिथ्यात्व गुणस्थान - एक जीव के एक समय में तीर्थंकर और आहारकद्विक का सत्त्व नहीं होता। एक जीव के भिन्न समय में, नाना जीवों को एक समय में तीर्थंकर आहारकद्विक सत्त्व रहता है।

२) सासादन गुणस्थान - नाना जीवों की अपेक्षा भी तीर्थंकर और आहारकद्विक का सत्त्व नहीं होता।

३) मिश्र गुणस्थान - तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं रहता है क्योंकि तीर्थंकर की सत्तासहित जीवों के मिश्रगुणस्थान, तीर्थंकर आहारकद्विक कर युगपत् सत्तासहित जीवों के मिथ्यात्वगुणस्थान और तीर्थंकर अथवा आहारकद्विक में से किसी एकका भी सत्त्व होनेपर मिथ्यात्वरहित अनंतानुबंधी का उदय नहीं होता अर्थात् सासादन गुणस्थान नहीं होता। आहारकद्विक का सत्त्व रहते हुए मिश्र गुणस्थान हो सकता है।

सुरणरसम्मे पढमो सासणहीणेसु होदि बाणउदी ।
सुरसम्मे णरणारयसम्मे मिच्छे य इगिणउदी ।।६२०।।

अन्वयार्थ - (पढमो) प्रथम ९३ का सत्त्वस्थान **(सुरणरसम्मे)** देव और मनुष्य सम्यग्दृष्टि में होता है। **(बाणउदी)** बानवें का सत्त्वस्थान **(सासणहीणेसु)** सासादन रहित चारों गति के जीवों में होता है। **(इगिणउदी)** इक्यानवे का सत्त्वस्थान **(सुरसम्मे)** देवसम्यग्दृष्टि में **(णरणारयसम्मे मिच्छेय)** सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि मनुष्य और

नारकी में होता है।

णउदी चदुग्गदिम्मि य तेरस खवगोत्ति तिरियणरमिच्छे ।
अडचउसीदी सत्ता तिरिक्खमिच्छम्मि बासीदी ।।६२१।।

अन्वयार्थ - (णउदी) नब्बे का सत्त्वस्थान **(चदुग्गदिम्मि)** चारों गति के जीवों में **(तेरसखवगो त्ति)** क्षपक अनिवृत्तिकरण में तेरह प्रकृतियों के क्षयतक होता है। **(अडचउसीदी सत्ता)** अठासी और चौरासी के सत्त्वस्थान **(तिरियणरमिच्छे)** तिर्यंच और मनुष्य मिथ्यादृष्टि में ही होते हैं। **(बासीदो)** बयासी का सत्त्वस्थान **(तिरिक्खमिच्छम्मि)** मिथ्यादृष्टि तिर्यंच में ही होता है।

सीदादि चउट्ठाणा तेरस खवगादु अणुवसमगेसु ।
गयजोगस्स दुचरिमं जाव य चरिमम्मि दसणवयं ।।६२२।।

अन्वयार्थ - (सीदादिचउट्ठाणा) अस्सी आदि चार सत्त्वस्थान **(अणुवसमगेसु)** क्षपकों में **(तेरस खवगादु)** तेरह प्रकृतियों के क्षय के बाद से लेकर **(गयजोगस्स)** अयोगी के **(दुचरिमं जाव य)** द्विचरम समय पर्यन्त होते हैं। **(चरिमम्मि)** अयोगी के अन्तिम समय में **(दसणवयं)** दस और नौ का सत्त्वस्थान होता है।

सत्त्व स्थानक्र.	सत्त्वस्थान प्रकृति	किस गति में किस अवस्था में इन प्रकृतियों का सत्त्व होता है
१	९३	असंयत सम्यग्दृष्टि देव व असंयतादि सम्यग्दृष्टि मनुष्य में
२	९२	सासादन गुणस्थान छोड़कर चारों गति में (११ वें गुणस्थानतक)
३	९१	देव सम्यग्दृष्टि, मनुष्य व नारकी सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि
४	९०	चारों गति में, क्षपक अनिवृत्तिकरण में १३ प्र. के क्षयपर्यंत
५	८८	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्यमें } (स्वस्थान में एकेन्द्रिय विकलत्रयके
६	८४	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्यमें } उत्पन्नस्थान में मनुष्य,पंचे.तिर्यंच)
७	८२	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच(स्वस्थान-तेज,वायु,उत्पन्नस्थान में पंचे.तिर्यंच)

सत्त्व स्थानक्र.	सत्त्वस्थान प्रकृति	किस गति में किस अवस्था में इन प्रकृतियों का सत्त्व होता है
८	८०	नववे गुणस्थान में १३ प्र.के क्षय से अयोगके. के द्विचरमसमय तक
९	७९	नववे गुणस्थान में १३ प्र.के क्षय से अयोगके. के द्विचरमसमय तक
१०	७८	नववे गुणस्थान में १३ प्र.के क्षय से अयोगके. के द्विचरमसमय तक
११	७७	नववे गुणस्थान में १३ प्र.के क्षय से अयोगके. के द्विचरमसमय तक
१२	१०	अयोगी के अन्त समय में
१३	९	अयोगी के अन्त समय में

णिरए बाइगिणउदी णउदी भूवादिसव्वतिरिएसु ।
बाणउदी णउदी अडचउबासीदी य होंति सत्ताणि ।।६२३।।

अन्वयार्थ - (णिरये) नरकगति में नामकर्म के **(बाइगिणउदी णउदी)** बानवे, इक्यानवे, नब्बे ये तीन सत्त्वस्थान होते हैं। **(भूवादिसव्वतिरिएसु)** पृथ्वीकाय आदि सब तिर्यंचों में **(बाणउदी णउदी)** बानवे, नब्बे **(अडचउबासीदी)** अठासी, चौरासी, बयासी ये पाँच **(सत्ताणि)** सत्त्वस्थान **(होंति)** होते हैं।

बासीदिं वज्जित्ता बारस ठाणाणि होंति मणुएसु ।
सीदादि चउट्ठाणा छट्ठाणा केवलिदुगेसु ।।६२४।।

अन्वयार्थ - (मणुएसु) मनुष्यों में **(बासीदिं वज्जित्ता)** बयासी को छोड़कर **(बारस ठाणाणि)** बारह सत्त्वस्थान **(होंति)** होते हैं। **(केवलिदुगेसु)** सयोगकेवली और अयोगकेवली में क्रम से **(सीदादि चउट्ठाणा)** अस्सी आदि चार स्थान और **(छट्ठाणा)** अस्सी आदि छह स्थान होते हैं।

समविसमट्ठाणाणि य कमेण तित्थिदरकेवलीसु हवे।
तिदुणउदी आहारे देवे आदिमचउक्कं तु ।।६२५।।

अन्वयार्थ - (तित्थिदरकेवलीसु) तीर्थंकर केवली और सामान्य केवली में

(कमेण) क्रम से **(समविसमट्ठाणाणि)** समस्थान और विषमस्थान **(हवे)** होते हैं। **(आहारे)** आहारक में **(तिदुणउदी)** तिरानवे और बानवे दो सत्त्वस्थान हैं। **(देवे)** देवों में **(आदिमचउक्कं तु)** आदि के चार सत्त्वस्थान हैं।

बाणउदि णउदिसत्ता भवणतियाणं च भोगभूमीणं ।
हेट्ठिमपुढविचउक्कभवाणं च य सासणे णउदी ।।६२६।।

अन्वयार्थ - (भवणतियाणं) भवनत्रिक देवों के **(भोगभूमीणं)** भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंचों के **(च)** और **(हेट्ठिमपुढविचउक्कभवाणं)** अंजनादि नीचे की चार पृथ्वियों के नारकी के **(बाणउदि णउदिसत्ता)** बानवे और नब्बे दो सत्त्वस्थान हैं **(सासणे)** सासादन गुणस्थान में **(णउदी)** एक नब्बे का ही सत्त्वस्थान होता है।

इकतालीस जीवपदों में नामकर्म के सत्त्वस्थान

जीवपद	सत्त्वस्थानसंख्या	सत्त्वस्थान
१) नारकी १ से ३ नरक	३	९२,९१,९०
२) नारकी ४ से ७ नरक	२	९२,९०
३) पृथ्वीकायादि सर्व तिर्यंच	५	९२,९०,८८,८४,८२,
४) मनुष्य	१२	८२ को छोड़कर शेष सर्व
५) सयोगकेवली	४	८०-७९-७८-७७
६) अयोगकेवली	६	८०-७९-७८-७७-१०-९
७) तीर्थंकर सयोगकेवली	२	८०-७८ समस्थान
८) तीर्थंकर अयोगकेवली	३	८०-७८-१० समस्थान
९) सामान्य सयोगकेवली	२	७९-७७ विषमस्थान
१०) सामान्य अयोगकेवली	३	७९-७७-९ विषमस्थान
११) आहारकमुनि	२	९३-९२
१२) वैमानिक देव	४	९३-९२-९१-९०
१३) भवनत्रिक देव	२	९२-९०
१४) सर्वभोगभूमि मनुष्य व तिर्यंच	२	९२-९०
१५) सासादनगुणस्थान में	१	९०

नरकगति में सत्त्वस्थान३-९२,९१,९०

गुणस्थान	सत्त्व स्थान सं.	सत्त्वस्थान
१) मिथ्यात्व	३	९२,९१,९०
२) सासादन	१	९०
३) मिश्र	२	९२,९०
४) असंयत	३	९२-९१-९०

देवगति में सत्त्वस्थान४- ९३,९२,९१,९०

गुणस्थान	सत्त्व स्थान सं.	सत्त्वस्थान
१) मिथ्यात्व	२	९२,९०
२) सासादन	१	९०
३) मिश्र	२	९२,९०
४) असंयत	४	९३,९२,९१,९०

मनुष्यगति में सत्त्वस्थान १२

जीवपद	सत्त्व स्था.सं.	सत्त्वस्थान
१) मिथ्यात्व	५	९२,९१,९०,८८, ८४
२) सासादन	१	९०
३) मिश्र	२	९२,९०
४) असंयत	४	९३-९२-९१-९०
५) देशसंयत	४	९३-९२-९१-९०
६) प्रमत्त	४	९३-९२-९१-९०
७) अप्रमत्त	४	९३-९२-९१-९०
८) उपशमक	४	९३-९२-९१-९०
८) क्षपक	४	९३-९२-९१-९०
९) उपशमक	४	९३-९२-९१-९०
९) क्षपक	८	९३-९२-९१-९० ८०-७९-७८-७७
१०) उपशमक	४	९३-९२-९१-९०
१०) क्षपक	४	८०-७९-७८-७७
११) उपशांत	४	९३-९२-९१-९०
१२) क्षीणमोह	४	८०-७९-७८-७७
१३) सयोग	४	८०-७९-७८-७७
१४)द्विचरमसमय	४	८०-७९-७८-७७
चरमसमय	२	१०-९

तिर्यंचगति में सत्त्वस्थान ५

गुणस्थान	स्थान संख्या	सत्त्वस्थान
१) मिथ्यात्व	५	९२,९०, ८८,८४,८२
२) सासादन	१	९०
३) मिश्र	२	९२,९०
४) असंयत	२	९२,९०
५) देशसंयत	२	९२,९०

चारों गति के सत्त्वस्थान के कोष्टक अलग अलग दिखाये हैं। सामान्य चारों गति के गुणस्थान अपेक्षा सत्त्व स्थान मनुष्यगति के समान जानना। विशेष इतना है कि तिर्यंचगति में मिथ्यात्व गुणस्थान में एक ८२ का सत्त्वस्थान बढ़ाना।

मूलुत्तरपयडीणं बंधोदयसत्तठाणभंगा हु ।
भणिदा हु तिसंजोगे एत्तो भंगे परूवेमो ।।६२७।।

अन्वयार्थ -(मूलुत्तरपयडीणं) मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियों के **(बंधोदयसत्तठाणभंगा हु)** बंध, उदय और सत्त्वरूप स्थान और भंग **(भणिदो)** कहे। **(एत्तो)** यहाँ से आगे **(तिसंजोगे)** बन्ध-उदय और सत्त्व के त्रिसंयोगी **(भंगे)** भंगों को **(परूवेमो)** हम कहते हैं।

बन्ध, उदय, सत्त्व के त्रिसंयोग में स्थान और भंग

अट्ठविहसत्तछब्बंधगेसु अट्ठेव उदयकम्मंसा ।
एयविहे तिवियप्पो एयवियप्पो अबंधम्मि ।।६२८।।

अन्वयार्थ - (अट्ठविहसत्तछब्बंधगेसु) मूलप्रकृतियों में आठप्रकृति, सातप्रकृति, छहप्रकृति बन्धक में **(अट्ठेव उदयकम्मंसा)** उदय और सत्त्व आठ प्रकृति का ही होता है। **(एकविहे)** एक प्रकृतिक बन्धस्थान में **(तिवियप्पो)** उदय और सत्त्व तीन प्रकार का है। वह इस प्रकार १) उदय सात और सत्त्व आठ प्रकृति का २) उदय और सत्त्व दोनों सात प्रकृति का ३) उदय और सत्त्व दोनों चार प्रकृति का **(अबंधम्मि)** अबंधक में **(एयवियप्पो)** उदय और सत्त्व चार प्रकृतिक एक प्रकार का ही है।

मूलप्रकृति के बन्धस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान

बन्धस्थान ४	**उदयस्थान ३**	**सत्त्वस्थान ३**
१) ८ सर्व	८ सर्व	८ सर्वकर्म
२) ७ आयु बिना सर्व	७ मोहनीय बिना सर्व कर्म	७ मोहनीय बिना सर्व
३) ६ आयु,मोह बिना सर्व		
४) १ वेदनीय	४ घाति बिना अघाति कर्म	४ अघातिकर्म

त्रिसंयोग में स्थानभंग

बन्धस्थान	८	७	६	१	१	१	०
उदयस्थान	८	८	८	७	७	४	४
सत्त्वस्थान	८	८	८	८	७	४	४

विशेषार्थ - आठ, सात, छह बन्धस्थान में उदय और सत्त्व आठ का ही होता है। एक के बन्धस्थान में ग्यारहवें गुणस्थान में उदय और सत्त्व मोह बिना सात का पाया जाता है। एक के बंधस्थान में बारहवें गुणस्थान में उदय और सत्त्व मोह बिना सात का पाया जाता हैं। तेरहवें गुणस्थान में एक के बन्धस्थान में चार अघाति कर्मों का उदय और सत्त्व है। चौदहवें गुणस्थान में बन्ध शून्य, उदय और सत्त्व चार अघाति का पाया जाता है।

मिस्से अपुव्वजुगले बिदियं अपमत्तवोत्ति पढमजुगं ।
सुहुमादिसु तदियादी बंधोदयसत्त भंगेसु ।।६२९।।

अन्वयार्थ - **(मिस्से)** मिश्र में और **(अपुव्वजुगले)** अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण में **(बिदियं)** सात का बंध, आठ का उदय और सत्त्वरूप दूसरा भंग पाया जाता है **(अपमत्तवोत्ति)** अप्रमत्तपर्यन्त छह गुणस्थानों में **(पढमजुगं)** पहला और दूसरा भंग होता है **(सुहुमादिसु)** सूक्ष्मसांपरायादि शेष ५ गुणस्थानों में **(बंधोदयसत्तभंगेसु)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थानों के भंगों में से क्रमसे **(तदियादी)** तीसरा, चौथा, पाँचवा-छठा और सातवाँ भंग है।

गुणस्थानों में त्रिसंयोगी भंग -

	मिथ्यात्त्व		सासादन		मिश्र	अविरत		देश		प्रमत्त		अप्रमत्त	
बन्धस्थान	८	७	८	७	७	८	७	८	७	८	७	८	७
उदयस्थान	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
सत्त्वस्थान	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८

	अपूर्व	अनि	सूक्ष्म.	उप	क्षीण	सयोग	अयोग
बन्धस्थान	७	७	६	१	१	१	०
उदयस्थान	८	८	८	७	७	४	४
सत्त्वस्थान	८	८	८	८	७	४	४

विशेषार्थ - मिश्र और अपूर्वकरण तथा अनिवृत्तिकरण में आयु बिना सात का बन्ध, आठ का उदय और आठ का ही सत्त्व होता है। मिश्र के बिना शेष मिथ्यादृष्टि से

लेकर अप्रमत्त पर्यन्त कभी आयु का बन्ध होता है, कभी नहीं होता इसलिए कभी आठों कर्मों का बन्ध होता है कभी सात का, किन्तु उदय और सत्त्व दसवें गुणस्थानतक आठों कर्मों का होता है। आगे के गुणस्थानों का खुलासा ऊपर दिया है।

उत्तर प्रकृतियों में बन्ध उदय सत्त्व के त्रिसंयोगी भंग कहते हैं

बंधोदयकम्मंसा णाणावरणंतराइये पंच ।
बंधोवरमे वि तहा उदयंसा होंति पंचेव ।।६३०।।

अन्वयार्थ - (णाणावरणंतराइये) ज्ञानावरण और अंतराय कर्म की **(पंच)** पाँच-पाँच प्रकृतिरूप **(बंधोदयकम्मंसा)** बन्ध, उदय और सत्त्व सूक्ष्मसांपरायपर्यंत होता है। **(तहा)** तथा **(बंधोवरमे वि)** बन्ध का अभाव होनेपर भी **(उदयंसा)** उदय और सत्त्व **(पंचेव)** पाँच प्रकृति का ही **(होंति)** है।

विशेषार्थ - सूक्ष्मसाम्पराय पर्यन्त ज्ञानावरण और अन्तराय की पाँच-पाँच प्रकृतियों का बन्ध, उदय, सत्त्व होता है। ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थान में बन्ध शून्य, उदय और सत्त्व पाँच प्रकृतियों का होता है।

अब दर्शनावरण के त्रिसंयोगी भंगों को कहते हैं -

बिदियावरणे णवबंधगेसु चदुपंचउदय णवसत्ता ।
छब्बंधगेसु एवं तह चदुबंधे छडंसा य ।।६३१।।
उवरदबंधे चदु पंच उदय णव छच्च सत्त चदुजुगलं ।
तदियं गोदं आउं विभज्ज मोहं परं वोच्छं ।।६३२।।

अन्वयार्थ - (बिदियावरणे) द्वितीय दर्शनावरण में **(णवबंधगेसु)** नौ के बंधक में **(चदु पंच उदय)** चार और पाँच का उदय और **(णवसत्ता)** नौ का सत्त्व पाया जाता है। **(छब्बंधगेसु)** छह के बंधक में **(एवं)** इसी प्रकार है **(तह)** तथा **(चदुबंधे)** चार के बंधस्थान में उदय, चार अथवा पाँच का ही है लेकिन **(छडंसा)** सत्त्व छह का है। **(उवरदबंधे)** बंध का अभाव होने पर ग्यारहवें गुणस्थान में **(चदुपंचउदय)** चार या पाँच का उदय है **(च)** और **(सत्त णव)** नौ का सत्त्व है। क्षीणकषाय में द्विचरमसमयतक **(छच्च)** सत्त्व छह का है ,उदय चार या पाँच का ही है। अंतिम समय में **(जुगलंचदु)** उदय और

सत्त्व दोनों चार-चार का है। **(तदिय)** तृतीय कर्म अर्थात् वेदनीय **(गोदं)** गोत्र और **(आउं)** आयु के त्रिसंयोगी भंगों को **(विभज्ज)** विभाग करके **(परं)** फिर **(मोहं)** मोहनीय के भंग **(वोच्छं)** कहेंगें।

विशेषार्थ - दर्शनावरण के प्रथम और द्वितीय गुणस्थान में नौ का बन्ध, तीसरे से आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग पर्यन्त स्त्यानगृद्धित्रिक के बिना छह का बन्ध, आगे दसवें गुणस्थानतक चार का बन्ध होता है। इसप्रकार बन्धस्थान ३ → ९, ६, ४

उदयस्थान २- १) ५ → निद्रा १ +४ चक्षुदर्शनावरणादि

२) ४→ निद्राविना चक्षुदर्शनावरणादि

सत्त्वस्थान ३ - १) ९→ सर्व २) ६→ क्षपक अनिवृत्तिकरण के १६ प्रकृति के क्षय के अनन्तर बारहवें गुणस्थान के द्विचरमसमय तक स्त्यानगृद्धित्रिक के बिना शेष सर्व।

३) ४ → चक्षुदर्शनावरणादि बारहवें गुणस्थान के अन्तिम समय में

दर्शनावरण के त्रिसंयोगी भंग

बन्धस्थान	९	६	४	४	०	०
उदयस्थान	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४
सत्त्वस्थान	९	९	९	६	९।६	४

उपशमश्रेणी की अपेक्षा से ग्यारहवें गुणस्थान में ९ प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है। बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समयतक चार अथवा निद्रासहित पाँच प्रकृति का उदय रहता है और छह प्रकृति का सत्त्व होता है। बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समय में निद्रा प्रचला की उदय व्युच्छित्ति और सत्त्वव्युच्छित्ति होती है अत: अन्तिम समय में चार प्रकृति का उदय और चार प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है।

गुणस्थानों में दर्शनावरण के बन्ध, उदय और सत्त्वरूप त्रिसंयोगी बंध

	मिथ्यात्त्व	**सासादन**	**मिश्र**	**असंयत**	**देश**	**प्रमत्त**	**अप्रमत्त**
बन्धस्थान	९	९	६	६	६	६	६
उदयस्थान	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५
सत्त्वस्थान	९	९	९	९	९	९	९

गुणस्थान	अपूर्वकरण		अनिवृत्तिकरण		सूक्ष्मसाम्पराय		उपशांत	क्षीणमोह	
	उपशम	क्षपक	उपशम	क्षपक	उपशम	क्षपक		द्विचरम	चरम
बन्धस्थान	६।४	६।४	४	४	४	४	०	०	०
उदयस्थान	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४
सत्त्वस्थान	९	९	९	९।६	९	६	९	६	४

आठवें गुणस्थान के प्रथमभाग में निद्रा प्रचला की बंन्धव्युच्छित्ति होती है इसलिए आठवें के प्रथम भाग में छह का बन्ध और द्वितीयभाग से चार प्रकृति का बन्ध होता है।

नववें गुणस्थान के क्षपक के प्रथम भाग में स्त्यानत्रिक का क्षय होता है इसलिए क्षपक अनिवृत्तिकरण के प्रथम भाग में नौ का सत्त्व और दूसरे भाग से छह प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है। उपशमश्रेणी में क्षय न होने से सर्व सत्त्व रहता है।

अब वेदनीयकर्म के उत्तरभेदों में त्रिसंयोगी भंगों को कहते हैं -

सादासादेक्कदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे ।
दो सत्ता जोगित्ति य चरिमे उदयागदं सत्तं ।।६३३।।
छट्ठोत्ति चारि भंगा दो भंगा होंति जाव जोगिजिणे ।
चउभंगाऽजोगिजिणे ठाणं पडि वेयणीयस्स।।६३४।।

अन्वयार्थ - (संभवट्ठाणे) योग्यस्थान में **(सादासादेक्कदरं)** साता और असातावेदनीय में से किसी एक का ही **(बंधुदया)** बंध और उदय **(होंति)** होता है **(य)** और **(जोगित्ति)** सयोगीगुणस्थानपर्यंत **(दो सत्ता)** सत्त्व दोनों का है। **(चरिमे)** अयोगी के अंतिम समय में **(उदयागदं सत्तं)** जिसका उदय है उसीका सत्त्व है। इसलिए **(वेयणीयस्स)** वेदनीय के **(ठाणं पडि)** स्थान की अपेक्षा **(छट्ठोत्ति)** छठे गुणस्थानतक **(चारि भंगा)** चार भंग होते हैं। तत्पश्चात् **(जोगिजिणे जाव)** सयोगकेवली तक **(दो भंगा)** दो ही भंग **(होंति)** होते हैं। **(अजोगिजिणे)** अयोगीजिन में **(चउभंगा)** चार भंग होते हैं।

विशेषार्थ - साता और असाता में से किसी एक का योग्यस्थान में बन्ध और उदय होता है। अर्थात् जहाँतक उसका बंध और उदय संभव हो वहाँतक दोनों में से एक का बन्ध और उदय होता है। दोनों का सत्त्व तेरहवें गुणस्थान तक पाया जाता है। चौदहवें गुणस्थान

के द्विचरम समय में अनुदयरूप वेदनीय की सत्त्वव्युच्छित्ति होती है अत: चरमसमय में एक उदयरूप वेदनीय का सत्त्व होता है इसप्रकार अयोगी में द्विचरमसमय तक दो का सत्त्व और चरमसमय में एक का सत्त्व पाया जाता है।

असाता की बन्धव्युच्छित्ति छठे गुणस्थान में होती है अत: छठे तक दो में से किसी एक का बंध एक समय में पाया जाता है। चौदहवें गुणस्थान तक दो में से किसी एक का उदय एक समय में होता है।

वेदनीय के बन्ध,उदय और सत्त्व के त्रिसंयोगी भंग ८

भंगसंख्या	१	२	३	४	५	६	७	८
बन्धस्थान	साता	साता	असाता	असाता	०	०	०	०
उदयस्थान	साता	असाता	साता	असाता	साता	असाता	साता	असाता
सत्त्वस्थान	२	२	२	२	२	२	साता	असाता

पहले से छठे गुणस्थान तक पहले ४ भंग पाये जाते हैं। सातवें से तेरहवें गुणस्थानतक पहले दो भंग होते हैं। चौदहवें गुणस्थान में द्विचरमसमयतक पाँचवा और छठा ये दो भंग होते हैं और चरमसमय में सातवाँ और आठवाँ ये दो भंग पाये जाते हैं।

गुणस्थानों में वेदनीय के त्रिसंयोगी भंग सर्व गुणस्थानों के भंगों का कुल जोड़→ ४२

गुणस्थान	मि	सा	मिश्र	असं	देश	प्रम	अप्र	अपू	अनि	सूसां	उप	क्षीण	सयो	अयो
भंग	४	४	४	४	४	४	२	२	२	२	२	२	२	४

अब गोत्रकर्मसम्बन्धी भंग चार गाथाओं से कहते हैं -

णीचुच्चाणेक्कदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे ।
दो सत्ताऽजोगित्ति य चरिमे उच्चं हवे सत्तं ।।६३५।।

अन्वयार्थ - (संभवट्ठाणे) योग्य स्थान में **(णीचुच्चाणेक्कदरं)** नीचगोत्र और उच्चगोत्र इन दोनों में से एक का ही **(बंधुदया)** बन्ध और उदय होता है **(अजोगित्ति)**

अयोगी के द्विचरम समयतक **(दो सत्ता)** दोनों का सत्त्व पाया जाता है **(चरिमे)** अंतिम समय में **(उच्चं)** उच्च गोत्र का ही **(सत्तं हवे)** सत्त्व पाया जाता है।

उच्चुव्वेल्लिदतेऊवाउम्मि य णीचमेव सत्तं तु ।
सेसिगिवियले सयले णीचं च दुगं च सत्तं तु ।।६३६।।

अन्वयार्थ - (उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाउम्मि) जिनके उच्चगोत्र की उद्वेलना हुई है ऐसे तेजकाय और वायुकाय जीवों के **(णीचमेव सत्तं तु)** नीचगोत्र का ही सत्त्व है **(सेसिगिवियले)** शेष एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और **(सयले)** सकलेन्द्रिय के **(णीचं च दुगं च)** नीच गोत्र का अथवा दोनों का ही **(सत्तं तु)** सत्त्व है।

उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाऊ सेसे य वियलसयलेसु ।
उप्पण्णपढमकाले णीचं एयं हवे सत्तं ।।६३७।।

अन्वयार्थ - (उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाऊ) उच्चगोत्र की उद्वेलना करनेवाले तेजकाय और वायुकाय में **(एयं णीचं)** एक नीचगोत्र का ही **(सत्तं हवे)** सत्त्व होता है। वे मरकर जहाँ उत्पन्न होते हैं उन **(सेसे य वियलसयलेसु)** शेष एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय तिर्यंचों में **(उप्पण्णपढमकाले)** उत्पन्न होने के प्रथम अन्तर्मुहूर्त में **(एयं णीचं)** एक नीचगोत्र का ही सत्त्व होता है।

मिच्छादिगोदभंगा पण चदु तिसु दोण्णि अट्ठठाणेसु ।
एक्केक्का जोगिजिणे दो भंगा होंति णियमेण ।।६३८।।

अन्वयार्थ- (मिच्छादिगोदभंगा) मिथ्यात्वादि गुणस्थानों में गोत्र के भंग क्रम से **(पण चदु)** प्रथम में पाँच, दूसरे में चार **(तिसु)** आगे तीन गुणस्थानों में **(दोण्णि)** दो-दो, **(अट्ठठाणेसु)** प्रमत्तादि आठ गुणस्थानों में **(एक्केक्का)** एक-एक **(जोगिजिणे)** अयोगकेवली के **(णियमेण)** नियम से **(दो भंगा)** दो भंग **(होंति)** होते हैं।

विशेषार्थ - १) नीच और उच्चगोत्र में से एकसमय में किसी एक का संभवस्थान में बन्ध और उदय होता है। अर्थात् दूसरे गुणस्थान में नीचगोत्र की बंधव्युच्छित्ति होती है वहाँतक दोनों में से एक समय में किसी एक का बन्ध होगा। पाँचवें गुणस्थान में नीच गोत्र

की उदयव्युच्छित्ति होती है अत: पाँचवें गुणस्थानतक दो में से किसी एक का उदय होगा। आगे एक उच्चगोत्र का ही उदय होता है।

२) अयोगि के द्विचरमसमय तक दोनों का सत्त्व होता है। द्विचरमसमय में नीच गोत्र की सत्त्वव्युच्छित्ति होती है। अत: चरमसमय में एक उच्चगोत्र का ही सत्त्व होता है।

३) उच्चगोत्र की जिन्होंने उद्वेलना की है ऐसे तेजो और वायुकायिक में केवल नीच गोत्र का सत्त्व होता है। वह जीव शेष एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, सकलेन्द्रिय में उत्पन्न हो जाता है तब प्रथम अन्तर्मुहूर्त में उनके भी एक नीचगोत्र का ही सत्त्व होता है। बाद में उच्चगोत्र का बन्ध करनेपर उनके दोनों गोत्रों का सत्त्व होता है।

गोत्रकर्म के बन्ध-उदय और सत्त्व के त्रिसंयोगी भंग -७ है

भंगसंख्या	१	२	३	४	५	६	७
बन्धस्थान	नीच	नीच	उच्च	उच्च	नीच	०	०
उदयस्थान	नीच	उच्च	उच्च	नीच	नीच	उच्च	उच्च
सत्त्वस्थान	२	२	२	२	नीच	२	उच्च

प्रथम गुणस्थान में पहले ५ भंग होते हैं। दूसरे गुणस्थान में पहले ४ भंग होते हैं। तीसरे से पाँचवें गुणस्थानतक तीसरा और चौथा ये दो भंग होते हैं। छठे से दसवें गुणस्थानतक एक तीसरा ही भंग है। तेरहवें गुणस्थान से चौदहवे गुणस्थान के द्विचरम समयतक एक छठा भंग है। चौदहवें गुणस्थान के अन्तिम समय में एक सातवाँ भंग ही पाया जाता है।

गुणस्थानों में गोत्रकर्म के भंग का यन्त्र   गुणस्थानों के सर्व भंगों का जोड़   २५ भंग

गुणस्थान	मिथ्यादृष्टि					सासादन				मिश्रादि तीन		प्रम.से.सू	उप.से.सयो.	अयोगी	
कुलभंग	५					४				२		१	१	२	
बन्ध	नी	नी	उ	उ	नी	नी	नी	उ	उ	उ	उ	उ	०	०	०
उदय	नी	उ	उ	नी	नी	नी	उ	उ	नी	उ	नी	उ	उ	उ	उ
सत्त्व	२	२	२	२	नी	२	२	२	२	२	२	२	२	२	उ

सर्व गुणस्थानों के भंगों का जोड़

गु →	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२५ =	५+	४+	२+	२+	२+	१+	१+	१+	१+	१+	१+	१+	१+	२

अब आयुकर्म के भंग १३ गाथाओं से कहते हैं -

सुरणिरया णरतिरियं छम्मासवसिट्ठगे सगाउस्स ।
णरतिरिया सव्वाउं तिभागसेसम्मि उक्कस्सं ।।६३९।।

अन्वयार्थ - (सगाउस्स) अपनी आयु के **(छम्मासवसिट्ठगे)** छह माह शेष रहनेपर **(सुरणिरया)** देव और नारकी **(णरतिरियं)** मनुष्य अथवा तिर्यंचायु का बन्ध करते हैं। **(णरतिरिया)** मनुष्य और तिर्यंच **(उक्कस्सं)** उत्कृष्टरूप से **(तिभागसेसम्मि)** अपनी भुज्यमान आयु का त्रिभाग शेष रहने पर **(सव्वाउं)** सर्व आयुओं को बांधते हैं।

भोगभुमा देवाउं छम्मासवसिट्ठगे पबद्धंति ।
इगिविगला णरतरियं तेउदुगा सत्तमा तिरियं ।।६४०।।

अन्वयार्थ - (भोगभुमा) भोगभूमिज जीव **(छम्मासवसिट्ठगे)** अपनी आयु के छह माह अवशेष रहने पर **(देवाउं)** देवायु को ही **(पबद्धंति)** बांधते हैं। **(इगिविगला)** एकेन्द्रिय और विकलत्रय जीव **(णरतिरियं)** मनुष्य और तिर्यंचायु को बांधते हैं **(तेउदुगा)** तेजकायिक, वायुकायिक और **(सत्तमा)** सातवी पृथ्वी के नारकी जीव **(तिरियं)** तिर्यंचायु को ही बांधते हैं।

विशेषार्थ - १) जिस आयु का उदय रहता है उसे भुज्यमान आयु कहते हैं। २) जिस अगले भवसंबंधी आयु का बन्ध करते हैं उसे बध्यमान आयु कहते हैं।

कौन जीव	कब	किस आयु का बन्ध करता है
१. देव और नारकी	भुज्यमान आयु के उत्कृष्ट से छह माह शेष रहनेपर	मनुष्यायु और तिर्यंचायु
२. कर्मभूमिज मनुष्य, तिर्यंच	स्व आयु के उत्कृष्ट से त्रिभाग शेष रहनेपर	चारों आयु
३. भोगभूमिज मनुष्य, तिर्यंच	स्व आयु के छह माह शेष रहनेपर दूसरा मत नौ माह शेष रहनेपर	देवायु
४. एकेन्द्रिय, विकलत्रय	स्व आयु के त्रिभाग शेष रहनेपर	मनुष्यायु,तिर्यंचायु
५. तेजस्कायिक, वायुकायिक	स्व आयु के त्रिभाग शेष रहनेपर	तिर्यंचायु
६. सातवें नरक के नारकी	स्व आयु के छहमाह शेष रहनेपर	तिर्यंचायु

सगसगगदीणमाऊ उदेदि बंधे उदिण्णगेण समं।
दो सत्ता हु अबंधे एक्कं उदयागदं सत्तं।।६४१।।

अन्वयार्थ - नारकी आदिजीवों के **(सगसगगदीणमाऊ)** अपनी अपनी गतिसंबंधी ही एक आयु **(उदेदि)** उदय को प्राप्त होती है। **(बन्धे)** परभव की आयु का बन्ध होने पर **(उदिण्णगेण समं)** उदयागत आयु के साथ **(दो सत्ता)** दो का सत्त्व होता है। **(हु अबंधे)** परभवसंबंधी आयु का बन्ध न होने तक **(एक्कं उदयागदं)** एक उदयागत आयु का ही **(सत्तं)** सत्त्व होता है।

एक्के एक्कं आऊ एक्कभवे बंधमेदि जोग्गपदे ।
अडवारं वा तत्थवि तिभागसेसेव सव्वत्थ ।।६४२।।

अन्वयार्थ - (एक्कभवे) एक भव में **(जोग्गपदे)** योग्य काल में **(एक्के)** एक जीव में **(एक्क आयु)** एक ही आयु **(बंधमेदि)** बन्ध को प्राप्त होती है। **(तत्थवि)** योग्यकाल में भी **(सव्वत्थ)** सर्वत्र **(तिभागसेसेव)** आयु का त्रिभाग शेष रहनेपर ही **(अडवारं)** अधिक से अधिक आठ बार ही बंधती है।

इगिवारं वज्जित्ता वड्ढी हाणी अवट्ठिदं होदि ।
ओवट्टणघादो पुण परिणामवसेण जीवाणं ।।६४३।।

अन्वयार्थ - आठ अपकर्षों में **(इगिवारं)** प्रथम बार को **(वज्जित्ता)** छोड़कर द्वितीयादि बार में **(वड्ढी)** वृद्धि **(हाणी)** हानि अथवा **(अवट्ठिदी)** अवस्थिति रहती है। **(जीवाणं)** जीवों के **(परिणामवसेण)** परिणामों के वश **(पुण ओवट्टणघादो)** पुनः अपवर्तनाघात भी होता है।

एवमबंधे बंधे उवरदबंधेवि होंति भंगा हु ।
एक्कस्सेक्कम्हि भवे एक्काउं पडि तये णियमा ।।६४४।।

अन्वयार्थ - (एवं) इसप्रकार **(अबंधे)** आयु का बन्ध न होनेपर **(बंधे)** बंध होने पर और **(उपरदबंधवि)** बंध होकर रुक जाने पर **(एक्कस्स)** एक जीव के **(एक्कम्हि भवे)** एक भव में **(एक्काउं पडि)** एक आयु की अपेक्षा **(णियमा)** नियम से **(तये भंगा)** तीन तीन भंग **(होंति)** होते हैं।

एक्काउस्स तिभंगा संभवआऊहि ताडिदे णाणा ।
जीवे इगि भवभंगा रूऊण गुणूणमसरिच्छे ।।६४५।।

अन्वयार्थ - (एक्काउस्स) एक-एक आयु के **(तिभंगा)** तीन-तीन भंगों को **(संभवआऊहि)** विवक्षित गति में जितनी आयु का बंध सम्भव है उस संख्या से **(ताडिदे)** गुणा करनेपर **(णाणा जीवे)** नाना जीवों की अपेक्षा **(इगिभवभंगा)** एक-एक भवसंबंधी भंग होते हैं। **(असरिच्छे)** असदृश अर्थात् अपुनरुक्त भंगों की विवक्षा होने पर **(रूऊणगुणूणं)** बध्यमान आयु की संख्यारूप गुणकार में एक घटाने पर जो प्रमाण रहे उतना पूर्वोक्त भंगों में से घटाने पर अपुनरुक्त भंग होते हैं।

विशेषार्थ - १) एक जीव के एक भव में अपनी गतिसम्बन्धी एक आयु का उदय होता है।

२) एक जीव के एक भव में परभव की आयु का बन्ध होनेपर भुज्यमान और बध्यमान ऐसी दो आयु का सत्त्व होता है। आयुबन्ध होने के पूर्व एक भुज्यमान आयु का ही सत्त्व होता है।

३) एक जीव एक भव में योग्यकालों में एक ही आयु को बांधता है। योग्यकाल में भी आठ बार ही बांधता है। सर्वत्र तीसरा भाग शेष रहनेपर ही बांधता है।

४) आठ अपकर्षों में प्रथम बार को छोड़कर द्वितीयादि बार में पहली बांधी हुई आयु की स्थिति में या तो वृद्धि होती है या हानि होती है या अवस्थिति रहती है। यदि वृद्धि होती है तो उस अधिक स्थिति की ही प्रधानता रहती है। यदि हानि होती है तो पहले बाँधी हुई अधिक स्थिति की ही प्रधानता रहती है।

५) आयुबन्ध करनेवाले जीवों के परिणामों के वश से बध्यमान आयु का अपवर्तन भी होता है। अपवर्तन का अर्थ है स्थिति घटना इसी से उसे अपवर्तनघात कहते हैं।

६) भुज्यमान आयु का भी अपवर्तन होता है उसे कदलीघात कहते हैं।

७) तीसरा भाग शेष रहनेपर आयुबन्ध की योग्यता होती है। उस काल में आयु बांधते ही हैं, ऐसा एकान्त नहीं है। बांधे अथवा न भी बांधे।

८) देव और नारकी के भी छह मास के त्रिभागों में आयुबन्ध की योग्यता है।

एक जीव के एक भव में एक आयु के नियम से तीन भंग होते हैं - १) अबंध २) बंध ३) उपरतबंध। अबंध का अर्थ आयु का बन्ध पहले नहीं हुआ और न वर्तमान में हो रहा है। बंध का अर्थ आयु का बन्ध हो रहा है। उपरतबन्ध का अर्थ है पूर्व में आयु का बन्ध हो चुका है किन्तु वर्तमान में नहीं हो रहा है। अबन्ध में एक भुज्यमान आयु की सत्ता रहती है तथा बन्ध और उपरतबन्ध में भुज्यमान और बध्यमान ऐसे दो आयु की सत्ता रहती है। तीन तीन भंगों को विवक्षित गति में जितनी आगामी आयु का बन्ध संभव है उनकी संख्यासे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतने नाना जीवों की अपेक्षा भंग होते हैं।

	नरकगति में आयु के भंग ६							**देवगति में आयु के भंग ६**					
	तिर्यंचायुसंबंधी			मनुष्यायुसंबंधी				तिर्यंचायुसंबंधी			मनुष्यायुसंबंधी		
बन्ध	०	ति	उप	०	म	उप	**बन्ध**	०	ति	उप	०	म	उप
उदय	न	न	न	न	न	न	**उदय**	दे	दे	दे	दे	दे	दे
सत्त्व	१	२	२	१	२	२	**सत्त्व**	१	२	२	१	२	२

नरक और देवगति में तिर्यंचायु और मनुष्यायु इन दो आयु का ही बंध होता है अत: २×३=६ भंग होते हैं।

	तिर्यंचगति में आयु के भंग १२											
	नरकायुसंबंधी			तिर्यंचायुसंबंधी			मनुष्यायुसंबंधी			देवायुसंबंधी		
बन्ध	०	न	उप	०	ति	उप	०	म	उप	०	दे	उप
उदय	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति
सत्त्व	१	२	२	१	१	१	१	२	२	१	२	२

	मनुष्यगति में आयु के भंग १२											
	नरकायुसंबंधी			तिर्यंचायुसंबंधी			मनुष्यायुसंबंधी			देवायुसंबंधी		
बन्ध	०	न	उप	०	ति	उप	०	म	उप	०	दे	उप
उदय	म	म	म	म	म	म	म	म	म	म	म	म
सत्त्व	१	२	२	१	२	२	१	१	१	१	२	२

मनुष्य और तिर्यंचगति में चारों आयु का बंध होता है अत: ४×३ =१२ भंग होते हैं। अपुनरुक्त भंगों की विवक्षा होनेपर बध्यमान आयु की संख्यारूप गुणकार में एक घटानेपर जो प्रमाण रहे उतना पूर्वोक्त भंगों में से घटाना।

अपुनरुक्त भंग = सर्वभंग - (गुणकार-१)

नरकगति देवगति के अपुनरुक्त भंग = ६ - (२-१) = ६-१ =५

मनुष्य और तिर्यंचगति के अपुनरुक्त भंग = १२ -(४-१) =१२-३=९

अबंध के ४ भंग समान हैं अत: उनमें से १ भंग ग्रहण कर ३ भंग पुनरुक्त होने से कम किये।

पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु होंति मिच्छम्मि।
णिरयाउबंधभंगेणूणा ते चेव बिदियगुणे ।।६४६।।

अन्वयार्थ - (भंगा) अपुनरुक्त भंग **(मिच्छम्मि)** मिथ्यात्व गुणस्थान में **(आउचउक्केसु)** चार आयुओं में क्रम से **(पण णव णव पण)** नरकगति के पाँच, तिर्यंच गति के नौ, मनुष्य गति के नौ, देव के पाँच **(होंति)** होते हैं। **(विदियगुणे)** सासादन गुणस्थान में **(णिरयाउबंधभंगेणूणा)** मनुष्यतिर्यंच में नरकायु के बन्धरूप भंग से न्यून **(ते चेव)** वे ही पूर्वोक्त भंग होते हैं अत: वहाँ क्रम से पाँच, आठ, आठ, पाँच भंग होते हैं।

सव्वाउबंधभंगेणूणा मिस्सम्मि अयदसुरणिरये ।
णरतिरिये तिरियाऊ तिण्हाउगबंधभंगूणा ।।६४७।।

अन्वयार्थ - (मिस्सम्मि) मिश्र गुणस्थान में **(सव्वाउबंधभंगेणूणा)** सर्व आयुबंध के भंगों से रहित पूर्वोक्त भंग हैं वे क्रम से तीन, पाँच, पाँच, तीन जानना। **(अयदसुरणिरये)** असंयत, देवनरकगति में **(तिरियाऊ बंधभंगूणा)** तिर्यंचायु के बंधरूप भंग से रहित चार-चार भंग होते हैं **(णरतिरिये)** असंयत मनुष्यतिर्यंच में **(तिण्हाउगबंधभंगूणा)** तीन आयु के बंधरूप भंगों से रहित छह-छह भंग होते हैं।

विशेषार्थ - किसी भी आयु का बन्ध होनेपर भी चौथा गुणस्थान हो सकता है इसलिए चौथे गुणस्थान में उपरतबन्ध का भंग चारों आयुसंबंधी १ अबंध का भंग और एक देवायु के बंध का भंग इसप्रकार मनुष्य तिर्यंच असंयत के ६ भंग होते हैं। देव नारक के असंयत के ४ भंग = उपरतबंध के २, अबंध १, मनुष्यायु बंध का १ भंग।

देसणरे तिरिये तिय तिय भंगा होंति छट्ठसत्तमगे ।
तियभंगा उवसमगे दो द्दो खवगेसु एक्केक्को ।।६४८।।

अन्वयार्थ - (देसणरे तिरिये) देशसंयत मनुष्य और तिर्यंच में **(तियतिय भंगा)** देवायु के अबन्ध, बन्ध और उपरतबन्ध की अपेक्षा तीन-तीन भंग होते हैं। **(छट्ठसत्तमगे)** छठे सातवें गुणस्थान में भी **(तियभंगा)** तीन-तीन भंग होते हैं। **(उवसमगे)** उपशमकों में **(दो-द्दो)** दो-दो भंग होते हैं **(खवगेसु)** क्षपकों में **(एक्केक्को)** एक-एक भंग है।

आगे गुणस्थानों में सब आयुबन्ध के भंगों का जोड़ कहते हैं -

अड छव्वीसं सोलस वीसं छत्तिगतिगं च चदुसु दुगं ।
असरिस भंगा तत्तो अजोगिअंतेसु एक्केक्को ।।६४९।।

अन्वयार्थ - (अडछव्वीसं) मिथ्यादृष्टि में अठाईस, सासादन में छब्बीस, **(सोलस)** मिश्र में सोलह **(वीसं)** असंयत में बीस **(छत्तिगतिगं)** देशसंयत में छह, प्रमत्त अप्रमत्त में तीन-तीन **(चदुसु)** उपशमश्रेणि के चार गुणस्थानों में **(दुगं)** दो-दो **(असरिसभंगा)** अपुनरुक्त भंग होते हैं **(तत्तो अजोगिअंतेसु)** उसके बाद क्षपक श्रेणि के गुणस्थानों में अयोगी पर्यन्त **(एक्केक्को)** एक-एक भंग होता है।

गुणस्थानों में आयुकर्म के अपुनरुक्त भंग

गुणस्थान	चतुर्गतिसम्बन्धी भंग				चारों गति के सर्वभंगों की संख्या	भंगों का स्पष्टीकरण
	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव		
मिथ्यात्व	५	९	९	५	२८	पूर्वोक्त
सासादन	५	८	८	५	२६	दूसरे गुणस्थान में नरकायु का बन्ध नहीं होता अत: मनुष्य व तिर्यंचगति में एक एक नरकायु बंधसंबंधी भंग कम हुआ।
मिश्र	३	५	५	३	१६	इस गुणस्थान में आयुबन्ध का अभाव है। अत: बन्ध सम्बन्धी भंग नहीं होते। देव नरकगति के २-२ भंग, व मनुष्य तिर्यंचके ४-४ भंग कम हुए।
असंयत	४	६	६	४	२०	यहाँ देव, नारकी, तिर्यंचायु का बंध नहीं करते, अत: १ भंग कम हुआ।मनुष्य,तिर्यंच देवायु छोड़कर अन्य आयु का बंध नहीं करते अत: ३-३ भंग कम हुए।
देशसंयत	०	३	३	०	६	तिर्यंच मनुष्यमें एक देवायु संबंधी ३-३ भंग पाये जाते हैं।
प्रमत्तसंयत	०	०	३	०	३	मनुष्यमें देवायुसंबंधी ३ भंग
अप्रमत्त	०	०	२	०	३	मनुष्यमें देवायुसंबंधी ३ भंग

गुणस्थान	चतुर्गतिसम्बन्धी भंग				चारों गति के सर्वभंगों की संख्या	भंगों का स्पष्टीकरण
	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव		
उपशमक अपूर्व	०	०	२	०	२	देवायु का अबन्ध व उपरतबन्ध की अपेक्षा
उपशमक अनि.	०	०	२	०	२	देवायु का अबन्ध व उपरतबन्ध की अपेक्षा
उपशमक सू.सां	०	०	२	०	२	देवायु का अबन्ध व उपरतबन्ध की अपेक्षा
उपशांतमोह	०	०	२	०	२	देवायु का अबन्ध व उपरतबन्ध की अपेक्षा
क्षपक अपूर्व	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
क्षपक अनि	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
क्षपकसू.सां	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
क्षीणमोह	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
सयोगकेवली	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
अयोगकेवली	०	०	१	०	१	अबन्ध की अपेक्षा १ भंग
					११६	

विशेषार्थ - देवायु को छोड़कर अन्य आयु का बन्ध होनेपर पाँचवें से लेकर आगे के गुणस्थानों में अन्य आयु की अपेक्षा उपरतबन्ध का भी भंग नहीं पाया जाता। देवायुसंबंधी ३ भंग होते हैं।

देवायु का बन्ध सातवें गुणस्थान तक ही होता है अत: आगे के गुणस्थानों में बन्ध की अपेक्षा भंग नहीं होते। देवायु का उपरतबंध व अबंध ऐसे २ भंग हैं। आयुबन्ध होनेपर क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ सकता अत: क्षपकश्रेणीपर केवल अबन्ध का एक भंग पाया जाता है।

बादालं पणुवीसं सोलस अधियं सयं च वेयणिये ।
गोदे आउम्मि हवे मिच्छादिअजोगिणो भंगा ।।६५०।।

अन्वयार्थ - (मिच्छादिअजोगिणो) मिथ्यादृष्टि से लेकर अयोगी पर्यन्त गुणस्थानों में **(वेयणिये)** वेदनीय के **(बादालं)** बियालीस **(गोदे)** गोत्रकर्म के **(पणुवीसं)** पच्चीस **(आउम्मि)** आयुकर्म के **(सोलस अहियं सयं)** एक सौ सोलह **(भंगा)** भंग **(हवे)** होते हैं।

वेयणिये अडभंगा गोदे सत्तेव होंति भंगा हु।
पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु विसरिच्छा ।।६५१।।

अन्वयार्थ - उन पूर्वोक्त भंगों में **(विसरिच्छा)** अपुनरुक्त मूलभंग **(वेयणिये)** वेदनीय में **(अडभंगा)** आठ भंग **(गोदे)** गोत्र में **(सत्तेव)** सात ही **(भंगा)** भंग हैं। **(आउचउक्केसु)** चारों आयुओं के क्रम से **(पण णव णव पण)** पाँच, नौ, नौ, पाँच **(भंगा)** भंग **(होंति)** होते हैं।

मिथ्यात्वादि सर्वगुणस्थानों में भंगों की संख्या	
कर्म	**सर्वभंगसंख्या**
वेदनीयकर्म	४२
गोत्रकर्म	२५
आयुकर्म	११६

अपुनरुक्त मूलभंग	
कर्म	**सर्वभंगसंख्या**
वेदनीयकर्म	८
गोत्रकर्म	७
आयुकर्म	५,९,९,५=२८

मोहस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु ।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ।।६५२।।

अन्वयार्थ - (मोहस्स) मोहनीय के **(बंधोदयसत्तट्ठाणाण)** बन्ध-उदय-सत्त्व स्थानों के **(सव्वभंगा)** सर्वभंग **(पत्तेउत्तं व)** जैसे पूर्व में पृथक् पृथक् कहे थे वैसे ही **(तियसंजोगेवि सव्वत्थ)** बन्ध- उदय सत्त्व के संयोगरूप त्रिसंयोग में भी **(हवे)** होते हैं।

अब गुणस्थान की अपेक्षा मोहनीयकर्म के बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान ७ गाथाओं से कहते हैं -

अट्ठसु एक्को बंधो उदया चदुतिदुसु चउसु चत्तारि ।
तिण्णि य कमसो सत्तं तिण्णेगदु चउसु पणगतियं ।।६५३।।

अन्वयार्थ - (अट्ठसु) मिथ्यात्वादि आठ गुणस्थानों में मोहनीय के **(एक्को बंधो)** एक-एक बंधस्थान हैं। **(उदया)** उदयस्थान **(चदु)** प्रथम गुणस्थान में चार **(दुसु)** दूसरे-तीसरे गुणस्थान में **(ति)** तीन-तीन **(चउसु)** चौथे से सातवें तक चार गुणस्थानों में **(चत्तारि)** चार-चार, आठवें गुणस्थान में **(तिण्णि)** तीन हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(कमसो)** क्रमसे **(तिण्णेगदु)** पहले में तीन, दूसरे में एक, तीसरे में दो **(चउसु)** चौथे से सातवें तक **(पणग)** पाँच-पाँच, आठवें में **(तियं)** तीन होते हैं।

अणियट्टी बंधतियं पण दुग एक्कारसुहुमउदयंसा ।
इगि चत्तारि य संते सत्तं तिण्णेव मोहस्स ।।६५४।।

अन्वयार्थ - (मोहस्स) मोहनीय के **(अणियट्टी)** अनिवृत्तिकरण में **(बंधतियं)** बंध-उदय सत्त्वस्थान क्रमसे **(पण दुग एक्कार)** पाँच, दो, ग्यारह हैं। **(सुहुमउदयंसा)** सूक्ष्मसांपराय में उदयस्थान और सत्त्वस्थान क्रमसे **(इगि चत्तारि)** एक और चार हैं। **(संते)** उपशान्त कषाय में **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(तिण्णेव)** तीन ही हैं।

बावीसं दसयचऊ अडवीसतियं च मिच्छबंधादी ।
इगिवीसं णवयतियं अट्ठवीसे च बिदियगुणे ।।६५५।।

अन्वयार्थ - (मिच्छबंधादी) मिथ्यादृष्टि में बन्धस्थान **(बावीसं)** एक बाईस का, उदय स्थान **(दसयचऊ)** दस आदि चार **(च)** और सत्त्वस्थान **(अडवीसतियं)** अठाईस आदि तीन हैं। **(बिदियगुणे)** दूसरे सासादन गुणस्थान में बंधस्थान **(इगिवीसं)** इक्कीस का, उदयस्थान **(णवयतियं)** नौ आदि तीन **(च)** और सत्त्वस्थान **(अट्ठवीसे)** अठाईस का है।

सत्तरसं णवयतियं अडचउवीसं पुणोवि सत्तरसं ।
णवचउ अडचउवीस य तिवीसतियमंसयं चउसु ।।६५६।।

अन्वयार्थ - मिश्र में बन्धस्थान **(सत्तरसं)** सतरह का, **(णवयतियं)** उदयस्थान नौ आदि तीन, **(अडचउवीसं)** सत्त्वस्थान अठाईस और चौबीस दो हैं। **(पुणोवि)** पुन: असंयत में **(सत्तरसं)** बन्धस्थान सतरह का **(णवचउ)** उदयस्थान नौ आदि चार, **(चउसु)** असंयत से अप्रमत्त तक चार गुणस्थानों में **(अंसयं)** सत्त्वस्थान **(अडचउवीस)** अठाईस, चौबीस **(य)** और **(तिवीसतियं)** तेईस, बाईस, इक्कीस ये तीन, इसतरह पाँच हैं।

तेरट्ठचऊ देसे पमदिदरे णव सगादिचत्तारि ।
तो णवगं छादितियं अडचउरिगिवीसयं च बंधतियं ।।६५७।।

अन्वयार्थ - **(देसे)** देशसंयत में **(तेर)** तेरह का बन्धस्थान है। **(अट्ठचऊ)** आठ आदि चार उदयस्थान हैं। **(पमदिदरे)** प्रमत्त-अप्रमत्त में **(णव)** नौ का बन्धस्थान है **(सगादिचत्तारि)** उदयस्थान सात आदि चार हैं। **(तो)** उसके पश्चात् अर्थात् अपूर्वकरण में **(णवगं)** बन्धस्थान नौ का है **(छादितियं)** उदयस्थान छह आदि तीन हैं और सत्त्वस्थान **(अडचउरिगिवीसयं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस ये तीन हैं। इसप्रकार **(बंधतियं)** बन्ध, उदय, सत्त्वस्थान जानना।

पंचादिपंचबंधो णवमगुणे दोण्णि एक्कमुदयो दु ।
अट्ठचदुरेक्कवीसं तेरादीअट्ठयं सत्तं ।।६५८।।

अन्वयार्थ - **(णवमगुणे)** नौवें गुणस्थान में **(पंचादि पंचबंधो)** बन्धस्थान पाँच आदि पाँच हैं **(उदयो दोण्णि एक्कं)** उदयस्थान दो और एक प्रकृतिरूप दो हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(अट्ठचदुरेक्कवीसं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस और **(तेरादीअट्ठयं)** तेरह आदि आठ, इसप्रकार ग्यारह हैं।

लोहेक्कुदओ सुहुमे अडचउरिगिवीसमेक्कयं सत्तं ।
अडचउरिगिवीसंसा संते मोहस्स गुणठाणे ।।६५९।।

अन्वयार्थ - **(सुहुमे)** सूक्ष्मसांपराय में **(लोहेक्कुदओ)** एक सूक्ष्मलोभ का ही उदय है। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(अडचउरिगिवीसमेक्कयं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस और क्षपक के एक प्रकृतिरूप इसप्रकार चार हैं। **(संते)** उपशांतकषाय में **(अंसा)** सत्त्वस्थान **(अडचउरिगि-वीस)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस ये तीन हैं। इसप्रकार **(गुणठाणे)**

गुणस्थानों में **(मोहस्स)** मोहनीय के बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान जानना।

गुणस्थान की अपेक्षा मोहनीय कर्म के बन्ध-उदय-सत्त्व के त्रिसंयोगी भंग

गुणस्थान	बंध संख्या	बंधस्थानगत प्रकृतिसंख्या	उदयस्थान की संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति सं.	सत्त्वस्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति संख्या
मिथ्यात्व	१	२२ प्रकृतिक	४	१०-९-८-७ प्र.	३	२८-२७-२६ प्र.
सासादन	१	२१ प्रकृतिक	३	९-८-७ प्र.	१	२८ प्र.
मिश्र	१	१७ प्रकृतिक	३	९-८-७ प्र.	२	२८-२४ प्र.
असंयत	१	१७ प्रकृतिक	४	९-८-७-६ प्र.	५	२८-२४-२३-२२-२१प्र.
देशसंयत	१	१३ प्रकृतिक	४	८-७-६-५ प्र.	५	२८-२४-२३-२२-२१प्र.
प्रमत्त	१	९ प्रकृतिक	४	७-६-५-४ प्र.	५	२८-२४-२३-२२-२१प्र.
अप्रमत्त	१	९ प्रकृतिक	४	७-६-५-४ प्र.	५	२८-२४-२३-२२-२१प्र.
उपअपूर्व.	१	९ प्रकृतिक	३	६-५-४ प्र.	३	२८-२४-२१ प्र.
क्षपकअपूर्व	१	९ प्रकृतिक	३	६-५-४ प्र.	१	२१ प्र.
उपअनिवृ.	५	५-४-३-२-१	२	२-१ प्र.	३	२८-२४-२१ प्र.
क्षपकअनि.	५	५-४-३-२-१	२	२-१ प्र.	९	२१-१३-१२-११ -५-४-३-२-१ प्र.
उप सू.सां.	०	०	१	१ सूक्ष्मलोभ	३	२८-२४-२१ प्र
क्षपकसू.सां.	०	०	१	१ सूक्ष्मलोभ	१	१ प्रकृतिक
उपशांतमोह	०	०	०	०	३	२८-२४-२१

देखो बंधस्थान गाथा ४६४, उदयस्थान गाथा ४७९, सत्त्वस्थान गाथा ५०८ से ५११

मोहनीय कर्म के बन्ध-उदय-सत्त्वरूप त्रिसंयोगी भंगों में जो विशेषता है उसे कहते हैं-

बंधपदे उदयंसा उदयट्ठाणेवि बंधसत्तं च ।
सत्ते बंधुदयपदं इगिअधिकरणे दुगाधेज्जं ।।६६०।।

अन्वयार्थ - **(बंधपदे)** बन्धस्थान में **(उदयंसा)** उदयस्थान, सत्त्वस्थान ये दो **(उदयट्ठाणेवि)** उदयस्थान में भी **(बंधसत्तं)** बन्धस्थान, सत्त्वस्थान ये दो **(च)** और **(सत्ते)** सत्त्वस्थान में **(बंधुदयपदं)** बन्धस्थान, उदयस्थान ये दो इस प्रकार **(इगिअधिकरणे)** एक अधिकरण में **(दुगाधेज्जं)** दो आधेय जानना।

विशेषार्थ - बन्धस्थान में उदयस्थान, सत्त्वस्थान ये दो, उदयस्थान में बन्धस्थान, सत्त्वस्थान ये दो और सत्त्वस्थान में बन्धस्थान, उदयस्थान ये दो, इसतरह एक अधिकरण में दो आधेय हैं।

प्रथम बन्धस्थान में उदय और सत्त्वस्थान कहते हैं -

बावीसयादिबंधेसुदयंसा चदुतितिगि चऊ पंच ।
तिसु इगि छद्दो अट्ठ य एक्कं पंचेव तिट्ठाणे ।।६६१।।

अन्वयार्थ - **(बावीसयादिबंधेसुदयंसा)** बाईस आदि बन्धस्थानों में उदय और सत्त्वस्थान कहते हैं **(चदुति)** बाईस के बन्धस्थान में उदयस्थान चार, सत्त्वस्थान तीन हैं। इक्कीस के बन्धस्थान में **(तिगि)** उदयस्थान तीन, सत्त्वस्थान एक है **(तिसु)** आगे तीन बन्धस्थानों में **(चऊ पंच)** उदयस्थान चार, सत्त्वस्थान पाँच हैं। आगे एक बन्धस्थान में **(इगि छद्)** उदयस्थान एक, सत्त्वस्थान छह हैं। आगे एक बंधस्थान में **(दो अट्ठ)** उदयस्थान दो, सत्त्वस्थान आठ हैं **(तिट्ठाणे)** तीन बंधस्थानों में **(एक्कं पंचेव)** उदयस्थान एक, सत्त्वस्थान पाँच ही हैं।

दसयचऊ पढमतियं णवतियमडवीसयं णवादिचऊ ।
अडचउतिदुइगिवीसं अडचउ पुव्वंव सत्तं तु ।।६६२।।

अन्वयार्थ - बाईस के बंधस्थान में **(दसयचऊ)** उदयस्थान दस आदि चार हैं सत्त्वस्थान **(पढमतियं)** प्रथम तीन २८,२७,२६ हैं। इक्कीस के बंधस्थान में **(णवतियं)**

उदयस्थान नौ आदि तीन हैं और सत्त्वस्थान **(अडवीसयं)** एक अठाईस का है। सतरह के बन्धस्थान में **(णवादिचऊ)** उदयस्थान नौ आदि चार हैं और सत्त्वस्थान **(अडचउतिदुइगिवीसं)** अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीस ये पाँच हैं। तेरह के बंधस्थान में **(अडचउ)** उदयस्थान आठ आदि चार हैं **(सत्तं तु)** किंतु सत्त्वस्थान **(पुव्वं व)** पूर्वोक्त पाँच हैं।

सगचउ पुव्वं वंसा दुगमडचउरेक्कवीस तेरतियं ।
दुगमेक्कं च य सत्तं पुव्वं वा अत्थि पणगदुगं ।।६६३।।

अन्वयार्थ - नौ के बन्धस्थान में **(सगचउ)** उदयस्थान सात आदि चार हैं। **(पुव्वं वंसा)** सत्त्वस्थान पूर्व के समान ही पाँच हैं। पाँच के बन्धस्थान में **(दुगं)** उदयस्थान दो का है **(अडचउरेक्कवीस तेरतियं)** सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, इक्कीस और क्षपक के तेरह आदि तीन इसप्रकार छह हैं। चार के बन्धस्थान में **(एक्कं च य दुगं)** दो, एक प्रकृतिरूप दो उदयस्थान और **(सत्तं पुव्वं वा)** सत्त्वस्थान पूर्वोक्त छह हैं और **(पणगदुगं)** पाँच, चार ये दो इस प्रकार आठ हैं।

तिसु एक्केक्कं उदओ अडचउरिगिवीससत्तसंजुत्तं ।
चदु तिदयं तिदयदुगं दो एक्कं मोहणीयस्स ।।६६४।।

अन्वयार्थ - (मोहणीयस्स) मोहनीय के **(तिसु)** तीन, दो और एक प्रकृतिरूप तीन बन्धस्थानों में **(एक्केक्कं उदओ)** एक-एक प्रकृति का ही उदय है। किन्तु सत्त्वस्थान **(अडचउरिगिवीससत्तसंजुत्तं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस के सत्त्व सहित, चार के बन्धस्थान में **(चदु तिदयं)** चार और तीन का सत्त्वस्थान, दो के बन्धस्थान में **(तिदयदुगं)** तीन और दो का सत्त्वस्थान, एक के बन्धस्थान में **(दो एक्कं)** दो और एक का सत्त्वस्थान इस प्रकार प्रत्येक में पाँच-पाँच सत्त्वस्थान हैं।

बन्धस्थान में उदयस्थान और सत्त्वस्थान

बंध क्र.	बंधस्थान गतप्रकृति	उदयस्थान की संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति सं.	सत्त्व स्थानसं.	सत्त्वस्थानगत प्रकृति संख्या
१	२२	४	१०-९-८-७	३	२८-२७-२६
२	२१	३	९-८-७	१	२८
३	१७	४	९-८-७-६	५	२८-२४-२३-२२-२१
४	१३	४	८-७-६-५	५	२८-२४-२३-२२-२१
५	९	४	७-६-५-४	५	२८-२४-२३-२२-२१
६	५	१	२ प्रकृतिक	६	२८-२४-२१-१३-१२-११
७	४	२	२-१	८	२८-२४-२१-१३-१२-११-५-४
८	३	१	१	५	२८-२४-२१-४-३
९	२	१	१	५	२८-२४-२१-३-२
१०	१	१	१	५	२८-२४-२१-२-१

विशेषार्थ - नववें गुणस्थान में पाँच आदि बन्धस्थानों में उपशम श्रेणि की अपेक्षा से सर्वत्र २८-२४-२१ प्रकृति की सत्ता पायी जाती है। क्षपक श्रेणिकी विवक्षा से १३, १२, ११,५,४,३,२,१ सत्त्व पाया जाता है। ४ के बन्धस्थान में ५ का सत्त्व, ३ के बन्ध स्थान में ४ का सत्त्व, २ के बन्धस्थान में ३ का सत्त्व, १ के बन्धस्थान में २ का सत्त्व नवक समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली की अपेक्षा से कहा है।

अब उदयस्थान को अधिकरण मानकर बन्धस्थान और सत्त्वस्थान के आधेयरूप भंगों का कथन करते हैं -

दसयादिसु बंधंसा इगितियतिय छक्क चारिसत्तं च ।
पण पण तिय पण दुग पणमिगितिग दुग छच्चऊ णवयं ।६६५।

अन्वयार्थ - **(दसयादिसु)** दस आदि प्रकृतिरूप उदयस्थानों में क्रम से **(बंधंसा)** बन्धस्थान और सत्त्वस्थान **(इगितिय)** एक, तीन **(तिय छक्क)** तीन छह **(चारिसत्तं)**

चार-सात **(पण पण)** पाँच पाँच **(तियपण)** तीन पाँच **(दुग पण)** दो पाँच **(इगितिग)** एक तीन **(दुग छच्चऊ णवयं)** दो-छह **(च)** और चार नौ होते हैं।

पढमं पढमतिचउपण सत्तरतिगचदुसु बंधयं कमसो ।
पढमति छस्सगमडचउतिदुइगि वीसस्सयं दोसु ।।६६६।।

अन्वयार्थ - **(पढमं)** दस के उदयस्थान में प्रथम बन्धस्थान २२ का **(चदुसु)** नौ, आठ, सात, छह प्रकृतिरूप इन चार उदयस्थानों में **(कमसो)** क्रम से **(पढमतिचउपण सत्तर तिग)** प्रथम तीन २२, २१, १७ प्रकृतिरूप, प्रथमादि चार २२,२१,१७,१३ प्रथमादि पाँच २२,२१,१७,१३,९ और सतरह आदि तीन १७,१३,९ **(बंधयं)** बन्धस्थान हैं। **(पढमति छस्सगमडचउतिदुइगि वीसस्सयं)** १० के उदयस्थान में सत्त्वस्थान प्रथमादि तीन २८,२७,२६ हैं। दूसरे उदयस्थान में प्रथम छह अर्थात् २८,२७,२६,२४,२३,२२ ये सत्त्वस्थान हैं। आठ के उदयस्थान में प्रथम सात अर्थात् २८,२७,२६,२४,२३,२२ और २१ ये सत्त्वस्थान हैं **(दोसु)** सात और छह के उदयस्थान में अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस और इक्कीस ये पाँच सत्त्वस्थान हैं।

तेरदु पुव्वंवंसा णवमडचउरेक्कवीससत्तमदो ।
पणदुगमडचउरेक्कावीसं तेरसतियं सत्तं ।।६६७।।

अन्वयार्थ - पाँच प्रकृतिक उदयस्थान में **(तेरदु)** तेरह और नौ प्रकृतिरूप दो बन्धस्थान और **(पुव्वंवंसा)** पूर्व के समान सत्त्वस्थान पाँच हैं, चार प्रकृतिक उदयस्थान में **(णवं)** नौ प्रकृतिक एक ही बन्धस्थान और **(अडचउरेक्कवीससत्तं)** अठाईस, चौबीसऔर इक्कीस ये तीन सत्त्वस्थान हैं। **(अदो)** इसके आगे दो प्रकृतिक उदयस्थान में **(पणदुगं)** पाँच और चार प्रकृतिक दो बन्धस्थान और **(अडचउरेक्कावीसं तेरसतियं सत्तं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस, तेरह, बारह, ग्यारह ये ६ सत्त्वस्थान हैं।

चरिमे चदुतिदुरेक्कं अट्ठ य चदुरेक्कसंजुदं वीसं ।
एक्कारादी सव्वं कमेण ते मोहणीयस्स ।।६६८।।

अन्वयार्थ -(चरिमे) अंतिम एक प्रकृतिक उदयस्थान में **(चदुतिदुरेक्कं)** चार,

तीन, दो और एक प्रकृतिक चार बन्धस्थान हैं और **(अट्ठ य चदुरेक्कसंजुदं वीसं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस तथा **(एक्कारादी सव्वं)** ग्यारह आदि सर्व ११,५,४,३,२ और १ प्रकृतिरूप ये ९ सत्त्वस्थान हैं **(मोहणीयस्स)** इस प्रकार मोहनीय के **(कमेण)** क्रम से **(ते)** बन्धस्थान और सत्त्वस्थान जानना।

उदयस्थान में बन्धस्थान और सत्त्वस्थान

उदयस्थान की प्रकृति	१०	९	८	७	६	५	४	२	१
बन्धस्थान की संख्या	१	३	४	५	३	२	१	२	४
सत्त्वस्थान की संख्या	३	६	७	५	५	५	३	६	९

विशेषार्थ - दस प्रकृति का उदय प्रथम गुणस्थान में ही होता है अत: जब १० प्रकृति का उदय रहता है तब २२ प्रकृति का ही बन्ध होगा, सत्त्व २८, २७, २६ में से कोई एक पाया जायेगा। नौ प्रकृति का उदय पहले से चौथे गुणस्थानतक होता है अत: २२, २१ अथवा १७ में से एक जीव के कोई एक बन्धस्थान होगा और २८-२७-२६-२४-२३-२२ इन सत्त्वस्थानों में से कोई एक सत्त्वस्थान होगा। नाना जीवों की अपेक्षा ९ प्रकृतिक उदयस्थान में ३ बन्धस्थान और ६ सत्त्वस्थान होते हैं। ऐसा ही सब जगह अर्थ समझना।

९ के उदयस्थान में २१ प्रकृति का सत्त्वस्थान नहीं है क्योंकि चौथे गुणस्थान में ९ प्रकृति का उदय वेदक सम्यग्दृष्टि को होता है और २१ प्रकृति का सत्त्व क्षायिक सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा से है।

८ प्रकृति का उदय पहले से पाँचवे गुणस्थान तक है अत: ८ प्रकृतिक उदयस्थान में बन्धस्थान २२-२१-१७ और १३ ये चार पाये जाते हैं और सत्त्वस्थान २८,२७,२६,२४,२३,२२ और २१ ये सात पाये जाते हैं।

७ प्रकृति का उदय पहले से सातवें गुणस्थानतक है अत: ७ प्रकृतिक उदयस्थान में २२,२१,१७,१३ और ९ ये पाँच बन्धस्थान और २८,२४,२३,२२ और २१ प्रकृतिक ये पाँच सत्त्वस्थान हैं।

पहले गुणस्थान में ७ प्रकृति का उदयस्थान अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके मिथ्यात्व में आये हुए जीव को एक आवली कालतक ही पाया जाता है और उस जीव के नियम से २८ प्रकृतियों का ही सत्त्व पाया जाता है अत: २७ और २६ का सत्त्वस्थान ७ प्रकृतिक उदयस्थान में नहीं बताया। मिथ्यात्व में आनेपर पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग

व्यतीत होनेपर ही २७ और २६ का सत्त्व पाया जाता है अथवा अनादि मिथ्यादृष्टि को २६ का सत्त्व होता है। ६ प्रकृति का उदय चौथे से आठवें गुणस्थानतक होता है अतः उसमें १७,१३,९ ये ३ बन्धस्थान और २८, २४,२३,२२,२१ ये पाँच सत्त्वस्थान हैं। ५ प्रकृति का उदय पाँचवे से आठवें गुणस्थान तक है अतः ५ प्रकृतिक उदयस्थान में १३-९ ये दो बन्धस्थान और २८,२४,२३,२२,२१ ये पाँच सत्त्वस्थान हैं। ४ प्रकृति का उदय छठे से आठवें गुणस्थान तक है अतः उसमें ९ प्रकृतिक एक बन्धस्थान और २८-२४-२१ ये तीन सत्त्वस्थान हैं।

४ प्रकृति का उदय क्षायिक सम्यग्दृष्टि और प्रथम व द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा है अतः इसमें २३ और २२ का सत्त्वस्थान नहीं पाया जाता । २३ और २२ का सत्त्वस्थान वेदक सम्यग्दृष्टि को क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करते समय अनिवृत्तिकरण परिणाम में ही होता है।

२ प्रकृति का उदय नववें गुणस्थान में सवेद भागतक पाया जाता है उसमें ५ व ४ प्रकृतिक दो बन्धस्थान और २८-२४-२१-१३-१२-११ ये छह सत्त्वस्थान हैं।

स्त्रीवेद और नपुंसकवेद से श्रेणी चढ़नेवाले के सवेद के द्विचरमसमय में पुंवेद की बन्धव्युच्छित्ति होती है अतः २ प्रकृतिक उदयस्थान में ५ व ४ प्रकृतिक दो बन्धस्थान पाये जाते हैं।

१ प्रकृतिक उदयस्थान में ४-३-२ व १ प्रकृतिक चार बन्धस्थान व २८-२४-२१-११-५-४-३-२ और १ प्रकृतिक ये नौ सत्त्वस्थान हैं।

नपुंसकवेद और स्त्रीवेद के उदय से श्रेणी चढ़नेवाले के १ के उदयस्थान में ११ प्रकृतिक सत्त्वस्थान पाया जाता है। पुरुषवेद के उदय से श्रेणी चढ़नेवाले के एक के उदयस्थान में ४ के बन्धस्थान में ५ प्रकृतिक सत्त्वस्थान है।

उदयस्थान में बन्धस्थान और सत्त्वस्थान

अधिकरण			आधेय		
बंध क्र.	उदयस्थान गतप्रकृति	बंधस्थान की संख्या	बंधस्थानगत प्रकृति सं.	सत्त्व स्थान सं.	सत्त्वस्थानगत प्रकृति संख्या
१	१०	१	२२	३	२८-२७-२६
२	९	३	२२-२१-१७	६	२८-२७-२६-२४-२३-२२
३	८	४	२२-२१-१७-१३	७	२८-२७-२६-२४-२३-२२-२१
४	७	५	२२,२१,१७,१३,९	५	२८-२४-२३-२२-२१
५	६	३	१७-१३-९	५	२८-२४-२३-२२-२१
६	५	२	१३-९	५	२८-२४-२३-२२-२१
७	४	१	९	३	२८-२४-२१
८	२	२	५,४	६	२८-२४-२१-१३-१२-११
९	१	४	४-३-२-१	९	२८-२४-२१-११-५-४-३-२-१

आगे सत्त्वस्थान को अधिकरण और बन्ध-उदय को आधेय बनकर कथन करते हैं -

सत्तपदे बंधुदया दस णव इगिति दुसु अडड तिपण दुसु ।
अडसगदुगि दुसु बिबिगिगि दुगि तिसु इगिसुण्णमेक्कं च।६६९

अन्वयार्थ - (सत्तपदे) सत्त्वस्थानों में **(बंधुदया)** बंधस्थान और उदयस्थान क्रम से **(दस णव)** प्रथम सत्त्वस्थान में दस, नौ, **(दुसु)** आगे दो सत्त्वस्थानों में **(इगिति)** एक, तीन,**(दुसु)** आगे दो सत्त्वस्थानों में **(अडड)** आठ आठ **(तिपण)** तीन पाँच **(अडसग)** एक सत्त्वस्थान में आठ-सात दो सत्त्वस्थानों में **(दुगि)** दो-एक **(बिबि)** एक सत्त्वस्थान में दो-दो **(इगिगि)** एक में एक-एक **(तिसु)** आगे तीन सत्त्वस्थानों में **(दुगि)** दो एक **(इगिसुण्णं)** एक सत्त्वस्थान में एक या शून्य और **(एक्कं च)** एक हैं।

सव्वं सयलं पढमं दसतियदसु सत्तरादियं सव्वं ।
णवयप्पहुडीसयलं सत्तरति णवादिपण दुपदे ।।६७०।।

अन्वयार्थ - मोहनीय के अठाईस के सत्त्वस्थान में बन्धस्थान **(सव्वं)** बाईस आदि सब हैं और उदयस्थान **(सयलं)** दसादि सर्व हैं। **(दुसु)** सत्ताईस और छब्बीस इन दो के सत्त्वस्थानों में बन्धस्थान **(पढमं)** प्रथम अर्थात् बाईस का और उदयस्थान **(दसतिय)** दस आदि तीन हैं (१०,९,८)। चौबीस के सत्त्वस्थान में बन्धस्थान **(सत्तरादियं सव्वं)** सतरह आदि सर्व हैं। उदयस्थान **(णवयप्पहुडीसयलं)** नौ आदि सर्व हैं। **(दुपदे)** तेईस और बाईस के इन दो सत्त्वस्थानों में बन्धस्थान **(सत्तरति)** सतरह आदि तीन अर्थात् (१७,१३,९) उदयस्थान **(णवादिपण)** नौ आदि पाँच हैं।

सत्तरसादि अडादी सव्वं पण चारि दोण्णि दुसु तत्तो ।
पंचचउक्कदुगेक्कं चदुरिगि चदु तिण्णि एक्कं च ।।६७१।।

अन्वयार्थ - इक्कीस के सत्त्वस्थान में बन्धस्थान **(सत्तरसादि सव्वं)** सतरह आदि सब हैं। उदयस्थान **(अडादी सव्वं)** आठ आदि सब हैं। **(दुसु)** तेरह और बारह इन दो सत्त्वस्थानों में बन्धस्थान **(पणचारि)** पाँच और चार प्रकृतिक हैं। उदयस्थान **(दोण्णि)** दो का है। **(तत्तो)** उसके आगे ग्यारह के सत्त्वस्थान में बन्धस्थान **(पंचचऊक्क)** पाँच और चार का उदयस्थान **(दुगेक्कं)** दो और एक का है। पाँच के सत्त्वस्थान में **(चदुरिगि)** बन्ध चार का और उदय एक का है। चार के सत्त्वस्थान में **(चदुतिण्णि)** बन्ध चार और तीन का **(च)** और **(एक्कं)** उदय एक का ही है।

तत्तो तियदुगमेक्कं दुप्पयडी एक्कमेक्कठाणं च ।
इगिणभबंधो चरिमे एक्कुदओ मोहणीयस्स ।।६७२।।

अन्वयार्थ- (तत्तो) उसके आगे तीन के सत्त्वस्थान में बन्ध **(तियदुगं)** तीन और दो का, उदय **(एक्कं)** एक का ही है। दो के सत्त्वस्थान में बन्ध **(दुप्पयडी एक्कं)** दो प्रकृति का और एक का तथा उदयस्थान **(एक्कट्ठाणं)** एक प्रकृति का है **(मोहणीयस्स)** मोहनीय के **(चरिमे)** अंतिम एक के सत्त्वस्थान में **(इगिणभबंधो)** एक और शून्य का बन्ध और **(एक्कुदओ)** उदय एक का ही है।

सत्त्व अधिकरण और बन्ध उदय आधेय

अधिकरण	आधेय			
सत्त्वस्थान संख्या	**बंधस्थान संख्या**	**बंधस्थानगत प्रकृति संख्या**	**उदयस्थान संख्या**	**उदयस्थान गत प्रकृति संख्या**
२८	१०	२२-२१-१७-१३-९-५-४-३-२-१	९	१०-९-८-७-६-५-४-२-१
२७	१	२२	३	१०-९-८
२६	१	२२	३	१०-९-८
२४	८	१७-१३-९-५-४-३-२-१	८	९-८-७-६-५-४-२-१
२३	३	१७-१३-९	५	९-८-७-६-५
२२	३	१७-१३-९	५	९-८-७-६-५
२१	८	१७-१३-९-५-४-३-२-१	७	८-७-६-५-४-२-१
१३	२	५-४	१	२
१२	२	५-४ प्रकृतिक	१	२ प्रकृतिक
११	२	५-४ प्रकृतिक	२	२-१ प्रकृतिक
५	१	४ प्रकृतिक	१	१ प्रकृतिक
४	२	४-३ प्रकृतिक	१	१ प्रकृतिक
३	२	३-२ प्रकृतिक	१	१ प्रकृतिक
२	२	२-१ प्रकृतिक	१	१ प्रकृतिक
१	१।०	१।० प्रकृतिक	१	१ प्रकृतिक

विशेषार्थ - अठाईस का सत्त्व पहले गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थानतक है अत: अठाईस के सत्त्वस्थान में सब बन्धस्थान और सब उदयस्थान पाये जाते हैं।

सत्ताईस और छब्बीस का सत्त्व प्रथम गुणस्थान में ही होता है किन्तु इनमें ७ प्रकृतिक उदयस्थान नहीं होता। ७ प्रकृति का उदय प्रथम गुणस्थान में २८ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में ही पाया जाता है। इसीप्रकार चौबीस आदि सत्त्वस्थानों में बन्धस्थान और

उदयस्थानों का विचार करना चाहिए।

नपुंसकवेदसहित श्रेणी चढ़नेवाले जीव के १३ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में ही वेद की बन्धव्युच्छित्ति होकर ४ प्रकृतिक बन्धस्थान का प्रारम्भ होता है। उसीप्रकार स्त्रीवेदसहित श्रेणी चढ़नेवाले जीव के १२ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में वेद की बन्ध व्युच्छित्ति होकर ४ प्रकृतिक बन्धस्थान शुरु होता है। पुरुषवेदसहित श्रेणी चढ़नेवाले के ५ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में ४ प्रकृतिक बन्धस्थान होता है।

४ प्रकृति का बन्ध होते हुए ४ प्रकृति की सत्ता रहती है और क्रोध की बन्धव्युच्छित्ति होनेपर ३ प्रकृति का बन्ध प्रारंभ होता है तब भी क्रोध के एक समय कम २ आवलीमात्र नवकसमयप्रबद्ध अवशेष रहते हैं अत: ४ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में ४ और ३ प्रकृतिक बन्धस्थान कहे हैं। इसीप्रकार ३ और २ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में समझना।

एक प्रकृति का सत्त्व अनिवृत्तिकरण के अन्तिम भाग में और दसवें गुणस्थान में पाया जाता है अत: उसमें एक प्रकृतिक बन्धस्थान और उदयस्थान है। दसवें गुणस्थान में बन्धस्थान का अभाव है अत: शून्य लिखा है।

बंधुदये सत्तपदं बंधंसे णेयमुदयठाणं च ।
उदयंसे बंधपदं दुट्ठाणाधारमेक्कमाधेज्जं ।।६७३।।

अन्वयार्थ - मोहनीय के **(बंधुदये)** बन्ध-उदयस्थानों में **(सत्तपदं)** सत्त्वस्थान, **(बंधंसे)** बन्ध सत्त्वस्थानों में **(उदयठाणं)** उदयस्थान **(च)** और **(उदयंसे)** उदय सत्त्वस्थानों में **(बंधपदं)** बंधस्थान इस प्रकार **(दुट्ठाणाधारं)** दो स्थानों को आधार तथा **(एक्कमाधेज्जं)** एक स्थान को आधेय बनाकर तीन प्रकार से **(णेयं)** जानना चाहिए।

विशेषार्थ - बन्ध उदयस्थानों में सत्त्वस्थान, बन्धसत्त्वस्थानों में उदयस्थान और उदय-सत्त्वस्थानों में बन्धस्थान इसप्रकार दो स्थानों को आधार तथा एक स्थान को आधेय बनाकर तीन प्रकार से भंग करना चाहिये।

बावीसेण णिरुद्धे दसचउरुदये दसादिठाणतिये ।
अट्ठावीसतिसत्तं सत्तुदये अट्ठवीसेव ।।६७४।।

अन्वयार्थ - (बावीसेण णिरुद्धे) बाईस प्रकृतिक बन्धसहित जीव के

(दसचउरुदये) दस आदि चार उदयस्थान हैं उनमें **(दसादिठाणतिये)** दस आदि तीन उदयस्थानों में **(अट्ठावीसति सत्तं)** अठाईस, सत्ताईस और छब्बीस ये तीन सत्त्वस्थान हैं **(सत्तुदये)** सात के उदय में **(अट्ठवीसेव)** अठाईस का ही सत्त्व है।

इगिवीसेण णिरुद्धे णवयतिये सत्तमट्ठवीसेव ।
सत्तरसे णवचदुरे अडचउतिदुगेक्कवीसंसा ।।६७५।।

अन्वयार्थ - (इगिवीसेण णिरुद्धे) इक्कीस के बन्धसहित जीव के **(णवयतिये)** नौ, आठ, सात प्रकृति का तीन उदयस्थानों में **(सत्तमट्ठवीसमेव)** अठाईस प्रकृतिक एक ही सत्त्वस्थान है **(सत्तरसे)** सतरह के बन्धस्थान सहित जीव के **(णवचदुरे)** नौ आदि चार स्थानों के उदय होने पर **(अडचउतिदुगेक्कवीसंसा)** अठाईस, चौवीस, तेईस, बाईस और इक्कीस प्रकृतिरूप पाँच सत्त्वस्थान हैं।

इगिवीसं णहि पढमे चरिमे तिदुवीसयं ण तेरणवे ।
अडचउ सगचउरुदये सत्तं सत्तरसयं व हवे ।।६७६।।

अन्वयार्थ - किन्तु **(पढमे)** प्रथम नौ के उदयस्थान में **(इगिवीसं)** इक्कीस का सत्त्व **(णहि)** नहीं होता। **(चरिमे)** अंतिम छह के उदय में **(तिदुवीसयं)** तेईस और बाईस का सत्त्व **(ण)** नहीं है **(तेरणवे)** तेरह और नौ के बन्धस्थान में क्रम से **(अडचउ सगचउरुदये)** आठ आदि चार और सात आदि चार उदयस्थानों में **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(सत्तरसयंव)** सतरह के बन्धस्थान के समान **(हवे)** होते हैं।

णवरि य अपुव्वव णवगे छादितियुदयेवि णत्थि तिदुवीसा।
पणबंधे दोउदये अडचउरिगिवीसतेरसादितियं ।।६७७।।

अन्वयार्थ - (णवरि य) किन्तु विशेषता यह है कि **(अपुव्वव णवगे)** अपूर्वकरण में नौ के बन्धसहित **(छादितियुदयेवि)** छह आदि तीनों उदयस्थानों में भी **(तिदुवीसा)** तेईस और बाईस का सत्त्व **(णत्थि)** नहीं है। **(पणबंधे)** पाँच के बन्धसहित **(दोउदये)** दो के उदय में सत्त्व **(अडचउरिगिवीसतेरसादितियं)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस और तेरह

आदि तीन इसप्रकार छह प्रकार का है।

चदुबंधे दोउदये सत्तं पुव्वंव तेण एक्कुदये ।
अडचउरेक्कावीसा एयारतिगं च सत्ताणि ।।६७८।।

अन्वयार्थ - (चदुबन्धे) चार के बन्ध के साथ **(दोउदये)** दो के उदय में **(सत्तं)** सत्त्व **(पुव्वं व)** पूर्व के समान अर्थात् पाँच के बन्ध के समान जानना। चार के बन्ध के साथ **(एक्कुदये)** एक के उदय में **(अडचउरेक्कावीसा एयारतिगं च)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस और ग्यारह आदि तीन **(सत्ताणि)** इस प्रकार छह सत्त्वस्थान जानना।

तिदुइगिबंधेक्कुदये चदुतियठाणेण तिदुगठाणेण ।
दुगिठाणेण य सहिदा अडचउरिगिवीसया सत्ता ।।६७९।।

अन्वयार्थ - (तिदुइगिबंधेक्कुदये) तीन, दो, एक के बन्ध के साथ एक के उदय में क्रम से **(चदुतियठाणेण)** चार और तीन के सत्त्वस्थान से **(तिदुगठाणेण)** तीन और दो के सत्त्वस्थान से **(य)** और **(दुगिठाणेण)** दो और एक के सत्त्वस्थान से **(सहिदा)** सहित **(अडचउरिगिवीसया सत्ता)** अठाईस, चौबीस, इक्कीस का सत्त्व पाया जाता है, इसप्रकार प्रत्येक में पाँच-पाँच सत्त्वस्थान हैं।

विशेषार्थ - इतने का बन्ध और उदय जिसके होता है उसके इतने का सत्त्व पाया जाता है ऐसा अर्थ समझना। जैसे बाईस का बन्ध और दस का उदय होता है उसके २८, २७ या २६ इन तीन सत्त्वस्थानों में से कोई एक सत्त्वस्थान होगा। नाना जीवों की अपेक्षा २२ के बन्ध में और दस के उदय में उपर्युक्त तीन सत्त्वस्थान हैं। इसीप्रकार आगे भी समझना।

बन्ध और उदयस्थान अधिकरण तथा सत्त्वस्थान आधेय

अधिकरण		आधेय	
बंधस्थान संख्या	**उदयस्थान संख्या**	**सत्त्वस्थान की संख्या**	**सत्त्वस्थान गत प्रकृति संख्या**
२२	१०-९-८	३	२८-२७-२६ प्रकृतिक
२२	७	१	२८ प्रकृतिक
२१	९-८-७	१	२८ प्रकृतिक

अधिकरण		आधेय	
बंधस्थान	उदयस्थान प्रकृति	सत्त्वस्थान की संख्या	सत्त्वस्थान गत संख्या
१७	९	४	२८-२४-२३-२२ प्रकृतिक
१७	८-७	५	२८-२४-२३-२२-२१
१७	६	३	२८-२४-२१
१३	८	४	२८-२४-२३-२२
१३	७-६	५	२८-२४-२३-२२-२१
१३	५	३	२८-२४-२१
९	७	४	२८-२४-२३-२२
९	६-५	५	२८-२४-२३-२२-२१
९	४	३	२८-२४-२१
९	६-५-४	३	२८-२४-२१
५	२	६	२८-२४-२१-१३-१२-११
४	२	६	२८-२४-२१-१३-१२-११
४	१	६	२८-२४-२१-११-५-४
३	१	५	२८-२४-२१-४-३
२	१	५	२८-२४-२१-३-२
१	१	५	२८-२४-२१-२-१

विशेषार्थ - २२ के बन्धसहित ७ प्रकृतिक उदयस्थान में २८ प्रकृतिक एक ही सत्त्वस्थान है, २७ व २६ प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान नहीं है क्योंकि असंयतादि चार गुणस्थानों में से किसी एक में अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन करके मिथ्यात्व के उदय से मिथ्यादृष्टि होकर वहाँ प्रथम समय में २२ प्रकृति का बन्ध किया तब अनन्तानुबंधी का एक समयप्रबद्ध बाँधा उसकी उदीरणा अचलावली कालपर्यन्त नहीं हो सकती है। वह जीव अनन्तानुबन्धी के उदयरहित है उसके ९-८ या ७ प्रकृति का उदय होता है। उस जीव के वेदक योग्य काल है, उपशम काल नहीं है अत: उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उद्वेलना नहीं हुई है, इसलिए उसके २८ का ही सत्त्व पाया जाता है।

चारों गति के सासादन में इक्कीस का बन्धस्थान है उसमें उदयस्थान ९-८-७ तीन

हैं। उनमें अठाईस का ही सत्त्व है २७, २६ का नहीं है क्योंकि उपशम सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर सासादन होता है। उसकी स्थिति एक समय से लगाकर एक एक समय बढ़ते हुए छह आवली पर्यन्त होती है और सम्यक्त्व मोहनीय मिश्र की उद्वेलना उपशम काल में ही होती है, वह दूसरे गुणस्थान में संभव नहीं है। यहाँ २४ का भी सत्त्व सम्भव नहीं है क्योंकि अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन वेदकसम्यग्दृष्टि के ही होता है और वेदक सम्यग्दृष्टि सासादन में आता नहीं है। इसीप्रकार आगे के बन्ध व उदयस्थान में अर्थ जान लेना।

विशेष नियम - वेदकसम्यक्त्व के उदयस्थानों में २८,२४,२३,२२ का सत्त्व संभव है और इक्कीस का सत्त्व क्षायिक सम्यग्दृष्टि के ही होता है अत: वह संभव नहीं है। उपशम सम्यक्त्व में २८ या २४ का सत्त्व है इतना विशेष सर्वत्र जानना।

तेरह के बन्धसहित देशसंयत तिर्यंच या मनुष्य के उपशम या वेदक सम्यक्त्व होता है। देशसंयत में क्षायिक सम्यक्त्व मनुष्य के ही होता है। क्षायिक सम्यक्त्व भोगभूमिज तिर्यंच के भी होता है, किन्तु भोगभूमिज जीवों के देशसंयम नहीं होता है। वेदक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच में २८ या २४ दो ही सत्त्वस्थान हैं २३, २२ का सत्त्व नहीं होता क्योंकि वहाँ दर्शनमोह की क्षपणा का प्रारम्भ नहीं होता। वेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्य में ही तेईस, बाईस का सत्त्व पाया जाता है।

क्षपक अनिवृत्तिकरण में चार, तीन, दो और एक के बन्ध में क्रम से पाँच-चार, चार-तीन, तीन-दो और दो-एक का सत्त्व है। उसमें पूर्व पूर्व पुंवेद और कषाय के एक समय कम दो आवली मात्र नवक समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली मात्र निषेक रहते हैं उनकी विवक्षा जानना।

आगे बन्ध-सत्त्व को आधार और उदय को आधेय मानकर ५ गाथाओं में कथन करते हैं-

बावीसे अडवीसे दसचउरुदओ अणेण सगवीसे ।
छव्वीसे दस य तियं इगिअडवीसे दु णवयतियं ।।६८०।।

अन्वयार्थ - (बावीसे) बाईस के बन्धसहित **(अडवीसे)** अठाईस के सत्त्व में **(दसचउरुदओ)** दस आदि चार उदयस्थान हैं **(अणेण)** इस बाईस के बन्धसहित **(सगवीसे छव्वीसे)** सत्ताईस और छब्बीस के सत्त्व में **(दस य तियं)** दस आदि तीन ही उदयस्थान होते हैं। **(इगिअडवीसे दु)** इक्कीस के बन्धसहित अठाईस के सत्त्व में तो

(णवयतियं) नौ आदि तीन उदयस्थान हैं।

सत्तरसे अडचउरिगिवीसे णवयचदुरुदयमिगिवीसे ।
णो पढमुदओ एवं तिदुवीसे णांतिमस्सुदओ ।।६८१।।

अन्वयार्थ - (सत्तरसे) सतरह के बन्धसहित **(अडचउरिगिवीसे)** अठाईस, चौबीस और इक्कीस के सत्त्व में **(णवयचदुरुदयं)** नौ आदि चार उदयस्थान हैं। किन्तु **(इगिवीसं)** इक्कीस के सत्त्व में **(णो पढमुदओ)** प्रथम नौ प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है ८,७,६ हैं। **(एवं तिदुवीसे)** इसी प्रकार १७ के बन्धसहित तेईस और बाईस के सत्त्व में जानना किन्तु उनमें **(णांतिमस्सुदओ)** अंतिम छह प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है ९, ८, ७ ये तीन उदयस्थान हैं।

तेरणवे पुव्वंसे अडादिचउ सगचउण्हमुदयाणं ।
सत्तरसंव वियारो पणगुवसंतंसगेसु दो उदया ।।६८२।।

अन्वयार्थ - (तेरणवे) तेरह और नौ के बन्धसहित **(पुव्वंसे)** पूर्व के सत्त्वस्थान में (अठाईस, चौबीस, इक्कीस, तेईस और बाईस) क्रमसे **(अडादिचउ)** आठ आदि चार और **(सगचउण्हमुदयाणं)** सात आदि चार उदयस्थानों का **(सत्तरसंव)** सतरह के बन्धस्थान के समान **(वियारो)** विचार करना चाहिये अर्थात् अठाईस और चौबीस के सत्त्व में आठ आदि चार और सात आदि चार उदयस्थान हैं। इक्कीस के सत्त्व में पहिला छोड़कर तीन उदयस्थान हैं और तेईस और बाईस के सत्त्व में अंतिम छोड़कर तीन उदयस्थान हैं। **(पणगुवसंतंसगेसु)** पाँच के बंधक में उपशान्त कषाय में कहे अठाईस, चौबीस, इक्कीस के सत्त्व में **(दो उदया)** दो का उदय है।

तेणेवं तेरतिये चदुबंधे पुव्वसत्तगेसु तहा ।
तेणुवसंतंसेयारतिये एक्को हवे उदओ ।।६८३।।

अन्वयार्थ - (एवं) इसी प्रकार **(तेण)** पाँच के बन्धसहित **(तेरतिये)** तेरह, बारह, ग्यारह के सत्त्व में तथा **(चदुबंधे)** चार के बन्धसहित **(पुव्वसत्तगेसु)** पूर्व सत्त्वस्थानों में भी **(तहा)** उसीप्रकार है अर्थात् दो का उदय है। **(तेण)** चार के बन्धसहित

(उवसंतसेयारतिये) उपशांतकषाय में कहे अठाईस आदि तीन और ग्यारह आदि तीन सत्त्वस्थानों में **(एक्को)** एक का**(उदओ)** उदय **(हवे)** है।

तिदुइगिबंधे अडचउरिगिवीसे चदुतियेण तिदुगेण ।
दुगिसत्तेण य सहिदे कमेण एक्को हवे उदओ ।।६८४।।

अन्वयार्थ - (तिदुइगिबंधे) तीन, दो और एक के बंधक में **(अडचउरिगिवीसे)** अठाईस, चौबीस इक्कीस के सत्त्व में **(कमेण)** क्रमसे तथा **(चदुतियेण)** चार और तीन के सत्त्व में **(तिदुगेण)** तीन और दो के सत्त्व में **(दुगिसत्तेण सहिदे)** दो और एक के सत्त्व सहित स्थानों में **(एक्को)** एक-एक का ही **(उदओ हवे)** उदय है।

विशेषार्थ - बन्धसत्त्व को आधार और उदय को आधेय बनाकर कथन- जिसके इतने का बन्ध और इतने का सत्त्व होता है उसके इतनेका उदय होता है ऐसा अर्थ जानना। जैसे बाईस के बन्धसहित अठाईस के सत्त्व में उदयस्थान दस आदि चार हैं।

बन्ध-सत्त्वस्थान में उदयस्थान

अधिकरण			आधेय		
	बंध स्थान	सत्त्वस्थान	उदय स्थान संख्या	उदय स्थानगत प्रकृतिसं.	विवरण
मिथ्यादृष्टि	२२	२८ प्रकृतिक	४	१०-९ -८-७	अनंतानुबंधीसहित १०,९,८ अनंतानुबंधीरहित ९,८,७
मिथ्यादृष्टि	२२	२७ व २६	३	१०-९-८	यहाँ सम्यक्त्व और मिश्र की उद्वेलना है अतः अनंतानु - बंधीरहित स्थान नहीं है
सासादन	२१	२८	३	९-८-७	मिथ्यात्वरहित अनंतानुबंधीसहित

	बंध स्थान प्रकृ.	सत्त्वस्थान प्रकृति	उदय स्थान संख्या	उदय स्थानगत प्रकृतिसं.	विवरण
मिश्र	१७	२८-२४	३	९-८-७	सम्यक्त्वमिथ्यात्वप्रकृतिसहित
असंयत	१७	२८-२४	४	९-८-७-६	सम्यक्त्वप्रकृतिसहित९,८,७ सम्यक्त्वप्रकृतिरहित ८,७,६
क्षायिक सम्य-ग्दृष्टि असंयत	१७	२१	३	८-७-६	सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयरहित
वेदक सम्य.	१७	२३-२२	३	९-८-७	सम्यक्त्वप्रकृतिकेउदयसहित
देशसंयत तिर्यंच मनुष्य	१३	२८-२४	४	८-७-६-५	सम्यक्त्वप्रकृतिसहित८,७,६ सम्यक्त्वप्रकृतिरहित७,६,५
देशसंयत वेदक मनुष्य	१३	२३-२२	३	८-७-६	सम्यक्त्वके उदय सहित
क्षा.सम्यक्त्वी देशसंयत	१३	२१	३	७-६-५	सम्यक्त्वप्रकृति उदयरहित
प्र.अप्रम.अपू	९	२८-२४	४	७-६-५-४	अपूर्वकरण में ७ प्रकृतिक उदयस्थान नही हैं, क्योंकि वह वेदक सम्यक्त्व की अपेक्षा है
प्रमत्त अप्र.	९	२३-२२	३	७-६-५	प्रमत्त अप्रमत्त वेदक सम्यग्दृष्टि के
प्र.अप्रम.अपू	९	२१	३	६-५-४	क्षायिक सम्यग्दृष्टि के
अनिवृत्तिकरण	५	२८,२४ व२१, १३,१२,११	१	२ प्र.	

	बंध स्थान प्रकृ.	सत्त्वस्थान प्रकृति	उदय स्थान संख्या	उदय स्थानगत प्रकृतिसं.	विवरण
अनिवृत्तिकरण	४	२८-२४-२१-१३-१२	१	२ प्र.	चार प्रकृतिक बंधस्थान में ८ सत्त्वस्थान है उसमें २८-२४-२१-१३-१२ के सत्त्व में २ प्र.का उदय हैं किन्तु ११-५-४ के सत्त्व में १ प्रकृति का उदय है।
अनिवृत्तिकरण	४	११-५-४	१	१ प्र.	
अनिवृत्तिकरण	३	२८-२४-२१-४-३	१	१ प्र.	
अनिवृत्तिकरण	२	२८-२४-२१-३-२	१	१ प्र.	
अनिवृत्तिकरण	१	२८-२४-२१-२-१	१	१ प्र.	

पुरुषवेदसहित क्षपकश्रेणीपर आरूढ हुये जीव के १३,१२,११ का सत्त्व रहते हुए ५ प्रकृति का बन्ध और दो प्रकृति का उदय होता है। नपुंसकवेद से श्रेणी आरूढ करके चार के बन्धसहित तेरह का सत्त्व होते हुए भी दो का उदय होता है। स्त्रीवेद से श्रेण्यारूढ़ के चार के बन्धसहित बारह का सत्त्व होते हुए भी दो का उदय होता है। चार के बन्धसहित ११,५,४ के सत्त्व में एक का उदय होता है।

आगे उदय और सत्त्व को आधार तथा बन्ध को आधेय बनाकर सात गाथाओं में कथन करते हैं -

दसगुदये अडवीसतिसत्ते बावीसबंध णव अट्ठे ।
अडवीसे बावीस तिचउबंधो सत्तवीसदुगे ।।६८५।।
बावीसबंधचदुतिदुवीसंसे सत्तरसयददुगबंधो ।
अट्ठुदये इगिवीसे सत्तरबंधं विसेसं तु ।।६८६।।

अन्वयार्थ - (दसगुदये) दस के उदयसहित **(अडवीसतिसत्ते)** अठाईस आदि तीन सत्त्वस्थानों में **(बावीसबंध)** बाईस का बंध है। **(णव अट्ठे)** नौ और आठ के उदय

सहित **(अडवीसे)** अठाईस के सत्त्व में क्रमसे **(बावीसतिचउबंधो)** बाईस आदि तीन तथा बाईस आदि चार बन्धस्थान होते हैं। उन्हीं दोनों में **(सत्तवीसदुगं)** सत्ताईस और छब्बीस का सत्त्व होने पर **(बावीसबंध)** बाईस का बन्ध है। पुन: नौ और आठ के उदय में **(चदुतिदुवीसंसे)** चौबीस, तेईस और बाईस का सत्त्व होने पर **(सत्तरसयददुगबंधो)** असंयत में सतरह और देशसंयत में तेरह का बन्ध है किन्तु **(अट्ठुदये)** आठ के उदय में **(इगिवीसे)** इक्कीस का सत्त्व होने पर **(सत्तरबंध)** सतरह का ही बंध है **(विसेसं तु)** यह विशेष जानना।

सत्तुदये अडवीसे बंधो बावीसपंचयं तेण ।
चउवीसतिगे अयदतिबंधो इगिवीसगयददुगबंधो ।।६८७।।

अन्वयार्थ - (सत्तुदये) सात के उदय में **(अडवीसे)** अठाईस का सत्त्व होने पर **(बावीसपंचयं)** बाईस आदि पाँच **(बंधो)** बन्धस्थान हैं। **(तेण)** सात के उदयसहित **(चउवीसतिगे)** चौबीस, तेईस और बाईस का सत्त्व होने पर **(अयदतिबंधो)** असंयतादि तीन बन्धस्थान अर्थात् १७, १३, ९ ये तीन बन्धस्थान हैं। **(इगिवीसगयददुगबंधो)** इक्कीस का सत्त्व होनेपर असंयत के सतरह और देशसंयत के तेरह प्रकृतिक ये दो ही बन्धस्थान हैं ।

छप्पण उदये उवसंतंसे अयदतिगदेसदुगबंधो ।
तेण तिदोवीसंसे देसदु णवबंधयं होदि ।।६८८।।

अन्वयार्थ - (छप्पण उदये) छह के उदयसहित और पाँच के उदयसहित **(उवसंतंसे)** उपशांत के सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस और इक्कीस का सत्त्व होनेपर क्रमसे **(अयदतिगदेसदुगबंधो)** असंयत त्रिक अर्थात् १७, १३ और ९ तथा देशद्विक अर्थात् तेरह और नौ का बंध है। **(तेण)** छह और पाँच के उदय में **(तिदोवीसंसे)** तेईस और बाईस का सत्त्व होने पर क्रम से **(देसदु)** तेरह, नौ का तथा **(णवबंधयं)** केवल नौ का बंधक **(होदि)** होता है।

चउरुदयुवसंतंसे णवबंधो दोण्णि उदयपुव्वंसे ।
तेरसतियसत्तेवि य पणचउठाणाणि बंधस्स ।।६८९।।

अन्वयार्थ - (चउरुदयुवसंतंसे) चार के उदयसहित उपशान्त कषाय में पाये जानेवाले अठाईस, चौबीस, इक्कीस के सत्त्व में **(णवबंधो)** नौ का बन्ध है। **(दोण्णि उदयपुव्वंसे)** दो के उदयसहित पूर्वोक्त अठाईस आदि तीन सत्त्व होने पर तथा **(तेरसतियसत्तेवि य)** तेरह, बारह, ग्यारह का सत्त्व होने पर भी **(बंधस्स)** बंध के **(पणचउठाणाणि)** पाँच और चार का स्थान है।

एक्कुदयुवसंतंसे बंधो चतुरादिचारि तेणेव ।
एयारदु चदुबंधो चदुरंसे चदुतियं बंधो ।।६९०।।

अन्वयार्थ - (एक्कुदयुवसंतंसे) एक के उदयसहित उपशान्त कषाय में कहे अठाईस, चौबीस इक्कीस के सत्त्व में **(चतुरादि चारि)** चार आदि चार **(बंधो)** बन्धस्थान हैं। **(तेणेव)** उसी एक के उदयसहित **(एयार दु)** ग्यारह और पाँच के सत्त्व में **(चदुबंधो)** चार का बन्ध है। एक के उदयसहित **(चदुरंसे)** चार के सत्त्व में **(चदुतियं बंधो)** चार और तीन का बन्ध है।

तेण तिये तिदुबंधो दुगसत्ते दोण्णि एक्कयं बंधो ।
एक्कंसे इगिबंधो गयणं वा मोहणीयस्स ।।६९१।।

अन्वयार्थ - (तेण) उस एक के उदयसहित **(तिये)** तीन प्रकृतिक सत्त्व होने पर **(तिदुबंधो)** तीन का और दो प्रकृति का बन्ध है। एक के उदयसहित **(दुगसत्ते)** दो प्रकृतिक सत्त्व होनेपर **(दोण्णि एक्कयं बंधो)** दो का और एक का बन्ध है। **(एक्कंसे)** एक ही का उदय और सत्त्व रहते **(इगिबंधो)** एक का ही बंध है। **(वा)** अथवा **(गयणं)** आकाश अर्थात् शून्य बन्ध इस प्रकार **(मोहणीयस्स)** मोहनीय के तीन संयोगी भंग कहे।

विशेषार्थ - जिसके इतने का उदय और इतने का सत्त्व होता है उसके इतने का बन्ध पाया जाता है ऐसा अर्थ है। जैसे दस के उदयसहित अठाईस के सत्त्व में बाईस का बन्ध है।

उदय सत्त्व आधार और बन्ध आधेय

	अधिकरण		आधेय		
गुणस्थान	उदय स्थान प्र.	सत्त्वस्थान प्र.	बंध स्थान संख्या	बंध स्थानगत प्रकृति	विवरण
१	१० प्र.	२८-२७-२६ प्र.	१	२२ प्र.	यह मिथ्यादृष्टि के होता है।
१ से ४	९ प्र.	२८	३	२२-२१-१७ प्र	१ से ४ गुणस्थान में ९ का उदय
१	९ प्र.	२७ - २६	१	२२ प्र	मिथ्यादृष्टि के
३,४	९ प्र.	२४-२३-२२	१	१७ प्र.	मिश्र २४,असंयत२४,२३,२२
१ से ५	८ प्र.	२८	४	२२-२१-१७-१३	१ से ५ गुणस्थान में
१	८ प्र.	२७-२६	१	२२ प्र	मिथ्यादृष्टि के
४,५,६	८ प्र.	२४,२३,२२प्र.	२	१७,१३ प्र	असंयत, देशसंयतमें, मिश्र में २४
४	८ प्र.	२१ प्र.	१	१७ प्र.	असंयत में क्षा.सम्यग्दृष्टि के
१ से ७	७ प्र.	२८ प्र.	५	२२-२१-१७-१३-९	१ से ७ गुणस्थान में
४ से ७	७ प्र.	२४-२३-२२	३	१७-१३--९ प्र	४ से ७ गुणस्थान में, मिश्र में २४ का सत्त्व है
४, ५	७ प्र.	२१ प्र.	२	१७-१३ प्र	क्षायिकसम्यक्त्वी ४,५ गुण.
४ से ७	६ प्र.	२८-२४-२१	३	१७-१३-९ प्र	४ से ७ गुणस्थान में व ८ वे गुणस्थान में २८-२४-२१ का सत्त्व
५,६,७	६ प्र.	२३-२२	२	१३-९	

अधिकरण			आधेय		
गुणस्थान	उदय स्थान प्र.	सत्त्वस्थान प्रकृति	बंध स्थान संख्या	बंध स्थानगत प्रकृति	विवरण
६,७ गुणस्थानमें	५ प्र. ५ प्र. ४ प्र.	२८-२४-२१ २३-२२ २८-२४-२१	२ १ १	१३-९ प्र ९ ९ प्र	५ वें गुण से ७ वें तक तथा ८ वें गुणस्थान में भी २८-२४-२१ का सत्त्व ८ वें गुणस्थान में
अनिवृत्तिकरण सवेद भाग	२ प्र.	२८-२४-२१ १३-१२-११	२	५,४ प्र	पुरुषवेदसहित के ५ प्रकृति बंध नपुं.स्त्रीवेदसहित के ४ प्रकृति का बंध
अनि.उपशमक	१ प्र.	२८-२४-२१	४	४-३-२-१ प्र	
अनि.क्षपक	१ प्र.	११, ५ प्रकृ	१	४ प्र	
अनि.क्षपक	१ प्र.	४ प्रकृ	२	४,३ प्र	
अनि.क्षपक	१ प्र.	३ प्रकृ	२	३,२ प्र	
अनि.क्षपक	१ प्र.	२ प्र.	२	२,१ प्र.	
अनि.क्षपक	१ प्र.	१ प्र.	१	१	
सू.सांपराय क्षपक	१ प्र.	१ प्र.	०	०	

यहाँ त्रिसंयोगी भंग लगाते समय विवक्षित उदयस्थान में सत्त्वस्थान कितने हैं और वह किस गुणस्थान में है यह देखने से उसमें बंधस्थान कितने हैं यह बात समझ में आयेगी।

आगे नामकर्म के स्थानों के त्रिसंयोगी भंग कहते हैं -

णामस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु ।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ।।६९२।।

अन्वयार्थ - (णामस्स य) नामकर्म के **(बंधोदयसत्तट्ठाणाण)** बंधउदय सत्त्वस्थानों के **(सव्वभंगा हु)** सब भंग **(पत्तेउत्तंव)** जैसे प्रत्येक पृथक् पृथक् कहे थे वैसे

ही **(तियसंजोगे वि)** त्रिसंयोग में भी **(सव्वत्थ)** सर्वत्र **(हवे)** होते हैं ऐसा जानना।

छण्णवच्छत्तियसगइगिदुगतिगदुगतिण्णि अट्ठ चत्तारि ।
दुगदुगचदुदुगपणचदु चदुरेयचदू पणेयचदू ।।६९३।।
एगेगमट्ठ एगेगमट्ठ छदुमट्ठकेवलिजिणाणं ।
एगचदुरेगचदुरो दोचदु दोछक्कउदयंसा ।।६९४।।

अन्वयार्थ - नामकर्म के बन्धस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान गुणस्थानों में क्रमसे मिथ्यादृष्टि में **(छण्णवच्छ)** छह-नौ-छह, सासादन में **(तियसगइगि)** तीन-सात-एक, मिश्र में **(दुगतिगदुग)** दो-तीन-दो, असंयत में **(तिण्णि-अट्ठ-चत्तारि)** तीन-आठ-चार, देशसंयत में **(दुगदुगचदु)** दो-दो-चार, प्रमत्त में **(दुगपणचदु)** दो-पाँच-चार, अप्रमत्त में **(चदुरेयचदू)** चार-एक-चार, अपूर्वकरण में **(पणेयचदू)** पाँच-एक-चार, अनिवृत्तिकरण में **(एगेगमट्ठ)** एक-एक-आठ, सूक्ष्मसांपराय में भी **(एगेगमट्ठ)** एक-एक-आठ हैं। **(छदुमट्ठकेवलिजिणाणं)** छद्मस्थ अर्थात् उपशांत और क्षीण कषाय में तथा केवलिजिन अर्थात् सयोगकेवली और अयोगकेवलि में क्रम से **(एगचदुर्)** एक-चार **(एगचदुरो)** एक-चार **(दोचदु)** दो-चार **(दो छक्क)** दो छह **(उदयंसा)** उदय और सत्त्व ही हैं, बन्ध का अभाव है।

णामस्स य बंधोदयसत्ताणि गुणं पडुच्च उत्ताणि ।
पत्तेयादो सव्वं भणिदव्वं अत्थजुत्तीए ।।६९५।।

अन्वयार्थ - (णामस्स य) नामकर्म के **(बंधोदयसत्ताणि)** बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान **(गुणं पडुच्च)** गुणस्थानों का आश्रय करके **(उत्ताणि)** कहे **(सव्वं)** उन सब को **(पत्तेयादो)** पृथक्-पृथक् **(अत्थजुत्तीए)** अर्थ की युक्ति से **(भणिदव्वं)** कहना चाहिए।

तेवीसादी बंधा इगिवीसादीणि उदयठाणाणि ।
बाणउदादी सत्तं बंधा पुण अट्ठवीसतियं ।।६९६।।
इगिवीसादी एक्कत्तीसंता सत्त अट्ठवीसूणा ।
उदया सत्तं णउदी बंधा पुण अट्ठवीसदुगं ।।६९७।।

एगुणतीसंतिदयं उदयं बाणउदिणउदियं सत्तं ।
अयदे बंधट्ठाणं अट्ठावीसत्तियं होदि ।।६९८।।
उदया चउवीसूणा इगिवीसप्पहुडि एक्कत्तीसंता ।
सत्तं पढमचउक्कं अपुव्वकरणोत्ति णायव्वं ।।६९९।।

अन्वयार्थ - मिथ्यादृष्टि में **(तेवीसादी बंधा)** तेईस आदि छह बंधस्थान हैं। **(इगिवीसादीणि उदयठाणाणि)** इक्कीस आदि नौ उदयस्थान हैं। **(बाणउदादी सत्तं)** बानवे आदि छह सत्त्वस्थान हैं। सासादन में **(बंधा पुण अट्ठवीसतियं)** बंधस्थान अठाईस आदि तीन हैं। उदयस्थान **(इगिवीसादी एक्कत्तीसंता)** इक्कीस आदि इकतीसपर्यन्त हैं किन्तु उनमें से **(सत्तअट्ठवीसूणा)** सत्ताईस, अठाईस ये दो स्थान कम करना। **(सत्तं णउदी)** सत्त्वस्थान नब्बे का है। मिश्रगुणस्थान में **(बंधा पुण अट्ठवीसदुंगं)** बंधस्थान अठाईस आदि दो हैं। **(एगुणतीसंतिदयं उदयं)** उदयस्थान उनतीस आदि तीन हैं। **(बाणउदिणउदियं सतं)** सत्त्वस्थान बानवे-नब्बे दो हैं। **(अयदे)** असंयत में **(बंधट्ठाणं)** बंधस्थान **(अट्ठावीसत्तियं)** अठाईस आदि तीन **(होदि)** हैं। **(उदया चउवीसूणा इगिवीसप्पहुडि एक्कत्तीसंता)** उदयस्थान चौबीस के बिना इक्कीस से इकतीस पर्यन्त आठ हैं। **(सत्तं पढमचउक्कं)** सत्त्वस्थान तिरानवे आदि चार हैं। **(अपुव्वकरणोत्ति णायव्वं)** ये चार सत्त्वस्थान अपूर्वकरण गुणस्थानपर्यन्त जानना।

अडवीसदुगं बंधो देसे पमदे य तीसदुगुमुदओ ।
पणुवीससत्तवीसप्पहुडी चत्तारि ठाणाणि ।।७००।।

अन्वयार्थ - (देसे पमदे य) देशसंयत और प्रमत्त में **(अडवीसदुगं बंधो)** बन्धस्थान अठाईस आदि दो हैं। देशसंयत में **(तीसदुगुमुदओ)** उदयस्थान तीस आदि दो हैं। प्रमत्त में **(पणुवीससत्तवीसप्पहुडी चत्तारि ठाणाणि)** पच्चीस तथा सत्ताईस आदि चार उदयस्थान हैं।

अपमत्ते य अपुव्वे अडवीसादीण बंधमुदओ दु ।
तीसमणियट्टिसुहुमे जसकित्ती एक्कयं बंधो ।।७०१।।

अन्वयार्थ- **(अपमत्ते य अपुव्वं)** अप्रमत्त और अपूर्वकरण में **(अडवीसादीण बंधं)** बंधस्थान अठाईस आदि चार तथा पाँच क्रमसे जानना **(उदओ दु तीसं)** उदयस्थान तीस का ही है। सत्त्वस्थान पूर्व में कहे हैं। **(अणियट्टिसुहुमे)** अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसांपराय में **(बंधो)** बंधस्थान **(एक्कयं जसकित्ती)** एक यशस्कीर्तिरूप ही है।

उदओ तीसं सत्तं पढमचउक्कंच सीदिचउ संत्ते ।
खीणे उदओ तीसं पढमचऊ सीदिचउ सत्तं ।।७०२।।

अन्वयार्थ - (उदओ तीसं) उदयस्थान तीस का ही है। **(सत्तं पढमचउक्कं)** सत्त्वस्थान तिरानवे आदि चार **(च)** और **(सीदिचउ)** अस्सी आदि चार इस प्रकार आठ हैं। **(संत्ते खीणे)** उपशान्तकषाय और क्षीणकषाय में **(उदओ तीसं)** उदयस्थान तीस का ही है। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान उपशान्तकषाय में **(पढमचउ)** तिरानवे आदि चार, क्षीणकषाय में **(सीदिचउ)** अस्सी आदि चार हैं।

जोगिम्मि अजोगिम्मि य तीसिगितीसं णवट्ठयं उदओ ।
सीदादिचऊ छक्कं कमसो सत्तं समुद्दिट्ठं।।७०३।।

अन्वयार्थ - (उदओ) उदयस्थान **(जोगिम्मि)** सयोगी में **(तिसिगितीसं)** तीस-इकतीस ये दो **(अजोगिम्मि)** अयोगी में **(णवट्ठयं)** नौ-आठ ये दो हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(कमसो)** क्रमसे **(सीदादिचऊ)** अस्सी आदि चार और **(छक्कं)** अस्सी आदि छह **(समुद्दिट्ठं)** कहे हैं।

नामकर्म के बन्ध-उदय-सत्त्वस्थानों का गुणस्थान अपेक्षा से कोष्टक

गुणस्थान	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
मिथ्यात्व	६	२३,२५,२६ २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६ २७,२८,२९,३०,३१	६	९२,९१,९०,८८, ८४,८२
सासादन	३	२८,२९,३०	७	२१,२४,२५,२६,२९, ३०,३१	१	९०
मिश्र	२	२८,२९	३	२९,३०,३१	२	९२,९०
असंयत	३	२८,२९,३०	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	४	९३-९२-९१-९०
देशसंयत	२	२८,२९	२	३०,३१	४	९३-९२-९१-९०
प्रमत्त	२	२८,२९	५	२५,२७,२८,२९,३०	४	९३-९२-९१-९०
अप्रमत्त	४	२८,२९,३०, ३१	१	३०	४	९३-९२-९१-९०
अपूर्वकरण	५	२८,२९,३०, ३१,१	१	३०	४	९३-९२-९१-९०
अनिवृत्तिकरण	१	१	१	३०	८	९३-९२-९१-९०, ८०-७९-७८-७७
सूक्ष्म सांप.	१	१	१	३०	८	९३-९२-९१-९० ८०-७९-७८-७७
उपशांत	०	०	१	३०	४	९३-९२-९१-९०
क्षीणमोह	०	०	१	३०	४	८०-७९-७८-७७
सयोगकेवली	०	०	२	३०, ३१	४	८०-७९-७८-७७
अयोगकेवली	०	०	२	९,८	६	८०-७९-७८-७७ -१०-९

उपर्युक्त कोष्टक में सयोगी में समुद्घात की विवक्षा नहीं ली अत: उदयस्थान ३० और ३१ दो ही बताये। समुद्घात की विवक्षा होनेपर २०,२१,२६,२७,२८,२९,३० और ३१ ये आठ उदयस्थान पाये जाते हैं।

चौदह जीवसमासों में नामकर्म के बन्ध-उदय और सत्त्वस्थान

पण दो पणगं पण चदु पणगं बंधुदयसत्त पणगं च ।
पण छक्क पणग छच्छक्कपणगमट्ठट्ठमेयारं ।।७०४।।
सत्तेव अपज्जत्ता सामी सुहुमो य बादरो चेव ।
वियलिंदिया य तिविहा होंति असण्णी कमा सण्णी ।।७०५।

अन्वयार्थ - **(अपज्जत्ता सत्तेव)** अपर्याप्त सम्बन्धी सात जीव समासों में **(बंधुदयसत्त)** बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान **(कमा)** क्रमसे **(पण दो पणगं)** पाँच, दो और पाँच होते हैं। **(सामी सुहुमो)** सर्व सूक्ष्मों में **(पण चदु पणगं)** पाँच, चार और पाँच होते हैं। **(य बादरो च)** और एकेन्द्रिय बादरों में **(पणगं च)** पाँच, पाँच और पाँच होते हैं। **(वियलिंदिया च तिविहा)** तीन प्रकार विकलेन्द्रिय-द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रियों में (बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान) **(पण छक्क पणग)** पाँच, छह, पाँच **(असण्णी)** असंज्ञी में **(छच्छक्कपणगं)** छह, छह, पाँच **(सण्णी)** संज्ञी में **(अट्ठट्ठमेयारं)** आठ, आठ, ग्यारह स्थान क्रम से जानना।

बंधा तियपणछण्णववीसं तीसं अपुण्णगे उदओ ।
इगिचउवीसं इगिछव्वीसं थावरतसे कमसो ।।७०६।।
बाणउदी णउदिचऊसत्तं एमेव बंधयं अंसा ।
सुहुमिदरे वियलतिये उदया इगिवीसयादिचउपणयं ।।७०७।
इगिछक्कडणववीसं तीसिगितीसं च वियलठाणं वा।
बंधतियं सण्णिदरे भेदो बंधदि हु अडवीसं ।।७०८।।
सण्णिम्मि सव्वबंधो इगिवीसप्पहुडि एक्कतीसंता ।
चउवीसूणा उदओ दस णवपरिहीणसव्वयं सत्तं ।।७०९।।

अन्वयार्थ - **(अपुण्णगे बंधा)** अपर्याप्त के बंधस्थान, **(तियपणछण्णव-वीसंतीसं)** २३, २५, २६, २९, ३० **(उदयो)** उदयस्थान **(थावरतसे)** स्थावर (लब्ध्यपर्याप्तक) के **(इगिचउवीसं)** २१, २४ त्रस (लब्ध्यपर्याप्तक) के २१, २६ **(कमसो)** क्रम से होते हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(बाणउदी णउदिचऊ)** ९२, ९०, ८८, ८४, ८२ ये पाँच हैं। **(एमेव बंधयं अंसा सुहुमिदरे वियलतिये)** सूक्ष्म-बादर एकेन्द्रियों व

विकलत्रयों में बन्ध और सत्त्वस्थान तो अपर्याप्तवत् ही जानना। किन्तु **(उदया)** उदयस्थान सूक्ष्मजीवों में **(इगिवीसयादिचउपणयं)** २१, २४, २५,२६ (ये चार स्थान) तथा बादरजीवों में २१, २४, २५,२६, २७ (ये पाँच स्थान) हैं। **(वियलतिये)** विकलत्रय में पर्याप्त में उदयस्थान **(इगि छक्कडणववीसं तीसिगितीसं)** २१, २६, २८, २९, ३०, ३१ **(सण्णीदरे)** असंज्ञी पंचेन्द्रिय में **(बंधतियं)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान **(वियलठाणं वा)** विकलत्रय के समान हैं **(भेदो)** किंतु भेद यह है कि असंज्ञी जीव **(अडवीसं बन्धदि)** अठाईस प्रकृतिक स्थान को भी बांधता है अत: २३, २५, २६, २८, २९, ३० ये छह बंधस्थान हैं। **(सण्णिम्मि सव्व बंधो)** संज्ञी के सर्व बंधस्थान अर्थात् २३, २५, २६, २८, २९, ३०, ३१-ये आठ स्थान हैं **(उदयो)** संज्ञी जीवों के उदयस्थान **(चउवीसूणा)** २४ से रहित **(इगिवीसप्पहुडिएक्कतीसंता)** २१, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१ **(सत्तं)** संज्ञी जीवों के सत्त्वस्थान **(दसणवपरिहीण सव्वं)** १० और ९ से रहित सर्व स्थान अर्थात् ९३, ९२, ९१, ९०, ८८, ८४, ८२, ८०, ७९, ७८, ७७ ये ग्यारह स्थान हैं।

विशेषार्थ - जीवसमास १४ → ७ अपर्याप्त + ७ पर्याप्त

१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय २) बादर एकेन्द्रिय ३) द्वीन्द्रिय ४) त्रीन्द्रिय ५) चतुरिन्द्रिय ६) असंज्ञी ७) संज्ञी

जीवसमास	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
७ अपर्याप्त	५	२३,२५, २६,२९,३०	२ २	२१,२४,स्थावरोंमें २१,२६ त्रसों में	५	९२,९०,८८, ८४,८२
सूक्ष्म एके. पर्याप्त	५	२३,२५,२६, २९,३०	४	२१,२४,२५,२६	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
बादर एके. पर्याप्त	५	२३,२५,२६, २९,३०	५	२१,२४,२५,२६, २७	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
विकलत्रय पर्याप्त	५	२३,२५,२६, २९,३०	६	२१,२६,२८,२९, ३०, ३१	५	९२,९०,८८, ८४, ८२

जीवसमास	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
असंज्ञी पर्याप्त	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	६	२१,२६,२८,२९, ३०, ३१	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
पंचेन्द्रिय पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय	८	सर्व २३,२५, २६,२८,२९, ३०,३१,१	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	११	९३,९२,९१,९०, ८८,८४,८२,८०, ७९-७८-७७

बारहवें गुणस्थानतक ही संज्ञी कहा जाता है अत: चौदहवें गुणस्थान के १०-९ सत्त्वस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय में नहीं बताये।

चौदह मार्गणाओं में नामकर्म के बन्ध उदय सत्त्वस्थान कहते हैं। सर्वप्रथम गतिमार्गणा में बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान कहते हैं -

दोछक्कट्ठचउक्कं णिरयादिसु णामबंधठाणाणि ।
पण णव एगार पणयं तिपंचबारसचउक्कं च ।।७१०।।

अन्वयार्थ -(णामबंधठाणाणि) नामकर्म के बंधस्थान **(णिरयादिसु)** नरकादिगतियों में अर्थात् नरक गति, तिर्यंच गति, मनुष्य गति और देवगति में क्रमश: **(दोछक्कट्ठचउक्कं)** दो, छह, आठ और चार हैं। उदयस्थान क्रमसे **(पण णव एगार पणयं)** पाँच, नौ, ग्यारह और पाँच हैं। सत्त्वस्थान क्रमसे **(तिपंचबारसचउक्कं च)** तीन, पाँच, बारह और चार हैं।

णिरयादिणामबंधा उगुतीसं तीसमादिमं छक्कं ।
सव्वं पणछक्कुत्तरवीसुगतीसं दुगं होदि ।।७११।।
उदया इगिपणसगअडणववीसं एक्कवीसपहुडि णवं ।
चउवीसहीणसव्वं इगिपणसगअट्ठणववीसं ।।७१२।।
सत्ता बाणउदितियं बाणउदीणउदिअट्ठसीदितियं ।
बासीदिहीणसव्वं तेणउदिचउक्कयं होदि ।।७१३।।

अन्वयार्थ - **(णिरयादिणाम बंधा)** नरकादि गतियों में नामकर्म के बंधस्थान **(उगुतीसं तीसमादिमं छक्कं)** नरकगति में उनतीस और तीस, तिर्यंच गति में आदि के छह स्थान अर्थात् तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अट्ठाईस, उनतीस और तीस **(सव्वं)** मनुष्य गति में सभी बंधस्थान और देवगति में बंधस्थान **(पणछक्कुत्तरवीसुगतीसं दुगं होदि)** पच्चीस, छब्बीस, उनतीस और तीस होते हैं।

(उदया) उदयस्थान क्रमसे, नरकगति में **(इगिपणसगअडणववीसं)** इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अट्ठाईस और उनतीस; तिर्यंच गति में **(एक्कवीस पहुडि णवं)** इक्कीस से लेकर नौ स्थान; मनुष्य गति में उदय स्थान **(चउवीसहीणसव्वं)** चौबीस रहित सर्व स्थान और देवगति में उदयस्थान **(इगिपणसगअट्ठणववीसं)** इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उनतीस।

(सत्ता) सत्त्वस्थान, नरकगति में **(बाणउदिदितियं)** बानवे, इक्यानवे और नब्बे, तिर्यंच गति में सत्त्वस्थान **(बाणउदीणउदिअट्ठसीदिदितियं)** बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी व बयासी प्रकृतिक, मनुष्यगति में सत्त्वस्थान **(बासीदिहीणसव्वं)** बयासी प्रकृतिक रहित सब स्थान; देवगति में सत्त्वस्थान **(तेणउदिचउक्कयं होदि)** तिरानवे आदि चार स्थान अर्थात् तिरानवे, बानवे, इक्यानवे और नब्बे होते हैं।

गतिमार्गणा में बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान का कोष्टक

गति	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानोंका विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
नरक	२	२९,३०	५	२१,२५,२७,२८,२९	३	९२,९१,९०
तिर्यंच	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६ २७,२८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
मनुष्य	८	२३,२५,२६, २८,२९,३०, ३१,१	११	२०,२१,२५,२६, २७,२८,२९,३० ३१,९,८	१२	९३,९२,९१,९०, ८८, ८४,८०,७९, ७८,७७,१०,९
देव	४	२५,२६,२९, ३०	५	२१,२५,२७,२८,२९	४	९३,९२,९१,९०,

इन्द्रियमार्गणा में बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान-

एगे वियले सयले पण पण अड पंच छक्केगारपणं ।
पण तेरं बंधादी सेसादेसेवि इदि णेयं ।।७१४।।

अन्वयार्थ - (एगे वियले सयले) एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय (पंचेन्द्रिय) में क्रम से **(बंधादि)** बन्ध, उदय, सत्त्वस्थान - बंधस्थान **(पण पण अड)** पाँच, पाँच और आठ, उदयस्थान **(पंच छक्केगारं)** पाँच, छह, ग्यारह; सत्त्वस्थान **(पणं पण तेरं)** पाँच, पाँच, तेरह **(इदि)** इसी प्रकार **(सेसादेसेवि)** अवशेष मार्गणाओं में भी **(णेयं)** जानना चाहिए।

विशेषार्थ - मनुष्यगति में केवल २४ प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है क्योंकि इसका उदय केवल एकेन्द्रिय में ही होता है और मनुष्य में केवल ८२ प्रकृतिक सत्त्वस्थान नहीं हैं क्योंकि ८२ का सत्त्व केवल तिर्यंच में ही होता है।

इगिविगलबंधठाणं अडवीसूणं तिवीसछक्कं तु ।
सयलं सयले उदया एगे इगिवीस पंचयं वियले ।। ७१५।।
इगिछक्कडणववीसं तीसदु चउवीसहीणसव्वुदया ।
णउदिचऊ बाणउदी एगे वियले य सव्वयं सयले ।।७१६।।

अन्वयार्थ - (इगिविगल) एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में **(बंधठाणं)** बंधस्थान, **(अडवीसूणं तिवीसछक्कं तु)** अट्ठाईस रहित तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस व तीस प्रकृतिक, **(सयलं सयले)** सकलेन्द्रिय में सभी बंधस्थान; **(उदया)** उदय स्थान **(एगे)** एकेन्द्रिय में **(इगिवीस पंचयं)** इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस ये पाँच हैं **(वियले)** विकलेन्द्रिय में **(इगिछक्कडणववीसं तीसदु)** इक्कीस, छब्बीस, अट्ठाईस, उनतीस, तीस और इकतीस, सकलेन्द्रिय में **(चउवीसहीणसव्वुदया)** चौबीस रहित सभी उदयस्थान होते हैं। **(एगे वियले य)** एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में सत्त्वस्थान **(बाणउदी णउदिचऊ)** बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी व बयासी, **(सयले)** सकलेन्द्रिय में सत्त्वस्थान, **(सव्वयं)** सभी होते हैं।

इन्द्रियमार्गणा में नामकर्म के बन्ध-उदय-सत्त्वस्थान

इन्द्रिय मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
एकेन्द्रिय	५	२३,२५,२६, २९,३०	५	२१,२४,२५,२६,२७	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
विकलेन्द्रिय	५	२३,२५,२६, २९,३०	६	२१,२६,२८,२९, ३०,३१	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
सकलेन्द्रिय	८	२३,२५,२६, २८,२९, ३०,३१,१	११	२०,२१,२५,२६, २७,२८,२९,३०, ३१,९,८	१३	९३,९२,९१,९०, ८८, ८४,८२,८०, ७९,७८,७७,१०,९

काय मार्गणा में नाम कर्म के बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान -

पुढवीयादीपंचसु तसे कमा बंधउदयसत्ताणि ।
एयं वा सयलं वा तेउदुगे णत्थि सगवीसं ।।७१७।।

अन्वयार्थ - (पुढवीयादी पंचसु) पृथ्वी आदि पाँच स्थावर कायों में,**(बंधउदयसत्ताणि)** बंध, उदय और सत्त्व स्थान **(एयं वा)** एकेन्द्रिय के समान जानना, परन्तु **(तेउदुगे)** तेजस्काय और वायुकाय में **(सगवीसं णत्थि)** सत्ताईस प्रकृतिक उदय स्थान नहीं है। **(तसे कमा)** त्रस काय में बंध, उदय और सत्त्वस्थान, **(सयलं वा)** सकलेन्द्रिय जीवों के समान हैं।

काय मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
पृथ्वी,जल, वनस्पति	५	२३,२५,२६, २९,३०	५	२१,२४,२५,२६,२७	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
तेज, वायुकाय	५	२३,२५,२६, २९,३०	४	२१,२४,२५,२६,	५	९२,९०,८८, ८४, ८२
त्रसकाय	८	सर्व	११	२४ छोड़कर शेष सब	१३	सर्व सकलेन्द्रियवत्

योग मार्गणा में नाम कर्म के बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान -

मणवचि बंधुदयंसा सव्वं णववीसतीसइगितीसं ।
दसणवदुसीदिवज्जिद सव्वं ओरालतम्मिस्से ।।७१८।।

अन्वयार्थ - **(मणवचि)** मनोयोग और वचन योग में, **(बंधुदयंसा)** बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान, **(सव्वं)** बन्ध स्थान सर्व; **(णववीसतीसइगितीसं)** उदय स्थान उनतीस, तीस और इकतीस प्रकृतिक तीन; सत्त्व स्थान **(दसणवदुसीदिवज्जिद सव्वं)** नौ, दस और बयासी से रहित सर्व स्थान होते हैं। **(ओरालतम्मिस्से)** औदारिक काययोग और औदारिक मिश्र काययोग में । (७१९ नं गाथा में स्थान बताये हैं)

सव्वं तिवीसछक्कं पणुवीसादेक्कतीसपेरंतं ।
चउछक्कसत्तवीसं दुसु सव्वं दसयणवहीणं ।।७१९।।
वेगुव्वे तम्मिस्से बंधंसा सुरगदीव उदयो दु ।
सगवीसतियं पणजुदवीसं आहारतम्मिस्से ।।७२०।।
बंधतियं अडवीसदु वेगुव्वं वा तिणउदिबाणउदी ।
कम्मे वीसदुगुदओ ओरालियमिस्सयं व बंधंसा।।७२१।।

अन्वयार्थ - औदारिक काययोग में बंधस्थान **(सव्वं)** सर्व; उदयस्थान, **(पणुवीसादेक्कतीसपेरंतं)** २५ से ३१ पर्यन्त , औदारिक मिश्र काय योग में बंधस्थान **(तिवीसछक्कं)** तेईस आदि छह, अर्थात् २३, २५, २६, २८, २९, ३०; उदयस्थान, **(चउछक्कसत्तवीसं)** चौबीस, छब्बीस, और सत्ताईस; सत्त्वस्थान **(दुसु सव्वं दसयण-वहीणं)** दोनों में अर्थात् औदारिक और औदारिक मिश्र काययोग में दस और नौ से रहित सभी स्थान हैं।

(वेगुव्वे) वैक्रियिक काय योग में **(तम्मिस्से)** उसके मिश्र में अर्थात् वैक्रियिक मिश्र काय योग में **(बंधंसा)** बन्ध और सत्त्व स्थान तो, **(सुरगदीव)** देव गति के समान हैं। परन्तु **(उदयो दु)** उदयस्थान, वैक्रियिक काययोग में **(सगवीसतियं)** सत्ताईस, अठाईस, उनतीस; और वैक्रियिक मिश्र काय योग में, **(पणजुदवीसं)** पच्चीस प्रकृतिक एक उदय स्थान हैं।

(आहारतम्मिस्से) आहारक काययोग और आहारक मिश्र काययोग में,

(बंधतियं अडवीस दु) बंधस्थान, अठ्ठाईस, उनतीस; उदयस्थान **(वेगुव्वं वा)** आहारक काय योग में वैक्रियिक के समान तीन सत्ताईस, अठाईस, उनतीस और आहारक मिश्र में पच्चीस प्रकृतिक एक उदयस्थान हैं। सत्त्वस्थान, **(तिणउदिबाणउदी)** तिरानवे और बानवे दोनों में दो हैं। **(कम्मे)** कार्मण काययोग में, **(वीसदुगुदओ)** उदयस्थान बीस और इक्कीस प्रकृतिक है। **(बंधंसा)** बंध और सत्त्वस्थान, **(ओरालिय मिस्सयं व)** औदारिक मिश्र काय योग के समान जानना।

योग मार्गणा	**बंध स्थान संख्या**	**बंधस्थानों का विवरण**	**उदय स्थान संख्या**	**उदयस्थानों का विवरण**	**सत्त्व स्थान संख्या**	**सत्त्वस्थानों का विवरण**
मनो, वचनयोग	८	सर्व	३	२९,३०,३१	१०	८२,१०,९ छोड़कर शेष सर्व
औदा. काययोग	८	सर्व	७	२५,२६,२७,२८,२९, ३०,३१	११	१०,९ छोड़कर शेष सर्व
औदा.मिश्र	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	३	२४,२६,२७,	११	१०,९ छोड़कर शेष सर्व
वैक्रि.काय	४	२५,२६,२९, ३०	३	२७,२८,२९,	४	९३,९२,९१,९०
वैक्रि.मिश्र	४	२५,२६,२९, ३०	१	२५	४	९३,९२,९१,९०
आहारक	२	२८,२९	३	२७,२८,२९,	२	९३,९२
आहारकमिश्र	२	२८,२९	१	२५	२	९३,९२
कार्मण	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	२	२०,२१	११	१०,९ छोड़कर शेष सर्व

विशेषार्थ - तेजकाय-वायुकाय जीवों में २७ प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है क्योंकि यह उदयस्थान आतप व उद्योतसहित है और इन दोनों प्रकृतियों का उदय तेजकायिक वायुकायिक जीवों में नहीं पाया जाता है।

वेद और कषाय मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान -

वेदकसाये सव्वं इगिवीसणवं तिणउदि एक्कारं ।
थीपुरिसे चउवीसं सीदडसदरी ण थी संढे ।।७२२।।

अन्वयार्थ - **(वेदकसाये)** वेद और कषाय मार्गणा में,बंधस्थान **(सव्वं)** सर्व, उदयस्थान, **(इगिवीसणवं)** इक्कीस से लेकर नौ स्थान; सत्त्व स्थान **(तिणउदि एक्कारं)** तिरानवे आदि प्रकृति रूप ग्यारह स्थान हैं। **(थी पुरिसे)** स्त्री वेद और पुरुष वेद में, **(चउवीसं)** चौबीस का उदय स्थान; तथा **(थी संढे)** स्त्री वेद और नपुंसक वेद में, **(सीदडसदरी ण)** अस्सी और अठहत्तर के सत्त्व स्थान नहीं हैं।

वेद मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
स्त्रीवेद	८	२३,२५,२६, २८,२९,३० ३१,१	८	२१,२५,२६,२७,२८ २९,३०,३१	९	९३,९२,९१,९०, ८८, ८४,८२, ७९, ७७
पुरुषवेद	८	उपर्युक्त सर्व	८	उपर्युक्त सर्व	११	९३,९२,९१,९०, ८८, ८४,८२,८० ७९, ७८, ७७
नपुंसकवेद	८	उपर्युक्त सर्व	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	९	९३,९२,९१,९०, ८८, ८४,८२, ७९, ७७

विशेषार्थ - स्त्री और पुरुषवेद में २४ प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है क्योंकि इस स्थान का उदय एकेन्द्रिय के ही पाया जाता है और एकेन्द्रिय के नियम से नपुंसकवेद होता है।

स्त्री और नपुंसकवेद में ८० व ७८ प्रकृतिक सत्त्वस्थान नहीं है क्योंकि तीर्थंकर प्रकृति की सत्तावाला पुरुषवेदसहित ही क्षपकश्रेणी चढ़ता है।

कषाय मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
४ कषाय	८	सर्व	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	११	९-१० छोड़कर शेष सर्व

ज्ञान मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान -

अण्णाणदुगे बंधो आदी छ णउंसयं व उदओ दु ।
सत्तं दुणउदिछक्कं विभंगबंधा हु कुमदिंव ।।७२३।।

अन्वयार्थ - **(अण्णाणदुगे)** कुमति और कुश्रुति इन दो अज्ञानों में, **(बंधो)** बन्धस्थान **(आदी छ)** २३ प्रकृतिक आदि छह स्थान **(उदओ दु)** और उदयस्थान, **(णउंसयं)** नपुंसक वेद वत् नौ स्थान **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(दुणउदिछक्कं)** बानवे आदि छह स्थान हैं। **(विभंगबंधा हु)** विभंग ज्ञान में बन्धस्थान **(कुमदिं व)** कुमति ज्ञानवत् हैं।

उदया उणतीसतियं सत्ता णिरयं व मदिसुदोहीए।
अडवीसपंचबंधा उदया पुरिसव्व अट्ठेव ।।७२४।।

अन्वयार्थ - विभंगज्ञान में **(उदया)** उदयस्थान **(उणतीस तियं)** उनतीस आदि तीन **(सत्ता)** सत्त्वस्थान **(णिरयं व)** नरक गति के समान हैं। **(मदिसुदोहीए)** मति, श्रुति और अवधिज्ञान में, **(अडवीस पंच बंधा)** अट्ठाईस प्रकृतिक आदि पाँच बंधस्थान हैं, **(उदया)** उदयस्थान **(पुरिसव्व अट्ठेव)** पुरुषवेद के समान आठ ही होते हैं ।

पढमचउ सीदिचऊ सत्तं मणपज्जवम्हि बंधंसा ।
ओहिव्व तीसमुदयं ण हि बंधो केवले णाणे ।।७२५।।

अन्वयार्थ - मति, श्रुत और अवधि ज्ञान में **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(पढमचउ सीदिचऊ)** तिरानवे आदि प्रथम चार और अस्सी आदि चार इस प्रकार आठ हैं। **(मणपज्जवम्हि)** मन:पर्यय ज्ञान में, **(बंधंसा)** बन्ध और सत्त्वस्थान **(ओहिव्व)** अवधिज्ञान के समान हैं। **(तीसमुदयं)** उदयस्थान तीस प्रकृतिक एक ही है। **(केवले**

णाणे) केवल ज्ञान में **(ण हि बंधो)** बंधस्थान का तो अभाव है।

संयम मार्गणा में बंध, उदय और सत्त्व स्थान -

उदओ सव्वं चदुपणवीसूणं सीदिछक्कयं सत्तं ।
सुदमिव सामायियदुगे उदओ पणवीस सत्तवीसचऊ।।७२६।।

अन्वयार्थ - (उदओ) केवल ज्ञान में उदय स्थान, **(चदुपणवीसूण सव्वं)** चौबीस और पच्चीस प्रकृति रहित सर्व स्थान हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(सीदि छक्कयं)** अस्सी आदि प्रकृति रूप छह स्थान हैं।

(सामायियदुगे) सामायिक और छेदोपस्थापना संयम में **(सुदमिव)** बंध और सत्त्वस्थान श्रुतज्ञानवत् जानना। **(उदओ)** उदयस्थान **(पणवीस सत्तवीसचऊ)** पच्चीस प्रकृतिक और सत्ताईस आदि चार इस प्रकार पाँच स्थान हैं।

परिहारे बंधतियं अडवीसचऊ य तीसमादिचऊ ।
सुहुमे एक्को बंधो मणं च उदयंसठाणाणि ।।७२७।।

अन्वयार्थ - (परिहारे) परिहार विशुद्धि संयम में **(बंधतियं)** बंध, उदय और सत्त्वस्थान क्रमसे **(अडवीसचऊ य)** अट्ठाईस आदि प्रकृतिरूप चार स्थान, **(तीसमादिचऊ)** तीस प्रकृतिरूप एक स्थान और सत्त्वस्थान आदि के चार (तिरानवे आदि चार) हैं। **(सुहुमे)** सूक्ष्मसांपराय संयम में, **(एक्को बंधो)** बंधस्थान एक प्रकृतिरूप **(उदयंसठाणाणि)** उदय और सत्त्वस्थान, **(मणं च)** मन:पर्ययवत् जानना।

जहखादे बंधतियं केवलयं वा तिणउदिचउ अत्थि ।
देसे अडवीसदुगं तीसदु तेणउदिचारि बंधतियं ।।७२८।।

अन्वयार्थ - (जहखादे) यथाख्यात संयम में **(बंधतियं)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान **(केवलयं वा)** केवलज्ञान के समान हैं, परन्तु सत्त्वस्थान **(तिणउदिचउ)** तिरानवे आदि प्रकृतिरूप चार भी **(अत्थि)** पाये जाते हैं। **(देसे)** देशसंयम में **(बंधतियं)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान क्रमसे **(अडवीसदुगं)** अट्ठाईस आदि प्रकृतिरूप दो; **(तीसदु)** तीस आदि प्रकृतिरूप दो, **(तेणउदिचारि)** तथा तिरानवे आदि प्रकृतिरूप चार हैं।

ज्ञान मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
कुमति, कुश्रुत	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	६	९२,९१,९०, ८८, ८४,८२,
विभङ्ग	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	३	२९,३०,३१	३	९२,९१,९०,
मति,श्रुत अवधि	५	२८,२९,३० ३१,१	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
मन:पर्यय	५	२८,२९,३० ३१,१	१	३०	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
केवलज्ञान	०	०	१०	२४,२५ छोड़कर	६	८०,७९,७८,७७, १०,९
संयममार्गणा						
सामायिक छेदो.	५	२८,२९,३० ३१,१	५	२५,२७,२८,२९, ३०	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
परिहार-विशुद्धि	४	२८,२९,३० ३१	१	३०	४	९३,९२,९१,९०
सूक्ष्म सांपराय	१	१	१	३०	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
यथाख्यात संयत	०	०	१०	२४,२५ छोड़कर सर्व	१०	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७, १०,९
देशसंयत	२	२८,२९	२	३०,३१	४	९३,९२,९१,९०
असंयत	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	७	९३,९२,९१,९०, ८८,८४,८२

अविरमणे बंधुदया कुमदिं व तिणउदिसत्तयं सत्तं ।
पुरिसं वा चक्खिदरे अत्थि अचक्खुम्मि चउवीसं ।।७२९।।

अन्वयार्थ - (अविरमणे) असंयम में **(बंधुदया कुमदिं व)** बंध और उदयस्थान कुमति ज्ञानवत् हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(तिणउदिसत्तयं)** तिरानवे आदि प्रकृति रूप सात स्थान हैं। **(चक्खिदरे)** चक्षु और अचक्षु दर्शन में **(पुरिसं वा)** बंध, उदय और सत्त्वस्थान पुरुषवेदवत् ही हैं, किन्तु **(अचक्खुम्मि)** अचक्षुदर्शन में **(चउवीसं)** चौबीस प्रकृति का उदयस्थान भी **(अत्थि)** पाया जाता हैं।

ओहिदुगे बंधतियं तण्णाणं वा किलिट्ठलेस्सतिये ।
अविरमणं वा सुहजुगलुदओ पुंवेदयं व हवे ।।७३०।।

अन्वयार्थ - (ओहिदुगे) अवधि दर्शन और केवल दर्शन में **(बंधतियं)** बंध, उदय और सत्त्व स्थान **(तण्णाणं वा)** अवधिज्ञान और केवलज्ञानवत् जानना चाहिये। **(किलिट्ठलेस्स- तिये)** कृष्ण, नील और कापोत लेश्या में बंध, उदय और सत्त्वस्थान **(अविरमणं वा)** असंयमवत् हैं। **(सुहजुगलुदओ)** शुभ युगल अर्थात् पीत और पद्म लेश्या में उदयस्थान **(पुंवेदयं व हवे)** पुरुषवेदवत् हैं।

दर्शन मार्गणा	**बंध स्थान संख्या**	**बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण**	**उदय स्थान संख्या**	**उदयस्थानगत प्रकृति विवरण**	**सत्त्व स्थान संख्या**	**सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण**
चक्षुदर्शन	८	सर्व	८	२१,२५,२६,२७,२८, २९,३०,३१	११	९,१०छोड़करशेष सर्व
अचक्षुदर्शन	८	सर्व	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	११	९,१०छोड़करशेष सर्व
अवधिदर्शन	५	२८,२९,३० ३१,१	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
केवलदर्शन	०	०	१०	२४,२५छोड़कर शेष सर्व	६	८०,७९,७८,७७ १०,९

अडवीसचऊबंधा पणछब्बीसं च अत्थि तेउम्मि ।
पढमचउक्कं सत्तं सुक्के ओहिंव वीसयं चुदओ ।।७३१।।

अन्वयार्थ - पीत और पद्म लेश्या में - **(बंधा)** बंधस्थान **(अडवीसचऊ)** अट्ठाईस आदि प्रकृतिरूप चार स्थान हैं। **(तेउम्मि)** तेजो लेश्या में **(पणछब्बीसं च अत्थि)** पच्चीस और छब्बीस प्रकृति स्थान भी है। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(पढमचउक्कं)** तिरानवे आदि प्रकृतिरूप चार हैं। **(सुक्के)** शुक्ल लेश्या में, बंध उदय और सत्त्वस्थान **(ओहिंव)** अवधि ज्ञान के समान हैं **(वीसयं चुदओ)** परन्तु इसमें बीस प्रकृतिक उदय स्थान भी पाया जाता हैं।

लेश्या मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
कृष्ण,नील कापोत	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	७	९३,९२,९१,९०, ८८,८४,८२
पीतलेश्या	६	२५,२६,२८, २९,३०,३१	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	४	९३,९२,९१,९०
पद्मलेश्या	४	२८,२९,३०, ३१	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	४	९३,९२,९१,९०
शुक्ललेश्या	५	२८,२९,३०, ३१,१	९	२०,२१,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७

भव्य मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान -

भव्वे सव्वमभव्वे बंधुदया अविरदिव्व सत्तं तु ।
णउदिचउ हारबंधणदुगहीणं सुदमिदुवसमे बंधो ।।७३२।।

अन्वयार्थ - (भव्वे) भव्य मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान **(सव्वं)** सभी हैं **(अभव्वे)** अभव्य मार्गणा में **(बंधुदया)** बंध और उदयस्थान **(अविरदिव्व)** असंयमवत् जानना। **(सत्तं तु)** किन्तु सत्त्वस्थान, **(णउदिचउ)** नब्बे आदि चार स्थान हैं। **(हारबंधणदुगहीणं)** अभव्य के आहारकद्विक युत ३० प्रकृतिक बन्धस्थान नहीं है। जबकि

अभव्य के उद्योत सहित तीस प्रकृतिक स्थान है। **(सुदमिदुवसमे बंधो)** उपशम सम्यक्त्व में बंध स्थान श्रुतज्ञानवत् हैं।

भव्य मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थानगत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
भव्य	८	सर्व	१२	सर्व	१३	सर्व
अभव्य	६	२३,२५,२६, २८,२९,३० आहारकद्विकयुत ३० का बंध नही	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	४	९०,८८,८४,८२

उदया इगिपणवीसं णववीसतियं च पढमचउसत्तं ।
उवसम इव बंधंसा वेदगसम्मे ण इगिबंधो ।।७३३।।

अन्वयार्थ - (उदया) उदयस्थान **(इगिपणवीसं णव वीस तियं)** इक्कीस, पच्चीस, उनतीस, तीस, इकत्तीस **(च पढम चउसत्तं)** और सत्त्वस्थान तिरानवे आदि चार हैं। **(वेदगसम्मे)** वेदक सम्यक्त्व में **(बंधंसा)** बन्ध और सत्त्व **(उवसम इव)** उपशम सम्यक्त्व के समान है, परन्तु **(ण इगिबंधो)** यहाँ पर एक प्रकृतिक बन्धस्थान नहीं है।

उदया मदिव्व खयिये बंधादी सुदमिवत्थि चरिमदुगं ।
उदयंसे वीसं च य साणे अडवीसतियबंधो ।।७३४।।

अन्वयार्थ - (उदया मदिं व) वेदक सम्यक्त्व में उदयस्थान मतिज्ञानवत् हैं। **(खयिये)** क्षायिक सम्यक्त्व में **(बंधादी)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान **(सुदमिवत्थि)** श्रुतज्ञानवत् होते हैं। किन्तु विशेषता यह है कि **(उदयंसे)** उदय और सत्त्व में **(चरिमदुगं)** अंतिम दो दो स्थान और उदय में **(वीसं च)** बीस प्रकृति स्थान भी होता है। **(साणे)** सासादन सम्यक्त्व में, **(अडवीसतियबंधो)** बंधस्थान अट्ठाईस प्रकृतिक आदि तीन होते हैं।

उदया इगिवीसचऊ णववीसतियं च णउदियं सत्तं ।
मिस्से अडवीसदुगं णववीसतिय च बंधुदया ।।७३५।।

अन्वयार्थ - सासादन सम्यक्त्व में **(उदया)** उदयस्थान, **(इगिवीसचऊ)** इक्कीस आदि चार, **(णववीसतियं)** उनतीस आदि तीन, **(च सत्तं)** और सत्त्वस्थान **(णउदियं)** नब्बे प्रकृतिरूप एक होता है। **(मिस्से)** सम्यग्मिथ्यात्व में **(बंधुदया)** बंध और उदय स्थान क्रम से **(अडवीसदुगं)** अट्ठाईस और उनतीस प्रकृतिक तथा **(णववीसतिय)** उनतीस प्रकृतिक आदि तीन स्थान होते हैं।

बाणउदिणउदिसत्तं मिच्छे कुमदिव्व होदि बंधतियं ।
पुरिसं वा सण्णीये इदरे कुमदिव्व णत्थि इगिणउदि ।।७३६।।

अन्वयार्थ - (बाणउदिणउदिसत्तं) सत्त्वस्थान बानवे व नब्बे प्रकृतिक होते हैं। **(मिच्छे)** मिथ्यादृष्टि में, **(बंधतियं)** बन्ध,उदय और सत्त्वस्थान **(कुमदिव्व)** कुमतिवत् **(होदि)** होते हैं। **(सण्णीये)** संज्ञी में , बन्ध, उदय और सत्त्व का कथन **(पुरिसं वा)** पुरुष वेद के समान जानना। **(इदरे)** असंज्ञी मार्गणा में, बन्धादि तीनों स्थान **(कुमदिव्व)** कुमति ज्ञानवत् जानना, परन्तु इसमें **(इगिणउदि णत्थि)** इक्यानवे प्रकृतिक स्थान नहीं है।

सम्यक्त्व मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
उपशम सम्यक्त्व	५	२८,२९,३०,३१,१	५	२१,२५,२९,३०,३१	४	९३,९२,९१,९०,
वेदक सम्यक्त्व	४	२८,२९,३०,३१	८	२१,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१	४	९३,९२,९१,९०
क्षायिक सम्यक्त्व	५	२८,२९,३०,३१,१	११	२०,२१,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१,९,८	१०	९३,९२,९१,९०,८०,७९,७८,७७,१०,९
सासादन	३	२८,२९,३०	७	२१,२४,२५,२६,२९,३०,३१	१	९०

सम्यक्त्व मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
मिश्र	२	२८,२९	३	२९,३०,३१	२	९२,९०
मिथ्यात्व	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	६	९२,९१,९०, ८८,८४,८२

विशेषार्थ - वेदकसम्यक्त्व ४ थे से ७ वें गुणस्थानतक ही होता है अत: उसमें १ प्रकृतिक बंधस्थान नहीं है।

द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि मरकर वैमानिक देवों में उत्पन्न होता है तब अपर्याप्त अवस्था में उपशम सम्यक्त्व पाया जाता है उसके क्रम से २१,२५ प्रकृतिका उदय आता है २७, २८ प्रकृति का उदयस्थान उसके संभव नही हैं क्योंकि वह २७ के उदयकाल के पूर्व ही वेदकसम्यग्दृष्टि बन जाता है।

सासादन सम्यक्त्वी के भी २७, २८ का उदयस्थान नहीं हैं क्योंकि २७,२८ का उदय आने के पूर्व वह जीव सासादन को छोड़कर मिथ्यात्व में जाता है।

संज्ञी मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान

संज्ञी मार्गणा	बंध स्थान संख्या	बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण	उदय स्थान संख्या	उदयस्थानगत प्रकृति विवरण	सत्त्व स्थान संख्या	सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण
संज्ञी	८	सर्व	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	११	९३,९२,९१,९०, ८८,८४,८२,८०, ७९,७८,७७
असंज्ञी	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८, ८४,८२

आहार मार्गणा में बन्ध, उदय और सत्त्व स्थान -

आहारे बंधुदया संढं वा णवरि णत्थि इगिवीसं ।
पुरिसं वा कम्मंसा इदरे कम्मंव बंधतियं ।।७३७।।

अत्थि णवट्ठुपदुदओ दस णवसत्तं च विज्झदे एत्थ ।
इदि बंधुदयप्पहुडी सुदणामे सारमादेसे ।।७३८।।

अन्वयार्थ - (आहारे) आहार मार्गणा में **(बंधुदया)** बन्ध और उदयस्थान, **(संढं वा)** नपुंसक वेद के समान हैं। किन्तु यहाँ **(णवरि इगिवीसं णत्थि)** केवल इक्कीस प्रकृतिक स्थान नहीं है। **(कम्मंसा)** सत्त्वस्थान **(पुरिसं वा)** पुरुष वेद के समान है। **(इदरे)** अनाहार मार्गणा में **(बंधतियं)** बन्ध, उदय और सत्त्वस्थान **(कम्मंव)** कार्मण काययोगवत् हैं। किन्तु अयोग केवली के **(दुदओ णवट्ठुय अत्थि)** नौ और आठ, दो उदय स्थान **(दसणव सत्तं च)** और दस व नौ सत्त्वस्थान **(विज्झदे)** होते हैं। **(इदि)** इस प्रकार **(आदेसे)** चौदह मार्गणाओं में **(बंधुदयप्पहुडी)** बन्ध, उदय और सत्त्व के त्रिसंयोग का **(सारं)** सार **(सुदणामे)** आगम में स्पष्टरूप से कहा।

आहार मार्गणा	**बंध स्थान संख्या**	**बंधस्थान-गत प्रकृति विवरण**	**उदय स्थान संख्या**	**उदयस्थानगत प्रकृति विवरण**	**सत्त्व स्थान संख्या**	**सत्त्वस्थानगत प्रकृति विवरण**
आहार	८	सर्व	८	२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	११	१०,९ छोड़कर शेष सर्व
अनाहार	६	२३,२५,२६, २८,२९,३०	४	२०,२१,९,८	१३	सर्व

विशेषार्थ - अनाहारमार्गणा विग्रहगति कार्मणकाययोग में, प्रतर, लोकपूरण समुद्घात में, और अयोगीगुणस्थान में पायी जाती है अतः उदयस्थान २० (सामान्यकेवली), २१ (तीर्थंकर केवली) व विग्रहगति की अपेक्षा, तथा ९, ८ अयोगी की अपेक्षा पाये जाते हैं।

चारुसुदंसणधरणे कुवलयसंतोसणे समत्थेण ।
माधवचंदेण महावीरेणत्थेण वित्थरिदो ।।७३९।।

अन्वयार्थ - (चारु) उत्कृष्ट, **(सुदंसणधरणे)** सम्यग्दर्शन धारण करने में तथा **(कुवलय- संतोसणे)** पृथ्वीमंडल को आनन्द करने में, **(समत्थेण)** समर्थ, **(माधवचंदेण)** माधवचन्द्र अर्थात् नेमिनाथ भगवान और **(महावीरेणत्थेण)** महावीर

तीर्थंकर ने परमार्थ से **(वित्थरिदो)** पूर्व कथन का विस्तार किया है अथवा माधवचन्द्र और वीरनन्दी आचार्यों ने किया, ऐसा भी अर्थ निकलता है।

बन्ध को आधार तथा उदय और सत्त्व को आधेय बनाकर कथन करते हैं -

णवपंचोदयसत्ता तेवीसे पण्णुवीसछब्बीसे ।
अट्ठचदुरट्ठवीसे णवसत्तुगुतीस तीसम्मि।।७४०।।
एगेगं इगितीसे एगे एगुदयमट्ठसत्ताणि ।
उवरदबंधे दस दस उदयंसा होंति णियमेण ।।७४१।।

अन्वयार्थ - (तेवीसे पण्णुवीसछब्बीसे) तेईस, पच्चीस और छब्बीस बन्धस्थानों में, **(णवपंचोदयसत्ता)** नौ उदयस्थान तथा पाँच सत्त्वस्थान हैं। **(अट्ठचदुरट्ठवीसे)** अट्ठाईस प्रकृतिक बन्धस्थान में, उदयस्थान आठ और सत्त्वस्थान चार हैं। **(णवसत्तुगुतीस तीसम्मि)** उनतीस और तीस प्रकृतिक बंधस्थानों में, उदयस्थान नौ और सत्त्वस्थान सात हैं। **(इगितीसे)** इकतीस प्रकृतिक बंध स्थान में उदय और सत्त्वस्थान **(एगेगं)** एक-एक हैं। **(एगे)** एक प्रकृतिक बन्ध स्थान में, **(एगुदयमट्ठ सत्ताणि)** एक उदयस्थान, सत्त्वस्थान आठ हैं। **(उवरदबंधे)** उपरतबंध अर्थात् बन्धरहित स्थानों में, **(उदयंसा)** उदय और सत्त्व स्थान, **(णियमेण)** नियम से **(दस दस होंति)** दस दस होते हैं।

नाम कर्म के उपर्युक्त स्थानों में प्रकृति संख्या -

तियपणछवीसबंधे इगिवीसादेक्कतीस चरिमुदया ।
बाणउदीणउदिचऊ सत्तं अडवीसगे उदया ।।७४२।।
पुव्वंव ण चउवीसं बाणउदिचउक्कसत्तमुगुतीसे ।
तीसे पुव्वं उदया पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ।।७४३।।

अन्वयार्थ - (तियपणछवीसबंधे) तेईस, पच्चीस और छब्बीस प्रकृति के बन्ध-स्थानों में, **(इगिवीसादेक्कतीस चरिमुदया)** उदयस्थान इक्कीस से लेकर इकत्तीस प्रकृतिक स्थान पर्यन्त नौ, **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(बाणउदीणउदिचऊ)** बानवे और नब्बे प्रकृतिक आदि चार कुल पाँच स्थान होते हैं। **(अडवीसगे)** अट्ठाईस प्रकृतिक बन्ध स्थान में, **(उदया)** उदय स्थान, **(पुव्वं व)** पूर्व के समान नौ स्थान, **(ण चउवीसं)** परन्तु चौबीस

प्रकृतिक से रहित, **(बाणउदि चउक्कसत्तं)** सत्त्वस्थान बानवे आदि चार **(उगुतीसे)** उनतीस प्रकृतिक बन्धस्थान में, **(तीसे)** और तीस प्रकृतिक बंधस्थान में, **(उदया पुव्वं)** उदयस्थान पूर्ववत् नौ जानना। **(सत्तं पढमिल्लं सत्तयं)** सत्त्वस्थान सात - प्रथम अर्थात् तिरानवे आदि प्रकृति रूप सात स्थान हैं।

इगितीसे तीसुदओ तेणउदी सत्तयं हवे एगे।
तीसुदओ पढमचऊ सीदादिचउक्कमवि सत्तं ।।७४४।।

अन्वयार्थ - (इगितीसे) इकत्तीस प्रकृतिक बंधस्थान में **(तीसुदओ)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान **(सत्तयं तेणउदी)** सत्त्वस्थान ९३ प्रकृतिक है। **(एगे हवे)** एक प्रकृतिक बन्धस्थान में **(तीसुदओ)** उदयस्थान तीस प्रकृतिक, **(सत्तं)** सत्त्व स्थान, **(पढम चऊ)** प्रथम चार अर्थात् तिरानवे आदि प्रकृति रूप चार व **(सीदादिचउक्कमवि)** अस्सी आदि प्रकृति रूप चार स्थान भी ऐसे आठ हैं।

उवरदबंधेसुदया चउपणवीसूण सव्वयं होदि ।
सत्तं पढमचउक्कं सीदादीछक्कमवि होदि ।।७४५।।

अन्वयार्थ - (उवरदबंधेसुदया) बन्ध रहित में, उदयस्थान, **(चउपणवीसूण)** चौबीस और पच्चीस प्रकृतिक स्थानों से रहित **(सव्वयं होदि)** सभी होते हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(पढमचउक्कं)** तिरानवे आदि प्रथम चार, **(सीदादीछक्कमवि होदि)** तथा अस्सी आदि प्रकृतिक ६ स्थान भी होते हैं। इसप्रकार कुल दस स्थान होते हैं।

नामकर्म के त्रिसंयोगीभंग में एक अधिकरण और दो आधेय

सर्वप्रथम बंध आधार और उदय सत्त्व आधेय

अधिकरण		आधेय			
बंधस्थान		उदयस्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्वस्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
१	२३	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८,८४,८२
२	२५	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८,८४,८२

अधिकरण		आधेय			
बंधस्थान		उदयस्थान संख्या	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्वस्थान संख्या	सत्त्वस्थानों का विवरण
३	२६	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८,८४,८२
४	२८	८	२१,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	४	९२,९१,९०,८८
५	२९	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	७	९३,९२,९१,९०,८८, ८४,८२
६	३०	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	७	९३,९२,९१,९०,८८, ८४,८२
७	३१	१	३०	१	९३
८	१	१	३०	८	९३,९२,९१,९०,८०,७९, ७८,७७
उपरतबंध ०		१०	२०,२१,२६,२७,२८, २९,३०,३१,९,८	१०	९३,९२,९१,९०,८०,७९, ७८,७७,१०,९

विशेषार्थ - उपर्युक्त कथन का आशय यह है कि जिस जीव के जिस काल में इतनी इतनी प्रकृतियों का बन्ध होता है उस काल में उस जीव के इतना इतना उदय और इतना सत्त्व पाया जाता है। एक बन्धस्थान में अनेक उदयस्थान और सत्त्वस्थान कहे हैं उनमें से एक जीव के एक समय में कोई एक उदयस्थान और कोई एक सत्त्वस्थान होगा।

जैसे किसी जीव के २३ का बंध हो रहा हो तब इक्कीसादि नव उदयस्थानों में से यथासंभव एक उदयस्थान और ९२ आदि पाँच सत्त्वस्थानों में से एक सत्त्वस्थान होगा।

नाना जीवों की अपेक्षा एकसाथ और एक जीव की अपेक्षा क्रम से २३ के बंध में ९ उदयस्थान और ५ सत्त्वस्थान होते हैं। इसीप्रकार शेष सर्व बंधस्थानों में उदयस्थान और सत्त्वस्थान जानना।

तेईस का बन्धस्थान एकेन्द्रिय अपर्याप्तसहित है। इस स्थान को देव और नारकी छोड़कर शेष त्रस, स्थावर, तिर्यंच व मनुष्य ही बाँधते हैं। २३,२५,२६ प्रकृतिक बंधस्थानों को मिथ्यादृष्टि ही बाँधते हैं।

बंध स्थान	बंधस्थान का प्रकार	संदृष्टि	बंधस्थान के स्वामी
२३	एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत	ए. अ.	मिथ्यादृष्टि सर्व कर्मभूमिज तिर्यंच, मनुष्य
२५	एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत	ए.प.	मिथ्यादृष्टि सर्व कर्मभूमिज तिर्यंच, मनुष्य, भवनत्रिक व सौधर्मद्विक के देव
	त्रस अपर्याप्तयुत	त्र.अ.	मिथ्यादृष्टि कर्मभूमिज सर्व तिर्यंच व मनुष्य
२६	एकेन्द्रिय पर्याप्त आतपयुत एकेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	ए.प.आ ए.प.उ	मिथ्यादृष्टि कर्मभूमिज सर्व तिर्यंच, मनुष्य, भवनत्रिक व सौधर्मद्विक देव
२८	नरकगतियुत	न.	असंज्ञी, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य मिथ्यादृष्टि
	देवगतियुत	दे.	असंज्ञी, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य १ से ८ गुणस्थानवर्ती पर्याप्तकाल में
२९	द्वीन्द्रिय पर्याप्तयुत	द्वी.प	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत	त्री.प.	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	चतुरिन्द्रिय पर्याप्तयुत	च.प.	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत	पं.प.	चारों गति के जीव
	मनुष्य पर्याप्तयुत	म.प.	चारों गति के जीव
	देवतीर्थयुत	दे. ती.	कर्मभूमिज मनुष्य सम्यग्दृष्टि
३०	द्वीन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	द्वी.प.उ	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	त्रीन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	त्री.प.उ.	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	चतुरिन्द्रियपर्याप्तउद्योतयुत	च.प.उ.	मिथ्यादृष्टि तिर्यंच व मनुष्य
	पंचेन्द्रिय पर्याप्तउद्योतयुत	पं.प.उ.	चारों गति के जीव
	मनुष्य तीर्थयुत	म.ती.	देव व नारकी सम्यग्दृष्टि
	देवआहारकयुत	दे.आ.	७ वें ८ वें गुणस्थानवर्ती संयत मनुष्य
३१	देवतीर्थआहारकयुत	दे.ती.आ.	७ वें ८ वें गुणस्थानवर्ती संयत मनुष्य
१	यशस्कीर्ति (गतिरहित)		८ वें के ७ वें भाग से १० वें गुणस्थानतक

आतप और उद्योत का उदय तेजस्कायिक, वायुकायिक, साधारण वनस्पति, सूक्ष्मजीव और अपर्याप्तकों में नहीं होता, लेकिन इसका बंध हो सकता है।

बन्ध आधार, उदय सत्त्व आधेय

अधिकरण (आधार)		आधेय			
बंधस्थान का स्वामी	बंधस्थान	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
सर्व तिर्यंच	२३ ए.अ.	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	५	९२,९०, ८८, ८४, ८२
कर्मभूमिज मनुष्य	२३ ए.अ.	५	२१,२६,२८,२९,३०	४	९२, ९०, ८८, ८४
सर्व तिर्यंच	२५ ए.प. त्र.अ.	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	५	९२,९०, ८८, ८४, ८२
मनुष्य	२५ ए.प. त्र.अ.	५	२१,२६,२८,२९,३०	४	९२, ९०, ८८, ८४
भवनत्रिक, सौधर्मद्विक	२५ ए. प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२, ९०
तिर्यंच	२६ए.प.आ /ए.प.उ.	९	२१,२४,२५,२६, २७,२८,२९,३०,३१	५	९२, ९०, ८८, ८४, ८२
मनुष्य	२६ए.प.आ /ए.प.उ.	५	२१, २६, २८, २९, ३०	४	९२, ९०, ८८, ८४
भवनत्रिक, सौधर्मद्विक	२६ए.प.आ /ए.प.उ.	५	२१, २५, २७, २८, २९	२	९२, ९०
तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	२८ १) न. २) दे.	४	२८, २९, ३०, ३१	३	९२, ९०, ८८
ति.सासादन	२८ दे.	२	३०, ३१	१	९०
ति. मिश्र	२८ दे.	२	३०, ३१	२	९२, ९०
तिर्यंच असंयत }	२८ दे.	६	२१,२६, २८, २९, ३०, ३१	२	९२, ९०
ति.देशसंयत	२८ दे.	२	३०, ३१	२	९२, ९०

अधिकरण (आधार)		आधेय			
बंधस्थान का स्वामी	बंधस्थान	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
मनुष्य मिथ्यादृष्टि	२८ १)न. २) दे.	३	२८, २९, ३०	४	९२, ९१, ९०, ८८
म.सासादन	२८ दे.	१	३०	१	९०
मनुष्य मिश्र	२८ दे.	१	३०	२	९२, ९०
म. असंयत	२८ दे.	५	२१,२६,२८,२९,३०	२	९२, ९०
म.देशसंयत.	२८ दे.	१	३०	२	९२, ९०
म. प्रमत्त	२८ दे.	५	२५,२७,२८,२९,३०	२	९२, ९०
म.७,८ गुण.	२८ दे.	१	३०	२	९२, ९०

विशेषार्थ - १) ८२ प्रकृति के सत्त्वसहित तेजकाय, वातकाय से मरकर पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होनेपर विग्रहगति व शरीरमिश्रकाल में तिर्यंचगतियुत २३, २५, २६, २९ का बन्ध होता है तब सत्त्व ८२ का होता है। मनुष्यगतिसहित २५, २९ का बन्ध होते समय ८२ का सत्त्व नहीं होता।

२) एकेन्द्रिय विकलत्रय जीव के नारक चतुष्क की उद्वेलना करके पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकों में उत्पन्न होनेपर विग्रहगति व शरीरमिश्रकाल में ८४ का सत्त्व होता है तब २८ का बन्ध नहीं होता। अत: २८ के बन्धकाल में ८२ व ८४ का सत्त्व नहीं कहा।

३) तेजकायिक, वातकायिक मनुष्यगति में उत्पन्न नहीं होते अत: मनुष्य के ८२ का सत्त्व नहीं होता।

४) नारकचतुष्क की उद्वेलना सहित एकेन्द्रिय, विकलत्रय जीव मनुष्यगति में उत्पन्न होनेपर विग्रहगति व शरीरमिश्रकाल में २८ का बंध नहीं करते अत: मिथ्यादृष्टि मनुष्य को २८ के बन्ध में ८४ का सत्त्व नहीं होता। शरीरपर्याप्ति पूर्ण होनेपर नारक चतुष्क अथवा देवचतुष्क का बंध होता है तब ८८ का सत्त्व रहता है अत: २८ के बंध में ८८ का सत्त्व पाया जाता है।

५)पूर्व में जिसने नरकायु का बन्ध किया है ऐसा असंयत सम्यग्दृष्टि जब दूसरी या

तीसरी पृथिवी में जाने के अभिमुख होता है तब मिथ्यादृष्टि होकर नरकगतिसहित २८ का बन्ध करता है तब उदय ३० का व सत्त्व ९१ का होगा। ९१ का सत्त्व मिथ्यादृष्टि के इसी अपेक्षा संभव है। २८ के बंध में ९१ का सत्त्व भी इसी एक अपेक्षा से है, अन्यप्रकार से नहीं।

६) चौथे गुणस्थान में २८ के बंध में ९१ का सत्त्व नहीं होता क्योंकि तीर्थंकर के बन्ध का प्रारम्भ होने के पश्चात् जिसे नरकायु का बन्ध नहीं हुआ वह सम्यक्त्व से च्युत नहीं होगा उसको तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध निरन्तर होता है इसलिए उसे देवतीर्थयुत २९ का बंध होता है। २८ का बंध नहीं होता।

७) प्रमत्तसंयत गुणस्थान में २८ के बंध में २५, २७, २८, २९ प्रकृति का उदय रहते हुये ९२ प्रकृति का ही सत्त्व होता है, ९० का नहीं क्योंकि आहारकशरीर के उदयसहित है तो आहारकद्विक की सत्ता नियम से होगी। ३० प्रकृति के उदय में ९२ या ९० का सत्त्व होता है।

८) मनुष्य अथवा तिर्यंच मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त अवस्था में नरकगतियुत अथवा देवगतियुत २८ प्रकृति का बन्ध नहीं करते अत: २८ के बन्ध में २१ और २६ का उदय नहीं कहा। क्योंकि २१ और २६ छब्बीस का उदय अपर्याप्त काल में होता है।

९) तिर्यंच असंयत के २८ देवगतियुत बंध में २१, २६, २८, २९ प्रकृतिक उदयस्थान भोगभूमिजों की अपेक्षा बताया है। यहाँ से कृतकृत्यवेदक या क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर भोगभूमि में उत्पन्न होता है उसके उपर्युक्त स्थान होते हैं।

२९ प्रकृतिक बन्ध में उदय सत्त्वस्थान का कोष्टक अगले पृष्ठपर है उसका विशेष विवरण :-

१) २९ के बन्ध में ९१ का सत्त्व प्रथम तीन नरकों में मिथ्यात्व गुणस्थान में अपर्याप्त काल में ही संभव है। जिसने तीर्थंकर का बंध प्रारम्भ किया है वह नरक में सम्यक्त्व होने पर मनुष्य तीर्थयुत ३० प्रकृति का ही बंध करेगा। २९ का बंध नहीं करेगा।

२) तिर्यंचों में ३ रे, ४ थे, ५ वें गुणस्थानों में २९ का बंध नहीं होता क्योंकि तिर्यंचों में तिर्यंच व मनुष्य गति की बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में होती है, मनुष्यों में भी इसीप्रकार है किन्तु मनुष्यों में चौथे आदि गुणस्थानों में देवतीर्थयुत २९ का बंध संम्भव है।

३) जिस मनुष्य ने पूर्व में नरकायु का बन्ध किया है व अनन्तर तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया हो तो वह नरकगति जानेके सन्मुख होनेपर मिथ्यादृष्टि होगा(क्षायिकसम्यक्त्व

प्राप्त न हो तो) उसके २९ मनुष्यपर्याप्तियुत का बंध होगा, उदय ३० और सत्त्व ९१ का होगा।

४) भवनत्रिक के अपर्याप्त अवस्था में चौथा गुणस्थान नहीं होता अत: वहाँ २९ का ही उदयस्थान है।

अधिकरण		**आधेय**			
बंधस्थान का स्वामी	**बंधस्थान**	**उदय स्था**	**उदयस्थानों का विवरण**	**सत्त्व स्था**	**सत्त्वस्थानों का विवरण**
नारकी मिथ्यादृष्टि	२९ १)पं.प.२)म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	३	९२,९१,९०
नारकी सासादन	२९ १)पं.प.२)म.प.	१	२९	१	९०
मिश्र	२९ १) म.प.	१	२९	२	९२,९०
प्रथमनरक असंयत	२९ १) म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
शेष नरक असंयत	२९ १) म.प.	१	२९	२	९२,९०
तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	२९ प्रथम ५ प्रकार	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८, ८४,८२
तिर्यंच सासादन	२९ १)पं.प.२)म.प.	५	२१,२४,२६,३०,३१	१	९०
मनुष्य मिथ्यादृष्टि	२९ प्रथम ५ प्रकार	५	२१,२६,२८,२९,३०	५	९२,९१,९०, ८८,८४
मनुष्य सासादन	२९ १)पं.प.२)म.प.	३	२१,२६,३०	१	९०
मनुष्य असंयत	२९ दे.ती.	५	२१,२६,२८,२९,३०	२	९३,९१
मनुष्य देशसंयत	२९ दे.ती.	१	३०	२	९३,९१
मनुष्य प्रमत्त	२९ दे.ती.	५	२५,२७,२८,२९,३०	२	९३,९१
मनुष्य अप्रमत्त	२९ दे.ती.	१	३०	२	९३,९१
मनुष्य अपूर्वकरण	२९ दे.ती.	१	३०	२	९३,९१

अधिकरण		आधेय			
बंधस्थान का स्वामी	बंधस्थान	उदय स्था	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्था	सत्त्वस्थानों का विवरण
भवनत्रिकसे १२ वें स्वर्गतकदेव मिथ्या.	२९ १)पं.प. २)म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
सासादन	२९ पं.प.म.प.	३	२१,२५,२९,	१	९०
मिश्र	२९ म.प.	१	२९	२	९२,९०
भवनत्रिक असंयत	२९ म.प.	१	२९	२	९२,९०
१ से१२स्वर्गकेअसंयत	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
१३वें स्वर्गसे उपरिम ग्रैवेयकतक मिथ्यादृष्टि	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
सासादन	२९ म.प.	३	२१,२५,२९	१	९०
मिश्र	२९ म.प.	१	२९	२	९२,९०
असंयत	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
नव अनुदिश, पंच अनुत्तर असंयत	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
नारकी मिथ्यादृष्टि	३० पं.प.उ	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
सासादन	३० पं.प.उ	१	२९	१	९०
प्र.नरक के असंयत	३० म.तीर्थ	५	२१,२५,२७,२८,२९	१	९१
द्वि.तृ.नरककेअसंयत	३० म.तीर्थ	१	२९	१	९१
तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	३० प्रथम चार प्रक़ार	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१	५	९२,९०,८८, ८४,८२
तिर्यंच सासादन	३० पं.प.उ	५	२१,२४,२६,३०,३१	१	९०
मनुष्य मिथ्यादृष्टि	३०प्रथम ४ प्रक़ार	५	२१,२६,२८,२९,३०	४	९२,९०,८८ ८४
मनुष्य सासादन	३० पं.प.उ	३	२१,२६,३०	१	९०
मनुष्य अप्रमत्त } अपूर्वकरण	३० दे.आ.	१	३०	१	९२

अधिकरण		आधेय			
बंधस्थान का स्वामी	बंधस्थान	उदय स्था	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्था	सत्त्वस्थानों का विवरण
भवनत्रिकसे १२ वें स्वर्गतकदेव मिथ्या.	३० पं.प.उ	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९२,९०
सासादन	३० पं.प.उ	३	२१,२५,२९,	१	९०
१ से१२ स्वर्ग के असंयत	३० म.तीर्थ	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९३,९१
१३ वें स्वर्गसे सर्वार्थ-सिद्धि तक के असंयत	३० म.तीर्थ	५	२१,२५,२७,२८,२९	२	९३,९१
मनुष्य अप्रमत्त अपूर्वकरण	३१ दे.आ.ती	१	३०	१	९३
अपू.सप्तमभाग	१ यशस्कीर्ति	१	३०	४	९३,९२,९१,९०
अनिवृत्ति, सूक्ष्मसां.	१ यशस्कीर्ति	१	३०	८	९३,९२,९१,९०,८०,७९,७८,७७
उपशान्तकषाय	० उपरतबंध	१	३०	४	९३,९२,९१,९०
क्षीणकषाय	० उपरतबंध	१	३०	४	८०,७९,७८,७७
सयोगकेवली	० उपरतबंध	२	३०,३१	४	८०,७९,७८,७७
समुद्घात सयोग-केवली	० उपरतबंध	८	२०,२१,२६,२७,२८,२९,३०,३१	४	८०,७९,७८,७७
अयोगकेवली	० उपरतबंध	२	९,८	६	८०,७९,७८,७७,१०,९

विशेषार्थ - १) नारकी जीव को मिश्र में ३० का बंध नहीं होता क्योंकि दूसरे गुणस्थान में तिर्यंचगति की बंधव्युच्छित्ति होती है अत: ३० के प्रथम चार प्रकार संभव नहीं और मिश्र में तीर्थंकर का बंध नहीं होता अत: मनुष्यतीर्थयुत ३० का बंध नहीं होता।

२) चौथे से सातवें नरकतक ३० मनुष्यतीर्थ का बंध नहीं होता।

३) तिर्यंच में मिश्रादि तीन गुणस्थानों में ३० का बंध नहीं होता।

४) मनुष्य में ३-४-५-६ गुणस्थानों में ३० का बंध नहीं होता।

५) भवनत्रिक देवों को मिश्र व असंयत गुणस्थानों में व १ से १२ स्वर्गो के देवों को मिश्र गुणस्थान में ३० का बंध नहीं होता क्योंकि वहाँ तिर्यंचगति का व तीर्थंकर का बंध नहीं होता।

६) १३ वें स्वर्ग से नौग्रैवेयतक के देवों को १,२,३ गुणस्थानों में ३० का बंध नहीं होता।

नामकर्म के उदय स्थान को आधार और बन्ध-सत्त्व स्थानों को आधेय मानकर कथन करते हैं -

वीसादिसु बंधंसा णभदुछणवपणपणं च छस्सत्तं ।
छण्णव छड दुसु छद्दस अट्ठदसं छक्कछक्क णभतिदुसु ।।७४६।।

अन्वयार्थ - (वीसादिसु) बीस आदि प्रकृति रूप उदयस्थानों में **(बंधंसा)** बंध और सत्त्वस्थान क्रमसे बीस प्रकृति में **(णभदु)** बंधस्थान शून्य, सत्त्वस्थान दो; इक्कीस प्रकृतिक उदयस्थानों में, **(छणव)** बंधस्थान छह, सत्त्वस्थान नौ; चौबीस प्रकृतिक उदयस्थानों में, **(पणपणं)** बंधस्थान पाँच, सत्त्वस्थान पाँच; पच्चीस प्रकृतिक उदयस्थानों में **(छस्सत्तं)** बंधस्थान छह और उदयस्थान सात; छब्बीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(छण्णव)** बंधस्थान छह और सत्त्वस्थान नौ **(दुसु)** सत्ताईस और अट्ठाईस प्रकृतिक उदयस्थान में **(छड)** बन्धस्थान छह और सत्त्वस्थान आठ; उनतीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(छद्दस)** बंधस्थान छह और सत्त्वस्थान दस, तीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(अट्ठदसं)** बंधस्थान आठ और सत्त्वस्थान दस हैं, इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(छक्कछक्क)** बंधस्थान और सत्त्वस्थान छह, छह हैं। **(दुसु)** नौ तथा आठ प्रकृतिक उदयस्थानों में **(णभति)** बन्धस्थान शून्य और सत्त्वस्थान तीन हैं।

वीसुदये बंधो ण हि उणसीदी सत्तसत्तरी सत्तं ।
इगिवीसे तेवीसं पहुडी तीसंतया बंधा ।।७४७।।

अन्वयार्थ - (वीसुदये) बीस प्रकृति के उदयस्थान में, **(बंधो ण हि)** बन्धस्थान नहीं हैं। **(सत्तं)** सत्त्वस्थान, **(उणसीदी सत्तसत्तरी)** उन्यासी तथा सतहत्तर का है। **(इगिवीसे)** इक्कीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बंधा)** बंधस्थान, **(तेवीसं पहुडी तीसंतया)** तेईस प्रकृतिक स्थान से लेकर तीस प्रकृतिक स्थान तक हैं।

सत्तं तिणउदिपहुडी सीदंता अट्ठसत्तरी य हवे ।
चउवीसे पढमतियं णववीसं तीसयं बंधो ।।७४८।।

अन्वयार्थ - (सत्तं) सत्त्वस्थान, **(तिणउदिपहुडी सीदंता अट्ठसत्तरी य हवे)** तिरानवे से लेकर अस्सी तक तथा अठहत्तर प्रकृतिक होते हैं। **(चउवीसे)** चौबीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(बंधो)** बन्धस्थान, **(पढमतियं)** प्रथम तीन और **(णववीसं तीसयं)** उनतीस, तीस प्रकृतिक इस प्रकार पाँच हैं।

बाणउदीणउदिचऊ सत्तं पणछस्सगट्ठणवबीसे।
बंधा आदिमछक्कं पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ।।७४९।।
ते णवसगसदरिजुदा आदिमछस्सीदि अट्ठसदरीहिं ।
णवसत्तसत्तरीहिं सीदिचउक्केहि सहिदाणि ।।७५०।।

अन्वयार्थ - (सत्तं) सत्त्वस्थान, **(बाणउदी)** बानवे, **(णउदिचऊ)** नब्बे आदि चार स्थान हैं। **(पणछस्सगट्ठणवबीसे)** पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस और उनतीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बंधा)** बंधस्थान, **(आदिमछक्कं)** आदि के छह स्थान **(सत्तं)** सत्त्वस्थान **(पढमिल्लं)** आदि के **(सत्तयं)** सात **(ते णवसगसदरिजुदा)** उन्यासी और सतहत्तर से सहित नौ हैं, (सत्ताईस प्रकृति स्थान में) सत्त्वस्थान **(आदिमछस्सीदि अट्ठसदरीहिं)** आदि के छह, अस्सी और अठहत्तर प्रकृतिक स्थान इस प्रकार आठ हैं। (अट्ठाईस प्रकृतिक उदयस्थान में) सत्त्वस्थान **(णवसत्तसत्तरीहिं)** आदि के छह और उन्यासी और सतहत्तर इस प्रकार आठ हैं; (उनतीस प्रकृतिक उदय स्थान में) सत्त्वस्थान

(सीदिचउक्केहि सहिदाणि) आदि के छह और अस्सी आदि प्रकृति रूप चार स्थान, इस प्रकार दस होते हैं ।

तीसे अट्ठवि बंधो एउणतीसंव होदि सत्तं तु ।
इगितीसे तेवीसप्पहुडी तीसंतयं बंधो ।।७५१।।

अन्वयार्थ - (तीसे) तीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(बंधो अट्ठवि)** बंधस्थान आठों **(सत्तं तु)** किन्तु सत्त्वस्थान **(एउणतीसं व होदि)** उनतीस के समान होते हैं। **(इगितीसे)** इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बंधो)** बन्धस्थान **(तेवीसप्पहुडी तीसंतयं)** तेईस से लेकर तीस तक होते हैं।

सत्तं दुणउदिणउदीतिय सीदडहत्तरी य णवगट्ठे ।
बंधो ण सीदिपहुडिसु समविसमं सत्तमुद्दिट्ठं ।।७५२।।

अन्वयार्थ - (सत्तं) सत्त्वस्थान **(दुणउदिणउदीतिय)** बानवे, नब्बे आदि तीन, **(सीदडहत्तरी)** अस्सी और अठहत्तर हैं। **(य णवगट्ठे)** नौ और आठ प्रकृतिक उदयस्थानों में **(बंधो ण)** बंध नहीं है। **(सत्तं)** तथा सत्त्व स्थान, **(सीदिपहुडिसु समविसमं)** अस्सी आदि छह स्थानों में से सम संख्या रूप तीन स्थान नौ प्रकृतिक उदयस्थान में, विषम संख्या रूप तीन स्थान आठ प्रकृतिक उदयस्थान में **(उद्दिट्ठं)** कहे गये हैं।

नामकर्म के त्रिसंयोगी भंग उदय अधिकरण, बंध और सत्त्व आधेय

अधिकरण		आधेय			
क्र.	उदय स्थान	बंध स्थान	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
१	२०	०	०	२	७९,७७
२	२१	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	९	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२, ८०,७८
३	२४	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
४	२५	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	७	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२
५	२६	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	९	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२, ७९,७७
६	२७	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	८	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८०,७८
७	२८	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	८	९३,९२,९१,९०,८८,८४,७९,७७
८	२९	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	१०	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८०,७९, ७८,७७
९	३०	८	२३,२५,२६,२८,२९,३० ३१,१	१०	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८०,७९, ७८,७७
१०	३१	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	६	९२,९०,८८,८४,८०,७८,
११	९	०		३	८०,७८,१०
१२	८	०		३	७९,७७,९

२० प्रकृति का उदय सामान्य केवली में ही प्रतर और लोकपूरण समुद्‌घात में पाया जाता है। २१ प्रकृति का उदय तिर्यंच, मनुष्य व देवों के १ ले, २ रे, ४ थे गुणस्थान में विग्रह गति में होता है, नरकगति में १ ले व ४ थे गुणस्थान में ही होता है क्योंकि सासादन गुणस्थान में मरकर नरक में जन्म नहीं होता। अर्थात् सासादन गुणस्थान लेकर नरक में नहीं जाता। २१ प्रकृति का उदय तीर्थंकर केवली में प्रतर और लोकपूरण समुद्‌घात में पाया जाता है अत: वहाँ ८०, ७८ प्रकृतिक उदयस्थान है।

उदयस्थान के स्वामी और काल का कोष्टक

क्र.	उदय स्थान	उदयस्थान के स्वामी	उदय का काल
१	२०	सामान्य केवली	प्रतर और लोकपूरण समुद्घात
२	२१	१) तीर्थंकरकेवली २) चारों गति के जीव	प्रतर और लोकपूरण समुद्घात विग्रहगति काल
३	२४	अपर्याप्त एकेंद्रिय मिथ्यादृष्टि	शरीरमिश्र काल
४	२५	१)तिर्यंच एकेंद्रिय पर्याप्त २)नारकी,देव,आहारक ऋद्धिधारी मुनि	शरीरपर्याप्ति काल शरीरमिश्र काल
५	२६	१)त्रस तिर्यंच,मनुष्य, सामान्यकेवली २)आतप अथवा उद्योतसहित एकेंद्रिय ३)आतप अथवा उद्योतरहित एकेंद्रिय	शरीरमिश्र काल, कपाटसमुद्घात शरीरपर्याप्ति काल उच्छ्वास पर्याप्तिकाल
६	२७	१)देव,नारकी,आहारक ऋद्धिधारी मुनि २)एकेंद्रिय आतप या उद्योतसहित ३) तीर्थंकरकेवली	शरीरपर्याप्ति काल उच्छ्वास पर्याप्तिकाल कपाटसमुद्घात
७	२८	१) तिर्यंच, मनुष्य, सामान्य केवली २) देव, नारकी, आहारकमुनि	शरीरपर्याप्ति काल उच्छ्वास पर्याप्तिकाल
८	२९	१)त्रसतिर्यंच, मनुष्य, सामान्य केवली २) उद्योतयुत त्रसतिर्यंच ३)तीर्थंकर केवली ४)देव,नारकी,आहारक ऋद्धिधारी मुनि	उच्छ्वास पर्याप्तिकाल शरीरपर्याप्ति काल दंडसमुद्घात भाषापर्याप्ति काल
९	३०	१)उद्योतरहित त्रस तिर्यंच,मनुष्य सामान्य केवली २) उद्योतयुत तिर्यंच, तीर्थंकर केवली	भाषापर्याप्ति काल उच्छ्वास पर्याप्तिकाल
१०	३१	उद्योतयुत तिर्यंच, तीर्थंकर केवली	भाषापर्याप्ति काल
११	९	तीर्थंकर अयोगकेवली	भाषापर्याप्ति काल
१२	८	सामान्य अयोग केवली	भाषापर्याप्ति काल

उदयस्थान में बंधस्थान और सत्त्वस्थानों का विवरणात्मक कोष्टक

उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्थान	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
१)२०	सामान्यकेवली	०	०	२	७९-७७
२)२१	तीर्थंकर केवली	०	०	२	८०-७८
२१	१,२,३ नरक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	३	९२,९१,९०
२१	प्रथमनरकअसंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	३	९२,९१,९०
२१	४ से ७ वें नरक-तक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२१	तिर्यंचगति-मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,(१से ५प्र.)३०(१ से ४प्र.)	५	९२,९०,८८,८४,८२
२१	तिर्यंचगति-सासादन	२	२९पं.प,म.प.३०पं.प.उ	१	९०
२१	तिर्यंचगतिअसंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
२१	मनुष्यगति-मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३० (१ से ४प्र.)	४	९२,९०,८८,८४
२१	मनुष्यगतिसासादन	२	२९पं.प,म.प.३०पं.प.उ	१	९०
२१	मनुष्यगतिअसंयत	२	२८ दे. २९ दे. ती.	४	९३,९२,९१,९०
२१	देवगतिभवनत्रिकदेव व कल्पवासिनी देवी मिथ्यादृष्टि	४	२५(प्र.प्र.)२६,२९ (४-५ प्र.)३०(४प्र.)	२	९२,९०
२१	भवनत्रिकदेव व कल्पवासिनी देवी सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	९०
२१	सौधर्मद्विक देव मिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९(४-५ प्रकार),३०(४ प्रकार)	२	९२,९०

उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्थान	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२१	सौधर्मद्विक देव सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	९०
२१	सौधर्मद्विकदेवअसंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२१	३ से १२ स्वर्गतक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२१	३ से १२ स्वर्गतक के सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	९०
२१	३ से १२ स्वर्गतक के असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२१	१३से नौग्रैवेयकतक मिथ्यादृष्टि	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२१	१३से नौग्रैवेयकतक सासादन	१	२९ म.प.	१	९०
२१	१३से नौग्रैवेयकतक असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२१	नवअनुदिश पंच अनुत्तर असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
३)२४	स्थावरलब्ध्यपर्याप्तक	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
२४	निर्वृत्त्यपर्याप्तक	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
४)२५	नारकी मिथ्यादृष्टि १ से ३ नरक	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	३	९२,९१,९०
२५	प्रथम नारक असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	३	९२,९१,९०

उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२५	तिर्यंच एकेंद्रिय	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
२५	मनुष्य आहारकमुनि प्रमत्तसंयत	२	२८ दे. २९ दे.ती.	२	९३,९२
२५	भवनत्रिकदेव,कल्प-वासिनी स्त्रीमिथ्या.	४	२५,२६,२९,३०	२	९२,९०
२५	भवनत्रिकदेव,कल्प-वासिनी सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	९०
२५	सौधर्मद्विक मिथ्या.	४	२५,२६,२९,३०	२	९२,९०
२५	सौधर्मद्विकसासादन	२	२९पं.प,म.प.३०पं.प.उ.	१	९०
२५	सौधर्मद्विकअसंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२५	३ रे स्वर्ग से १२ वें स्वर्गतकके मिथ्यादृ.	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२५	३ रे स्वर्गसे १२ वें स्वर्गतक के सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	९०
२५	३ रे स्वर्ग से १२ वें स्वर्गतक के असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२५	१३वें स्वर्गसे नौग्रैव-यकतक के मिथ्या.	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२५	१३वें स्वर्गसे नौग्रैव-यकतक के सासादन	१	२९ म.प.	१	९०
२५	१३वें स्वर्गसे नौग्रैव-यकतक के असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२५	नवअनुदिश पाँच अनुत्तर असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
५) २६	लब्ध्यपर्याप्त, निर्वृत्त्यपर्याप्त त्रस	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
२६	एकेंद्रिय मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	९२,९०,८८,८४,८२
२६	तिर्यंच पंचेद्रियसासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२६	तिर्यंच पंचेद्रियअसंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
२६	मनुष्यमिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
२६	मनुष्य सासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२६	मनुष्य असंयत	२	२८ दे. २९ दे.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२६	सामान्यकेवली कपाट समुद्घात में	०		२	७९,७७
६) २७	प्रथम३ नरक के मिथ्या.	२	२९पं.प,म.प.३०पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	प्रथम नरक असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	३	९२,९१,९०
२७	द्वितीय, तृतीय नरक असंयत	१	३० म.ती.	१	९१
२७	४ से ६ नरक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	७वें नरकके मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प ३०पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	तिर्यंच एकेंद्रिय*	५	२३,२५,२६,२९,३०	४ (८२ का सत्त्व विकल्प में)	९२,९०,८८,८४
२७	आहारक ऋद्धिधारी मुनि प्रमत्त	२	२८ दे., २९ दे.ती.	२	९३,९२
२७	तीर्थंकर केवली कपाटसमुद्घात	०		२	८०,७८

विशेषार्थ : १) प्रथम तीन नरक में मिथ्यात्व में २७ का उदय शरीरपर्याप्तिकाल में

होता है तब ९१ का सत्त्व नहीं होता, क्योंकि शरीरपर्याप्ति होनेपर तीर्थंकर सत्त्वसहित नारकियों को नियम से सम्यक्त्व होता है और तब चौथा गुणस्थान होता है।

२) तेजस्कायिक व वायुकायिक को छोड़कर शेष एकेन्द्रियों को उच्छ्वास पर्याप्तिकाल में मनुष्यद्विक का बंध हो सकता है अत: २७ के उदय में ८२ का सत्त्वस्थान विकल्प से है अर्थात् मनुष्यद्विक का बंध हो गया तो ८२ का सत्त्व नहीं होगा और बंध नहीं हुआ तो ८२ का सत्त्व रहेगा।

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
६)२७	भवनत्रिक व कल्पवासिनी स्त्रीमिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	सौधर्मद्विक के मिथ्यादृष्टि में	४	२५,२६,२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	सौधर्मद्विकके असंयतमें	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२७	३ से १२ स्वर्गपर्यंत के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२७	३ से १२ स्वर्गपर्यंत के असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२७	१३ से नवग्रैवेयकतक मिथ्यादृष्टि	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२७	१३ से नवग्रैवेयकतक असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२७	नव अनुदिश व पाँच अनुत्तर असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
७)२८	प्रथमनरक के मिथ्या.	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२८	प्रथम नरक के असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	३	९२,९१,९०
२८	द्वितीय तृतीय नरक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२८	द्वितीय तृतीय नरक के असंयत	१	३० म.ती.	१	९१
२८	४ से ६ नरक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२८	७वें नरकके मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२८	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
२८	तिर्यंच असंयत (भोगभूमिज)	१	२८ दे.	२	९२,९०
२८	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
२८	मनुष्य असंयत	२	२८ दे. २९ दे.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२८	आहारक शरीरधारी मुनि	२	२८ दे., २९ दे.ती.	२	९३,९२
२८	सामान्य केवली दंडसमुद्घात	०		२	७९,७७

विशेषार्थ - भवनत्रिक देव, कल्पवासिनी स्त्री, मिथ्यादृष्टि सौधर्मद्विक, ३ से १२ स्वर्ग, १३ से नवग्रैवेयक, अनुदिश, अनुत्तर में ऊपर २७ के उदयस्थान में जो बन्धस्थान और सत्त्वस्थान कहे हैं वे ही २८ उदय में जानना।

२७ और २८ प्रकृतिक उदयस्थान सासादन, मिश्र और देशसंयत गुणस्थान में नहीं होता क्योंकि शरीरपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति इन गुणस्थानों में नहीं होती और २७, २८ उदयस्थान देव नारकियों की शरीरपर्याप्ति और उच्छ्वास पर्याप्ति में और तिर्यंच मनुष्य के शरीरपर्याप्ति में २८ का उदयस्थान होता है।

प्रथम नरक में मिथ्यात्व में २८ उदयस्थान में ९१ प्रकृति का सत्त्व नहीं पाया जाता क्योंकि तीर्थंकरप्रकृति की सत्तावाला घर्मानरक में जाकर सम्यक्त्व से भ्रष्ट नहीं होता अर्थात् कृतकृत्यवेदक या क्षायिकसम्यग्दृष्टि हो तो सम्यक्त्व से च्युत नहीं होता और

मिथ्यात्वसहित प्रथम तीन नरक में गया तो तीर्थंकर की सत्तावाले जीव को शरीरपर्याप्ति के अनन्तर सम्यक्त्व की उत्पत्ति नियम से होती है अत: वहाँ ९१ प्रकृति का सत्त्व नहीं होता।

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
८)२९	प्रथमनरक मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२९	प्रथम नरक सासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२९	प्रथम नरक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	प्रथम नरक असंयत	२	२९ म.प. ३० म.ती.	३	९२,९१,९०
२९	२रा,३रानरकमिथ्यात्वी	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२९	२ रा,३ रा नरक सासा	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२९	२ रा,३ रा नरक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	२रा,३रा नरक असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.	३	९२,९१,९०
२९	४,५,६नरक मिथ्यात्वी	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२९	४,५,६ नरक सासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२९	४,५,६ नरक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	४,५,६ नरक असंयत	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	७ वा नरक मिथ्यात्वी	२	२९ पं.प, ३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२९	७ वा नरक सासादन	२	२९ पं.प, ३० पं.प.उ.	१	९०
२९	७ वा नरक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	७ वा नरक असंयत	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	त्रस तिर्यंच उद्योतयुत मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
२९	त्रस तिर्यंच भोगभूमिज असंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
२९	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	२	९२,९०
२९	मनुष्य असंयत	२	२८ दे. २९ दे.ती.	४	९३,९२,९१,९०

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२९	मनुष्य आहारक शरीर धारी प्रमत्त	२	२८ दे. २९ दे.ती.	२	९३,९२
२९	तीर्थंकर दंडसमुद्घात केवली	०	०	२	८०,७८
२९	सामान्य केवली मूल शरीर में प्रवेश	०	०	२	७९,७७
२९	देव भवनत्रिक व कल्प -वासी स्त्री मिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९,३०	२	९२,९०
२९	देव भवनत्रिक व कल्प -वासी स्त्री सासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२९	देव भवनत्रिक व कल्प -वासीस्त्री मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	देव भवनत्रिक व कल्प -वासीस्त्री असंयत	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	सौधर्मयुगल मिथ्यात्व	४	२५,२६,२९,३०	२	९२,९०
२९	सौधर्मयुगल सासादन	२	२९ पं.प,म.प.३० पं.प.उ.	१	९०
२९	सौधर्मयुगल मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	सौधर्मयुगल असंयत	२	२९ म.प. ३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२९	३ से १२ स्वर्गतक मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प.म.प.,३० पं.प.उ.	२	९२,९०
२९	३ से १२ स्वर्गतक सासादन	२	२९ पं.प.म.प.,३० पं.प.उ.	१	९०
२९	३से१२ स्वर्गतक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	३ से १२ स्वर्गतक असंयत	२	२९ म.प. ३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२९	१३ से नवग्रैवेयकतक मिथ्यादृष्टि	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	१३ से नवग्रैवेयकतक सासादन	१	२९ म.प.	१	९०
२९	१३ से नवग्रैवेयकतक मिश्र	१	२९ म.प.	२	९२,९०
२९	१३ से नवग्रैवेयकतक असंयत	२	२९ म.प. ३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
२९	नव अनुदिश पांच अनुत्तर असंयत	२	२९ म.प. ३० म.ती.	४	९३,९२,९१,९०
९)३०	तिर्यंच उद्योतयुत मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,,२८,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
३०	तिर्यंच उद्योतयुत असंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
३०	तिर्यंच उद्योतरहित मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,,२८,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
३०	तिर्यंच उद्योतरहित सासादन	२	२९ पं.प., म.प., ३० पं.प.उ.	१	९०
३०	तिर्यंच उद्योतरहित मिश्र	१	२८ दे.	२	९२,९०
३०	तिर्यंच उद्योतरहित असंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
३०	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,,२८,२९,३०	३	९२,९१,९०
३०	मनुष्य सासादन	२	२९ पं.प.,म.प.,३०पं.प.उ.	१	९०
३०	मनुष्य मिश्र	१	२८ दे.	२	९२,९०

आधार		आधेय			
उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था.	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
३०	मनुष्य असंयत, देश-संयत, प्रमत्त संयत	२	२८ दे., २९ दे. ती.	४	९३,९२,९१,९०
३०	अप्रमत्त से अपूर्वकरण के छठे भागतक	४	२८ दे., २९ दे.ती., ३० दे.आ.,३१ दे.तीआ.	४	९३,९२,९१,९०
३०	अपूर्वकरण के सातवें भाग में	१	१ यशस्कीर्ति	४	९३,९२,९१,९०
३०	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म-सांपराय	१	१	८	९३,९२,९१,९०, ८०,७९,७८,७७
३०	उपशांतकषाय	०	०	४	९३,९२,९१,९०
३०	क्षीणकषाय सयोगकेवली	०	०	४	८०,७९,७८,७७

विशेषार्थ - मनुष्य के मिथ्यात्वगुणस्थान में ९१ का सत्त्व नरकगमन के लिए सन्मुख तीर्थंकर प्रकृतिसहित मनुष्य की अपेक्षा है। तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करनेवाला क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि बद्धनरकायुवाला जीव मरण के पूर्व एक अन्तर्मुहूर्त मिथ्यात्वगुणस्थान में जाता है।

उदय स्थान	उदयस्थान का स्वामी	बंध स्था	बंधस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
१०)३१	उद्यो.यु.तिर्यंचमिथ्या.	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	४	९२,९०,८८,८४
३१	उद्योतयुत तिर्यंच सासादन	३	२८ दे.,२९ पं.प.,म.प., ३० पं.प.उ.	१	९०
३१	उद्योतयुत तिर्यंच मिश्र	१	२८ दे.	२	९२,९०
३१	उद्योतयुत तिर्यंच असं.	१	२८ दे.	२	९२,९०
३१	उ.युत तिर्यंच देशसंयत	१	२८ दे.	२	९२,९०
३१	तीर्थंकर केवली १३ वें गुणस्थान में	०	०	२	८०,७८
९	तीर्थंकर अयोग केवली	०	०	३	८०,७८,१०
८	सामान्य अयोग केवली	०	०	३	७९,७७,९

सत्त्वस्थान को आधार और बंध व उदयस्थान को आधेय मानकर कथन -

सत्ते बंधुदया चदुसग सगणव चदुसगं च सगणवयं ।
छण्णव पणणव पणचदु चदुसिगिछक्कं णभेक सुण्णेगं ।७५३।

अन्वयार्थ -(सत्ते) सत्त्वस्थानों में, **(बंधुदया)** बंध और उदयस्थान क्रमसे; ९३ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(चदुसग)** बन्धस्थान चार, उदयस्थान सात, ९२ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(सगणव)** बन्धस्थान सात, उदयस्थान नौ, ९१ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(चदुसगं)** बन्धस्थान चार, उदयस्थान सात, ९० प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(सगणवयं च)** बन्धस्थान सात और उदयस्थान नौ, ८८ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में,**(छण्णव)** बन्धस्थान छह, उदयस्थान नौ, ८४ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(पणणव)** बन्धस्थान पाँच, उदयस्थान नौ, ८२ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(पणचदु)** बन्धस्थान पाँच, उदयस्थान चार, अस्सी आदि चार (८०,७९,७८,७७) प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(चदुसिगि छक्कं)** बन्धस्थान एक, उदय-स्थान छह, १० प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(णभेक)** बन्धस्थान शून्य, उदयस्थान एक, ९ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(सुण्णेगं)** बन्धस्थान शून्य, उदयस्थान एक हैं।

तेणउदीये बंधा उगुतीसादिचउक्कमुदओ दु ।
इगिपणछस्सग अट्ठ य णववीसं तीसयं णेयं ।।७५४।।

अन्वयार्थ - (तेणउदीये) तिरानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(बंधो)** बंधस्थान, **(उगुतीसादि चउक्कमुदओ दु)** उनतीस आदि चार स्थान, और उदयस्थान, **(इगिपणछस्सग अट्ठ य णववीसं तीसयं णेयं)** इक्कीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उनतीस और तीस प्रकृतिक जानना चाहिए।

बाणउदीए बंधा इगितीसूणाणि अट्ठठाणाणि ।
इगिवीसादी एक्कत्तीसंता उदयठाणाणि।।७५५।।

अन्वयार्थ - (बाणउदीए बंधा) बानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, बन्धस्थान, **(इगितीसूणाणि)** इकतीस के बिना **(अट्ठठाणाणि)** आठ स्थान होते हैं। **(उदय ठाणाणि)** उदयस्थान, **(इगिवीसादी एक्कत्तीसंता)** इक्कीस प्रकृति से लेकर इकतीस तक नौ हैं।

इगिणउदीए बंधा अडवीसं तिदयमेक्कयं चुदओ ।
तेणउदिं वा णउदीबंधा बाणउदीयं व हवे ।।७५६।।

अन्वयार्थ - (इगिणउदीए) इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(बंधा)** बंधस्थान **(अडवीसं तिदयमेक्कयं)** अट्ठाईस आदि तीन और एक प्रकृतिक, **(चुदओ)** और उदय स्थान, **(तेणउदिं वा)** तिरानवे प्रकृतिक के उदय स्थानोंवत् जानना। **(णउदी)** नब्बे प्रकृतिक सत्त्व स्थान में, **(बंधा)** बंधस्थान, **(बाणउदीयं व हवे)** बानवे प्रकृतिक सत्त्व स्थानवत् होते हैं।

चरिमदुवीसूणुदओ तिसु दसु बंधा छ तुरियहीणं च ।
बासीदी बंधुदया पुव्वं विगिवीसचत्तारि ।।७५७।।

अन्वयार्थ - (चरिमदुवीसूणुदओ) उदयस्थान अंतिम दो और बीस से हीन होते हैं (इक्कीस से लेकर नौ स्थान) **(तिसु)** अट्ठासी आदि प्रकृतिक तीन सत्त्वस्थानों में **(बंधा)** बंधस्थान **(तुरियहीणं)** चौथे स्थान से रहित **(छ)** छह अर्थात् तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस व तीस; **(बासीदी)** बयासी प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(बंधुदया पुव्वं व)** पूर्ववत् तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस व तीस प्रकृतिक बंधस्थान, उदयस्थान **(इगिवीसचत्तारि)** इक्कीस आदि चार हैं।

सीदादिचउसु बंधा जसकित्ती सगपदे हवे उदओ ।
इगिसगणवधियवीसं तीसेक्कतीसणवगं च ।।७५८।।

अन्वयार्थ - (सीदादिचउसु) अस्सी आदि चार प्रकृति सत्त्वस्थानों में, **(बंधा)** बंधस्थान, **(जसकित्ती)** यशस्कीर्ति प्रकृति रूप एक है। **(उदओ)** उदयस्थान **(सगपदे हवे)** समपद अर्थात् अस्सी और अठहत्तर प्रकृतिक सत्त्व स्थान में **(इगिसगणवधियवीसं)** इक्कीस, सत्ताईस, उनतीस, **(तीसेक्कं तीसणवगं च)** तीस, इकतीस और नौ प्रकृतिक उदय स्थान हैं।

वीसं छडणववीसं तीसं चट्ठुं च विसमठाणुदया ।
दसणवगे णहि बंधो कमेण णव अट्ठयं उदओ ।।७५९।।

अन्वयार्थ - (विसमठाणुदया) विषम पद अर्थात् उन्यासी और सतहत्तर प्रकृतिक सत्त्वस्थानों में, उदयस्थान **(वीसं छडणववीसं तीसं चट्ठं च)** बीस, छब्बीस, अट्ठाईस, उनतीस, तीस और आठ प्रकृतिरूप हैं। **(दसणवगे)** दस और नौ प्रकृतिरूप सत्त्वस्थानों में **(ण हि बंधो)** बंधस्थान नहीं हैं, **(कमेण उदओ)** उदयस्थान क्रमसे **(णव अट्ठयं)** नौ और आठ हैं।

सत्त्वस्थान में बन्धस्थान और उदयस्थानों का कोष्टक

अधिकरण		आधेय			
क्र.	सत्त्व स्थान	बन्ध स्थान	बंधस्थानों का विवरण	उदय स्था.	उदयस्थान का विवरण
१	९३	४	२९,३०,३१,१	७	२१,२५,२६,२७,२८,२९,३०
२	९२	७	२३,२५,२६,२८,२९,३०,१	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
३	९१	४	२८,२९,३०,१	७	२१,२५,२६,२७,२८,२९,३०
४	९०	७	२३,२५,२६,२८,२९,३०,१	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
५	८८	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
६	८४	५	२३,२५,२६,२९,३०	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
७	८२	५	२३,२५,२६,२९,३०	४	२१,२४,२५,२६,
८	८०	१	१	६	२१,२७,२९,३०,३१,९
९	७९	१	१	६	२०,२६,२८,२९,३०,८
१०	७८	१	१	६	२१,२७,२९,३०,३१,९
११	७७	१	१	६	२०,२६,२८,२९,३०,८
१२	१०	०	०	१	९
१३	९	०	०	१	८

सत्त्वस्थानों के प्रकृति और स्वामी का कोष्टक

सत्त्वस्थान		प्रकृतियों का विवरण	सत्त्वस्थानों के स्वामी
१	९३	तीर्थ, आहारक सहित	कर्मभूमि मनुष्य और वैमानिक देव पर्याप्त व निर्वृत्त्यपर्याप्त
२	९२	तीर्थरहित आहारक सहित	चार गति के भव्य जीव
३	९१	तीर्थसहित आहारक रहित	१ से ३ नरक के नारकी,कर्मभूमि मनुष्य, वैमानिक देव
४	९०	तीर्थ, आहारक रहित	चारों गति के जीव
५	८८	९०-२ देवद्विक(उद्वेलना होनेपर)	एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय और मरकर उत्पन्न स्थान में पंचेन्द्रिय तिर्यंच व मनुष्य
६	८४	८८-४ नारकचतुष्क (उद्वेलना होनेपर)	८८ सत्त्व के समान
७	८२	८४-२ मनुष्यद्विक (उद्वेलना होनेपर)	तेजोकायिक व वातकायिक, उत्पन्न स्थान में अन्य तिर्यंच
८	८०	९३-१३ (तिर्यगेकादश, नरकद्विक)	तीर्थसत्त्वसहित क्षपक अनिवृत्तिकरण से अयोगकेवली तक
९	७९	८०-१ तीर्थंकर	तीर्थसत्त्वरहित क्षपक अनिवृत्तिकरण से अयोगकेवली तक
१०	७८	८०-२ आहारक	तीर्थसत्त्वसहित क्षपक अनिवृत्तिकरण से अयोगकेवली तक
११	७७	८०-३ तीर्थंकर आहारक	तीर्थआहारकसत्त्वरहित क्षपक अनिवृत्तिकरण से अयोगकेवली तक
१२	१०	मनुष्यद्विक,पंचे,त्रसत्रिक, सुभग ३, तीर्थंकर	तीर्थकरसत्त्वसहित अयोगी अंतिम समयवर्ती
१३	९	मनुष्यद्विक, पंचे, त्रसत्रिक, सुभग ३,	तीर्थकरसत्त्वरहित अयोगी अंतिम समयवर्ती

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९३	मनुष्य असंयत	१	२९ दे.ती.	५	२१,२६,२८,२९,३०
९३	देशसंयत	१	२९ दे.ती.	१	३०
९३	प्रमत्त	१	२९ दे.ती.	५	२५,२७,२८,२९,३०
९३	अप्रमत्त	२	२९ दे.ती., ३१ दे.आ.ती.	१	३०
९३	अपूर्वकरण उपशमक क्षपक	२	२९ दे.ती., ३१ दे.आ.ती.	१	३०
९३	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसांप.उपशमक	१	१	१	३०
९३	उपशांतकषाय	०	०	१	३०
९३	वैमानिक असंयत	१	३० म.ती.	५	२१,२५,२७,२८,२९

विशेषार्थ - ९३ की सत्तावाले जीव को २८ का बन्ध नहीं होता। एकबार तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध हुआ, तो निरन्तर बन्ध होता है इसलिए मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति सत्ता-सहित हो तो २९ दे. तीर्थयुत का निरन्तर बन्ध करता है और तीर्थंकर सत्त्वसहित देव व असंयत नारकी ३० म. तीर्थयुत का निरन्तर बन्ध करता है केवल नरक में जाने के सन्मुख मनुष्य मिथ्यादृष्टि २८ नरकयुत का या २९ मनुष्ययुत का बन्ध करता है। नारकी मिथ्यादृष्टि एक अन्तर्मुहूर्त २९ मनुष्ययुत का बन्ध करता है अत: ९३ की सत्ता में २८ का बन्ध नहीं होता। नरक जाने के सम्मुख तीर्थंकरसत्त्वयुक्त मिथ्यादृष्टि जीव के ९१ का सत्त्व होता है।

मिथ्यात्व, सासादन व मिश्र गुणस्थान में ९३ प्रकृति का सत्त्व नहीं होता।

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९२	१ से ६ नरक मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९२	प्रथम नरक असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	२ से ६ नरक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९२	सप्तम नरक मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प, ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	सप्तम नरक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९२	सप्तम नरक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९२	तिर्यंचगति मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
९२	तिर्यंचगति मिश्र, देशसंयत	१	२८ दे.	२	३०,३१
९२	तिर्यंचगति असंयत	१	२८ दे.	६	२१,२६,२८,२९,३०,३१
९२	मनुष्यगति मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०	५	२१,२६,२८,२९,३०
९२	मनुष्यगति मिश्र	१	२८ दे.	१	३०
९२	मनुष्यगति असंयत	१	२८ दे.	५	२१,२६,२८,२९,३०
९२	मनुष्य देशसंयत	१	२८ दे.	१	३०
९२	मनुष्य प्रमत्त	१	२८ दे.	५	२५,२७,२८,२९,३०
९२	अप्रमत्त, अपूर्वकरण उपशमश्रेणी	२	२८ दे.३० दे.आ	१	३०
९२	अपूर्वकरण ७वाँ भाग	१	१	१	३०
९२	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म सांपराय	१	१	१	३०

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९२	उपशांतकषाय	०	०	१	३०
९२	देव-भवनत्रिक,सौधर्म द्विक मिथ्यादृष्टि	४	२५,२६,२९,३०	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	भवनत्रिक, सौधर्म-द्विक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९२	भवनत्रिक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९२	सौधर्मद्विक असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	३ से १२ स्वर्ग मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	३ से १२ स्वर्ग मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९२	३ से १२ स्वर्गअसंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	१३ से नवग्रैवेयक मिथ्यादृष्टि	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	१३ से नवग्रैवेयक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९२	१३ से नवग्रैवेयक असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९२	नवअनुदिश ५ अनुत्तर असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९१	१ से ३ नरक मिथ्यादृष्टि	१	२९ म.प.	२	२१,२५
९१	प्रथम नरक असंयत	१	३० म.ती.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९१	२,३ नरक असंयत	१	३० म.ती.	३	२७,२८,२९
९१	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	२	२८ न.,२९ म.प.	१	३०
९१	मनुष्य असंयत	१	२९ दे.ती.	५	२१,२६,२८,२९,३०

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९१	मनुष्य ५ वें से आठवें गुणस्थान छठेभागतक	१	२९ दे. ती.	१	३०
९१	आठवेंका सातवाँ भाग ९,१० गुणस्थान	१	१	१	३०
९१	उपशांतकषाय	०	०	१	३०
९१	वैमानिक देव, असंयत	१	३० म.ती.	५	२१,२५,२७,२८,२९

विशेषार्थ - नरकगति में मिथ्यादृष्टि के ९१ के सत्त्व में २७,२८,२९ का उदय नहीं होता क्योंकि शरीरपर्याप्ति के अनन्तर तीर्थंकरप्रकृतिसत्त्वसहित जीव नियम से सम्यग्दृष्टि होता है। २७,२८,२९ का उदय क्रमसे शरीर, उच्छ्वास और भाषापर्याप्ति काल में होता है।

२) २ रे, ३ रे नरक में सम्यक्त्वसहित उत्पन्न नहीं होता अत: वहाँपर असंयत में २१, २५ का उदय नहीं होता। शरीरपर्याप्ति पूर्ण होनेपर तीर्थंकर प्रकृति सत्त्वसहित जीव सम्यक्त्व को प्राप्त करता है अत: उसे २७,२८,२९ का उदय होता है।

३) सासादन व मिश्र में ९१ का सत्त्व नहीं होता।

४) ४ से ७ वें नरकतक ९१ का सत्त्व नहीं होता क्योंकि तीर्थंकरप्रकृति का सत्त्ववाला जीव तीसरे नरक से आगे नहीं जाता।

५) वैमानिक देवों में मिथ्यात्वादिक तीन गुणस्थानों में ९१ का सत्त्व नहीं होता।

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९०	१ से ६ नरक मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	१से६ नरक सासादन	२	२९ पं.प,म.प. ३० पं.प.उ.	१	२९
९०	१ से ६ नरक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९०	प्रथम नरक असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	२ से ६ नरक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९०	सप्तम नरक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प, ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	सप्तम नरक सासादन	२	२९पं.प.,३०पं.प.उ.	१	२९
९०	सप्तम नरक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९०	सप्तम नरक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९०	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
९०	तिर्यंच सासादन	३	२८ दे.२९ पं.प, म.प.३० पं.प.उ.	५	२१,२४,२६,३०,३१
९०	तिर्यंच मिश्र,देशसंयत	१	२८ दे.	२	३०,३१
९०	तिर्यंच असंयत	१	२८ दे.	६	२१,२६,२८,२९,३०,३१
९०	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८,२९ (१ से ५ प्रकार), ३०(१ से४ प्रकार)	५	२१,२६,२८,२९,३०
९०	मनुष्य सासादन	३	२८ दे. २९ पं.प, म.प.३० पं.प.उ.	३	२१,२६,३०
९०	मनुष्य असंयत	१	२८ दे.	५	२१,२६,२८,२९,३०
९०	मिश्र,देशसंयत,प्रमत्त अप्रमत्त	१	२८ दे.	१	३०

अधिकरण		आधेय			
सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का स्वामी	बन्ध स्थान	बन्धस्थानों का विवरण	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
९०	अपूर्वकरण	२	२८ दे., अंतिम भागमें १ प्रकृतिक	१	३०
९०	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसां.	१	१	१	३०
९०	उपशांतकषाय	०	०	१	३०
९०	भवनत्रिक,सौधर्मद्विक मिथ्यात्व	४	२५,२६,२९,३०	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	भवनत्रिक,सौधर्मद्विक सासादन	२	२९ पं.प, म.प. ३० पं.प.उ.	३	२१,२५,२९
९०	भवनत्रिक,सौधर्मद्विक मिश्र	१	२९ म.प.	१	२९
९०	भवनत्रिक असंयत	१	२९ म.प.	१	२९
९०	सौधर्मद्विक असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	३ से १२ स्वर्गतक के मिथ्यादृष्टि	२	२९ पं.प, म.प. ३० पं.प.उ.	५	२१,२५,२७,२८,२९
९०	नवअनुदिश, ५ अनुत्तर के असंयत	१	२९ म.प.	५	२१,२५,२७,२८,२९
८८	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	६	२३,२५,२६,२८, २९,३०	५	२१,२६,२८,२९,३०
८४	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९, ३०	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
	मनुष्य मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	५	२१,२६,२८,२९,३०
८२	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि	५	२३,२५,२६,२९,३०	४	२१,२४,२५,२६

विशेषार्थ - १) मिथ्यादृष्टि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अथवा मनुष्य के शरीर पर्याप्ति काल में जबतक देवगति का बन्ध नहीं होता तबतक ८८ प्रकृतिक सत्त्वस्थान पाया जाता है अथवा एकेन्द्रिय व विकलत्रय नारकचतुष्क की उद्वेलना करके मरणकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अथवा मनुष्य में उत्पन्न होता है वहाँ शरीरपर्याप्तिकाल में देवगति को बाँधनेवाला जबतक नरकगति को नहीं बाँधता तबतक उसके ८८ प्रकृति का सत्त्व हो सकता है।

२) ८४ का सत्त्व नारकचतुष्क की उद्वेलना होनेपर एकेन्द्रिय या विकलेन्द्रिय के होता है। ये मरण करके मिथ्यादृष्टि तिर्यञ्च अथवा मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं सो इनके भी जबतक देव या नरकगति का बन्ध नहीं होता तबतक ८४ का सत्त्व है। यहाँ २८ प्रकृतिक बन्ध का अभाव है।

३) तेजकाय और वायुकाय के आतप व उद्योत का उदय नहीं है अत: शरीरपर्याप्तिकाल में २५ व उच्छ्वासपर्याप्तिकाल में २६ का ही उदय होता है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च में उत्पन्न होनेपर जबतक मनुष्यगति का बन्ध नहीं होता तबतक ८२ प्रकृतिक सत्त्वस्थान होता है।

आधार		**आधेय**			
सत्त्व स्थान	**सत्त्वस्थानों का स्वामी**	**बन्ध स्थान**	**बन्धस्थानों का स्वामी**	**उदय स्थान**	**उदयस्थानोंका स्वामी**
८०	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसांपराय	१	१	१	३०
७८	क्षीणकषाय,स्वस्थान सयोग-केवली	०	०	१	३०
	समुद्घातगतसयोगकेवली	०	०	५	२१,२७,२९,३०,३१
	अयोगकेवली	०	०	१	९
७९	अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसांपराय	१	१	१	३०
७७	क्षीणकषाय,स्वस्थान सयोग-केवली,	०	०	१	३०
	समुद्घातगतसयोगकेवली	०	०	५	२०,२६,२८,२९,३०
	अयोगकेवली	०	०	१	८
१०	तीर्थंकर अयोगकेवली अंतिमसमय	०	०	१	९
९	सामान्य अयोगकेवली अंतिमसमय	०	०	१	८

बन्ध व उदय स्थान को आधार एवं सत्त्व स्थानों को आधेय मानकर कथन -

तेवीसबंधगे इगिवीसणवुदयेसु आदिमचउक्के ।
बाणउदिणउदि अडचउबासीदी सत्तठाणाणि ।।७६०।।
तेणुवरिमपंचुदये ते चेवंसा विवज्ज बासीदिं ।
एवं पणछव्वीसे अडवीसे एक्कवीसुदये ।।७६१।।
बाणउदिणउदिसत्तं एवं पणुवीसयादिपंचुदये ।
पणसगवीसे णउदी विगुव्वणे अत्थि णाहारे ।।७६२।।

अन्वयार्थ - (तेवीसबंधगे) तेईस प्रकृति रूप बंधस्थान में, **(इगिवीसणवुदयेसु)** इक्कीस प्रकृतिरूप स्थान से लगाकर नौ उदयस्थान हैं और इन नौ उदयस्थानों में से **(आदिमचउक्के)** आदि के चार स्थानों में **(सत्तठाणाणि)** सत्त्वस्थान, **(बाणउदिणउदि अडचउबासीदी)** बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी व बयासी प्रकृतिक पाँच हैं तथा **(तेणुवरिमपंचुदये)** उनके आगे पाँच उदयस्थानों में **(ते चेवंसा विवज्ज बासीदिं)** बयासी प्रकृतिक स्थान से रहित वे ही सत्त्वस्थान हैं। **(पणछव्वीसे एवं)** इसी प्रकार पच्चीस और छब्बीस बंध में उदय-सत्त्वस्थान जानना।

(अडवीसे) अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान में और **(एक्कवीसुदये)** इक्कीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बाणउदिणउदिसत्तं)** सत्त्वस्थान बानवे व नब्बे प्रकृतिक हैं। इसी बन्ध में और **(पणुवीसयादिपंचुदये)** पच्चीस आदि पाँच उदय स्थानों में, सत्त्वस्थान, **(एवं)** इसी प्रकार बानवे व नब्बे प्रकृतिक हैं। परन्तु विशेषता यह है कि, **(पणसगवीसे)** पच्चीस और सत्ताईस प्रकृतिक उदयस्थानों में, **(णउदी)** नब्बे प्रकृतिक सत्त्वस्थान, **(विगुव्वणे अत्थि)** वैक्रियिक की अपेक्षा से है, **(णाहारे)** आहारक की अपेक्षा से नहीं है।

तेण णभिगितीसुदये बाणउदिचउक्कमेक्कतीसुदये ।
णवरि ण इगिणउदिपदं णववीसिगिवीसबंधुदये ।।७६३।।
तेणउदिसत्तसत्तं एवं पणछक्क वीसठाणुदये ।
चउव्वीसे वाणउदी णउदिचउक्कं च सत्तपदं ।।७६४।।

अन्वयार्थ - (तेण) इसी अट्ठाईस प्रकृतिक बंध स्थान सहित **(णभिगितीसुदये)** तीस व इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बाणउदिचउक्कमेक्कतीसुदये)** सत्त्वस्थान बानवे प्रकृतिक आदि चार किन्तु विशेषता यह है कि इकतीस के उदयस्थान में, **(णवरि ण इगिणउदिपदं)** इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान नहीं है। **(णववीसिगिवीसबंधुदये)** उनतीस के बंधस्थान में और इक्कीस के उदयस्थान में, **(तेणउदिसत्तसत्तं)** तिरानवें आदि सात सत्त्वस्थान हैं; **(पणछक्क वीसठाणुदये एवं)** इसी प्रकार पच्चीस और छब्बीस प्रकृतिक उदयस्थानों में सत्त्वस्थान हैं। उनतीस बंधसहित **(चउव्वीसे)** चौबीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(बाणउदी णउदिचउक्कं)** बानवे और नब्बे आदि चार **(च सत्तपदं)** सत्त्वस्थान हैं।

सगवीसचउक्कुदये तेणउदीछक्कमेवमिगितीसे ।
तिगिणउदी ण हि तीसे इगिपणसगअट्ठणवयवीसुदये ।७६५।
तेणउदिछक्कसत्तं इगिपणवीसेसु अत्थि बासीदि ।
तेण छचउवीसुदये बाणउदी णउदिचउसत्तं ।।७६६।।
एवं खिगितीसे ण हि बासीदी एक्कतीसबंधेण।
तीसुदये तेणउदी सत्तपदं एक्कमेव हवे ।।७६७।।

अन्वयार्थ - (सगवीसचउक्कुदये) सत्ताईस आदि प्रकृतिरूप चार उदयस्थानों में **(तेणउदीछक्कं)** तिरानवे आदि छह सत्त्वस्थान होते हैं। **(एवमिगितीसे)** इसी प्रकार इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान में, तिरानवे आदि छह सत्त्वस्थान होते हैं किंतु **(तिगिणउदी ण हि)** तिरानवे और इक्यानवे प्रकृतिक स्थान नहीं होते।

(तीसे) तीस प्रकृतिक बंधस्थान सहित **(इगिपणसगअट्ठणवयवीसुदये)** इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अट्ठाईस और उनतीस प्रकृतिक उदयस्थानों में **(तेणउदिछक्कसत्तं)** तिरानवे आदि छह सत्त्वस्थान हैं, परन्तु विशेषता यह है कि, **(इगिपणवीसेसु)** इक्कीस और पच्चीस प्रकृतिक उदयस्थानों में ही **(अत्थि बासीदि)** बयासी प्रकृतिक सत्त्वस्थान हैं। **(तेण छचउवीसुदये)** तीस प्रकृतिक बंधसहित छब्बीस और चौबीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(बाणउदी णउदिचउ सत्तं)** बानवे और नब्बे आदि चार सत्त्वस्थान हैं।

(एवं खिगितीसे) तीस और इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान में, सत्त्वस्थान इसी

प्रकार (अर्थात् चौबीस प्रकृतिक उदयस्थानवत्) परन्तु इसमें **(ण हि बासीदी)** बयासी प्रकृतिक सत्त्वस्थान नहीं है। **(एक्कतीसबंधेण)** इकतीस प्रकृतिक बंधस्थान सहित **(तीसुदये)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(तेणउदी सत्तपदं)** तिरानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान **(एक्कमेव हवे)** एक ही है।

इगिबंधट्ठाणेण दु तीसट्ठाणोदये णिरुद्धम्मि ।
पढमचऊसीदिचऊ सत्तट्ठाणाणि णामस्स ।।७६८।।

अन्वयार्थ - (इगिबंधट्ठाणेण दु) एक प्रकृतिक बंधस्थान सहित **(तीसट्ठाणोदये)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान **(णिरुद्धम्मि)** को ग्रहण करनेपर **(पढमचऊसीदिचऊ)** तिरानवे आदि चार और अस्सी आदि चार, इस प्रकार आठ **(सत्तट्ठाणाणि)** सत्त्वस्थान, **(णामस्स)** नामकर्म के होते हैं।

दो आधार और एक आधेय - बन्ध और उदय अधिकरण, सत्त्व आधेय का कोष्टक

आधार			आधेय	
बंधस्थान	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
२३	४	२१,२४,२५,२६,	५	९२,९०,८८,८४,८२
२३	५	२७,२८,२९,३०,३१	४	९२,९०,८८,८४
२५-२६	४	२१,२४,२५,२६	५	९२,९०,८८,८४,८२
२५-२६	५	२७,२८,२९,३०,३१	४	९२,९०,८८,८४
२८	१	२१	२	९२,९०
२८	५	२५,२६,२७,२८,२९	२	९२,९०
२८	१	३०	४	९२,९१,९०,८८,
२८	१	३१	३	९२,९०,८८
२९	१	२१	७	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२
२९	१	२४	५	९२,९०,८८,८४,८२
२९	२	२५,२६	७	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२
२९	४	२७,२८,२९,३०	६	९३,९२,९१,९०,८८,८४
२९	१	३१	४	९२,९०,८८,८४

आधार			आधेय	
बंधस्थान	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थानों का विवरण
३०	२	२१,२५	७	९३,९२,९१,९०,८८,८४,८२
३०	२	२४,२६	५	९२,९०,८८,८४,८२
३०	३	२७,२८,२९	६	९३,९२,९१,९०,८८,८४
३०	२	३०,३१	४	९२,९०,८८,८४
३१	१	३०	१	९३
१	१	३०	८	९३,९२,९१,९०,८०,७९,७८,७७

विशेषार्थ - दो आधार व एक आधेय का अर्थ ऐसे समझना की जब इतनी प्रकृतिका बंध और इतनी प्रकृतियों का उदय रहता है तब कितने सत्त्वस्थान होते हैं। जैसे जब २३ प्रकृति का बन्ध, और इक्कीस प्रकृति का उदय रहता है तब ९२, ९०, ८८, ८४ और ८२ प्रकृतिक पांच सत्त्वस्थान होते हैं। इसीप्रकार २३ का बंध और २४ प्रकृति का उदय रहता है तब भी उपर्युक्त पाँच सत्त्वस्थान होते हैं। इसप्रकार एक बंधस्थान और उसके साथ रहनेवाला एक उदयस्थान को आधार बनाकर उसमें सत्त्वस्थान कितने हैं इसका विचार करना।

तेईस प्रकृतिक बन्धस्थान में ९ उदयस्थान है २१, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१ इसमें से एक एक उदयस्थान को २३ के बन्ध के साथ लेकर उसमें सत्त्वस्थानों का विचार किया है। २३ के बन्ध में पहले चार उदयस्थानों के रहते हुए सत्त्वस्थान ५ ही होते हैं अत: ४ उदयस्थानों को एकसाथ लिया है। आगे के पांच उदयस्थानों में सत्त्वस्थान ४ ही होते हैं अत: इन पांच उदयस्थानों को एकसाथ लिया है।

८२ का सत्त्व तेजोकायिक व वायुकायिक के स्वस्थान में मनुष्यद्विक की उद्वेलना होनेपर होगा वहाँ २३ के बन्ध और २६ के उदय में ८२ का सत्त्व है और यह जीव मरकर एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंचपर्यंत किसी पर्याय में उत्पन्न होगा वहाँ २३ बन्ध और २१,२४,२५,२६ के उदय में ८२ का सत्त्व पाया जायेगा। २७ आदि उदय में ८२ का सत्त्व नहीं होगा क्योंकि पर्याप्त होनेपर मनुष्यद्विक का बन्ध करता है वहाँपर ८४ सत्त्व हो गया। २७ आदि का उदय पर्याप्त होनेपर होता है।

इसीप्रकार २५ और २६ के बन्ध में भी जानना।

२८ के बन्ध में ९३ का सत्त्व नहीं पाया जाता, क्योंकि तीर्थंकर की सत्तावाला जीव निरन्तर तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करता है केवल नरक में जाते समय क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि होकर २८ नरकयुत का बन्ध करता है उसके ९१ प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है। तब वह पर्याप्त मनुष्य होता है इसलिए २८ बन्ध और ३० प्र. उदय में ही ९१ प्रकृति का सत्त्वस्थान है।

२८ प्रकृतिक बन्ध और २५, २७ प्रकृतिक उदय में ९० प्रकृति का सत्त्व वैक्रियिक ऋद्धि की अपेक्षा बताया है। २८ का बन्ध मनुष्य तिर्यंच को ही होता है और २५ और २७ का उदय देव, नारकी, एकेन्द्रिय और आहारक ऋद्धिधारी को होता है। २८ का बन्ध देव, नारकी, एकेन्द्रिय को नहीं होता। रही बात आहारक ऋद्धिवाले की उसको २८ का बन्ध और २५, २७ का उदय रहते हुए ९२ का ही सत्त्व पाया जायेगा। क्योंकि आहारकद्विक की सत्ता के बिना आहारकऋद्धि नहीं होती । अत: उनके ९० प्रकृति का सत्त्व नहीं होता।

तप आदि लब्धि के कारण औदारिक शरीरियों के भी वैक्रियिक शरीर हो जाता है। उसकी अपेक्षा २५ व २७ प्रकृति के उदय काल में ९० प्रकृति का सत्त्व और २८ प्रकृति का बन्ध संभव है। पंचसंग्रह में वैक्रियिक काययोग में २५, २६, २८, २९ और ३० प्रकृतिक पाँच बन्धस्थान कहे हैं। वैक्रियिक काययोग में २८ प्रकृतिक बन्धस्थान वैक्रियिक काययोगवाले मनुष्य या तिर्यंचों के ही सम्भव है।[1]

एक साथ एक जीव के औदारिक, वैक्रियिक, तैजस और कार्मण ये चार शरीर हो सकते हैं। यह विक्रियारूप शरीर भी औदारिक है, ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि विक्रियारूप शरीर के औदारिक होने का निषेध है।'' इसी वैक्रियिकशरीर की उदीरणा और उदयकाल जघन्य एकसमय कहा गया है क्योंकि तिर्यञ्च या मनुष्यों के एक समय उत्तरशरीर की विक्रिया करके द्वितीय समय में मृत्यु को प्राप्त हुए जीव के एकसमय काल पाया जाता है।[2] इसप्रकार वैक्रियिक शरीरवाले तिर्यञ्च या मनुष्य के वैक्रियिक शरीर की अपेक्षा २५ व २७ प्रकृति के उदयकाल में ९० प्रकृति का सत्त्व और २८ प्रकृति का बन्ध सम्भव है।

२९ प्रकृतिक देवतीर्थयुत बन्ध के साथ २१ प्रकृतिक उदय मनुष्य असंयत को होगा उसे ९३ या ९१ प्रकृतिक सत्त्वस्थान पाया जाता है।

---

१. गो. कर्म पृ. ६५० आदिमती माताजी २. ध.पु.१५ पृ. ६४

२९ प्रकृतिक दे. ती. बन्ध और २५, २७ उदय में ९३ का सत्त्वस्थान आहारक की अपेक्षा है।

२९ प्रकृतिक म. प. बन्ध और २५ उदय में ९१ का सत्त्वस्थान नारक मिथ्यादृष्टी की अपेक्षा है।

२९ प्रकृतिक दे. ती. बन्ध और २८,२९,३० उदय में ९३ और ९१ का सत्त्व मनुष्य असंयत की अपेक्षा से है।

३० प्रकृतिक म. ती. बन्ध और २१,२५,२७,२८,२९ के उदय में ९३ का सत्त्व देव असंयत की अपेक्षा व ९१ का सत्त्व नारक और देव असंयत की अपेक्षा से है।

३१ बंधस्थान के साथ नियम से ३० का ही उदय होता है तब ९३ का ही सत्त्व होगा क्योंकि वह तीर्थंकर व आहारकद्विक दोनों का बंध कर रहा है तो दोनों का सत्त्व नियम से होगा।

नाम कर्म के बन्ध-सत्त्व स्थान को आधार एवं उदय स्थान को आधेय बनाकर कथन-

तेवीसबंधठाणे दुखणउदडचदुरसीदिसत्तपदे ।
इगिवीसादीणउदओ बासीदे एक्कवीसचऊ ।।७६९।।

अन्वयार्थ - (तेवीसबंधठाणे) तेईस प्रकृतिक बंधस्थान में, **(दुखणउदड-चदुरसीदिसत्तपदे)** और बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(इगिवीसादीणउदओ)** इक्कीस आदि नौ उदयस्थान हैं। तथा **(बासीदे)** बयासी सत्त्व स्थान में, **(एक्कवीसचऊ)** इक्कीस प्रकृतिक आदि चार उदयस्थान हैं।

एवं पणछव्वीसे अडवीसे बंधगे दुणउदंसे ।
इगिवीसादिणबुदया चउवीसट्ठाणपरिहीणा ।।७७०।।

अन्वयार्थ - (एवं पणछव्वीसे) इसी प्रकार पच्चीस और छब्बीस प्रकृतिक बन्ध स्थान में तथा उपरोक्त सत्त्वस्थानों सहित, उदयस्थान जानना। **(अडवीसे बंधगे)** अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान में, **(दुणउदंसे)** बानवे प्रकृतिक सत्त्व होने पर **(इगिवीसादि)** इक्कीस आदि **(णबुदया)** नौ उदयस्थान हैं किन्तु विशेषता यह है कि वहाँ पर

(चउवीसट्ठाणपरिहीणा) चौबीस प्रकृतिक उदयस्थान नहीं है।

इगिणउदीए तीसं उदओ णउदीए तिरियसण्णिं वा ।
अडसीदीए तीसदु णववीसे बंधगे तिणउदीए ।।७७१।।
इगिवीसादट्ठुदओ चउवीसूणो दुणउदिणउदितिये ।
इगिवीसणविगिणउदे णिरयं व छवीस तीसधिया ।।७७२।।

अन्वयार्थ - (इगिणउदीए) इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(तीसं उदओ)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान है, **(णउदीए)** नब्बे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(तिरियसण्णिं वा)** संज्ञी तिर्यंच में कहे अनुसार उदयस्थान हैं। **(अडसीदीए)** अट्ठासी के सत्त्वस्थान में **(तीसदु)** तीस और इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान हैं। **(णववीसे)** उनतीस प्रकृतिक **(बंधगे)** बन्धस्थान सहित, **(तिणउदीए)** तिरानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में,

(इगिवीसादट्ठुदओ) इक्कीस प्रकृतिक आदि आठ उदयस्थानों में, **(चउवीसूणो)** चौबीस प्रकृतिक रहित उदयस्थान हैं। **(दुणउदिणउदितिये)** बानवे और नब्बे आदि तीन सत्त्वस्थानों में **(इगिवीसणविगिणउदे)** इक्कीस आदि नौ उदयस्थान हैं। इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(णिरयं व)** नरक गति के समान उदयस्थान हैं, परन्तु **(छवीस तीसधिया)** छब्बीस और तीस प्रकृतिक उदयस्थान अधिक हैं।

बासीदे इगिचउपणछव्वीसा तीसबंधतिगिणउदे ।
सुरमिव दुणउदी णउदी चउसुदओ ऊणतीसं वा ।।७७३।।

अन्वयार्थ - (बासीदे) बयासी प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(इगिचउपणछव्वीसा)** इक्कीस, चौबीस, पच्चीस और छब्बीस प्रकृतिक उदयस्थान हैं। **(तीसबंधतिगिणउदे)** तीस प्रकृतिक बंधस्थान और तिरानवे और इक्यानवे सत्त्वस्थान में **(सुरमिव)** देव गति के समान उदयस्थान जानना। **(दुणउदी णउदी)** बानवे और नब्बे **(चउसुदओ)** आदि चार सत्त्व स्थानों में, उदयस्थान **(ऊणतीसं वा)** उनतीस प्रकृतिक बंधस्थान के समान जानना।

इगितीसबंधठाणे तेणउदे तीसमेव उदयपदं ।
इगबंधतिणउदिचऊ सीदिचउक्केवि तीसुदओ ।।७७४।।

अन्वयार्थ - (इगितीसबंधठाणे) इकतीस प्रकृतिक बंधस्थान सहित **(तेणउदे)** तिरानवे के सत्त्वस्थान में, **(तीसमेव उदयपदं)** उदयस्थान तीस प्रकृतिक ही जानना। **(इगबंध)** एक प्रकृतिक बंधस्थान में, **(तिणउदिचऊ)** तिरानवे आदि चार, **(सीदिचउक्केवि)** अस्सी आदि प्रकृतिक चार सत्त्वस्थानों में, **(तीसुदओ)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान हैं।

नामकर्म के त्रिसंयोगी भंग - बंध सत्त्व अधिकरण और उदय आधेय

अधिकरण				आधेय	
बंधस्थान	सत्त्वस्थान		बंधस्थान व सत्त्व-स्थान के स्वामी	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
१) २३	४	९२,९०,८८,८४	मनुष्य व तिर्यंच	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
२३	१	८२	पर्याप्त,अपर्याप्त एकेन्द्रिय, अपर्याप्त विकलत्रय व पंचेन्द्रिय तिर्यंच	४	२१,२४,२५,२६
२)२५-२६	२	९२,९०	देव, सर्व तिर्यंच व मनुष्य	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
३)२५-२६	२	८८,८४	एकेन्द्रिय, विकलत्रय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य	९	२१,२४,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
२५-२६	१	८२	एकेन्द्रिय, विकलत्रय, पंचेन्द्रिय(अपर्याप्त)	४	२१,२४,२५,२६
४) २८	१	९२	पंचे.तिर्यंच, मनुष्य, आहारक ऋद्धिधारी	८	२१,२५,२६,२७,२८,२९,३०,३१
२८	१	९१	नरकगमन सन्मुख मिथ्यादृष्टि मनुष्य	१	३०
२८	१	९०	संज्ञी तिर्यंच व मनुष्य	६	२१,२६,२८,२९,३०,३१
२८	१	८८	संज्ञी तिर्यंच व मनुष्य	२	३०,३१

अधिकरण				आधेय	
बंधस्थान	सत्त्वस्थान		बंधस्थान व सत्त्व-स्थान के स्वामी	उदय स्थान	उदयस्थानों का विवरण
५)दे.ती.२९	१	९३	तीर्थसत्त्वयुत मनुष्य व आहारक ऋद्धिधारी	७	२१,२५,२६,२७,२८, २९,३०
२९	१	९१	पर्याप्त मनुष्य व नारकी अपर्याप्त	७	२१,२५,२६,२७,२८, २९,३०
२९	२	९२,९०	सर्व तिर्यंच, मनुष्य व देव, नारकी	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
२९	२	८८,८४	एकें. से पंचे. तिर्यंच व मनुष्य	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
२९	१	८२	एकें.अपर्यांप्त विकलत्रय व पंचेन्द्रिय	४	२१,२४,२५,२६
६)म.ती.३०	१	९३	देव असंयत	५	२१,२५,२७,२८,२९
३०	१	९१	देव व नारकी असंयत	५	२१,२५,२७,२८,२९
३०	२	९२,९०	देव, नारकी तिर्यंच व मनुष्य	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
३०	२	८८,८४	एकें.से पंचें.तिर्यंच व मनुष्य	९	२१,२४,२५,२६,२७, २८,२९,३०,३१
३०	१	८२	एकें.,अपर्याप्त विकलत्रय व पंचेन्द्रिय	४	२१,२४,२५,२६
७) ३१	१	९३	अप्रमत्त व अपूर्वकरण छठेभागतक मनुष्य	१	३०
८) १	८	९३,९२, ९१,९० ८०,७९,७८,७७	अपूर्वकरण(७ वा भाग) अनिवृत्तिकरण, सू. सां.	१	३०

विशेषार्थ - बंध व सत्त्व के स्वामियों को देखकर कितने उदयस्थान वहाँ संभव हैं वह जान सकते हैं। २३,२५,२६,२९ और ३० बन्धस्थान के साथ ८२ के सत्त्व में चार ही उदयस्थान संभव है २१,२४,२५,२६ क्योंकि ८२ की सत्तावाला पर्याप्त तेज व वायुकायिक है और अपर्याप्त अन्य एकेन्द्रिय, विकलत्रय व पंचेन्द्रिय जीव हैं। एकेन्द्रिय में २१,२४,२५,२६ चार उदयस्थान हैं तेज वायुकायिक में आतप, उद्योत का उदय नहीं अत: यहाँ २७ का उदयस्थान नहीं है। २९ बन्धस्थान के साथ ९१ सत्त्वस्थान पर्याप्त मनुष्य व अपर्याप्त नारकी को होता है अत: मनुष्य की अपेक्षा २१,२६,२८,२९,३० ये पाँच उदयस्थान व अपर्याप्त नारकी की अपेक्षा २१, २५ व २७ उदयस्थान संभव हैं।

उदय और सत्त्वस्थानों को आधार तथा बन्ध स्थान को आधेय मानकर कथन -

इगिवीसट्ठाणुदये तिगिणउदे णवयवीसदुगबंधो ।
तेण दुखणउदीसत्ते आदिमछक्कं हवे बंधो ।।७७५।।

अन्वयार्थ - (इगिवीसट्ठाणुदये) इक्कीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(तिगिणउदे)** तिरानवे और इक्यानवे का सत्त्व होने पर, **(णवयवीसदुगबंधो)** उनतीस और तीस -दो बंधस्थान **(तेण)** इक्कीस के उदय में **(दुखणउदीसत्ते)** बानवे और नब्बे के सत्त्व होने पर **(आदिमछक्कं हवे बंधो)** आदि के छह बंधस्थान हैं।

एवमडसीदितिदये ण हि अडवीसं पुणो वि चउवीसे ।
दुखणउदडसीदितिये सत्ते पुव्वं व बंधपदं ।।७७६।।

अन्वयार्थ - (एवमडसीदितिदये) इसी प्रकार अट्ठासी आदि तीन सत्त्वस्थानों में बंधस्थान हैं, परन्तु **(ण हि अडवीसं)** इसमें २८ प्रकृतिक बंधस्थान नहीं है। **(पुणो वि चउवीसे)** पुन: चौबीस प्रकृतिक उदयस्थान में, **(दुखणउदडसीदितिये सत्ते)** बानवे, नब्बे, अट्ठासी प्रकृतिक आदि तीन सत्त्वस्थान होने पर **(पुव्वं व बंधपदं)** पूर्व की भांति बंध पद हैं।

पणवीसे तिगिणउदे एगुणतीसं दुगं दुणउदीए ।
आदिमछक्कं बंधो णउदिचउक्केवि णडवीसं ।।७७७।।

अन्वयार्थ -(पणवीसे) पच्चीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(तिगिणउदे)** तिरानवे और इक्यानवे के सत्त्वस्थान में, **(एगुणतीसं)** उनतीस और तीस प्रकार **(दुगं)** दो बंध स्थान हैं। **(दुणउदीए)**बानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान होने पर, **(आदिमछक्कं बंधो)** आदि के छह बंधस्थान हैं। **(णउदिचउक्केवि णडवीसं)** नब्बे आदि चार प्रकृतियों का सत्त्व होने पर उपरोक्त छह आदि के बन्धस्थान परन्तु अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान रहित होते हैं।

छव्वीसे तिगिणउदे उणतीसं बंध दुगखणउदीए ।
आदिमछक्कं एवं अडसीदितिए ण अडवीसं ।।७७८।।

अन्वयार्थ - (छव्वीसे) छब्बीस प्रकृति उदयस्थान के साथ, **(तिगिणउदे)** तिरानवे और इक्यानवे के सत्त्व के होने पर **(उणतीसं बंध)** उनतीस प्रकृतिक बंधस्थान होता है। **(दुगखणउदीए)** बानवे और नब्बे सत्त्वस्थानों के साथ **(आदिमछक्कं)** आदि के छह बंधस्थान हैं। **(एवं अडसीदितिए)** अट्ठासी आदि तीन प्रकृतिक सत्त्वस्थानों में इसी प्रकार बंधस्थान हैं **(ण अडवीसं)** परन्तु इनमें अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान नहीं हैं।

सगवीसे तिगिणउदे णववीसदुबंधयं दुणउदीए ।
आदिमछण्णउदितिए एवं अडवीसयं णत्थि ।।७७९।।

अन्वयार्थ - (सगवीसे) सत्ताईस प्रकृतिक उदयस्थान सहित तथा **(तिगिणउदे)** तिरानवे और इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थानों में, **(णववीसदुबंधयं)** उनतीस और तीस बंधस्थान हैं। **(दुणउदीए)** बानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में, **(आदिमछण्णउदितिए)** आदि के छह बन्धस्थान हैं तथा नब्बे आदि तीन प्रकृतियों का सत्त्व होने पर, **(एवं)** इसी प्रकार आदि के छह बन्धस्थान हैं परन्तु **(अडवीसयं णत्थि)** अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान नहीं है।

अडवीसे तिगिणउदे उणतीसदु दुजुदणउदि णउदितिये ।
बंधो सगवीसं वा णउदीए अत्थि अडवीसं ।।७८०।।

अन्वयार्थ - (अडवीसे) अट्ठाईस प्रकृतिक उदयस्थान और **(तिगिणउदे)** तिरानवे और इक्यानवे के सत्त्वस्थान में, **(उणतीसदु)** उनतीस और तीस प्रकृतिक दो बंधस्थान, **(दुजुदणउदि णउदितिये)** बानवे और नब्बे आदि तीन सत्त्वस्थानों के साथ,

(बंधो सगवीसं वा) बन्धस्थान सत्ताईस प्रकृतिक उदय के समान हैं किन्तु विशेषता यह है कि **(णउदीए)** नब्बे प्रकृतिक सत्त्वस्थान में **(अत्थि अडवीसं)** अट्ठाईस प्रकृतिक बंधस्थान भी हैं।

अडवीसमिवुणतीसे तीसे तेणउदिसत्तगे बंधो ।
णववीसेक्कत्तीसं इगिणउदे अट्ठवीसदुगं ।।७८१।।

अन्वयार्थ - (अडवीसमिवुणतीसे) उनतीस प्रकृतिक उदयस्थान में, अट्ठाईस प्रकृतिक उदयस्थानवत्ही बन्धस्थान हैं **(तीसे)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान में **(तेणउदिसत्तगे)** तिरानवे प्रकृति का सत्त्व होने पर, **(णववीसेक्कत्तीसं बंधो)** उनतीस और इकतीस प्रकृतिक बन्धस्थान हैं। **(इगिणउदी)** इक्यानवे प्रकृतिक सत्त्वस्थान के साथ, **(अट्ठवीसदुगं)** अट्ठाईस, उनतीस बंधस्थान हैं।

तेण दुणउदे णउदे अडसीदे बंधमादिमं छक्कं ।
चुलसीदेवि य एवं णवरि ण अडवीसबंधपदं ।।७८२।।

अन्वयार्थ - (तेण) उस ३० प्रकृतिक उदयस्थान सहित **(दुणउदे णउदे अडसीदे)** बानवे, नब्बे और अट्ठासी सत्त्वस्थानों में, **(बंधमादिमं छक्कं)** आदि के छह बंधस्थान हैं। **(चुलसीदेवि य)** चौरासी के सत्त्वस्थान में भी, **(एवं)** इसी प्रकार बंधस्थान हैं, परन्तु **(णवरि)** विशेषता यह है कि, **(ण अडवीसबंधपदं)** अट्ठाईस प्रकृतिक बंधपद नहीं है।

तीसुदयं विगितीसे सजोगबाणउदिणउदितियसत्ते ।
उवसंतचउक्कुदये सत्ते बंधस्स ण वियारो ।।७८३।।

अन्वयार्थ - (विगितीसे) इकतीस प्रकृतिक उदयस्थान तथा, **(सजोग बाणउदिणउदि तियसत्ते)** अपने योग्य बानवे, नब्बे प्रकृतिक आदि तीन सत्त्वस्थानों में, **(तीसुदयं)** तीस प्रकृतिक उदयस्थान के समान बंधस्थान जानना चाहिए। **(उवसंतचउक्कुदये)** उपशान्त कषायादि चार गुणस्थानों में उदय **(सत्ते)** सत्त्व तो है, **(बंधस्स वियारो ण)** बंध का विचार नहीं है।

अधिकरण				आधेय	
उदय स्थान	सत्त्व स्था	सत्त्वस्थान विवरण	उदय व सत्त्वस्थान के स्वामी	बंध स्था.	बंधस्थानों का विवरण
१) २१	१	९३	असंयत देव व मनुष्य	२	२९ दे ती.,३० म.ती.
२१	१	९१	देव,मनुष्यअसंयत,नारकी मिथ्यादृष्टि व असंयत	२	२९ दे.ती.म.प.३०म.ती. नरक की अपेक्षा
२१	२	९२,९०	चारों गति के जीव	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२१	३	८८,८४ ८२	एकेन्द्रिय,विकलत्रय अपर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यंचऔर मनुष्य (८२ का सत्त्व नहीं)	५	२३,२५,२६,२९,३०
२) २	५	९२,९० ८८,८४ ८२	एकेन्द्रिय	५	२३,२५,२६,२९,३०
३) २५	१	९३	देव असंयत, आहारक ऋद्धिधारी	२	२९ दे ती.,३० म.ती.
२५	१	९१	देव असंयत, नारक मिथ्या, असंयत	२	२९ म.प.३० म.ती.
२५	१	९२	एकेन्द्रिय, देव, नारक, आहारक ऋद्धिधारी	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२५	१	९०	एकेन्द्रिय, देव, नारक	५	२३,२५,२६,२९,३०
२५	३	८८,८४ ८२	एकेन्द्रिय	५	२३,२५,२६,२९,३०
४) २६	२	९३,९१	मनुष्यअसंयत(निर्वृत्त्यपर्या.)	१	२९ दे. ती.
२६	२	९२,९०	तिर्यंच, मनुष्य,	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२६	२	८८,८४	एकेन्द्रिय, विकलत्रय,पंचे. तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्तक	५	२३,२५,२६,२९,३०
२६	१	८२	एकेन्द्रिय, विकलत्रय, पंचे.तिर्यंच,	५	२३,२५,२६,२९,३०

अधिकरण				आधेय	
उदय स्थान	सत्त्व स्था	सत्त्वस्थान विवरण	उदय व सत्त्वस्थान के स्वामी	बंध स्था.	बंधस्थानों का विवरण
५) २७	१	९३	देव,आहारक ऋद्धिधारीमुनि	२	२९ दे ती.३० म.ती.
२७	१	९१	देव, नारक	२	२९ म.प., ३० म.ती.
२७	१	९२	देव, नारकी, आहारक ऋद्धिधारीमुनि	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२७	१	९०	एकेन्द्रिय, देव, नारकी	५	२३,२५,२६,२९,३०
२७	२	८८,८४	एकेन्द्रिय तिर्यंच	५	२३,२५,२६,२९,३०
६) २८	२	९३,९१	देव, नारकी, मनुष्य	२	२९ दे ती.३० म.ती.
२८	२	९२,९०	तिर्यंच,मनुष्य,देव व नारकी	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२८	२	८८,८४	पंचे.तिर्यंच,मनुष्य,विकलत्रय	५	२३,२५,२६,२९,३०
७) २९	१	९३	देव, मनुष्य,आहारक मुनि	२	२९ दे ती.३० म.ती.
२९	१	९१	देव, नारकी, मनुष्य	२	२९ दे ती.३० म.ती.
२९	२	९२,९०	चारों गति के जीव	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
२९	२	८८,८४	पंचे. अपर्याप्त विकलत्रय पर्याप्त मनुष्य (अपर्याप्त)	५	२३,२५,२६,२९,३०
८) ३०	१	९३	मनुष्य चौथे से आठवें के छठे भागतक	२	२९ दे ती.३१ दे.ती.आ.
३०	१	९१	मनुष्य (नरकगमन के सन्मुख मिथ्यादृष्टि को २८ नरक का बन्ध होता है)	२	२८ न २९ दे ती.
३०	३	९२,९०,८८	पंचे.विकलत्रय व मनुष्य	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
३०	१	८४	पंचे.विकलत्रय व मनुष्य	५	२३,२५,२६,२९,३०
९) ३१	३	९२,९०,८८	पंचेन्द्रिय विकलत्रय तिर्यंच	६	२३,२५,२६,२८,२९,३०
३१	१	८४	पंचेन्द्रिय विकलत्रय तिर्यंच	५	२३,२५,२६,२९,३०
३०	४	९३,९२, ९१,९०	उपशांतकषाय गुणस्थानवर्ती	०	०

अधिकरण				आधेय	
उदय स्थान	सत्त्व स्थान	सत्त्वस्थान विवरण	उदय व सत्त्वस्थान के स्वामी	बंध स्थान	बंधस्थानों का विवरण
३०	४	८०,७९,७८,७७	क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती	०	०
३०	२	७९,७७	सामान्य सयोग केवली	०	०
३१	२	८०,७८	तीर्थंकर सयोग केवली	०	०
९	३	८०,७८,१०	तीर्थंकर अयोग केवली	०	०
८	३	७९,७७,९	सामान्य अयोग केवली	०	०

१) २१,२५,२७,२८,२९ प्रकृतिक उदयस्थान के साथ ९३, ९१ सत्त्वस्थान में २९ और ३० दो बन्धस्थान हैं वहाँ देव, नारकी, असंयत ३० मनुष्य तीर्थयुत का बन्ध करते हैं और मनुष्य असंयत व आहारकऋद्धिधारी २९ देव तीर्थयुत का नियम से बन्ध करते हैं।

२) २१, और २५ प्रकृतिक उदयस्थान के साथ ९१ सत्त्व में नारकी मिथ्यादृष्टि २९ मनुष्य पर्याप्तयुत का बन्ध करते हैं। ३० प्रकृतिक उदयस्थान के साथ ९१ सत्त्वयुक्त मनुष्य नरक जाने के सन्मुख हुआ मिथ्यादृष्टि होकर २८ नरकयुतका बन्ध करता है।

३) आहारकऋद्धिधारी प्रमत्तसंयत के ९१ प्रकृति का सत्त्व नहीं हो सकता है ९३ अथवा ९२ का सत्त्व पाया जायेगा। अत: २५ के उदयस्थान के साथ ९१ प्रकृतिक सत्त्वस्थान में २९ दे. तीर्थयुत बन्ध संभव नहीं है नारकी की अपेक्षा २९ मनुष्ययुत का बन्ध संभव है।

३० के उदय में ९३ के सत्त्व के साथ एक प्रकृति का बंध भी संभव है क्योंकि ३० उदय सहित ९३, ९२, ९१, ९० का सत्त्व ११ वें गुणस्थानतक एक प्रकृति का ही बंध होता है। यह बात गाथा और टीका में नहीं है। ३० के उदय के साथ ८०, ७९, ७८, ७७ सत्त्व स्थान में भी एक का बंध संभव है।

णामस्स य बंधादिसु दुतिसंजोगा परूविदा एवं ।
सुदवणवसंतगुणगणसायरचंदेण सम्मदिणा ।।७८४।।

अन्वयार्थ - (सुदवणवसंतगुणगणसायरचंदेण) जो जैन सिद्धान्तरूपी वन को प्रफुल्लित करने में वसन्त ऋतु के समान तथा गुणों के समूहरूप सागर को वृद्धिंगत करने के लिए चन्द्रमा के समान हैं ऐसे **(सम्मदिणा)** सम्यग्ज्ञानधारी श्री वर्द्धमान स्वामी ने, **(णामस्स य बंधादिसु)** नामकर्म के बन्ध-उदय एवं सत्त्व में, **(दुतिसंजोगा)** द्विसंयोगी और त्रिसंयोगी भंग **(परूविदा)** कहे हैं।

६ बन्ध-प्रत्यय अधिकार

णमिऊण अभयणंदिं सुदसायरपारगिंदणंदिगुरुं
वरवीरणंदिणाहं पयडीणं पच्चयं वोच्छं ।।७८५।।

अन्वयार्थ - (अहं) मैं, **(अभयणंदिं)** अभयनन्दि को **(सुदसायर पारगिंदणंदि गुरुं)** श्रुतरूपी समुद्र के पारगामी इंद्रनन्दि गुरु को,**(वरवीरणंदिणाहं)** श्रेष्ठ वीरनन्दि को **(णमिऊण)** नमस्कार करके **(पयडीणं)** कर्म प्रकृतियों के, **(पच्चयं)** प्रत्ययों को **(वोच्छं)** कहूँगा।

विशेषार्थ - मैं अभयनन्दि मुनीश्वर को, शास्त्ररूपी समुद्र के पारगामी इन्द्रनन्दि गुरू को तथा उत्कृष्ट वीरनन्दि स्वामी को नमस्कार करके कर्मप्रकृतियों के प्रत्यय अर्थात् बन्धकारणों को कहूंगा। प्रत्यय अर्थात् आस्रव जिनके द्वारा कार्मणस्कन्ध 'आस्रवन्ति' अर्थात् कर्मरूपता को प्राप्त होते हैं उन्हें आस्रव कहते हैं।

मिच्छत्तं अविरमणं कसायजोगा य आसवा होंति।
पण बारस पणुवीसं पण्णरसा होंति तब्भेया ।।७८६।।

अन्वयार्थ - (मिच्छत्तं) मिथ्यात्व, **(अविरमणं)** अविरति, **(कसाय)** कषाय **(य)** और **(जोगा)** योग, ये चार **(आसवा)** आस्रव **(होंति)** होते हैं। **(तब्भेया)** उनके भेद क्रम से, **(पण)** पाँच, **(बारस)** बारह, **(पणुवीसं)** पच्चीस,**(पण्णरसा)** पन्द्रह **(होंति)** होते हैं।

विशेषार्थ -मूलप्रत्यय → ४ १) मिथ्यात्व २) अविरति ३) कषाय ४) योग

उत्तरप्रत्यय ५७ → ५ + १२ + २५ + १५

५ मिथ्यात्व - (एकान्त, विपरीत, विनय, संशय, अज्ञान)

१२ अविरति - (५ इन्द्रिय वश होना, १ मन, षट्काय हिंसा)

२५ कषाय - (१६ कषाय + ९ नोकषाय)

१५ योग - (४ मनोयोग, ४ वचनयोग, ७ काययोग)

चदुपच्चइगो बंधो पढमेऽणंतरतिगे तिपच्चइगो ।
मिस्सगबिदियं उवरिमदुगं च देसेक्कदेसम्मि।।७८७।।

अन्वयार्थ - **(पढमे)** प्रथम गुणस्थान में **(चदुपच्चइगो)** चारों प्रत्ययों से, **(णंतर तिगे)** आगे के तीन गुणस्थानों अर्थात् दूसरे, तीसरे और चौथे गुणस्थान में **(तिपच्चइगो)** मिथ्यात्व रहित तीन प्रत्ययों से **(च)** और **(देसेक्कदेसम्मि)** देशविरत गुणस्थान में, **(मिस्सगबिदियं)** विरत-अविरत दोनों का मिला हुआ और **(उवरिम दुगं)** उसके ऊपर के दो प्रत्ययों से अर्थात् अढाई प्रत्ययों से, **(बन्धो)** बन्ध होता है।

उवरिल्लपंचये पुण दु पच्चया जोगपच्चओ तिण्हं।
सामण्णपच्चया खलु अट्ठण्णं होंति कम्माणं।।७८८।।

अन्वयार्थ - **(पुण)** इसके पश्चात् **(उवरिल्लपंचये)** ऊपर के पाँच गुणस्थानों में प्रमत्त विरत से सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान तक **(दु पच्चया)** दो प्रत्यय-कषाय और योग हैं, **(तिण्हं)** आगे के तीन गुणस्थानों में उपशान्त कषाय से सयोगी पर्यंत **(जोगपच्चओ)** योग प्रत्यय है। इस प्रकार **(अट्ठण्णं कम्माणं)** आठ कर्मों के, **(खलु)** निश्चय से, **(सामण्ण पच्चया)** सामान्य प्रत्यय, **(होंति)** होते हैं।

गुणस्थान अपेक्षा से चार मूलप्रत्यय

गुणस्थान क्र.	गुणस्थान	आस्रव संख्या	आस्रवों के नाम			
१	मिथ्यात्व	४	मिथ्यात्व,	अविरति,	कषाय,	योग
२ से ४	सासादन,मिश्र,असंयत	३	×	अविरति,	कषाय,	योग
५	देशसंयत	२-१/२	×	विरताविरति मिश्र,	कषाय,	योग
६ से १०	प्रमत्तसंयत से सूक्ष्मसांपराय तक	२	×	×	कषाय,	योग
११ से १३	उपशांतमोह,क्षीणमोह, सयोगकेवली	१	×	×	×	योग
१४	अयोगकेवली	०	×	×	×	×

उत्तरप्रत्ययों के नाम

मूलप्रत्यय	भेद	उत्तरप्रत्यय
१) मिथ्यात्व	५	एकान्त, विपरीत, विनय, संशय, अज्ञान
२) अविरति	१२	६ = ५ इन्द्रिय व मन का निरोध न करना, ६ = पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व वनस्पति तथा त्रसहिंसा से विरत न होना
३) कषाय	२५	१६ कषाय - अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ ९ नोकषाय - हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद
४) योग	१५	४ मनोयोग - सत्य, असत्य, उभय, अनुभय ४ वचनयोग - सत्य, असत्य, उभय, अनुभय ७ काययोग - औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्मण
	५७	

पणवण्णा पण्णासा तिदालछादाल सत्ततीसा य।
चदुवीसा बावीसा बावीसमपुव्वकरणोत्ति ।।७८९।।

अन्वयार्थ - (पणवण्णा) पचपन, **(पण्णासा)** पचास, **(तिदाल)** तैंतालीस, **(छादाल)** छियालीस **(सत्ततीसा)** सैंतीस **(चदुवीसा)** चौबीस, **(बावीसा)** बाईस, **(बावीसम)** बाईस, **(पुव्वकरणोत्तिय)** मिथ्यात्व गुणस्थान से अपूर्वकरण तक क्रमसे उत्तर प्रत्यय होते हैं।

थूले सोलसपहुडी एगूणं जाव होदि दस ठाणं ।
सुहुमादिसु दस णवयं णवयं जोगिम्मि सत्तेव ।।७९०।।

अन्वयार्थ - (थूले) बादर साम्पराय- अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में, **(सोलस पहुदी)** सोलह से प्रारम्भ करके, **(एगूणं)** एक एक कम करते हुए, **(दस ठाणं)** दस के

स्थान **(जाव)** तक **(होदि)** होते हैं। **(सुहुमादिसु)** सूक्ष्म साम्परायिक आदि में **(दस)** दस, **(णवयं)** नौ, **(णवयं)** नौ, **(जोगम्मि)** सयोगकेवली में **(सत्तेव)** सात ही होते हैं।

गुणस्थानों में उत्तरप्रत्यय

गुणस्थान	**उ. प्रत्ययों की संख्या**	**उत्तरप्रत्ययों का विवरण**
१ मिथ्यात्व	५५	५ मिथ्यात्व + १२ अविरति + २५ कषाय + १३ योग (औ, आ. मि.छोडकर शेष)
२ सासादन	५०	१२ अविरति + २५ कषाय + १३ योग (उपर्युक्त)
३ मिश्र	४३	१२ अविरति + २१ कषाय (अनन्तानुबंधी के विना)+ १० योग (औ.मि.,वै,मि,आ.,आ.मि.,कार्मण के बिना)
४ असंयत	४६	१२ अविरति +२१ कषाय(अनन्तानुबंधी के विना) + १३ योग (आ.,आ.मि. को छोड़कर)
५ देशसंयत	३७	११ अविरति(त्रसाविरति के विना)+१७ कषाय(अनं,अप्र के विना)+ ९ योग (४ मनोयोग,४ वचनयोग,१ औदा)
६ प्रमत्तसंयत	२४	१३ कषाय (४ संज्वलन+९नोकषाय)+११ योग (वै, वैमि, औ.मि,कार्मण के विना)
७ अप्रमत्त ८ अपूर्व	२२	१३ कषाय (४ संज्वलन+९नोकषाय)+९ योग (४ मनो.+४वचन+१औ.काययोग)
९ अनिवृत्ति प्र.भाग	१६	७ कषाय (४ संज्वलन+३ वेद) + ९ योग (४ मनो.+४ वचन+१औ.काययोग)
अनिवृत्ति द्वितीयभाग	१५	६ कषाय (४ संज्वलन+स्त्री.पुं.वेद) + ९ योग (४ मनो.+४ वचन+१औ.काययोग)
अनिवृत्ति तृतीयभाग	१४	५ कषाय (४ संज्वलन+पुं.वेद) + ९ योग (४ मनो.+४ वचन+१औ.काययोग)
अनिवृत्ति चतुर्थभाग	१३	४ संज्वलनकषाय + ९ योग (४ मनो.+४वचन+१ औ.काययोग)
अनिवृत्ति पंचमभाग	१२	३ संज्वलन मान, माया,लोभ + ९ योग (४ मनो.+४वचन+१औ.काययोग)

गुणस्थान	उ. प्रत्ययों की संख्या	उत्तरप्रत्ययों का विवरण
अनिवृत्ति षष्ठभाग	११	२ संज्वलन माया,लोभ + ९ योग (४ मनो.+४वचन+१औ.काययोग)
अनिवृत्ति सप्तमभाग	१०	१ संज्वलन लोभ + ९ योग (४ मनो.+४ वचन+१ औ.काययोग)
१० सूक्ष्मसांपराय	१०	१ सूक्ष्मलोभ + ९ योग (४ मनो.+४ वचन+१ औ.काययोग)
११ उपशांत मोह	९	९ योग (४ मनो.+४ वचन+१ औ.काययोग)
१२ क्षीणमोह	९	९ योग (४ मनो.+४ वचन+१औ.काययोग)
१३ सयोगकेवली	७	७ योग (सत्य,अनुभय मनोयोग, सत्य, अनुभय वचनयोग, औदारिक, औदारिक-मिश्र, कार्मण-काययोग)
१४ अयोगकेवली	०	०

विशेषार्थ - आहारक काययोग व आहारकमिश्र काययोग केवल छठे गुणस्थान में ही होता है। औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र व कार्मणकाययोग अपर्याप्त अवस्था में ही होते हैं अत: प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ गुणस्थान में पाये जाते हैं। केवली समुद्घात की अपेक्षा १३ वें गुणस्थान में औदारिक मिश्र व कार्मण काययोग पाया जाता है।

पाँचवें गुणस्थान में केवल एक त्रसवध का त्याग किया है अत: एक विरति है, शेष ११ अविरति हैं।

गुणस्थानानुसार जैसे जैसे कषायों के उदय का अभाव हो जाता है उतने उतने कषाय प्रत्यय कम होते हैं। ग्यारहवें गुणस्थान में सत्ता में कषाय होने पर भी उदय में एक भी कषाय न होने से कषायनिमित्तक बन्ध नहीं होता।

गुणस्थान की अपेक्षा से ५७ उत्तर प्रत्ययों के अनुदय, उदय का कोष्टक

गुणस्थान	अनुदय प्रत्यय	अनुदयागत प्रत्ययों का विवरण	उदयागत प्रत्यय
१ मिथ्यात्व	२	आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग	५५
२ सासादन	७	२ + ५ मिथ्यात्व	५०
३ मिश्र	१४	७+४ अनंतानुबंधी+३ औ.मि,वै.मि, कार्मणयोग	४३
४ असंयत	११	उपर्युक्त १४ (अनुदय) - ३ औ.मि, वै.मि,कार्मणयोग(इनका उदय हुआ)	४६
५ देशसंयत	२०	उपर्युक्त अनुदय ११+९(अप्रत्याख्यान४ +औ.मि.,वै.,वै.मि.,कार्मण,+त्रसविरति	३७
६ प्रमत्तसंयत	३३	२०+ पाँचवें की व्युच्छित्ति १५ - २ आहारक मिश्र, आहारक काययोग	२४
७ अप्रमत्त	३५	३३+२(आहारक,आहा.मिश्रकाययोग)	२२
८ अपूर्वकरण	३५	उपर्युक्त ३५	२२
९ अनिवृत्ति प्र.भाग	४१	३५ + ६ हास्यादि	१६
अनिवृत्ति द्वि.भाग	४२	४१ + १ नपुंसकवेद	१५
अनिवृत्ति तृ.भाग	४३	४२ + १ स्त्रीवेद	१४
अनिवृत्ति च.भा	४४	४३ + १ पुंवेद	१३
अनिवृत्ति पं.भाग	४५	४४ + १ संज्वलन क्रोध	१२
अनिवृत्ति ष.भाग	४६	४५ + १ संज्वलन मान	११
अनिवृत्ति स.भाग	४७	४६ +१ संज्वलन माया	१०
१० सूक्ष्मसांपराय	४७	४७	१०
११ उपशांत मोह	४८	४७ +१ संज्वलन लोभ	९
१२ क्षीणमोह	४८	४८ उपर्युक्त	९
१३ सयोगकेवली	५०	४८ + ४ =५२-२ औ.मि. कार्मणयोग	७
१४ अयोगकेवली	५७	सर्व	०

गुणस्थान की अपेक्षा से ५७ उत्तर प्रत्ययों के व्युच्छित्ति का कोष्टक

गुणस्थान	व्युच्छित्ति रूप प्रत्यय	व्युच्छित्तिरूप प्रत्ययों का विवरण
१ मिथ्यात्व	५	५ मिथ्यात्व
२ सासादन	४	४ अनन्तानुबन्धी कषाय
३ मिश्र	०	
४ असंयत	९	अप्रत्यख्यान कषाय ४, योग ४ (वै.,वैमि., औ.मि, कार्मणयोग, त्रसहिंसा)
५ देशसंयत	१५	४ प्रत्याख्यानकषाय,११ अविरति
६ प्रमत्तसंयत	२	आहारककाययोग, आहारकमिश्र
७ अप्रमत्त	०	०
८ अपूर्वकरण	६	हास्य, रति, अरति,शोक, भय, जुगुप्सा
९ अनिवृत्ति प्र.भाग	१	नपुंसकवेद
अनिवृत्ति द्वि.भाग	१	स्त्रीवेद
अनिवृत्ति तृ.भाग	१	पुंवेद
अनिवृत्ति च.भा	१	संज्वलन क्रोध
अनिवृत्ति पं.भाग	१	संज्वलन मान
अनिवृत्ति ष.भाग	१	संज्वलन माया
अनिवृत्ति स.भाग	०	०
१० सूक्ष्मसांपराय	१	संज्वलन लोभ
११ उपशांत मोह	०	०
१२ क्षीणमोह	४	असत्य उभय मनोयोग, असत्य उभय वचनयोग
१३ सयोंगकेवली	७	सत्य,अनुभय मनोयोग, सत्य अनुभय वचनयोग औ.,औ.मि,कार्मणयोग
१४ अयोगकेवली	०	

विशेषार्थ - विवक्षित गुणस्थान के अनुदयरूप प्रत्ययों को निकालने के लिए पूर्व गुणस्थान के अनुदय और व्युच्छित्तिरूप प्रत्ययों को जोड़ना चाहिए और वहाँपर किसी प्रत्यय का उदय न हो तो उसे भी जोड़ना और किसी प्रत्यय का उदय वहाँ प्रारम्भ हो गया हो तो अनुदय में से कम करना।

अवरादीणं ठाणं ठाणपयारा पयारकूडा य।
कूडुच्चारण भंगा पंचविहा होंति इगिसमये।।७९१।।

अन्वयार्थ- (अवरादीणं) जघन्य,मध्यम और उत्कृष्ट **(ठाणं)** स्थान, **(ठाणपयारा)** स्थानों के प्रकार **(पयार कूडा)** कूट प्रकार, **(कूडुच्चारण)** कूटोच्चारण **(य)** और **(भंगा)** भंग, **(इगिसमये)** एक समय में **(पंचविहा)** पाँच प्रकार **(होंति)** होते हैं।

विशेषार्थ - एक समय में प्रत्ययों के पाँच प्रकार - १) जघन्य, मध्यम और उत्कृष्टस्थान २) स्थानों के प्रकार ३) कूटप्रकार ४) कूटोच्चारण ५) भङ्ग

गुणस्थानों में प्रत्यय स्थान कहते हैं-

दस अट्ठारस दसयं सत्तर णव सोलसं च दोण्हंपि।
अट्ठय चोद्दस पणयं सत्ततिये दुतिदुगेगमेगमदो ।।७९२।।

अन्वयार्थ - मिथ्यादृष्टि से सयोग केवली तक जघन्य-उत्कृष्ट क्रमशः **(दस अट्ठारस)** दस-अठारह **(दसयं सत्तर)** दस-सत्रह **(दोण्हं पि)** दो गुणस्थानों में भी **(णव सोलसं)** नौ-सोलह **(अट्ठय चोद्दस)** आठ-चौदह **(तिये पणयं सत्त)** तीन गुणस्थानों में पाँच-सात उसके पश्चात् **(दुति)** दो-तीन, **(दुग)** दो **(अदो एगमेगं)** इसके आगे एक-एक ही स्थान हैं।

विशेषार्थ - स्थान - एक जीव के एक काल में होनेवाले प्रत्ययों की संख्या को स्थान कहते हैं। कम से कम पाये जानेवाले प्रत्ययों के समूह को जघन्य स्थान कहा है। अधिक से अधिक पाये जानेवाले प्रत्ययों के समूह को उत्कृष्ट स्थान कहा है। और जघन्य और उत्कृष्ट के बीच में प्राप्त होनेवाले प्रत्ययों के समूह को मध्यम स्थान कहा है।

जैसे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में ५५ प्रत्ययों में से एक जीव के कम से कम १० प्रत्ययपाये जाते हैं अतः १० यह जघन्य स्थान हो गया और अधिक से अधिक १८ प्रत्यय

पाये जाते हैं। अत: १८ का उत्कृष्ट स्थान होता है। बीच के ११, १२, १३, १४,१५,१६,१७ भी प्रत्यय पाये जा सकते हैं वे सब मध्यम स्थान हैं। इसी प्रकार सब गुणस्थानों में समझना।

गुणस्थानों की अपेक्षा जघन्य-मध्यम व उत्कृष्टस्थान का कोष्टक

गुणस्थान	बंधप्रत्यय का जघन्यस्थान	बंधप्रत्यय के मध्यमस्थान	बंधप्रत्यय का उत्कृष्टस्थान
मिथ्यात्व	१०	११ से १७	१८
सासादन	१०	११ से १६	१७
मिश्र	९	१० से १५	१६
असंयत	९	१० से १५	१६
देशसंयत	८	९ से १३	१४
प्रमत्तसंयत	५	६	७
अप्रमत्त	५	६	७
अपूर्वकरण	५	६	७
अनिवृत्ति	२	०	३
सूक्ष्मसांपराय	०	०	२
उपशांतमोह	०	०	१
क्षीणमोह	०	०	१
सयोगकेवली	०	०	१
अयोगकेवली	०	०	०

.उपर्युक्त प्रत्ययस्थानों के प्रकार

एक्कं च तिण्णि पंच य हेट्ठुवरीदो दु मज्झिमे छक्कं।
मिच्छे ठाणपयारा इगिदुगमिदरेसु तिण्णि देसोत्ति ।।७९३।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में **(ठाणपयारा)** स्थान के प्रकार **(हेट्ठ)** अधस्तन, **(य)** और **(उवरिदो)** उपरितन तीन स्थानों में, **(एक्कं च तिण्णि पंच)** एक, तीन और पाँच प्रकार हैं। **(मज्झिमे दु)** मध्यवर्ती स्थानों में **(छक्कं)** छह-छह भेद

हैं। **(देसोत्ति)** देशसंयत पर्यंत अर्थात् सासादन से देश संयम पर्यंत, नीचे-ऊपर का पहला स्थान **(इगि)** एक-एक प्रकार का, **(दुगम्)** दूसरा स्थान दो-दो प्रकार का, **(इदरेसु)** अन्य मध्यवर्ती स्थानों में **(तिण्णि)** तीन-तीन प्रकार हैं।

विशेषार्थ - एक ही स्थान आस्रवभेद के कारण अनेक प्रकार का होता है। वे प्रकार कैसे निकालते हैं इसका स्पष्टीकरण आगे कूटरचना से होगा।

मिथ्यात्व गुणस्थान के ९ स्थानों में से नीचे से तीन स्थानों में अर्थात १०, ११, १२, प्रत्ययरूप स्थानों में तथा ऊपर से तीन स्थानों में अर्थात् १८,१७,१६ प्रत्ययरूप स्थानों में क्रमसे १,३,५ प्रकार हैं और बीच के ३ स्थानों में अर्थात् १३,१४,१५ प्रत्ययरूप स्थानों में ६-६ प्रकार हैं। सासादन से देशसंयत गुणस्थान पर्यन्त नीचे से दो स्थानों में और ऊपर से दो स्थानों में क्रम से १,२ प्रकार हैं और बीच के स्थानों में ३-३ प्रकार हैं।
प्रमत्त से सयोगी गुणस्थानपर्यंत सभी स्थान एक -एक प्रकार के हैं।

गुणस्थानों में स्थानों के प्रकार **कुलजोड़**

											कुलजोड़
मिथ्यात्व	**स्थान**	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	९
	प्रकार	१	३	५	६	६	६	५	३	१	३६
सासादन	**स्थान**	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८
मिश्र	**स्थान**	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८
असंयत	**स्थान**	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८

देशसंयत	स्थान	८	९	१०	११	१२	१३	१४			७
	प्रकार	१	२	३	३	३	२	१			१५

प्रमत्तादि तीन गुणस्थान	स्थान	५	६	७							३
	प्रकार	१	१	१							३

अनिवृत्ति-करण	स्थान	२	३	सूक्ष्म सांपराय	२	उपशांत क्षीणमोह सयोग	१	
	प्रकार	१	१		१		१	

कुलस्थान ५५, प्रकार १२०

३) कूटप्रकार - भयजुगुप्सारहित प्रथम, भयजुगुप्सा में से किसी एकसहित द्वितीय,भयजुगुप्सा दोनों से सहित तृतीय ऐसे सामान्यरूप से ३ कूट हैं और अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन करके मिथ्यात्व में प्राप्त हुए के अनन्तानुबन्धी कषायरहित ३ कूट और होते हैं।

कूटरचना - सबसे नीचे पाँच मिथ्यात्व एक एक करके स्थापित करना क्योंकि एक जीव के एक काल में एक ही मिथ्यात्व होता है। उनके ऊपर पाँच इन्द्रिय और एक मन इन छह में से एक जीव के एक काल में एक ही की प्रवृत्ति होती है। अत: छह जगह एक एक लिखना। उनके ऊपर छह काय की हिंसा में से एक जीव एक समयमें एक काय की हिंसा करता है या दो, तीन, चार, पाँच, छह काय की हिंसा करता है अत: १,२,३,४,५,६ अंक क्रमसे लिखना। उसके ऊपर १६ कषायों में से एक काल में ४ चार का उदय रहता है अत: चार जगह ४-४ के अंक लिखना। उसके ऊपर तीन वेद के १-१ अंक लिखना। उसके ऊपर उस गुणस्थान में संभवनीय जितने योग हैं उतनी जगह १-१ एक एक का अंक लिखना। उसके ऊपर भयजुगुप्सा रहित कूट हो तो शून्य, दोनों में से एक सहित हो तो दो जगह एक-एक, भयजुगुप्सा दोनों से सहित हो तो एक जगह दो का अंक लिखना।

अब उपर्युक्त स्थान प्रकारों को जानने के लिए कूट प्रकारों का कथन करते हैं-

भयदुगरहियं पढमं एक्कदरजुदं दुसहियमिदि तिण्णि।
सामण्णा तियकूडा मिच्छा अणहीणतिण्णि वि य ।।७९४।।

अन्वयार्थ - (भयदुगरहियं पढमं) भय-जुगुप्सा दोनों से रहित प्रथम कूट, **(एक्कदरजुदं)** द्वितीय कूट भय-जुगुप्सा में से किसी एक सहित, **(दुसहियमिदि तिण्णि)** भय-जुगुप्सा सहित तृतीय, **(सामण्णा तियकूडा)** इस प्रकार तीन कूट तो सामान्य हैं। **(अण हीण)** अनन्तानुबंधी की विसंयोजना करनेवाले **(मिच्छा)** मिथ्यादृष्टि के, **(तिण्णिवि य)** तीन कूट और जानना चाहिए।

मिथ्यात्वगुणस्थान के अनन्तानुबन्धी कषायसहित तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
भयजुगुप्सा	०	१-१	२
१३ योग	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१
हास्य रति शोक अरति	२ - २	२ - २	२ - २
वेद ३	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
१६ कषाय	४ क्रो.-४ मा.- ४ मा.-४ लो	४ क्रो.-४ मा.- ४ मा.-४ लो	४ क्रो.-४ मान- ४ मा.-४ लो
पृथ्वीकायादि ६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६
५ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
मिथ्यात्व ५	१-१-१-१-१	१-१-१-१-१	१-१-१-१-१
५५ बन्धप्रत्यय	११-१२-१३-१४- १५-१६	१२-१३-१४-१५- १६-१७	१३-१४-१५-१६- १७-१८

मिथ्यात्वगुणस्थान के अनन्तानुबन्धीरहित तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
भयजुगुप्सा	०	१-१	२
१० योग पर्याप्त योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१-१
हास्य-शोकयुगल	२ - २	२ - २	२ - २
वेद ३	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
१२ कषाय अनंतानुबंधीरहित	३ क्रो.-३ मा.-३ मा.-३ लो	३ क्रो.-३ मा.-३ मा.-३ लो	३ क्रो.-३ मा.-३ मा.-३ लो
पृथ्वीकायादि ६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६
५ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
मिथ्यात्व ५	१-१-१-१-१	१-१-१-१-१	१-१-१-१-१
कुल आस्रव ४८	१०-११-१२-१३-१४-१५	११-१२-१३-१४-१५-१६	१२-१३-१४-१५-१६-१७

स्थान	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	९	**कुल**
प्रकार	१	३	५	६	६	६	५	३	१	३६	**कुल**

विशेषार्थ - उपर्युक्त मिथ्यात्व के छह कूटों में १० प्रत्ययरूप स्थान एक ही है। ११ प्रत्ययरूप स्थान प्रथम कूट में, चौथे, पाँचवें कूट में एक-एक इसप्रकार तीन है, १२ प्रत्ययरूप स्थान प्रथम, दूसरे, चौथे, पाँचवें व छठे कूट में एक-एक इसप्रकार पाँच हैं, इसीप्रकार १३ आदि के प्रकार भी कूटों को देखकर निकालना चाहिये।

सासादन गुणस्थान के तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा दोनों सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१-१	२
१३ योग	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१
२ हास्य-युगल २ शोक-युगल	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
१६ कषाय	४ क्रो.-४ मा.- ४ माया-४ लो	४ क्रो.-४ मा.- ४ माया-४ लो	४ क्रो.-४ मा.- ४ माया -४ लो
६ काय	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६
६ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
कुल आस्रव ५०	१०-११-१२- १३-१४-१५	११-१२-१३- १४-१५-१६	१२-१३-१४- १५-१६-१७

											कुल
सासादन	**स्थान**	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८

मिश्र गुणस्थान के तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१-१	२
१० योग पर्याप्त योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१	१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१
२ हास्य-युगल २ शोक -युगल	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
१२ कषाय अनंतानुबंधीरहित	३ क्रो.-३ मा.- ३ मा.-३ लो	३ क्रो.-३ मा.- ३ मा.-३ लो	३ क्रो.-३ मा.- ३ मा.-३ लो
६ काय	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६
६ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
४३ कुल प्रत्यय	९-१०-११-१२-१३-१४	१०-११-१२-१३-१४-१५	११-१२-१३-१४-१५-१६

											कुल
मिश्र	**स्थान**	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८

असंयत गुणस्थान के कूट ३

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१-१	२
१३ योग	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१-१
२ हास्य-रति २ शोक-अरति	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
१२ कषाय	३ क्रो.-३ मा.- ३ माया-३ लो.	३ क्रो.-३ मा.- ३ माया-३ लो.	३ क्रो.-३ मा.- ३ माया-३ लो.
६ काय	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६	१-२-३-४-५-६
६ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
कुल प्रत्यय ४६	९-१०-११- १२-१३-१४	१०-११-१२- १३-१४-१५	११-१२-१३- १४-१५-१६

असंयत											
	स्थान	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६		८
	प्रकार	१	२	३	३	३	३	२	१		१८
											कुल

देशसंयत गुणस्थान के तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१-१	२
९ योग	१-१-१-१-१- १-१-१-१	१-१-१-१-१ -१-१-१-१	१-१-१-१-१ -१-१-१-१
२ हास्य-युगल २ शोक -युगल	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
८ कषाय	२-२-२-२	२-२-२-२	२-२-२-२
५ काय	१-२-३-४-५	१-२-३-४-५	१-२-३-४-५
६ इन्द्रिय व मन	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१
३७ कुल प्रत्यय	८-९-१०-११-१२	९-१०-११-१२-१३	१०-११-१२-१३-१४

											कुल
देशसंयत	स्थान	८	९	१०	११	१२	१३	१४			७
	प्रकार	१	२	३	३	३	२	१			१५

प्रमत्तसंयत गुणस्थान के तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१-१	२
११ योग	१-१-१-१-१-१- १-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१ -१-१-१-१-१
२ हास्य-युगल २ शोक-युगल	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं	१ स्त्री-१ पुं- १ नपुं
४ कषाय	१-१-१-१	१-१-१-१	१-१-१-१
कुल प्रत्यय २४	५	६	७

अप्रमत्तसंयत और अपूर्वकरण गुणस्थान संबंधी तीन कूट

प्रत्यय	भयजुगुप्सारहित प्रथम कूट	भय अथवा जुगुप्सा सहित द्वितीय कूट	भयजुगुप्सा सहित तृतीय कूट
२ भयजुगुप्सा	०	१	२
९ योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१
२ हास्य-युगल २ शोक-युगल	२ - २	२ - २	२ - २
३ वेद	१-१-१	१-१-१	१-१-१
४ कषाय	१-१-१-१	१-१-१-१	१-१-१-१
कुल प्रत्यय २२	५	६	७

अनिवृत्तिकरण सम्बन्धी सात कूट

	प्रथम कूट ३ वेदसहित	द्वितीय कूट २ वेदसहित	तृतीय कूट १ वेदसहित	चतुर्थ कूट ४ कषाययुक्त
९ योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१
३ वेद	१-१-१	१ स्त्री-१ पुं.	१ पुं.	०
४ कषायसंज्व.	१-१-१-१	१-१-१-१	१-१-१-१	१-१-१-१
१६ कुल प्रत्यय	३	३	३	२

	पाँचवा कूट ३ कषाययुक्त	छटा कूट २ कषाययुक्त	सातवाँ कूट १ बादरलोभयुक्त
९ योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१
३ वेद	०	०	०
४ कषायसंज्व.	मान१-१मा.-१लो.	१ मा.-१ लो.	१ लो.
१६ कुल प्रत्यय	२	२	२

सूक्ष्मसांपराय, उपशान्तकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली सम्बन्धी कूट १-१

प्रत्यय	सूक्ष्मसांपराय	उपशांतकषाय	क्षीणकषाय	सयोगकेवली
९ योग	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१-१-१	१-१-१-१-१-१-१(७ योग)
१ कषाय	१	०	०	०
१० कुल प्रत्यय	२	१	१	१

जो स्थान और प्रकार ऊपर कहे हैं, उनके बोलने का विधान बताने के लिए कूटोच्चारण कहते हैं-

मिच्छत्ताणण्णदरं एक्केणक्खेण एक्ककायादी ।
तत्तो कसायवेददुजुगलाणेक्कं च जोगाणं ।।७९५।।

अन्वयार्थ - (मिच्छत्ताणण्णदरं) ५ मिथ्यात्वों में से कोई एक भेद, **(एक्केणक्खेण)** ६ इन्द्रियों में से एक भेद (इनके साथ) **(एक्ककायादी)** एक, दो आदि काय की हिंसा, **(तत्तो)** इसके पश्चात् **(कसाय)** कषायों में से एक कषाय, **(वेद)** वेदों में से एक वेद, **(दु जुगलाणेक्कं)** हास्य-रति, अरति-शोक इन दो युगुलों में से एक युगल, **(च)** 'च' शब्द से भय-जुगुप्सा में से i) कोई भी नहीं अथवा ii) कोई एक iii) अथवा दोनों और **(जोगाणं)** योगों में से एक भेद कहना चाहिए। इस प्रकार कूटोच्चारण का विधान कहा।

विशेषार्थ - ४) कूटोच्चारणविधान - जो स्थान व प्रकार पूर्व में कहे हैं उनके बोलने के विधान को कूटोच्चारणविधान कहते हैं। ५ मिथ्यात्व में से एक भेद, ६ इन्द्रियों में से एकभेद, ६ कायों में से एक, दो, तीन, चार, पाँच और छह काय की हिंसा में से एकभेद, १६ कषायों में से कोई ४ कषाय, वेदों में से एकवेद, हास्यादि दो युगलों में से एक युगल, योगों में से एक योग, भयजुगुप्सा में से दोनों नहीं अथवा दोनों में से एक अथवा दोनों कहना चाहिए।

मिथ्यात्व गुणस्थान में अनंतानुबंधिरहित कूट का उच्चारण - १० स्थान का उच्चारण

१) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, पृथ्वीकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

२) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, जलकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

३) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, अग्निकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

४) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, वायुकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

५) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, वनस्पतिकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

६) एकान्तमिथ्यादृष्टि, स्पर्शनेन्द्रियवशीभूत, त्रसकायहिंसक, त्रिक्रोधी, षंढवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी

इसप्रकार पृथ्वीकायादिक ६ काय के वध की अपेक्षा प्रत्येक भंग ६ हुए।

पृथ्वीकायादिक छह में से दो दो के वधकी अपेक्षा द्विसंयोगी पंद्रह १५ भंग होते हैं वे इसप्रकार -

१) पृथ्वी अप् २) पृथ्वी अग्नि ३) पृथ्वी वायु ४) पृथ्वी वनस्पति ५) पृथ्वी त्रस ६) अप् अग्नि ७) अप् वायु ८) अप् वनस्पति ९) अप् त्रस १०) अग्नि वायु ११) अग्नि वनस्पति १२) अग्नि त्रस १३) वायु वनस्पति १४) वायु त्रस १५) वनस्पति त्रस

पहले पहले भेद में आगे आगे के जितने भेद हैं उनको जोड़ने से भङ्ग तैयार होते हैं।

पृथ्वीकायादि छह में से तीन-तीन के वध की अपेक्षा से त्रिसंयोगी २० भंग होते हैं, वे इसप्रकार -

१) पृथ्वी अप् अग्नि
२) पृथ्वी अप् वायु
३) पृथ्वी अप् वनस्पति
४) पृथ्वी अप् त्रस
५) पृथ्वी अग्नि वायु
६) पृथ्वी अग्नि वनस्पति
७) पृथ्वी अग्नि त्रस
८) पृथ्वी वायु वनस्पति
९) पृथ्वी वायु त्रस
१०) पृथ्वी वनस्पति त्रस
११) अप् अग्नि वायु
१२) अप् अग्नि वनस्पति
१३) अप् अग्नि त्रस
१४) अप् वायु वनस्पति
१५) अप् वायु त्रस
१६) अप् वनस्पति त्रस
१७) अग्नि वायु वनस्पति
१८) अग्नि वनस्पति त्रस
१९) अग्नि वायु त्रस
२०) वायु वनस्पति त्रस

पृथ्वीकायादि छह में से चार-चार के वध की अपेक्षा से चतु:संयोगी भंग १५ होते हैं-

१) पृथ्वी अप् अग्नि वायु
२) पृथ्वी अप् अग्नि वनस्पति
३) पृथ्वी अप् अग्नि त्रस
४) पृथ्वी अप् वायु वनस्पति
५) पृथ्वी अप् वायु त्रस
६) पृथ्वी अप् वनस्पति त्रस
७) पृथ्वी अग्नि वायु वनस्पति
८) पृथ्वी अग्नि वायु त्रस
९) पृथ्वी वायु वनस्पति त्रस
१०) पृथ्वी अग्नि वनस्पति त्रस
११) अप् अग्नि वायु वनस्पति
१२) अप् अग्नि वायु त्रस
१३) अप् अग्नि वनस्पति त्रस
१४) अप् वायु वनस्पति त्रस
१५) अग्नि वायु वनस्पति त्रस

पृथ्वीकायादि छह में से पाँच-पाँच वध की अपेक्षा से पंचसंयोगी छह भंग होते हैं -

१) पृथ्वी अप् अग्नि वायु वनस्पति
२) पृथ्वी अप् अग्नि वनस्पति त्रस
३) पृथ्वी अप् अग्नि वायु त्रस
४) पृथ्वी अग्नि वायु वनस्पति त्रस
५) पृथ्वी अप् वायु वनस्पति त्रस
६) अप् अग्नि वायु वनस्पति त्रस

षट्संयोगी भंग - १:१) पृथ्वी अप् अग्नि वायु वनस्पति त्रस

इसप्रकार सब मिलकर ६+१५+२०+१५+६+१ = ६३ भंग होते हैं।

एकान्त मिथ्यात्व की अपेक्षा से षट्कायिक हिंसा की अपेक्षा ६३ भंग होते हैं तो पाँच प्रकार के मिथ्यात्व की अपेक्षा से ६३ × ५ = ३१५ भंग होते हैं।

स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा से ३१५ भंग हैं तो ६ इन्द्रियों की अपेक्षा ३१५ × ६ = १८९०

तीन क्रोध की अपेक्षा से १८९० भंग हैं तो ४ कषायों की अपेक्षा १८९० × ४ = ७५६०

एक नपुंसकवेद की अपेक्षा से ७५६० भंग हैं तो ३ वेदों की अपेक्षा ७५६० × ३ = २२६८०

हास्ययुगल की अपेक्षा से २२६८० भंग हैं तो शोकद्विक की अपेक्षा २२६८० ×२ = ४५३६०

सत्यमनोयोग में ४५३६० भंग हैं तो १० योग की अपेक्षा ४५३६० × १० = ४५३६०० भंग

इस प्रकार अनन्तानुबंधी व भय-जुगुप्सा रहित प्रथम कूट के ४५३६०० भंग हुए।

५) भंग - मिथ्यात्व इन्द्रियादि का परस्पर में गुणा करने पर भंगों का प्रमाण प्राप्त होता हैं। भय जुगुप्सा के संबंध से और षट्कायहिंसा के निमित्त से हुए भंगों को अध्रुव भंग कहते हैं, शेष भंगों को ध्रुवभंग कहते हैं। १) भयजुगुप्सा सहित २) भयजुगुप्सा रहित ३) भयसहित व ४) जुगुप्सासहित ऐसे चार भंग व षट्कायिकहिंसा के पूर्वोक्त ६३ भंग

अध्रुवगुणकार हैं।

अणरहिदसहिदकूडे बावत्तरिसय सयाण तेणउदी ।
सट्ठी धुवा हु मिच्छे भयदुगसंजोगजा अधुवा ।।७९६।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यात्व गुणस्थान में, मिथ्यादृष्टि जीव के **(अणरहिद सहिद कूडे)** अनन्तानुबंधी रहित और सहित कूटों का प्रमाण क्रमशः, **(बावत्तरि सय)** ७२०० और **(सयाणतेणउदी सट्ठी)** ९३६० होता है। **(धुवा हु)** इनको मिलाने पर ध्रुव भंग होते हैं। **(भयदुग)** भय-जुगुप्सा के, **(संयोगजा)** संयोग से उत्पन्न हुए, **(अधुवा)** अध्रुव भंग होते हैं।

चउवीसट्ठारसयं तालं चोद्दसय सीदिसोलसयं ।
छण्णउदी बारसयं बत्तीसं बिसद सोल बिसदं च ।।७९७।।
सोलस बिसदं कमसो धुवगुणगारा अपुव्वकरणोत्ति।
अद्धुवगुणिदे भंगा धुवभंगाणं ण भेदादो।।७९८।।

अन्वयार्थ - (अपुव्वकरणोत्ति) मिथ्यात्व गुणस्थान से अपूर्वकरण गुणस्थानतक **(कमसो)** क्रमसे, **(धुवगुणगारा)** ध्रुवगुण्य, मिथ्यात्व गुणस्थान में (७२००+९३६० =१६५६०); सासादन में, **(चउवीसट्ठारसयं)** १८२४; (मिश्र में) **(तालं चोद्दसय)** १४४०; असंयत गुणस्थान में, **(असीदि सोलसयं)** १६८०; देशसंयत गुणस्थान में, **(छण्णउदी बारसयं)** १२९६; प्रमत्त गुणस्थान में **(बत्तीसं बिसद)** २३२; अप्रमत्त गुणस्थान में **(सोल बिसदं)** २१६; **(च)** और अपूर्वकरण में भी **(सोलस बिसदं)** २१६ भंग हैं। **(अद्धुव गुणिदे भंगा)** इन ध्रुव गुण्यों का अपने-अपने अध्रुव गुणकार से गुणा करने पर उस उस स्थान के भंग होते हैं। **(धुवभंगाणं)** इसके आगे केवल ध्रुव भंगों का ही भेद है, **(ण भेदादो)** क्योंकि वहाँ भय-जुगुप्सा और अविरतियों का अभाव होने से अध्रुव गुणकार नहीं है।

गुणस्थानों की अपेक्षा प्रत्ययों के भंगों की संख्या

गुणस्थान	भंग निकालने की पद्धति	ध्रुव गुण्य	अध्रुव गुणकार	कुलभंग
१मिथ्यात्व	अनंतानुबंधी रहित मिथ्यात्व गुणस्थान के ५ मि × ६ इंद्रिय × ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यद्विक शोकयुगल × १० योग	७२००		
	अनंतानुबंधी सहित के ५ मि.× ६ इं.× ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्याद्विक × १३ योग	९३६०		
	१६५६० × ६३ × ४ = ४१७३१२०	१६५६०	६३ × ४	४१७३१२०
२ सासादन	६ इंद्रिय × ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × १२ योग(वै.मि.विना)	१७२८		
	६ इं.× ४ कषाय × २ वेद (स्त्रीपुं)× २ हास्यशोकद्विक × १ वै.मि.योग	९६	६३ × ४	४५९६४८
	१८२४ × ६३ × ४ = ४५९६४८ कुलभंग	१८२४		
३ मिश्र	६ इंद्रिय × ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × १० योग	१४४०	६३ × ४	३६२८८०
४ असंयत	६ इंद्रिय × ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × १० योग (४ मनोयोग ४ वचनयोग,१ औदा. १ वैक्रि.)	१४४०		
	६ इं.× ४ कषाय × २ वेद (पुं.न.)× २ हास्यशोकद्विक × २ योग (वै.मि.+कार्म)	१९२		
	६ इं.× ४ कषाय × १ वेद (पुं)× २ हास्यशोकद्विक × १ योग औदारिकमिश्र	४८		
		१६८०	६३ × ४	४२३३६०

गुणस्थान	भंग निकालने की पद्धति	ध्रुव गुण्य	अध्रुव गुणकार	कुलभंग
५ देशसंयत	६ इंद्रिय × ४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × ९ योग यहाँपर त्रसवध विरति होने से पाँचकाय की अपेक्षा कुल भंग ३१ ही होंगे। भंग ३१ कैसे हुए वह आगे बतायेंगे	१२९६	३१ × ४	१६०७०४
६ प्रमत्तसंयत	४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × ९ योग (आहा. आहा.मिश्र केबिना) ४ क. × १ पुंवेद × २ हास्यशोकयुगल × २ योग (आहारक, आहारकमिश्र)	२१६ १६ २३२	४	९२८
७ अप्रमत्त	४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकयुगल × ९ योग	२१६	४	८६४
८ अपूर्व-करण	४ कषाय × ३ वेद × २ हास्यशोकद्विक × ९ योग	२१६	४	८६४
९ अनिवृत्ति-करण	भाग १ - ४ कषाय × ३ वेद × ९ योग भाग २ - ४ क×२ वेद (पुंस्त्री)×९ योग भाग ३ - ४ क ×१ वेद (पुं) × ९ योग भाग ४ - ४ कषाय × ९ योग भाग ५ - ३कषाय (क्रोधरहित)×९ योग भाग ६ - २ कषाय × ९ योग भाग ७ - १ कषाय × ९ योग तीसरे भाग के ३६ भंग संस्कृत व हिंदी टीका में अलग से नहीं गिनाये अत: वहाँ २७० भंग कहे हैं वास्तव में उसे भी ग्रहण करना चाहिए।	१०८ ७२ ३६ ३६ २७ १८ ९ ३०६		३०६

गुणस्थान	भंग निकालने की पद्धति	ध्रुव गुण्य	अध्रुव गुणकार	कुलभंग
१० सूक्ष्म-सांपराय	१ कषाय × ९ योग	९		९
११ उप-शांतमोह	९ योग	९		९
१२ क्षीण-मोह	९ योग	९		९
१३ सयोग केवली	७ योग	७		७
	चौदह गुणस्थानों के कुलभंग ५५,८२,७०८			

विशेषार्थ - १) सर्वत्र ध्रुवगुण्य को अध्रुवगुणकार से गुणा करने पर कुलभंगों की संख्या आती है।

२) सासादन गुणस्थान में वैक्रियिकमिश्र काययोग के भंग अलग निकाले हैं क्योंकि जीव सासादन गुणस्थान में मरणकर नरकगति में नहीं जाता अत: नरक में अपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान नहीं होगा। अत: वैक्रियिक मिश्रकाययोग में सासादन गुणस्थान में नपुंसकवेद का उदय नहीं हैं। अत: उसके भंग कम हुए।

३)असंयत गुणस्थान में वैक्रियिक मिश्र व कार्मणकाययोग में स्त्रीवेद का उदय नहीं होता क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर स्त्रीवेद में उत्पन्न नहीं होता। उसीप्रकार असंयत गुणस्थान में औदारिक मिश्रकाययोग में स्त्रीवेद और नपुंसकवेद का उदय नहीं होता क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर नपुंसकवेद में भी उत्पन्न नहीं होता केवल प्रथम नरक में जाता है उसकी अपेक्षा से वैक्रियिक मिश्र काययोग में नपुंसकवेद लिया है।

४) देशसंयत गुणस्थान में त्रसहिंसा से विरति होती है अत: वहाँ ११ अविरति हैं। षट्कायहिंसा के प्रत्येकभंग, द्विसंयोगादि भंग ६३ होते हैं। यहाँपर पाँच स्थावरकाय हिंसा के ३१ ही भंग बनते हैं।

पूर्वोक्त द्विसंयोगी आदि भंगों को निकालने का विधान -

छप्पंचादेयंतं रुउत्तरभाजिदे कमेण हदे ।

लद्धं मिच्छचउक्के देसे संजोगगुणगारा ।।७९९।।

अन्वयार्थ - (छप्पंचादेयंतं) ६, ५, ४, ३, २, १ और इसके नीचे प्रत्येक रूप में **(कमेण)** क्रम से **(रुउत्तर)** १,२,३,४,५,६ लिखकर एवं इनको **(हदे)** गुणा करके और **(भाजिदे)** भाग देने पर **(मिच्छचउक्के)** मिथ्यात्वादि चार गुणस्थानों में और **(देसे)** देशसंयत गुणस्थान में, **(संजोग)** संयोगी, **(गुणगारा)** भंग **(लद्धं)** प्राप्त होते हैं।

विशेषार्थ - भंग निकालने की विधि - जितने अंकपर्यंत संयोगी भंग निकालने हो उतने अंक उलटे क्रम से लिखें, इनको भाज्यराशि समझें और इन अंकों के नीचे सीधे क्रमसे एक दो आदि अंक लिखें उनको भागहार समझें। ६ ५ ४ ३ २ १ / १ २ ३ ४ ५ ६

$$\text{प्रत्येक भंग} = \frac{\text{प्रथम अंक}}{\text{प्रथम भागहार}} \quad \frac{\text{६}}{\text{१}} = \boxed{\text{६ प्रत्येक भंग}}$$

$$\text{द्विसंयोगी भंग} = \frac{\text{प्रथम अंक} \times \text{द्वितीय अंक}}{\text{प्रथम भागहार} \times \text{द्वितीय भागहार}} \quad \frac{\text{६} \times \text{५}}{\text{१} \times \text{२}} = \frac{\text{३०}}{\text{२}} = \boxed{\text{१५ द्विसंयोगी भंग}}$$

$$\text{त्रिसंयोगी भंग} = \frac{\text{६} \times \text{५} \times \text{४}}{\text{१} \times \text{२} \times \text{३}} = \frac{\text{१२०}}{\text{६}} = \boxed{\text{२० त्रिसंयोगी भंग}}$$

$$\text{चतु:संयोगी भंग} = \frac{\text{६} \times \text{५} \times \cancel{\text{४}} \times \cancel{\text{३}}}{\text{१} \times \text{२} \times \cancel{\text{३}} \times \cancel{\text{४}}} = \frac{\text{३०}}{\text{२}} = \boxed{\text{१५ चतु:संयोगी भंग}}$$

$$\text{पंचसंयोगी भंग} = \frac{\text{६} \times \text{५} \times \cancel{\text{४}} \times \cancel{\text{३}} \times \cancel{\text{२}}}{\text{१} \times \cancel{\text{२}} \times \cancel{\text{३}} \times \cancel{\text{४}} \times \text{५}} = \frac{\text{३०}}{\text{५}} = \boxed{\text{६ पंचसंयोगी भंग}}$$

$$\text{षड्संयोगी भंग} = \frac{\cancel{\text{६}} \times \cancel{\text{५}} \times \cancel{\text{४}} \times \cancel{\text{३}} \times \cancel{\text{२}} \times \text{१}}{\text{१} \times \cancel{\text{२}} \times \cancel{\text{३}} \times \cancel{\text{४}} \times \cancel{\text{५}} \times \cancel{\text{६}}} = \text{१} \ \boxed{\text{षड्संयोगी भंग}}$$

पाँच स्थावरकायहिंसा के पंचसंयोगी तक भंग होंगे वे इसप्रकार

$$\frac{\text{५} \times \text{४} \times \text{३} \times \text{२} \times \text{१}}{\text{१} \quad \text{२} \quad \text{३} \quad \text{४} \quad \text{५}}$$

१) प्रत्येक भंग = $\frac{५}{१}$ = ५ प्रत्येक भंग ५

२) द्विसंयोगी भंग = $\frac{५ \times ४}{१ \times २}$ = $\frac{२०}{२}$ = १० द्विसंयोगी भंग १०

३) त्रिसंयोगी भंग = $\frac{५ \times ४ \times ३}{१ \times २ \times ३}$ = $\frac{६०}{६}$ = १० त्रिसंयोगी भंग १०

४) चतु:संयोगी भंग = $\frac{५ \times ४ \times ३ \times २}{१ \times २ \times ३ \times ४}$ = ५ = ५ चतु:संयोगी भंग ५

५) पंचसंयोगी भंग = $\frac{५ \times ४ \times ३ \times २ \times १}{१ \times २ \times ३ \times ४ \times ५}$ = १ पंचसंयोगी भंग १

३१ कुलभंग

५) कुलभंग निकालने की विधि - जितने अंकों के संयोगी भंग निकालने हों उतनी संख्याप्रमाण २-२ का अंक रखकर उनका परस्पर गुणा करके उस लब्ध में से एक कम करना। यहाँ पाँच काय के भंग निकालने हैं तो पाँच बार दो-दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करना २×२×२×२×२=३२-१= ३१ कुलभंग

छह काय जीवों की हिंसा के छह स्थान हैं अत: ६ बार दो-दो का अंक लिखकर परस्पर गुणा करने से २×२×२×२×२×२=६४ प्राप्त होते हैं इनमें से एक कम करने से ६४-१ = ६३ भंग प्राप्त होते हैं।

६) आठवें गुणस्थानपर्यंत अध्रुव गुणकार है। भयजुगुप्सा की उदयव्युच्छित्ति ८ वें गुणस्थान में होती है अत: नववें गुणस्थान से अध्रुव गुणकार का अभाव है। ध्रुवभंग ही वहाँपर सर्वभंग है।

प्रत्ययों के उदय में कार्यभूत जीव परिणामों में, ज्ञानावरणादि के बंध का कारणपना -

पडिणीगमंतराये उवघादे तप्पदोसणिण्हवणे।
आवरणदुगं भूयो बंधदि अच्चासणाए वि ।।८००।।

अन्वयार्थ -(पडिणीगम्) प्रत्यनीक **(अन्तराये)** अन्तराय, **(उवघादो)** उपघात

(तप्पदोस) तत्प्रदोष **(णिण्हवणे)** निह्नव, **(अच्चासणाए वि)** और अत्यन्त आसादना, इन कार्यों से जीव को **(भूयो)** पुनः पुनः **(आवरणदुगं)** ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्म का **(बंधदि)** बंध होता है।

विशेषार्थ - यहाँ जो आठ कर्मों के बन्ध के कारण बताये हैं वे अनुभागवृद्धि में कारण होते हैं ऐसा सर्वत्र जानना। प्रत्यनीक, अन्तरायादि यदि ज्ञान के विषय में हो तो ज्ञानावरण की और यदि दर्शन के विषय में हो तो दर्शनावरण के अनुभागवृद्धि में कारण होते हैं।

वेदनीय कर्म के बंध के कारण -

भूदाणुकंपवदजोगजुञ्जिदो खंतिदाणगुरुभत्तो ।
बंधदि भूयो सादं विवरीयो बंधदे इदरं ।।८०१।।

अन्वयार्थ - (भूदाणुकंप) प्राणियों में दया करना, **(वद)** व्रत-हिंसादि पापों का त्यागरूप, **(जोग)** (समाधि परिणाम रूप) योग **(खंति)** क्षमा-क्रोध के त्यागरूप **(दाण)** चार प्रकार का दान, **(गुरुभत्तो)** पंच परमेष्ठी की भक्ति में, **(जुञ्जिदो)** अनुरक्ति से **(सादं)** साता वेदनीय, **(भूयो बंधदि)** प्रचुर अनुभाग सहित बंधते हैं। **(विवरीयो)** इन से विपरीत कारणों से **(इदरं)** असाता वेदनीय का **(बंधदे)** बंध होता है।

दर्शन मोहनीय कर्म के बंध के कारण -

अरहंतसिद्धचेदियतवसुदगुरुधम्मसंघपडिणीगो ।
बंधदि दंसणमोहं अणंतसंसारिओ जेण ।।८०२।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(अरहंत)** अरहन्त, **(सिद्ध)** सिद्ध, **(चेदिय)** और उनकी प्रतिमा, **(तवसुदगुरु)** तपश्चरण युक्त निर्ग्रन्थ गुरु एवं निर्दोष शास्त्र अर्थात् श्रुत, **(धम्म)** वीतराग देव द्वारा प्रणीत धर्म **(संघ)** (ऋषि-यति-मुनि-अनगार के समूहरूप) संघ, **(पडिणीगो)** इन के प्रतिकूल अर्थात् उनका अवर्णवाद करनेवाला हो, **(दंसणमोहं)** वह दर्शन मोह को **(बंधदि)** बाँधता है और **(जेण)** उसके उदय से **(अणंतसंसारिओ)** अनन्त संसारी होता है।

चारित्र मोह के बंध के कारण -

तिव्वकसाओ बहुमोहपरिणदो रागदोससंसत्तो ।
बंधदि चरित्तमोहं दुविहंपि चरित्तगुणघादी।।८०३।।

अन्वयार्थ - (तिव्वकसाओ) जो तीव्र कषाय (एवं हास्यादि नोकषाय) सहित हो, **(बहुमोहपरिणदो)** अत्यधिक मोह रूप परिणमन करता हो, **(रागदोससंसत्तो)** राग द्वेष में अत्यन्त लीन हो, **(चरित्तगुणघादी)** और चारित्र गुण का नाश करनेवाला हो, वह जीव **(चरित्तमोहं)** चारित्र मोह को, **(दुविहंपि)** दो प्रकार अर्थात् कषाय और नोकषाय रूप **(बंधदि)** बांधता है। अर्थात् चारित्र मोह कर्म के तीव्र अनुभाग का बंध करता है।

नरकायु के बंध के कारण -

मिच्छो हु महारंभो णिस्सीलो तिव्वलोहसंजुत्तो ।
णिरयाउवं णिबद्धइ पावमई रुद्दपरिणामो ।।८०४।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(मिच्छो हु)** मिथ्यादृष्टि (तत्त्वार्थ श्रद्धान से रहित) हो **(महारंभो)** बहुत आरंभी और अपरिमित परिग्रही हो, **(णिस्सीलो)** शील रहित हो, **(तिव्वलोह संजुत्तो)** तीव्र लोभी हो, **(रुद्दपरिणामो)** रौद्र परिणामी अर्थात् हिंसादि पाप कर्मों में आनन्द माननेवाला हो, **(पावमई)** पाप करने में जिसकी बुद्धि हो, वह जीव **(णिरयाउवं)** नरकायु का, **(णिबद्धइ)** तीव्र अनुभाग सहित बंध करता है ।

तिर्यश्चायु के बंध के कारण -

उम्मग्गदेसगो मग्गणासगो गूढहियय माइल्लो ।
सठसीलो य ससल्लो तिरियाउं बंधदे जीवो ।।८०५।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(उम्मग्गदेसगो)** विपरीत मार्ग का उपदेश करनेवाला हो, **(मग्गणासगो)** सच्चे मार्ग का नाश करनेवाला हो, **(गूढहियय माइल्लो)** गूढहृदय अर्थात् मायाचारी हो, **(सठसीलो)** दुष्ट शील-कुशील हो, **(य)** और **(ससल्लो)** मिथ्या आदि तीन शल्यों से संयुक्त हो, **(जीवो)** वह जीव, **(तिरियाउं)** तिर्यञ्च आयु को **(बंधदे)** बाँधता है।

मनुष्यायु के बंध के कारण -

पयडीए तणुकसाओ दाणरदी सीलसंजमविहीणो ।
मज्झिमगुणेहि जुत्तो मणुवाउं बंधदे जीवो।।८०६।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(पयडीए)** स्वभाव से ही, **(तणुकसाओ)** मन्दकषायी अर्थात् मृदु स्वभाववाला हो, **(दाणरदी)** पात्र दान में प्रीति युक्त हो, **(सीलसंजमविहीणो)** शील व संयम से अर्थात् इन्द्रिय संयम और प्राणी संयम से रहित हो, **(मज्झिमगुणेहि जुत्तो)** मध्यम गुणों अर्थात् परिणामों से सहित हो, **(जीवो)** वह जीव, **(मणुवाउं)** मनुष्य आयु को **(बंधदे)** बाँधता है।

देवायु के बन्ध के कारण -

अणुवदमहव्वदेहि य बालतवाकामणिज्झराये य ।
देवाउवं णिबद्धइ सम्माइट्ठी य जो जीवो ।।८०७।।

अन्वयार्थ - (अणुवदमहव्वदेहि) अणुव्रतों और महाव्रतों से सहित है **(सम्माइट्ठी य)** और जो सम्यग्दृष्टि है, वह **(देवाउगं)** देवायु को बांधता है **(य)** और जो मिथ्यादृष्टि है वह **(बालतवाकामणिज्झराये य)** बालतप और अकाम निर्जरा से **(देवाउवं)** देवायु को **(णिबद्धइ)** बाँधता है।

नाम कर्म के बन्ध के कारण -

मणवयणकायवक्को मायिल्लो गारवेहि पडिबद्धो ।
असुहं बंधदि णामं तप्पडिवक्खेहि सुहणामं ।।८०८।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(मणवयणकायवक्को)** मन, वचन और काय से कुटिल हो, **(मायिल्लो)** मायाचारी अथवा कपट करनेवाला हो **(गारवेहिं)** तीन प्रकार के गारव से **(पडिबद्धो)** युक्त हो **(असुहं)** वह अशुभ अर्थात् अप्रशस्त **(णामं)** नाम कर्म की प्रकृतियों का **(बंधदि)** बंध करता है, **(तप्पडिवक्खेहि)** उससे विपरीत कारणों से **(सुहणामं)** शुभ अर्थात् प्रशस्त नाम कर्म की प्रकृतियों को बांधता है।

गोत्र कर्म के बन्ध के कारण -

अरहंतादिसु भत्तो सुत्तरुची पढणुमाणगुणपेही।
बंधदि उच्चंगोदं विवरीयो बंधदे इदरं ।।८०९।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(अरहंतादिसु)** अरहंत आदि पंच परमेष्ठियों में **(भत्तो)** भक्तियुक्त हो,**(सुत्तरुची)** श्रुत अध्ययनादि के लिए विचार शील हो, **(पढणुमाणगुणपेही)** विनय आदि गुणों का धारक हो, वह जीव **(उच्चं गोदं)** उच्च गोत्र का, **(बंधदि)** बंध करता है **(विवरीयो)** इनसे विपरीत **(इदरं)** नीच गोत्र को **(बंधदे)** बांधता है।

अन्तराय कर्म के बन्ध के कारण -

पाणवधादीसु रदो जिणपूजामोक्खमग्गविग्घयरो ।
अज्जेइ अंतरायं ण लहइ जं इच्छियं जेण ।।८१०।।

अन्वयार्थ - जो जीव **(पाणवधादीसु)** अपने व दूसरों के प्राणों का घात करने में, **(रदो)** लीन है, **(जिणपूजा)** जिनेन्द्र पूजा, **(मोक्खमग्ग)** और रत्नत्रय की प्राप्तिरूप मोक्षमार्ग में, **(विग्घयरो)** विघ्न डालने वाला है, वह जीव **(अंतरायं)** अन्तराय कर्म को, **(अज्जेइ)** उपार्जन करता है, **(जेण)** जिससे उसके उदयकाल में **(जं इच्छियं)** जिस वस्तु की इच्छा करता है, उसे **(ण लहइ)** प्राप्त नहीं कर सकता है।

आठ कर्मों के आस्रवों के विशेष भाव

कर्मों के नाम	आस्रवों के विशेष भाव
१) ज्ञानावरण २) दर्शनावरण	१) प्रत्यनीक - शास्त्र व शास्त्रज्ञों की अविनय, प्रतिकूल प्रवृत्ति। २) अंतराय - ज्ञान में विघ्न करना। ३) उपघात - प्रशस्तज्ञान में दोष लगाना, ज्ञानी जीवों को क्षुद्र बाधाएँ उपस्थित करना। ४) प्रदोष - तत्त्वज्ञान सुनकर दुष्टभाव रखना, हर्ष न होना। ५) निह्नव - अपने ज्ञान को अथवा गुरु को प्रकट न करना। ६) आसादन - किसीके प्रशंसायोग्य ज्ञान की अनुमोदनादि नहीं करना, उसका वर्जन करना।
३)सातावेदनीय	१) भूतानुकम्पा - सर्व प्राणियोंपर दयाभाव २) व्रत - हिंसादि से विरति इन्द्रियों को वश करना। ३) योग - शुभपरिणामों में एकाग्रता ४) क्षमा - क्रोधादि की निवृत्ति ५) चार प्रकार का दान ६) पंचपरमेष्ठी की भक्ति
४) असाता-वेदनीय	उपर्युक्त भावों से विपरीत भाव अर्थात् १) पीडा २) शोक ३) परिताप ४) आक्रन्दन ५) परिवेदन - स्व और पर के उपकार की अभिलाषासे करुणाजनक रोना
५)दर्शनमोहनीय	१) अरिहंत २) सिद्ध ३) चैत्य (प्रतिमा) ४) तप ५) जैनशास्त्र ६) निर्ग्रन्थ गुरु ७) जैनधर्म व ८) मुनिसंघ के प्रतिकूल होना, झूठे दोष लगाना।
६)चारित्र-मोहनीय	१) तीव्र कषाय व हास्यादि नोकषाय, २) बहुत मोहपरिणति ३) रागद्वेष में अत्यन्त लीनता ४)चारित्रगुण नाश करने का स्वभाव

कर्मों के नाम	आस्रवों के विशेष भाव
७) नरकायु	१) मिथ्यात्व २) बहुत आरंभ ३) शीलरहित भाव ४) तीव्रलोभ ५) रौद्रपरिणाम ६) पापकार्य में बुद्धि
८) तिर्यंचायु	१) उन्मार्ग का उपदेश २) सन्मार्ग का नाश ३) गूढहृदय ४) मायाचार ५) शठस्वभाव ६) मिथ्यात्वादि शल्य
९) मनुष्यायु	१) स्वभाविक मन्दकषाय २) दानप्रीति ३) शीलसंयमरहितता ४) मध्यमगुणों से युक्त
१०) देवायु	१) सम्यग्दर्शन २) अणुव्रत ३) महाव्रत ४) बालतप ५) अकामनिर्जरा (संतोषपूर्वक पीडा सहन करना)
११) अशुभ-नामकर्म	१) मनवचनकाय की वक्रता २) कपट ३) तीन प्रकार का गारव (ऋद्धि, रस, और सात)
१२) शुभ-नामकर्म	१) सरलयोग २) निष्कपट ३) प्रशंसा न चाहना ४) संसारकारण-भूत भावों से भीरुता
१३) उच्च गोत्र	१) अर्हन्तादि में भक्ति २) शास्त्ररुचि ३) शास्त्राभ्यास ४) अल्पमान ५) गुणोंको देखना ६) स्वनिंदा ७) परप्रशंसा ८) परगुणों को प्रगट करना ९) अपने गुणों को ढकना १०) विनम्र वृत्ति इ.
१४) नीचगोत्र	१) स्वप्रशंसा २) अपने असद्गुणों को प्रगट करना ३) परनिंदा ४) पर के विद्यमान गुणों का आच्छादन
१५) अंतराय	१) प्राणिवधादिक में प्रीति २) जिनपूजा और मोक्षमार्ग में विघ्न करना

७.भावचूलिका - अधिकार

गोम्मटजिणिंदचंदं पणमिय गोम्मटपयत्थसंजुत्तं।
गोम्मटसंगहविसयं भावगयं चूलियं वोच्छं ।। ८११।।

अन्वयार्थ - (गोम्मटजिणिंदचंदं) गोम्मट चंद्रमा रूपी बाहुबली जिनेन्द्र को **(पणमिय)** नमस्कार करके **(गोम्मटपयत्थसंजुत्तं)** समीचीन पद और अर्थों से अथवा उत्तम पदार्थों के वर्णन से सर्व **(गोम्मटसंगहविसयं)** गोम्मटसार ग्रंथ में क्रम प्राप्त **(भावगयं)** भावों का वर्णन करनेवाले **(चूलियं)** चूलिका को **(वोच्छं)** कहूँगा ।

जेहि दु लक्खिज्जंते उवसमआदीसु जणिदभावेहिं ।
जीवा ते गुणसण्णा णिद्दिट्ठा सव्वदरिसीहिं ।।८१२।।

अन्वयार्थ - (जीवा) जीव **(उवसम आदीसु)** उपशम आदि से **(जणिद)** उत्पन्न **(जेहिं दु)** जिन **(भावेहिं)** भावों से, **(लक्खिज्जंते)** पहिचाने जाते हैं, **(ते)** वे भाव **(गुणसण्णा)** 'गुण' संज्ञा को प्राप्त होते हैं, **(सव्वदरिसीहिं)** ऐसा सर्वदर्शियों (सर्वज्ञ) ने, **(णिद्दिट्ठा)** कहा है।

आगे उन भावों के नाम व उनके भेदों का कथन करते हैं -

उवसमखइयो मिस्सो ओदइयो पारिणामियो भाओ ।
भेदा दुगु णव तत्तो दुगुणिगिवीसं तियं कमसो ।।८१३।।

अन्वयार्थ - (भाओ) वे भाव **(उवसम)** औपशमिक **(खइयो)** क्षायिक **(मिस्सो)** मिश्र अथवा क्षायोपशमिक **(ओदइयो)** औदयिक **(पारिणामियो)** पारिणामिक के भेद से पाँच प्रकार के हैं। इन पाँचों के **(भेदा)** भेद **(कमसो)** क्रमसे **(दुगु)** दो **(णव)** नौ **(तत्तो दुगुणिगिवीसं)** उससे दुगणे अर्थात् अठारह, इक्कीस और **(तियं)** तीन हैं।

कम्मुवसमम्मि उवसमभाओ खीणम्मि खयियभावो दु ।
उदओ जीवस्स गुणो खओवसमिओ हवे भाओ ।।८१४।।

अन्वयार्थ - (कम्मुवसमम्मि) प्रतिपक्षी कर्म के उपशम से **(उवसमभाओ)** औपशमिक भाव, **(खीणम्मि)** प्रतिपक्षी कर्मों के सर्वथा क्षय से, **(खयियभावो)** क्षायिक भाव, **(उदयो)** प्रतिपक्षी कर्मों के देशघाति स्पर्धकों का उदय होने पर भी **(जीवस्स)** जीव का जो **(गुणो)** गुण प्रगट हो वह **(खओवसमिओ)** क्षायोपशमिक **(भावो)** भाव **(हवे)** होता है।

कम्मुदयजकम्मिगुणो ओदइयो तत्थ होदि भावो दु ।
कारणणिरवेक्खभवो सभावियो होदि परिणामो ।।८१५।।

अन्वयार्थ -(कम्मुदयज) कर्म के उदय से उत्पन्न हुआ **(कम्मिगुणो)** जीव का भाव **(तत्थ)** वह **(ओदइयो)** औदयिक **(भावो)** भाव **(होदि)** होता है। **(कारणणिरवेक्खभवो)** कर्म के उपशम, क्षय, क्षयोपशम और उदय की अपेक्षा बिना जो निरपेक्ष भाव होता है, **(सभावियो)** ऐसा स्वाभाविक **(परिणामो)** पारिणामिक भाव, **(होदि)** है।

इन पाँच भावों के उत्तर भेद रूप भावों को ४ गाथाओं से कहते हैं -

उवसमभावो उवसमसम्मं चरणं च तारिसं खयिओ ।
खायियणाणं दंसण सम्मं चरित्तं च दाणादी ।।८१६।।

अन्वयार्थ - (उवसमभावो) औपशमिक भाव के **(उवसम सम्मं चरणं च)** औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र रूप दो भेद हैं। **(तारिसं)** उसी प्रकार **(खयिओ)** क्षायिक भाव के भी, **(खायियणाणं)** क्षायिक ज्ञान, **(दंसण)** क्षायिक दर्शन, **(सम्मंचरित्तं)** क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, **(च)** और **(दाणादी)** क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, क्षायिक उपभोग और क्षायिक वीर्यरूप ये नौ भेद हैं।

खाओवसमियभावो चउणाण तिदंसणं तिअण्णाणं ।
दाणादिपंच वेदग-सरागचारित्त-देससंजमं ।।८१७।।

अन्वयार्थ - (खाओवसमियभावो) क्षायोपशमिक भाव के **(चउणाण)** मति

ज्ञानादि ४ ज्ञान **(तिदंसणं)** चक्षु आदि ३ दर्शन, **(तिअण्णाणं)** कुमति आदि ३ अज्ञान **(दाणादिपंच)** क्षायोपशमिक दान-लाभ-भोग-उपभोग-वीर्य **(वेदग)** वेदक सम्यक्त्व, **(सरागचारित्त)** सराग चारित्र, **(देससंजमं)** और देशसंयम ये १८ (अठारह) भेद हैं।

ओदयिया पुण भावा गदिलिंगकसाय तह य मिच्छत्तं ।
लेस्सासिद्धासंजम अण्णाणं होंति इगिवीसं ।।८१८।।

अन्वयार्थ -(ओदयिया पुण भावा) औदयिक भाव के **(गदि)** ४ गति, **(लिंग)** ३ वेद, **(कसाय)** ४ कषाय, **(तह य मिच्छत्तं)** एक मिथ्यात्व, **(लेस्सा)** ६ लेश्या, **(असिद्ध)** असिद्ध, **(असंजम)** असंयम **(अण्णाणं)** अज्ञान, **(इगिवीसं)** इक्कीस भेद **(होंति)** होते हैं।

जीवत्तं भव्वत्तमभव्वत्तादी भवंति परिणामा ।
इदि मूलुत्तरभावा भंगवियप्पे बहुं जाणे ।।८१९।।

अन्वयार्थ - (परिणामा) पारिणामिक भाव के भेद **(जीवत्तं)** जीवत्व, **(भव्वत्तमभव्वत्तादी)** भव्यत्व और अभव्यत्व आदि **(हवंति)** होते हैं। **(इदि)** इस प्रकार **(मूलुत्तरभावा)** मूलभाव पाँच, उत्तर भाव ५३ हैं। **(भंगवियप्पे)** भंग-द्विसंयोगादि के भेद, **(बहुं)** बहुत हो सकते हैं **(जाणे)** ऐसा जानना चाहिए।

विशेषार्थ - गुण - अपने प्रतिपक्षी कर्मों के उपशम आदि के होनेपर उत्पन्न हुए जिन भावों से जीव पहिचाने जाते हैं उन भावों को गुण कहते हैं। वे भाव पाँच प्रकार के हैं - १) औपशमिक २) क्षायिक ३) मिश्र ४) औदयिक ५) पारिणामिक

जैसे कतक आदि द्रव्य के सम्बन्ध से जल में कीचड का उपशम हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा में कर्म की निज शक्ति का कारणवश से प्रगट न होना उपशम है। जैसे उसी जल को दूसरे स्वच्छ बर्तन में बदल देने पर कीचड का अत्यन्त अभाव हो जाता है, वैसे ही कर्मों का आत्मा से सर्वथा दूर हो जाना क्षय है। जिस प्रकार उसी जल में कतकादि द्रव्य के सम्बन्ध से कुछ कीचड का अभाव हो जाता है और कुछ बना रहता है, उसी प्रकार उभयरूप भाव क्षयोपशम (मिश्र) है। द्रव्यादि निमित्त के वश से कर्मों के फल का प्राप्त होना उदय है और जिसके होने में द्रव्य का स्वरूप लाभ मात्र कारण है, वह परिणाम है।

जिस भाव का प्रयोजन अर्थात् कारण उपशम है, वह औपशमिक भाव है। इसी प्रकार क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक भावों की भी व्युत्पत्ति कहनी चाहिए।

मूलभाव ५	उत्तरभाव	उत्तरभावों के नाम
१) औपशमिक	२	१) सम्यक्त्व २) चारित्र
२) क्षायिक	९	१) ज्ञान २) दर्शन ३) सम्यक्त्व ४) चारित्र ५) दान ६) लाभ ७) भोग ८) उपभोग ९) वीर्य
३) क्षायोपशमिक	१८	ज्ञान - ४ मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय अज्ञान -३ कुमति, कुश्रुत, कुअवधि दर्शन - ३ चक्षु, अचक्षु, अवधि लब्धि - ५ दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य ३ वेदकसम्यक्त्व, सरागचारित्र, देशसंयम १८
४) औदयिक	२१	गति ४, वेद ३, कषाय ४, मिथ्यात्व, लेश्या ६, असिद्ध, असंयम, अज्ञान
५) पारिणामिक	३	जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व
५	५३	कुलभाव

ओघादेसे संभवभावं मूलुत्तरं ठवेदूण।
पत्तेये अविरुद्धे परसगजोगेवि भंगा हु ।।८२०।।

अन्वयार्थ -(ओघादेसे) गुणस्थान और मार्गणा में **(संभव)** होने वाले,**(मूलुत्तरं भावं)** मूल और उत्तर भावों को **(ठवेदूण)** स्थापित करके, **(पत्तेये)** प्रत्येक भंग **(अविरुद्धे)** विरोध रहित **(परसगजोगेवि)** स्व-संयोगी और परसंयोगी भी **(भंगा हु)** भंगों को प्राप्त करना चाहिए ।

विशेषार्थ - गुणस्थान और मार्गणा में होनेवाले मूल और उत्तरभावों को स्थापन करके प्रत्येक भंग और विरोधरहित स्वसंयोगी और परसंयोगी भंगों को प्राप्त करना चाहिये।

१) प्रत्येक भंग - जुदे जुदे भाव को प्रत्येक भंग कहते हैं।

२) अविरुद्ध परसंयोगी भंग - अलग अलग भावों के संयोग से होनेवाले भंग को

परसंयोगी भंग कहते हैं। जिन भावों का एकसाथ रहना संभव हो उन्हीं के संयोगी भंग होते हैं अत: अविरुद्ध परसंयोगी भंग कहा है। जैसे औदयिक गति के साथ क्षायोपशमिक मतिज्ञान।

३) **स्वसंयोगी भंग -** एक प्रकार के भावों के उत्तर भेदों में परस्पर संयोग होकर जो भंग होते हैं उन्हें स्वसंयोगी भंग कहते हैं। जैसे क्षायोपशमिक मतिज्ञान और क्षायोपशमिक चक्षुदर्शन।

मिच्छतिये तिचउक्के दोसु वि सिद्धेवि मूलभावा हु ।
तिगपणपणगं चउरो तिग दोण्णि य संभवा होंति ।।८२१।।

अन्वयार्थ - (मिच्छतिये) मिथ्यात्वादि तीन गुणस्थानों में **(तिग)** तीन-तीन; **(तिचउक्के)** तीन चतुष्कों में अर्थात् असंयतादि चार गुणस्थानों में **(पण)** पाँच-पाँच; उपशम श्रेणि सम्बन्धी चार गुणस्थानों में **(पणगं)** पाँच-पाँच; क्षपक श्रेणी सम्बन्धी तीन तथा क्षीण कषाय इन चार गुणस्थानों में **(चउरो)** चार; **(दोसु वि)** सयोगी गुणस्थान व अयोगी में **(तिग)** तीन-तीन **(सिद्धेवि)** तथा सिद्धों में भी **(दोण्णि य)** दो, **(मूलभावा)** मूलभाव **(संभवा होंति)** पाये जाते हैं।

गुणस्थानों में मूलभावों का कोष्टक

गुणस्थान	मूलभाव	मूलभावों के नाम
१ मिथ्यात्व,२ सासादन ३ मिश्र	३	औदयिक, मिश्र, पारिणामिक
४ असंयत ५ देशसंयत ६ प्रमत्त ७ अप्रमत्त	५	औदयिक, मिश्र, औपशमिक, क्षायिक, पारिणामिक
उपशमश्रेणि के ४ गुणस्थान ८, ९, १०, ११	५	औदयिक, मिश्र, औपशमिक, क्षायिक, पारिणामिक
क्षपकश्रेणि के ३ गुणस्थान, क्षीणमोह ८, ९, १०, १२	४	औदयिक, मिश्र, क्षायिक, पारिणामिक
सयोगकेवली, अयोगकेवली	३	औदयिक, क्षायिक, पारिणामिक
सिद्ध	२	क्षायिक, पारिणामिक

गुणस्थान की अपेक्षा ५३ उत्तरभावों का कोष्टक

गुणस्थान	औपशमिक भाव के २ भेदों में से		क्षायिक भाव के ९ भेदों में से		क्षायोपशमिक भाव के १८ भेदों में से		औदयिक भाव के२१ भेदों में से		पारिणामिक भाव के ३ भेदों में से		भावों की कुलसं.
मिथ्यात्व	०	०	०	०	१०	३ अज्ञान, २ चक्षु-अचक्षुदर्शन, ५ लब्धि	२१	सर्व	३	सर्व	३४
सासादन	०	०	०	०	१०	उपर्युक्त	२०	२१-१ मिथ्या.	२	३-१ अभव्य	३२
मिश्र	०		०		१०	३मि.ज्ञान २ दर्शन ५ लब्धि	२०	मिथ्या. विनाशेष सर्व	२	अभव्य बिना शेष २	३२
असंयत	१	उपशम सम्यक्त्व	१	क्षायिक सम्यक्त्व	१२	३ ज्ञान, ३ दर्शन, (प्रथम३) ५ लब्धि, वे.सम्य.	२०	मिथ्या. विना शेष	२	भव्यत्व जीवत्व	३६
देशसंयत	१	उपशम सम्यक्त्व	१	क्षायिक सम्यक्त्व	१३	उपर्युक्त १२ + १ देशसंयम	१४	ति.मनु. गति,४ कषाय, ३ वेद, शुभ ३ लेश्या, असिद्ध अज्ञान	२	भव्यत्व जीवत्व	३१

गुणस्थान	औपशमिक भाव के २ भेदों में से		क्षायिक भाव के ९ भेदों में से		क्षायोपशमिक भाव के १८ भेदों में से		औदयिक भाव के२१ भेदों में से		पारिणामिक भाव के ३ भेदों में से		भावों की कुलसं.
प्रमत्त संयत	१	उपशम सम्यक्त्व	१	क्षायिक सम्यक्त्व	१४	४ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ लब्धि वे.सम्य. स.चारित्र	१३	उपर्युक्त १४-१ तिर्यंच गति	२	भव्यत्व जीवत्व	३१
अप्रमत्त	१	उपशम सम्यक्त्व	१	क्षायिक सम्यक्त्व	१४	उपर्युक्त	१३	उपर्युक्त	२	उपर्युक्त	३१
अपूर्व-करण	२	सम्यक्त्व चारित्र	२	सम्यक्त्व चारित्र	१२	४ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ लब्धि	११	उपर्युक्त १३-२ पीत,पद्म लेश्या	२	उपर्युक्त	२९
अनिवृत्ति करण	२	सम्यक्त्व चारित्र	२	सम्यक्त्व चारित्र	१२	उपर्युक्त	११	उपर्युक्त	२	उपर्युक्त	२९
सूक्ष्म-सांपराय	२	उपर्युक्त	२	उपर्युक्त	१२	उपर्युक्त	५	मनु.गति सू.लोभ शुक्लले. अज्ञान असिद्धत्व	२	भव्यत्व जीवत्व	२३
उपशांत मोह	२	सम्यक्त्व चारित्र	१	क्षायिक सम्यक्त्व	१२	उपर्युक्त ४ ज्ञान ३ दर्शन, ५ लब्धि	४	मनु.गति शुक्लले. अज्ञान असिद्धत्व	२	भव्यत्व जीवत्व	२१
क्षीणमोह	०		२	सम्यक्त्व चारित्र	१२	उपर्युक्त	४	उपर्युक्त	२	भव्यत्व जीवत्व	२०

गुणस्थान	औपशमिक भाव के २ भेदों में से		क्षायिक भाव के ९ भेदों में से		क्षायोपशमिक भाव के १८ भेदों में से		औदयिक भाव के२१ भेदों में से		पारिणामिक भाव के ३ भेदों में से		भावों की कुलसं.
सयोगी	०		९	सर्व क्षायिक भाव	०	०	३	मनु.गति शुक्लले. असिद्धत्व	२	जीवत्व भव्यत्व	१४
अयोगी	०		९	सर्व	०	०	२	मनु.गति असिद्धत्व	२	जीवत्व भव्यत्व	१३
सिद्ध	०		५	सम्यक्त्व दर्शन, ज्ञान, वीर्य, चारित्र	०	०	०	०	१	जीवत्व	६

तत्थेव मूलभंगा दस छव्वीसं कमेण पणतीसं ।
उगवीसं दस पणगं ठाणं पडि उत्तरं वोच्छं ।।८२२।।

अन्वयार्थ - (तत्थेव) पूर्वोक्त गाथा में कथित (मिथ्यात्वादि ३ गुणस्थान, असंयतादि ४ गुणस्थान, उपशमश्रेणी के चार गुणस्थान, क्षपक श्रेणी के चार गुणस्थान, सयोगी-अयोगी गुणस्थान और सिद्ध) इन छह स्थानों में **(कमेण)** क्रमसे **(मूलभंगा)** मूल भंग **(दस छव्वीसं पणतीसं उगवीसं दस पणगं)** १०, २६, ३५, १९, १०, ५ हैं। **(पडि)** इसके पश्चात् **(उत्तरं ठाणं)** उत्तर स्थानों को **(वोच्छं)** कहेंगे।

गुणस्थानों में मूलभावों के प्रत्येक, परसंयोगी और स्वसंयोगी भंगों का कोष्टक

गुणस्थान	मूलभाव	प्र-त्येक भंग	परसंयोगी भंग				स्वसंयोगी भंग	सर्व भंग
			द्वि	त्रि	चतुः	पंच		
मिथ्यात्व	३ मिश्र औदयिक पारिणा.	३	३ मिश्र-औद मिश्र-पारि औद-पारि	१ मिश्र-औद पारिणा- मिक	०	०	३ मिश्र-मिश्र औद-औद पारि-पारि	१०
सासादन	३ उपर्युक्त	३	३ उपर्युक्त	१ उपर्युक्त	०	०	३ उपर्युक्त	१०
मिश्र	३ उपर्युक्त	३	३ उपर्युक्त	१ उपर्युक्त	०	०	३ उपर्युक्त	१०
असंयत देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्त	५ औपश. क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणा.	५	९ औप-मिश्र औप-औद औप-पारि क्षायि-मिश्र क्षायि-औद क्षायि-पारि मिश्र-औद मिश्र-पारि औद-पारि	७ औप-मिश्र -औद औप-मिश्र -पारि औप-औद -पारि क्षायि-मिश्र -औद क्षायि-मिश्र -पारि क्षायि-औद -पारि मिश्र-औद -पारि	२ औप-मिश्र- -औद-पारि क्षा-मिश्र- औद-पारि	० औपशमिक और क्षायिक का कोई भेद परस्पर नहीं मिलता अत: पंचसंयोगी भंग नहीं है।	३ उपर्युक्त यहाँपर औपश.के साथ औप नहीं,क्षायि के साथ क्षायिक नहीं अत: तीन ही भंग होते हैं।	२६

गुणस्थान	मूलभाव	प्रत्येक भंग	परसंयोगी भंग				स्वसंयोगी भंग	सर्व भंग
			द्वि	त्रि	चतुः	पंच		
अपूर्वकरण उप.श्रेणी अनिवृत्ति करण उप.श्रेणी सूक्ष्म- सांपराय उप.श्रेणी उपशांत मोह	५ औपश. क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणा.	५	१० औप-मिश्र औप-क्षायि औप-औद औप-पारि क्षायि-मिश्र क्षायि-औद क्षायि-पारि मिश्र-औद मिश्र-पारि औद-पारि	१० औप-क्षा- -मिश्र औप-क्षा- -औद औप-क्षा- -पारि औप-मिश्र -औद औप-मिश्र -पारि औप-औद -पारि क्षायि-मि. -औद क्षायि-मि. -पारि क्षा-औद -पारि मिश्र-औद -पारि	५ औप-क्षा- मिश्र-औद औप-क्षा- मिश्र-पारि औप-मि- औद-पारि औप-क्षा- औद-पारि क्षा-मिश्र- औद-पारि	१ औप- क्षायिक- मिश्र-औद -पारिणा	४ औप-औप मिश्र-मिश्र औद-औद पारि-पारि क्षायिक के साथ दूसरा क्षायिक का भेद नहीं है।	३५

गुणस्थान	मूलभाव	प्रत्येक भंग	परसंयोगी भंग				स्वसंयोगी भंग	सर्व भंग
			द्वि	त्रि	चतुः	पंच		
अपूर्वकरणक्षपक अनिवृत्ति क्षपक सूक्ष्म-सांपराय क्षपक क्षीणमोह	४ क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणा.	४	६ क्षायि-मिश्र क्षायि-औद क्षायि-पारि मिश्र-औद मिश्र-पारि औद-पारि	४ क्षायि-मि.-औद क्षायि-मि.-पारि क्षा-औद-पारि मिश्र-औद-पारि	१ क्षा-मिश्र-औद-पारि	०	४ क्षा-क्षा मिश्र-मिश्र औद-औद पारि-पारि	१९
सयोगी अयोगी	३ क्षायिक औदयिक पारिणा.	३	३ क्षायि-औद क्षायि-पारि औद-पारि	१ क्षा-औद-पारि	०	०	३ क्षा-क्षा औद-औद पारि-पारि	१०
सिद्ध	२ क्षायिक पारिणा.	२	१ क्षायि-पारि	०	०	०	२ क्षा-क्षा पारि-पारि	५

विशेषार्थ - १) चतुर्थादि चार गुणस्थानों में मूलभाव ५ होनेपर भी एक जीव के एक साथ पाँच भाव नहीं होते क्योंकि औपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व ये दोनों भाव एक साथ नहीं हो सकते इसलिए इनके परस्पर संयोगरूप कोई भङ्ग नहीं होता।

२) उसीप्रकार औपशमिक और क्षायिक का चतुर्थादि चार गुणस्थानों में एक-एक ही भेद है अत: उसके स्वसंयोगरूप भंग नहीं होते।

३) उपशमश्रेणीपर क्षायिकभाव का एक ही भेद (सम्यक्त्व) होता है अत: उसके वहाँ स्वसंयोगरूप भंग नहीं है।

४) सिद्धों में एक जीवत्वरूप ही पारिणामिकभाव है, भव्यत्व भाव नहीं रहता

अत: पारिणामिक पारिणामिकरूप स्वसंयोगीभङ्ग नहीं होता ऐसा प्रतीत होता है, किन्तु यहाँ अस्तित्वादि पारिणामिक भावों के साथ जीवत्व पारिणामिक का स्वसंयोगी भंग किया होगा।

उत्तरभंगा दुविहा ठाणगया पदगयात्ति पढमम्मि ।
सगजोगेण य भंगाणयणं णत्थित्ति णिद्दिट्ठं ।।८२३।।

अन्वयार्थ - (उत्तर भंगा) उत्तर भावों के भंग **(दुविहा)** दो प्रकार के हैं। **(ठाणगया)** स्थानगत, **(पदगयात्ति)** और पदगत। **(पढमम्हि)** प्रथम में अर्थात् स्थानगत भंगों में, **(सगजोगेण)** स्व संयोग से **(भंगाणयणं)** भंगों को लाना **(णत्थित्ति)** नहीं है ऐसा **(णिद्दिट्ठं)** कहा है।

गुणस्थानों की अपेक्षा भावों के स्थान और उनमें पाये जाने वाले भावों की संख्या -

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते य मिस्सठाणाणि ।
तिगदुगचउरो एक्कं ठाणं सव्वत्थ ओदइयं ।।८२४।।

अन्वयार्थ - (मिच्छदुगे) मिथ्यात्वादि दो, **(मिस्सतिये)** मिश्रादि तीन, **(पमत्तसत्ते य)** प्रमत्तादि सात गुणस्थानों में **(मिस्सठाणाणि)** क्षायोपशमिक भावों के स्थान क्रमसे **(तिगदुगचउरो)** तीन, दो और चार जानना। तथा **(ओदइयं)** औदयिक भाव का **(सव्वत्थ)** उपर्युक्त सभी गुणस्थानों में **(एक्कं ठाणं)** एक-एक भेद ही पाया जाता है।

तत्थावरणजभावा पणछस्सत्तेव दाणपंचेव ।
अयदचउक्के वेदगसम्मं देसम्मि देसजमं ।।८२५।।

अन्वयार्थ - (तत्थावरणजभावा) उपर्युक्त मिथ्यात्वादि गुणस्थानों के ज्ञानावरण और दर्शनावरण से उत्पन्न हुए क्षायोपशमिक भाव, **(पण)** मिथ्यात्व और सासादन गुणस्थानों में ३ अज्ञान व २ दर्शन रूप ५ भाव हैं। **(छस्)** मिश्रादि तीन गुण स्थानों में आदि के ३ ज्ञान व ३ दर्शन रूप ६ भाव हैं। **(सत्तेव)** प्रमत्तादि सात गुणस्थानों में, मन:पर्यय ज्ञान सहित ४ ज्ञान व ३ दर्शन रूप ७ भाव हैं। **(दाणपंचेव)** तथा

क्षायोपशमिक दान आदि पाँचों लब्धियाँ, मिथ्यात्व गुणस्थान से क्षीणकषाय तक पायी जाती हैं। **(अयदचउक्के)** असंयतादि चार गुणस्थानों में **(वेदगसम्मं)** वेदक सम्यक्त्व होता है, **(देसम्मि)** देश संयम गुणस्थान में **(देसजमं)** देशसंयम पाया जाता है।

रागजमं तु पमत्ते इदरे मिच्छादिजेट्ठठाणाणि ।
वेभंगेण विहीणं चक्खुविहीणं च मिच्छदुगे ।।८२६।।

अन्वयार्थ - (पमत्ते इदरे) प्रमत्त और इतर अर्थात् अप्रमत्त गुणस्थान में **(तु रागजमं)** तो सराग संयम होता है। इसप्रकार यथासंभव भाव मिलानेसे **(मिच्छादिजेट्ठठाणाणि)** मिथ्यात्वादि गुणस्थानों में क्षायोपशमिक भाव के उत्कृष्ट स्थान होते हैं वे १०-१०-११-१२-१३-१४-१४-१२-१२-१२-१२-१२ जानना। **(मिच्छदुगे)** मिथ्यात्व और सासादन गुणस्थान में **(वेभंगेण विहीणं)** विभंगज्ञान से रहित ९ का **(च)** और **(चक्खुविहीणं)** चक्षुदर्शन से रहित ८ का स्थान भी है।

अवधिदुगेण विहीणं मिस्सतिये होहि अण्णठाणं तु।
मणणाणेणवधिदुगेणुभयेणूणं तदो अण्णे ।।८२७।।

अन्वयार्थ - (मिस्सतिये) मिश्र आदितीन गुणस्थानों में, (एक तो अपना अपना उत्कृष्ट स्थान) तथा **(अवधिदुगेण)** अवधि ज्ञान और अवधिदर्शन से, **(विहीणं)** रहित, **(अण्णठाणं)** अन्य स्थान **(तु होदि)** होता है। अर्थात् मिश्र में ९ का, असंयत में १० का, देशसंयत में ११ का इस प्रकार दो-दो स्थान होते हैं। प्रमत्तादि ७ गुणस्थानों में एक एक तो अपना उत्कृष्ट स्थान है। **(मणणाणेणवधिदुगेणुभयेणूणं)** मन:पर्यय ज्ञान रहित एक एक स्थान, अवधि ज्ञान व अवधि दर्शन रहित एक एक स्थान है तथा अवधि ज्ञान, मन:पर्यय ज्ञान व अवधिदर्शन रहित एक एक स्थान इस प्रकार **(तदो अण्णे)** उत्कृष्ट से अन्य ३ स्थान भी हैं।

विशेषार्थ - उत्तर भावों के भंग दो प्रकार के हैं १) स्थानगत २) पदगत

१) स्थानगत भंग - एक जीव के एक काल में जितने भाव पाये जाते हैं उनके समूह को स्थान कहते है। उसकी अपेक्षा जो भंग होते हैं वे स्थानगत भंग होते हैं।

२) पदगत भंग - एक जीव के एक काल में जो भाव पाए जाते हैं उनमें से एक जाति के भाव को अथवा प्रत्येक भाव को पद कहते हैं। पद की अपेक्षा से जो भंग होते हैं वे पदगत भंग हैं।

एक जीव को एककाल में एक स्थान में कोई अन्यस्थान सम्भव नहीं है इसलिए स्थानगत भंगों में स्वसंयोगी भंग नहीं पाये जाते हैं।

गुणस्थानों में १८ मिश्रभावों में से स्थानगतभावों का कोष्टक

गुणस्थान	स्थान संख्या	भाव संख्या	भावों के नाम
मिथ्यात्व, सासादन	३	१० ९ ८	३ अज्ञान, २ दर्शन, ५ लब्धि (दानादि) = १० २ अज्ञान(कुमति, कुश्रुत),२ दर्शन, ५ लब्धि = ९ २ अज्ञान, १ अचक्षुदर्शन, ५ लब्धि = ८
मिश्र	२	११ ९	३ मिश्रज्ञान, ३ दर्शन,(चक्षु,अचक्षु,अवधि) = ११ ५ लब्धि (दानादि) २ मिश्रज्ञान, २ दर्शन, (चक्षु,अचक्षु) ५ लब्धि (दानादि) = ९
असंयत	२	१२ १०	३ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ लब्धि (दानादि), = १२ १ वेदकसम्यक्त्व २ ज्ञान(मति,श्रुत), २ दर्शन (चक्षु, अचक्षु), = १० ५ लब्धि, १ वेदकसम्यक्त्व

गुणस्थान	स्थान संख्या	भाव संख्या	भावों के नाम
देशसंयत	२	१३	३ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ दानादि लब्धि, १ वेदक-सम्यक्त्व, १ देशसंयम = १३
		११	२ ज्ञान, २ दर्शन, ५ दानादि लब्धि, १ वेदक-सम्यक्त्व, १ देशसंयम = ११
प्रमत्तसंयत अप्रमत्त	४	१४	४ ज्ञान, ३ दर्शन, १ वेदकसम्यक्त्व, १ सराग चारित्र, ५ दानादि लब्धि = १४
		१३	३ ज्ञान, ३ दर्शन, १ वेदकसम्यक्त्व, १ सराग चारित्र, ५ दानादि लब्धि = १३
		१२	३ ज्ञान (मति, श्रुत, मन:पर्यय), २ दर्शन, १ वेदकसम्यक्त्व, १ सरागचारित्र, ५ लब्धि = १२
		११	२ ज्ञान(मति,श्रुत), २ दर्शन (चक्षु, अचक्षु), ५ लब्धि, १ वेदकसम्यक्त्व, १ सरागचारित्र = ११
अपूर्वकरण अनिवृत्ति सू.सांपराय उपशांतमोह क्षीणमोह	४	१२	४ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ दानादि लब्धि = १२
		११	३ ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि), ३ दर्शन, ५ दानादि लब्धि = ११
		१०	३ ज्ञान (मति, श्रुत, मन:पर्यय), २ दर्शन, ५ दानादि लब्धि = १०
		९	२ ज्ञान (मति, श्रुत,), २ दर्शन, ५ दानादि लब्धि = ९

गुणस्थान की अपेक्षा औदयिक भावों में स्थानगत भावों का कोष्टक

गुणस्थान	स्थान संख्या	भाव संख्या	भावों के नाम
मिथ्यात्व	१	८	चारगति में से १, तीन वेदों में से १, चार कषायों में से १, छह लेश्याओं में से १, १ मिथ्यात्व, १ अज्ञान, १ असंयम, १ असिद्धत्व
सासादन	१	७	उपर्युक्त ८ - १ मिथ्यात्व
मिश्र	१	७	उपर्युक्त ८ - १ मिथ्यात्व
असंयत	१	७	उपर्युक्त ८ - १ मिथ्यात्व
देशसंयत	१	६	दो गति में से १, ३ वेदों में से १, चार कषायों में से १, ३ शुभलेश्याओं में से १, १ अज्ञान, असिद्धत्व
प्रमत्तसंयत	१	६	देशसंयतवत् (विशेष - १ मनुष्यगति)
अप्रमत्त	१	६	देशसंयतवत् (विशेष - १ मनुष्यगति)
अपूर्वकरण	१	६	१ मनुष्यगति, तीन वेदों में से १, चार कषायों में से १, शुक्ललेश्या १, १ अज्ञान, असिद्धत्व
अनिवृत्ति सवेदभाग	१	६	१ मनुष्यगति, तीन वेदों में से १, चार कषायों में से १, शुक्ललेश्या १, १ अज्ञान, असिद्धत्व
अनिवृत्ति अवेदभाग	१	५	१ मनुष्यगति, चार कषायों में से १, शुक्ललेश्या १, १ अज्ञान, असिद्धत्व
सू.सांपराय	१	५	१ मनुष्यगति, १ सू. लोभ, शुक्ललेश्या १, १ अज्ञान, १ असिद्धत्व
उपशांतमोह	१	४	१ मनुष्यगति, १ शुक्ललेश्या, १ अज्ञान, १ असिद्धत्व
क्षीणमोह	१	४	१ मनुष्यगति, १ शुक्ललेश्या, १ अज्ञान, १ असिद्धत्व
सयोगीके.	१	३	१ मनुष्यगति, १ शुक्ललेश्या, १ असिद्धत्व
अयोगके.	१	२	१ मनुष्यगति, १ असिद्धत्व

औदयिक भाव के स्थानों में भंग -

लिंगकसाया लेस्सा संगुणिदा चदुगदीसु अविरुद्धा।
बारस बावत्तरियं तत्तियमेत्तं च अडदालं ।।८२८।।
णवरि विसेसं जाणे सुरमिस्से अविरदे य सुहलेस्सा।
चउवीस तत्थ भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ।।८२९।।

अन्वयार्थ - (चदुगदीसु) नरकादि चारों गतियों में, **(अविरुद्धा)** विरोधरहित यथासंभव **(लिंगकसाया लेस्सा)** वेद, कषाय और लेश्याओं को **(संगुणिदा)** गुणा करने पर, **(बारस)** नरक गति में १२ (१×४×३) **(बावत्तरियं)** तिर्यंच गति में ७२ (३×४×६) **(तत्तियमेत्तं)** उतने ही अर्थात् ७२ (मनुष्य गति में) **(च)** और **(अडदालं)** देव गति में अड़तालीस (२×४×६) भंग होते हैं। **(णवरि विसेसं जाणे)** केवल विशेषता इतनी जानना चाहिए कि, **(सुर)** देव गति सम्बन्धी **(मिस्से)** मिश्र में **(अविरदे य)** और असंयत गुणस्थान में **(सुहलेस्सा)** तीन शुभ लेश्या हैं। **(तत्थ भंगा)** उसके भंग, **(चदुवीस)** चौबीस (२×४×३) हैं। **(असहाय परक्कमुद्दिट्ठा)** ऐसा असहाय पराक्रमी **(वर्धमान स्वामी)** जिनेन्द्र देव ने कहा है।

विशेषार्थ - पीछे गुणस्थानों में औदयिक भावों के स्थान कहे उनमें भावों के बदलने से भंग होते हैं। नरकादि चार गतियों में अविरोधी यथासम्भव लिंग, कषाय और लेश्या का परस्पर गुणा करनेपर क्रमसे १२, ७२, ७२, व ४८ भंग होते हैं।

भवनत्रिक देवों के अपर्याप्तावस्था में तीन अशुभलेश्या होती हैं उस अपेक्षा देवगति में मिथ्यात्व, सासादन गुणस्थान में ६ लेश्या से गुणा किया है। भवनत्रिक की अपर्याप्त अवस्था में ३ रा,४ था गुणस्थान नहीं होता इसलिए वहाँ ३ अशुभलेश्या से ही गुणा किया।

गुणस्थानों में गति की अपेक्षा से औदयिक भावों के भंग

गुणस्थान	गति	भंग निकालने की पद्धति	भंग संख्या	सर्वभंग
मिथ्यात्व	नरक	१ नपुंसकवेद × ४ कषाय × ३ अशुभलेश्या	१२	
सासादन	तिर्यंच	३ वेद × ४ कषाय × ६ लेश्या	७२	
	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ६ लेश्या	७२	
	देव	२ स्त्रीपुंवेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	२४	
	भवनत्रिक	२ स्त्रीपुंवेद × ४ कषाय × ३ अशुभलेश्या	२४	
	अपर्याप्त			२०४
मिश्र	नरक	१ नपुंसकवेद × ४ कषाय × ३ अशुभलेश्या	१२	
असंयत	तिर्यंच	३ वेद × ४ कषाय × ६ लेश्या	७२	
	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ६ लेश्या	७२	
	देव	२ स्त्रीपुंवेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	२४	१८०
देशसंयत	तिर्यंच	३ वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	३६	
	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	३६	७२
प्रमत्तसंयत	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	३६	३६
अप्रमत्त	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	३६	३६
अपूर्वकरण	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × १ शुक्ललेश्या	१२	१२
अनि.सवेद	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × १ शुक्ललेश्या	१२	१२
अनि.अवेद१	मनुष्य	४ कषाय × १ शुक्ललेश्या	४	४
२	मनुष्य	३ कषाय (क्रोधबिना) × १ शुक्ललेश्या	३	३
३	मनुष्य	२ क. (क्रोध मान बिना) × १ शुक्ललेश्या	२	२
४	मनुष्य	१ बादरलोभकषाय × १ शुक्ललेश्या	१	१
सू.सांपराय	मनुष्य	१ सूक्ष्मलोभकषाय × १ शुक्ललेश्या	१	१
उपशांतमोह	मनुष्य	१ शुक्ललेश्या	१	१
क्षीणमोह	मनुष्य	१ शुक्ललेश्या	१	१
सयोगीके.	मनुष्य	१ शुक्ललेश्या	१	१
अयोगके.	मनुष्य	१ मनुष्यगति	१	१

चक्खूण मिच्छसासणसम्मा तेरिच्छगा हवंति सदा ।
चारिकसायतिलेस्साणब्भासे तत्थ भंगा हु ।।८३०।।

अन्वयार्थ - (चक्खूण) चक्षु दर्शन रहित, **(मिच्छसासणसम्मा)** मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि, **(तेरिच्छगा)** तिर्यंच ही **(सदा हवंति)** सदा होते हैं। **(चारिकसायतिलेस्साणब्भासे)** चार कषाय, तीन अशुभ लेश्या, नपुंसक वेद इनको परस्पर गुणा करने पर (४×३×१) = १२ **(तत्थ भंगा हु)** वहाँ भंग होते हैं।

विशेषार्थ - चक्षुदर्शनरहित तिर्यंच एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय होते हैं अतः उनमें एक नपुंसकवेद और ३ अशुभलेश्या ही पायी जाती हैं।

खाइय अविरदसम्मे चउ सोल बिहतरी य बारं च।
तद्देसो मणुसेव य छत्तीसा तब्भवा भंगा।।८३१।।

अन्वयार्थ - (खाइय अविरद सम्मे) असंयत क्षायिक सम्यग्दृष्टि के, नरक गति में, **(चदु)** चार भंग (नपुंसक वेद १×कषाय ४ ×लेश्या कापोत १ = ४) तिर्यंच गति में **(सोल)** सोलह, (पुरुष वेद १×कषाय ४ ×लेश्या ४ = १६), मनुष्य गति में **(बहत्तरी)** बहत्तर (वेद ३× कषाय ४ ×लेश्या ६ = ७२) और देव गति में **(य बारंच)** बारह भंग (वेद पुरुष १× कषाय ४ ×लेश्या ३ शुभ = १२) होते हैं। **(तद्देसो)** देश संयत क्षायिक सम्यग्दृष्टि, **(मणुसेव)** मनुष्य ही होते हैं, **(तब्भवाभंगा)** वहाँ उत्पन्न भंग **(छत्तीसा)** छत्तीस (वेद ३× कषाय ४ ×लेश्या ३ शुभ = ३६) होते हैं।

विशेषार्थ - क्षायिक सम्यग्दृष्टि केवल प्रथम नरक में ही जाता है इसलिए उसके एक कापोतलेश्या ही होती है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच नियम से भोगभूमि में ही होते हैं वहाँ पर अपर्याप्त अवस्था में कपोत लेश्या होती है और पर्याप्त होनेपर ३ शुभलेश्या होती हैं। अतः ४ लेश्या से गुणा किया है।देशसंयत क्षायिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य ही होते हैं।
ये ऊपर कहे हुए भंग आगे भावों के भंग निकालने के लिए गुण्य बनते हैं।

गुणस्थान	गति	भंग निकालने की पद्धति	भंग संख्या	सर्वभंग
मिथ्यात्व	चक्षुदर्शन रहिततिर्यं.	१ नपुं.वेद × ४ कषाय × ३ अशुभलेश्या	१२	१२
सासादन	चक्षुदर्शन रहिततिर्यं.	१ नपुं.वेद × ४ कषाय × ३ अशुभलेश्या	१२	१२
असंयत क्षायिक सम्यक्त्व	नरक	१ नपुं.वेद × ४ कषाय × १ कपोतलेश्या	४	
	तिर्यंच	१ पुं.वेद × ४ कषाय × ४ लेश्या (कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल)	१६	
	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ६ लेश्या	७२	
	देव	१ पुं.वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	१२	१०४
देशसंयत क्षायिक सम्यक्त्व	मनुष्य	३ वेद × ४ कषाय × ३ शुभलेश्या	३६	३६

पारिणामिक भावों के गुणस्थानों में स्थान

परिणामो दुट्ठाणो मिच्छे सेसेसु एक्कठाणो दु ।

सम्मे अण्णं सम्मं चारित्ते णत्थि चारित्तं ।।८३२।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में **(परिणामो)** पारिणामिक भाव के **(दुट्ठाणो)** दो स्थान हैं (जीवत्व-भव्यत्व; जीवत्व-अभव्यत्व), **(सेसेसु)** अवशेष गुण स्थानों में **(एक्क ठाणो दु)** एक ही स्थान है (जीवत्व-भव्यत्व)। **(सम्मे)** सम्यक्त्व सहित में अन्य सम्यक्त्व, तथा **(चारित्ते)** चारित्र सहित स्थान में अन्य **(चारित्तं)** चारित्र **(णत्थि)** नहीं है। अर्थात् जहाँ उपशम सम्यक्त्व है, वहाँ वेदक और क्षायिक सम्यक्त्व नहीं है, इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना।

विशेषार्थ - १) मिथ्यात्व गुणस्थान - स्थान २ - १) जीवत्व भव्यत्व, २) जीवत्व अभव्यत्व

२) २ से १४ गुणस्थान - स्थान १ - १) जीवत्व भव्यत्व

आगे के गुणस्थानों में प्रत्येक, द्विसंयोगी आदि भेद निकालते समय ध्यान रखना

कि सम्यक्त्व सहित स्थान में अन्य सम्यक्त्व नहीं है और चारित्रसहित स्थान में अन्य चारित्र नहीं है अर्थात् जहाँ औपशमिक सम्यक्त्व है वहाँ वेदक और क्षायिक सम्यक्त्व नहीं, जहाँ वेदक सम्यक्त्व है वहाँ औपशमिक और क्षायिक नहीं इसीप्रकार अन्यत्र जानना।

मिच्छदुगयदचउक्के अट्ठट्ठाणेण खइयठाणेण ।
जुदपरजोगजभंगा पुध आणिय मेलिदव्वा हु ।।८३३।।

अन्वयार्थ - (मिच्छदुगयदचउक्के) मिथ्यात्व-सासादन गुणस्थान में और असंयतादि चार गुणस्थानों में (क्रम से) **(अट्ठट्ठाणेण)** चक्षुदर्शन रहित क्षायोपशमिक सम्बन्धी आठ भावों के स्थानों में और **(खइयठाणेण)** क्षायिक सम्यक्त्व के स्थानों में, पूर्व कथित **(जुद परजोगज भंगा)** औदयिक भंग सहित पर संयोग से उत्पन्न हुए भंगों को **(पुध)** पृथक् **(आणिय)** लाकर **(मेलिदव्वा हु)** अपनी अपनी राशि में मिलाना चाहिए।

विशेषार्थ - मिथ्यात्व-सासादन गुणस्थान में चक्षुदर्शन रहित क्षायोपशमिक भाव के ८ के स्थान में जो औदयिक के भंग कहे हैं उन सहित तथा असंयत आदि चार में क्षायिक सम्यक्त्व के स्थान में जो औदयिक के भंग कहे हैं उन सहित परसंयोगी भंगों को पृथक् पृथक् निकालकर अपनी अपनी राशि में मिलावे।

गुणस्थान	भंगों का जोड़	सर्वभंग
मिथ्या.,सासादन	औदयिक भाव के २०४ + अचक्षुदर्शन के २४ भंग	२२८
असंयत	औदयिक भाव के १८० + क्षायिकसम्यक्त्व के १०४ भंग	२८४
देशसंयत	औदयिक भाव के ७२ + क्षायिकसम्यक्त्व के ३६ भंग	१०८
प्रमत्तसंयत	औदयिक भाव के ३६ + क्षायिकसम्यक्त्व के ३६ भंग	७२
अप्रमत्तसंयत	औदयिक भाव के ३६ + क्षायिकसम्यक्त्व के ३६ भंग	७२

पूर्वोक्त स्थानगत भंगों के सम्बन्ध में विशेष कथन -

उदयेणक्खे चडिदे गुणगारा एव होंति सव्वत्थ।
अवसेसभावठाणेणक्खे संचारिदे खेवा ।।८३४।।

अन्वयार्थ - (उदयेणक्खे) औदयिक भाव के स्थान में अक्ष (भेदों का) **(चडिदे)** संचार अर्थात् परिवर्तन होने से, **(सव्वत्थ)** सर्वत्र, **(गुणगारा एव होंति)** वे भंग गुणकार

ही होते हैं। **(अवसेस भाव ठाणेणक्खे)** औदयिक भाव से अतिरिक्त अवशेष भावों के स्थानों में, **(संचारिदे)** अक्ष संचार से, जो भंग होते हैं, उन्हें **(खेवा)** क्षेप जानना चाहिए।

दसु दसु देसे दोसु वि चउरुत्तरदुसदमसीदिसहिदसदं ।
बावत्तरि छत्तीसा बारमपुव्वे गुणिज्ञपमा ।।८३५।।

अन्वयार्थ - (गुणिज्ञपमा) औदयिक भाव के गुण्य रूप प्रत्येक भंग **(दसु)** मिथ्यात्व, सासादन में, **(दसु)** मिश्र और असंयत गुणस्थान में **(देसे)** देशसंयत गुणस्थान में **(दोसु वि)** और प्रमत्त, अप्रमत्त गुणस्थानों में क्रम से,**(चउरुत्तरदुसदमसीदिसहिद-सदं)** (दो सौ चार) २०४ और (एक सौ अस्सी) १८०, **(बावत्तरि)** (बहत्तर) ७२, **(छत्तीसा)** (छत्तीस) ३६, **(बारमपुव्वे)** अपूर्वकरण गुणस्थान में (बारह) १२ भंग होते हैं।

बार चउतिदुगमेक्कं थूले तो इगि हवे अजोगित्ति ।
पुण बार बार सुण्णं चउसद छत्तीस देसोत्ति ।।८३६।।

अन्वयार्थ - (थूले) अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के पाँच भागों में, क्रम से, **(बार चउतिदुगमेक्कं)** बारह, चार, तीन, दो और एक भंग हैं। **(तो)** उसके आगे **(अजोगित्ति)** अयोगी गुणस्थान पर्यंत, **(इगि हवे)** एक-एक है। **(पुण)** चक्षुदर्शन रहित , **(देसोत्ति)** मिथ्यादृष्टि से देशसंयत गुणस्थान तक क्रम से, **(बार बार सुण्णं)** (बारह)१२, (बारह)१२, (शून्य)० **(चउसद छत्तीस)** (एक सौ चार)१०४, (छत्तीस)३६ गुण्यरूप भंग होते हैं।

वामे दसु दसु दसु तिसु खीणे दोसुवि कमेण गुणगारा ।
णवछब्बारस तीसं वीसं वीसं चउक्कं च ।।८३७।।

अन्वयार्थ -(कमेण गुणगारा), क्रम से गुणकार **(वामे)** मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में **(णव)** नौ **(दसु)** सासादन, मिश्र में **(छब्)** छह-छह **(दसु)** असंयत, देशसंयत में **(बारस)** बारह-बारह **(दसु)** प्रमत्त, अप्रमत्त में, **(तीसं)** तीस-तीस **(तिसु)** अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म सांपराय में **(बीसं)** बीस-बीस **(खीणे)** क्षीणकषाय में **(बीसं)** बीस **(च)** और **(दोसुवि)** सयोगी, अयोगी में **(चउक्कं)** चार-चार होते हैं।

पुणरवि देसोत्ति गुणो तिदुणभछच्छक्कयं पुणो खेवा ।
पुव्वपदे अडपंचयमेगारमुगतीसमुगुवीसं ।।८३८।।

अन्वयार्थ - **(पुणरवि)** किन्तु चक्षुदर्शन रहित तथा क्षायिक सम्यक्त्व की अपेक्षा **(देसोत्ति)** देशसंयम गुणस्थान तक, **(गुणो)** गुणकार क्रम से, **(तिदुणभछच्छक्कयं)** तीन, दो, शून्य, छह और छह जानना। **(पुणो खेवा)** और क्षेप, **(पुव्वपदे)** पूर्वोक्त पदों में अर्थात् मिथ्यात्व गुणस्थान में **(अड)** आठ, **(पंचयमेगारमुगतीसमुगुवीसं)** पाँच, ग्यारह, उनतीस, उन्नीस अर्थात् सासादन मिश्र में - पाँच, पाँच; असंयत, देशसंयत में ग्यारह, ग्यारह; प्रमत्त, अप्रमत्त संयत में - उनतीस, उनतीस; अपूर्वकरणादि तीन में - उन्नीस, उन्नीस क्षेप होते हैं।

उगुवीसतियं तत्तो तिदुणभछच्छक्कयं च देसोत्ति।
चउसुवसमगेसु गुणा तालं रूऊणया खेवा ।।८३९।।

अन्वयार्थ - क्षीणकषाय गुणस्थान में, **(उगुवीस)** उन्नीस; सयोगी और अयोगी गुणस्थानों में **(तियं)** तीन, तीन क्षेप हैं। **(तत्तो)** तथा चक्षुदर्शन रहित और क्षायिक सम्यक्त्व की अपेक्षा यथायोग्य, **(देसोत्ति)** मिथ्यात्वादि पाँच गुणस्थानों में **(तिदुणभछच्छक्कयं)** क्रम से तीन, दो, शून्य, छह, छह **(च)** और **(चउसुवसमगेसु)** उपशम श्रेणि के अपूर्वकरण आदि चार गुणस्थानों में **(गुणा)** गुणकार **(तालं)** चालीस, **(खेवा)** क्षेप, **(रूऊणया)** एक कम चालीस अर्थात् उनतालीस हैं।

मिच्छादिठाणभंगा अट्ठारसया हवंति तेसीदा ।
बारसया पणुवण्णा सहस्ससहिया हु पणसीदा ।।८४०।।

अन्वयार्थ - उपर्युक्त गुण्यराशि को गुणकार से गुणा करके, क्षेप रूप राशि मिलाने पर भंगों की संख्या क्रम से **(मिच्छादिठाणभंगा)** मिथ्यात्वादि गुणस्थानों में भंग, मिथ्यात्व गुणस्थान में **(अट्ठारसया)** अठारह सौ, **(तेसीदा)** तिरासी-(१८८३), **(हवंति)** होते हैं। सासादन गुणस्थान में, **(बारसया पणुवण्णा)** बारह सौ पचपन (१२५५); मिश्र गुणस्थान में, **(सहस्ससहिया हु पणसीदा)** एक हजार पचासी (१०८५) हैं।

रूवहियडवीसया सगणउदा दससया णवेणहिया ।
एक्कारसया दोण्हं खवगेसु जहाकमं वोच्छं ।।८४१।।

अन्वयार्थ - असंयत गुणस्थान में **(रूवहियडवीसाया)** अट्ठाईस सौ एक (२८०१); देशविरत गुणस्थान में **(सगणउदा दससया)** एक हजार सत्तानवे (१०९७); **(दोण्हं)** प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानों में **(णवेणहिया एक्कारसया)** ग्यारह सौ नौ (११०९-११०९) भंग हैं। **(खवगेसु)** क्षपक श्रेणी के स्थानों में **(जहाकमं)** यथाक्रम से, **(वोच्छं)** कहता हूँ।

पुव्वे पंचणियट्टी सुहुमे खीणे दहाण छव्वीसा ।
तत्तियमेत्ता दस अड छच्चदुचदु चदुय एगूणं ।।८४२।।

अन्वयार्थ - (पुव्वे) अपूर्वकरण में, **(पंचणियट्टी)** अनिवृत्तिकरण के पाँच स्थानों में, **(सुहुमे)** सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में, **(खीणे)** क्षीणकषाय गुणस्थान में क्रम से- **(एगूणं)** एक कम **(दहाण)** दस गुणे **(छव्वीसा)** छब्बीस अर्थात् (१०×२६)-१= २५९ (अपूर्वकरण में) **(तत्तियमेत्ता)** उतने मात्र अर्थात् दस गुणे (अनिवृत्तिकरण प्रथम में पुनः) (२५९) **(दस अड छच्चदुचदु चदु य)** दस, आठ, छह, चार, चार, चार होते हैं। अर्थात्

(१०×१०)-१=९९(अनिवृत्तिकरण द्वितीय) (१०×८-१)=७९ (अनिवृत्तिकरण तृतीय)
(१०×६)-१ =५९ (अनिवृत्तिकरण चतुर्थ) (१०×४)-१= ३९ (अनिवृत्तिकरण पंचम)
(१०×४)-१ =३९ (सूक्ष्म सांपराय) (१०×४)-१= ३९ (क्षीण कषाय)

उवसामगेसु दुगुणं रूवहियं होदि सत्त जोगिम्मि ।
सत्तेव अजोगिम्मि य सिद्धे तिण्णेव भंगा हु ।।८४३।।

अन्वयार्थ -(उवसामगेसु) उपशम श्रेणी के चार गुणस्थानों में **(रूवहियं दुगुणं)** क्षपक श्रेणी से एक अधिक दुगुणे भंग होते हैं। **(जोगिम्हि सत्त)** सयोगी स्थान में सात भंग, **(सत्तेव अयोगिम्हि य)** और सात भंग ही अयोगी गुणस्थान में **(होदि)** होते हैं। **(सिद्धे)** सिद्धों के, **(तिण्णेव)** तीन ही, **(भंगा हु)** भंग होते हैं।

विशेषार्थ - १) क्षपकश्रेणी में अपूर्वकरण में २५९ अनिवृत्तिकरण के पाँच भागों में क्रमसे २५९, ९९,७९,५९,३९ और सूक्ष्मसांपराय व क्षीणकषाय में ३९-३९ भंग कहें हैं। उसका दुगुणा करके एक अधिक करनेपर उपशमश्रेणी के चार गुणस्थानों के भंग आते हैं वे इसप्रकार अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के प्रथम भाग में = (२५९×२)+१=५१९ भंग हैं।

अनिवृत्तिकरण के द्वितीय भाग में = (९९×२)+१=१९९ भंग हैं।

अनिवृत्तिकरण के तृतीय भाग में = (७९×२)+१=१५९ भंग हैं।

अनिवृत्तिकरण के चतुर्थ भाग में = (५९×२)+१=११९ भंग हैं।

अनिवृत्तिकरण के पंचम भाग में = (३९×२)+१=७९ भंग हैं।

सूक्ष्म साम्पराय में = (३९×२)+१=७९ भंग हैं।

उपशान्त कषाय में = (३९×२)+१=७९ भंग हैं।

२) गुणस्थानों में कहे हुए मिश्र, औदयिक और पारिणामिक भाव के स्थानों को अक्ष संचार विधान के द्वारा भंग उत्पन्न करने के लिए क्रमसे स्थापित करे।

जैसे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में	मिश्र	औदयिक	पारिणामिक
	१०	८	जीवत्व भव्यत्व
	९	०	जीवत्व अभव्यत्व

इनमें औदयिक भाव के साथ जो भंग होते है उन्हें गुणकार समझना। औदयिक छोड़कर शेष भावों के स्थानों के द्वारा जो भंग होते हैं उन्हें क्षेप समझना।

जिससे गुणा किया जावे उसको गुणकार और जिसको मिलाया जावे उसे क्षेप कहते हैं। भावों के जो स्थान कहे हैं वे पृथक् पृथक् रूप में प्रत्येक भंग होते हैं।

यहाँ औदयिक भाव के स्थानरूप जो प्रत्येक भंग हैं वे तो गुणकार तथा शेष भावों के स्थानरूप प्रत्येक भंग क्षेपरूप जानना। इसीप्रकार द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंगों में भी औदयिक भाव के संयोग से जो द्विसंयोगी भंग बने हैं वे गुणकार रूप हैं और जहाँ औदयिक भाव का तो संयोग नहीं है अन्यभावों के संयोग से ही द्विसंयोगी आदि भंग होते हैं वे भंग क्षेपरूप जानना। गुणकाररूप भंगों से पूर्वोक्त गुणस्थानों में कही गुण्यराशि को गुणा करनेपर जो लब्ध आता है उसमें क्षेपरूप भंगों की संख्या मिलाने से भंगों का प्रमाण प्राप्त होता है। उतने ही भंग यथासम्भव भावों के बदलने से होते हैं। नीचे गुणकार भंग को समझने के लिए '×' यह चिन्ह, क्षेप के लिए '+' यह चिन्ह रखा है।

गुणस्थानों में भावों के स्थानों के भंग

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
मिथ्यात्व	मिश्र औद.पारि १० ८ भव्य ९ अभव्य	प्रत्येक भंग	औदयिक ८ का १ भंग मिश्र १०,९ के २ और भ, अभ, के २	१ गुणकार ४ क्षेप	
		द्वि संयोगी	औद.के साथ ४ भंग (१०×८) (९×८) (८×भ) (८×अ) मिश्र पारि.के ४ (१०+भ) (१०+अ) (९+भ) (९+अ)	४ गुणकार ४ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(१०×८×भ) (१०×८×अ) (९×८×भ) (९×८×अ) पूर्वोक्त गुण्य × गुणकार +क्षेप २०४×९(१+४+४)+८(४+४) १८३६ + ८	४ गुणकार	१८४४
चक्षुदर्शन रहित मिथ्यात्व	मिश्र औद.पारि ८ ८ भव्य अभव्य	प्रत्येक भंग	प्रत्येकभंग ४ होते हैं उनमें से ३ पुनरुक्त हैं मिश्रभाव का ८ का स्थान केवल अपनुरुक्त है	१ क्षेप	
		द्वि संयोगी	मिश्र ८ × औद. ८ (औद.८×भ) (औद ८×अ) ये दो पुनरुक्त हैं (मिश्र ८ + भ)(मिश्र ८+अ)	१ गुणकार २ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(८×८×भ) (८×८×अ) गुण्य × गुणकार + क्षेप (१२×३)+३ = ३६ +३ =३९	२ गुणकार	३९ / १८८३

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
सासादन	मिश्र औद. पारि १० ७ भव्य ९	प्रत्येक भंग	औदयिक ७ स्थान का १ भंग मिश्र १०, ९ के २ भंग, पारि-भव्य का एक भंग	१ गुणकार ३ क्षेप	
		द्वि संयोगी	(१०×७) (९×७) (७×भ) (१०+भ) (९+भ)	३ गुणकार २ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(१०×७×भ) (९×७×भ) गुण्य × गुणकार + क्षेप २०४ × ६ (१+३+२) + ५ (३+२) = १२२४ + ५	२ गुणकार	१२२९
चक्षुदर्शन रहित सासादन	मिश्र औद. पारि ८ ७ भव्य	प्रत्येक भंग	मिश्र ८ स्थान का १ अपु. शेष२पुनरुक्त है ऊपर बताये हैं।	१ क्षेप	
		द्वि संयोगी	(८×७) अपु. १ (७×भ) पुन. (८+भ) अपुनरुक्त १	१ गुणकार १ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(८×७×भ) गुण्य×गुण.+क्षेप (१२ × २) + २ = २६	१ गुणकार	२६ १२५५
मिश्र	मिश्र औद. पारि ११ ७ भव्य ९	प्रत्येक भंग	औदयिक ७ स्थान का १ भंग मिश्र ११, ९ स्थान के २ भंग, पारि-भव्य का एक भंग	१ गुणकार ३ क्षेप	
		द्वि संयोगी	(११×७) (९×७) (७×भ) (११+भ) (९+भ)	३ गुणकार २ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(११×७×भ) (९×७×भ) गुण्य × गुणकार + क्षेप (१८०×६)+५ = १०८०+५	२ गुणकार	१०८५

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
असंयत क्षायिक सम्यक्त्व रहित	औप मि औद.पा १ १२ ७ भ १०	प्र. भंग	औदयिक ७ स्थान का १ भंग औप १, मिश्र १२, १०, पारि-भव्य ऐसे ४ भंग	१ गुणकार ४ क्षेप	
		द्वि सं.	(औप१×औद७)+(१२×७)+(१०×७)+(७×भ) (औप१+१२) (१+१०) (१२+भ)(१०+भ) (१+भ)	४ गुणकार ५ क्षेप	
		त्रि सं.	(१×१२×७)(१×१०×७) (१×७×भ) (१२×७×भ) (१०×७×भ) औद.के साथ त्रिसंयोगी भंग शेष (१+१२+भ)(१+१०+भ)	५ गुणकार २ क्षेप	
		चतुः संयो-गी	(१×१२×७×भ) (१×१०×७×भ) गुण्य × गुणकार + क्षेप (१८० × १२) + ११ २१६० + ११	२ गुणकार	२१७१

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
असंयत क्षायिक सम्यक्त्व सहित	क्षा. मि औद.पा १ १२ ७ भ १०	प्र. भंग	क्षायिक सम्यक्त्व का १ भंग मिश्र १२, १०, औद.७, पारि-भव्य ये ४ भंग पुनरुक्त हैं	१ क्षेप	
		द्वि सं.	(१×७) अपुनरुक्त १ (१+१२) (१+१०) (१+भ) ये ३ भंग अपुनरुक्त हैं (१२×७)(१०×७)(७×भ) ये ३ भंग पुनरुक्त हैं	१ गुणकार ३ क्षेप	
		त्रि सं.	(१×१२×७)(१×१०×७) (१×७×भ) (१+१२+भ) (१+१०+भ)	३ गुणकार २ क्षेप	
		चतुः संयोगी	(१×१२×७×भ) (१×१०×७×भ) क्षायिक सम्यक्त्व सहित के चतुर्थ गुणस्थान में गुण्यभंग गुण्य × गुणकार + क्षेप (१०४ × ६) + ६ (१+३+२)(१+३+२) ६२४ + ६	२ गुणकार	६३०
					२८०१
देशसंयत क्षायिक सम्यक्त्व रहित	औप मि औद.पा १ १३ ६ भ ११	प्रत्येक भंग	औदयिक ६ स्थान का १ भंग औप १, मिश्र १३,११, पारि-भव्य ऐसे ४ भंग	१ गुणकार ४ क्षेप	
		द्वि संयोगी	(१×६) (१३×६) (११×६) (६×भ) ऐसे औद.के साथ ४ भंग(१+१३)(१+११)(१+भ)	४ गुणकार	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		द्वि संयोगी	(१३+भ)(११+भ)	५ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(१×१३×६)(१×११×६) (१३×६×भ)(११×६×भ) (१×६×भ) = ५ (१+१३+भ)(१+११+भ)=२	५ गुणकार २ क्षेप	
		चतुः संयोगी	(१×१३×६×भ)(१×११×६×भ) गुण्य × गुणकार + क्षेप (७२ × १२) + ११ ८६४ + ११	२ गुणकार	८७५
देशसंयत क्षायिक सम्यक्त्व सहित	क्षा. मि औद.पा १ १३ ६ भ ११	प्रत्येक भंग	क्षायिक १स्थानका १ भंग अपु. शेष ४ भंग १३,११,६,भ पुन. हैं अतः ग्रहण नहीं करना	१ क्षेप	
		द्वि संयोगी	(क्षा १×६) अपुनरुक्त १ (१३×६) (११×६)(६×भ)ये तीन पुनरुक्त हैं। (क्षा१+१३) (क्षा+११) (क्षा+भ) = ३ भंग	१ गुणकार ३ क्षेप	
		त्रि संयोगी	(१×१३×६) (१×११×६) (१×६×भ) (१+१३+भ) (१+११+भ)	३ गुणकार २ क्षेप	
		चतुः संयोगी	(१×१३×६×भ) (१×११×६×भ) क्षायिक देशसंयत के गुण्यभंग × गुणकार + क्षेप (३६ × ६ + ६) = २२२	२ गुणकार	२२२ १०९७

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
प्रमत्त-संयत	औप क्षा.मि औद.पा १ १ १४ ६ भ १३ १२ ११	**प्रत्येकभंग** औदयिक ६ स्थानका १ भंग गुण. औ.१, क्षा.१, मिश्र १४,१३,१२,११, पा.भ.ऐसे ७ भंग	१ गुण. ७ क्षेप	
		द्विसंयोगी भंग (औ.१×६)(क्षा.१×६)(१४×६) (१३×६)(१२×६)(११×६)(६×भ) ऐसे औदयिक के साथ ७ भंग (औप१+१४)(औप१+१३)(औप१+१२) (औप१+११)(औप१+भ)(क्षा१+१४) (क्षा१+१३)(क्षा१+१२)(क्षा१+११) (क्षा१+भ)(१४+भ)(१३+भ) (१२+भ)(११+भ) = १४ भंग क्षेप	 ७ गुण १४ क्षेप	
		त्रिसंयोगी भंग औदयिक के साथ(औप१×१४×६) (औप१×१३×६)(औप१×१२×६) (औप१×११×६) (औप१×६×भ) (क्षा१×१४×६) (क्षा×१३×६) (क्षा×१२×६) (क्षा×११×६) (क्षा×६×भ) (१४×६×भ) (१३×६×भ)(१२×६×भ) (११×६×भ)=१४ भंग गुणकार. (औप+१४+भ) (औप+१३+भ) (औप+१२+भ) (औप+११+भ) (क्षा+१४+भ)(क्षा+१३+भ) (क्षा+१२+भ)(क्षा+११+भ)= ८ भंग	 १४ गुण. ८ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
प्रमत्त-संयत	औप क्षा.मि औद.पा १ १ १४ ६ भ १३ १२ ११	औपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्य. एकसाथ एक जीव के नहीं पाये जाते अत: दोनों के संयोग से भंग नहीं होते **चतु:संयोगी भंग** (औप१×१४×६×भ)(औप१×१३×६×भ)(औप१×१२×६×भ)(औप१×११×६×भ)(क्षा×१४×६×भ)(क्षा×१३×६×भ) (क्षा×१२×६×भ)(क्षा×११×६×भ) = ८ भंग औपशमिक और क्षायिक का संयोग न होने से पंचसंयोगी भंग नहीं हैं। प्रमत्त के गुण्यभंग × गुणकार + क्षेप (३६ × ३०) + २९ १०८० + २९ = ११०९	८ गुण	११०९
अ प्रमत्त-संयत	औप क्षा.मि औद.पा १ १ १४ ६ भ १३ १२ ११	इसके सर्वभंग छठे गुणस्थान के समान जानना।		११०९
क्षपक अपूर्व करण	क्षा. मि औद. पारि २ १२ ६ भ ११ १० ९	**प्रत्येक भंग** औदयिक ६ स्थान का १ भंग गुणकार क्षा २, मिश्र १२,११,१०,९ पारि-भ ऐसे ६ भंग क्षेपरूप	१ गुण. ६ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
क्षपक-अपूर्व करण	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ६ भ ११ १० ९	**द्विसंयोगी भंग** (२×६)(१२×६)(११×६)(१०×६) (९×६)(६×भ) ऐसे औदयिक के साथ ६ भंग गुणकार रूप (२+१२)(२+११)(२+१०)(२+९) (२+भ) (१२+भ)(११+भ)(१०+भ) (९+भ) = ९ भंग क्षेप	६ गुण. ९ क्षेप	
		त्रिसंयोगी भंग औदयिक के साथ(२×१२×६) (२×११×६)(२×१०×६)(२×९×६) (२×६×भ)(१२×६×भ)(११×६×भ) (१०×६×भ)(९×६×भ)=९ भंग गुण. शेष (२+१२+भ) (२+११+भ) (२+१०+भ) (२+९+भ)= ४ क्षेप	९ गुण ४ क्षेप	
		चतुःसंयोगी भंग (२×१२×६×भ) (२×११×६×भ)(२×१०×६×भ) (२×९×६×भ) = ४ भंग गुणकार. अपूर्वकरण के गुण्यभंग × गुण.+ क्षेप १२ × २० (१+६+९+४) + १९ (६+९+४) = २४० + १९	४ गुण.	२५९
क्षपक अनि-वृत्ति सवेद भाग	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ६ भ ११ १० ९	**प्रत्येकादि भंग** क्षपक अपूर्वकरण के समान इसके सर्व भंग जानना।		२५९

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
अनि-वृत्ति अवेद भाग	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ५ भ ११ १० ९	**प्रत्येकादि भंग** इसके भी सर्वभंग अपूर्वकरण क्षपक के समान है किन्तु वहाँ औदयिक का ६ का स्थान हैं यहाँ उसकी जगह ५ का समझना। गुणकार २० और क्षेप १९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (४ × २०) + १९ = ८० + १९		९९
अनि-वृत्ति क्रोध रहित भाग	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँपर भी अवेदभाग के समान जानना यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (३ × २०) + १९ ६० + १९		७९
क्षपक अनि-वृत्ति मानरहित भाग	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ५ भ ११ १० ९	इसके भी प्रत्येकादि भंग अवेदभाग के समान है। किन्तु यहाँ गुण्यभंग २ है। (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (२ × २०) + १९ = ४० + १९		५९
क्षपक अनि-वृत्ति मायारहित भाग	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ५ भ ११ १० ९	इसके भी प्रत्येकादि भंग अवेदभाग के समान है। किन्तु यहाँ गुण्यभंग १ है। (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१ × २०) + १९ = २० + १९		३९
क्षपक सूक्ष्म-सांपराय	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ५ भ ११ १० ९	इसके भी प्रत्येकादि भंग उपर्युक्त गुण. २० और क्षेप १९। यहाँ सूक्ष्मलोभ का उदय लेना (गुण्यभंग × गुणकार)+क्षेप (१ × २०) + १९ = २० + १९		३९

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
क्षीण-मोह	क्षा.मि औद.पारि २ १२ ४ भ ११ १० ९	यहाँ भी प्रत्येकादि भंग उपर्युक्त जानना विशेष यह है कि औदयिक के ५ के स्थानपर ४ का स्थान लेना यहाँ गुण्यभंग × गुणकार + क्षेप (१ × २०) + १९ = २० + १९		३९
सयोग केवली	क्षा. औद.पारि ९ ३ भ	**प्रत्येक भंग** औदयिक ३ स्थान का १ भंग गुणकार क्षा.९,पा-भ ये दो भंग क्षेपरूप **द्वि संयोगी भंग** औद.के साथ(क्षा९×३)(३×भ)=२ भंग शेष(क्षा९+भ) = १ भंग **त्रिसंयोगी भंग** (क्षा९×३×भ) = १ भंग यहाँ गुण्यभंग × गुणकार + क्षेप (१× ४) + ३	१ गुण २ क्षेप २ गुण. १ क्षेप १ गुण.	७
अयोग केवली	क्षा. औद. पारि ९ २ भ	**प्रत्येक भंग** औदयिक २ स्थान का १ भंग गुणकार क्षा.९,पा-भ ये दो भंग क्षेपरूप **द्वि संयोगी भंग** औद.के साथ(क्षा९×२)(२×भ)=२ भंग शेष(क्षा९+भ) = १ भंग **त्रिसंयोगी भंग** (क्षा९×२×भ) = १ भंग यहाँ गुण्यभंग × गुणकार + क्षेप (१ × ४) + ३	१ गुण २ क्षेप २ गुण. १ क्षेप १ गुण.	७

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
अपूर्व	औप क्षा.मि औद.पा	**प्रत्येक भंग**		
करण	२ १ १२ ६ भ	औदयिक ६ का एक भंग	१ गुण.	
उप-	११	शेष औप२,क्षा१,मि१२,मि११,मि१०,		
शमक	१०	मि९, पा-भ ऐसे ७ भंग	७ क्षेप	
	९	**द्विसंयोगी भंग**		
		(औप×६)(क्षा×६)(१२×६)(११×६)		
		(१०×६)(९×६)(६×भ) ऐसे औद.		
		के साथ ७ भंग गुणकार रूप	७ गुण	
		(औप२+क्षा१)(२+१२)(२+११)		
		(२+१०)(२+९)(२+भ) (१+१२)		
		(१+११)(१+१०)(१+९)(१+भ)		
		(१२+भ) (११+भ)(१०+भ)(९+भ)		
		= १५ भंग क्षेप	१५ क्षेप	
		त्रिसंयोगी भंग		
		(२×१×६)(२×१२×६)(२×११×६)		
		(२×१०×६)(२×९×६)(२×६×भ)		
		(१×१२×६)(१×११×६)(१×१०×६)		
		(१×९×६)(१×६×भ)(१२×६×भ)		
		(११×६×भ)(१०×६×भ)(९×६×भ)		
		= १५ भंग गुण.	१५ गुण.	
		(२+१+१२)(२+१+११)(२+१+१०)		
		(२+१+९)(२+१+भ) (१+१२+भ)		
		(१+११+भ)(१+१०+भ)(१+९+भ)		
		(२+१२+भ)(२+११+भ)(२+१०+भ)		
		(२+९+भ) = १३ भंग क्षेप	१३ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
अपूर्व करण उप- शमक	औप क्षा.मि औद.पा २ १ १२ ६ भ ११ १० ९	**चतु:संयोगी भंग** (२×१×१२×६)(२×१×११×६) (२×१×१०×६)(२×१×९×६) (२×१२×६×भ)(२×११×६×भ) (२×१०×६×भ)(२×९×६×भ) (१×१२×६×भ)(१×११×६×भ) (१×१०×६×भ)(१×९×६×भ) (२×१×६×भ)= १३ भंग गुण. (२+१+१२+भ)(२+१+११+भ) (२+१+१०+भ)(२+१+९+भ)=४ भंग **पंचसंयोगी भंग** (२×१×१२×६×भ)(२×१×११×६×भ) (२×१×१०×६×भ)(२×१×९×६×भ) यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१२ × ४०(१+७+१५+१३+४)) + ३९ (७+१५+१३+४)= ४८०+३९	१३ गुण ४ क्षेप ४ गुण.	५१९
अनि उप शमक सवेद भाग	औप क्षा.मि औद.पा २ १ १२ ६ भ ११ १० ९	यहाँपर अपूर्व उपशमक के समान प्रत्येकादि भंग होते हैं। गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१२ × ४०) + ३९ = ४८०+३९		५१९
अनि उप शमक अवेद भाग	औप क्षा.मि औद.पा २ १ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँ भी प्रत्येकादि भंग के गुणकार ४० और क्षेप ३९ हैं विशेष यह है कि औद. के ६ के स्थानपर ५ का स्थान समझना यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (४ × ४०) + ३९ = १६०+३९		१९९

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
अनि उपशम क्रोध रहित भाग	औप क्षा.मि औद.पा . २ १ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँ भी पूर्वोक्त गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (३ × ४०) + ३९ = १२० + ३९		१५९
अनि उपशम मान रहित भाग	औप क्षा.मि औद.पा . २ १ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँ भी पूर्वोक्त ही प्रत्येकादि भंग है गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (२ × ४०) + ३९ = ८०+३९		११९
अनि उपशम माया रहित भाग	औप क्षा.मि औद.पा . २ १ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँ भी पूर्वोक्त ही प्रत्येकादि भंग है गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१ × ४०) + ३९ = ४०+३९		७९
सूक्ष्म सांप राय उप शमक	औप क्षा.मि औद.पा २ १ १२ ५ भ ११ १० ९	यहाँ भी पूर्वोक्त ही प्रत्येकादि भंग है गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१ × ४०)+ ३९ = ४०+३९		७९
उप शांत कषाय	औप क्षा.मि औद.पा २ १ १२ ४ भ ११ १० ९	यहाँ औद. ५ के स्थानपर ४ का स्थान जानना। शेष पूर्वोक्त के समान गुणकार ४० और क्षेप ३९ यहाँ (गुण्यभंग × गुणकार) + क्षेप (१ × ४०) + ३९ = ४०+३९		७९

उपशमश्रेणिपर औपशमिक चारित्र और क्षायिक सम्यक्त्व ये दो भाव एकसाथ एक जीव के पाये जा सकते हैं अत: यहाँपर औपशमिक और क्षायिक के द्विसंयोगी भंग बनते हैं पंचसंयोगी भी भंग होते हैं।

सिद्ध	क्षायिक पारि ५ जी	**प्रत्येक भंग २** १) क्षा ५ २) पा-जी **द्वि संयोगी भंग १** (क्षा५+जी)	२ क्षेप १ क्षेप	३

अब पदगत भंगों का कथन करते हैं -

दुविहा पुण पदभंगा जादिगपदसव्वपदभवात्ति हवे ।
जातिपदखयिगमिस्से पिंडेव य होदि सगजोगो ।।८४४।।

अन्वयार्थ - (पुण पदभंगा) पदगत भंग **(दुविहा)** दो प्रकार के हैं, **(जादिगपदसव्वपद भवात्ति)** जातिगत पद और सर्व पद भंग ये भेद **(हवे)** होते हैं। **(जातिपदखयिग मिस्से)** इनमें जाति पद रूप क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव के **(पिंडेव य)** पिंडस्वरूप भावों में **(सगजोगो)** स्व संयोगी भंग भी **(होदि)** होते हैं।

विशेषार्थ - पदभंग दो प्रकार के हैं - १) जातिपदभंग २) सर्वपदभंग

१) जातिपदभंग - जहाँ एक जाति का ग्रहण कर उसके भंग किये जाते हैं उसे जातिपदभंग समझना। जैसे क्षायोपशमिक ज्ञान के चार भेद होनेपर भी एक ज्ञानजाति का ही ग्रहण करना।

२) सर्वपदभंग - जहाँ पृथक् पृथक् सम्पूर्ण भावों का ग्रहण किया जाता है उनको सर्वपदभंग समझना चाहिए। जैसे क्षायोपशमिक ज्ञान के चार भेदों को पृथक् पृथक् ग्रहण कर उनके भंग करना।

इनमें जातिपदस्वरूप क्षायिक और क्षायोपशमिकभाव के पिण्डपदस्वरूप भावों में स्वसंयोगी भंग भी होते हैं। क्षायिकभावों में लब्धि के पाँच भेद हैं और क्षायोपशमिक भावों में ज्ञान, अज्ञान, दर्शन और लब्धि ये पिण्डपदरूप हैं क्योंकि इनके अनेक भेद हैं जैसे क्षायिकदान और क्षायिकलाभ इनका संयोग यह स्वसंयोगी भंग है। मतिज्ञान और श्रुतज्ञान का संयोग इ.।

अयदुवसमगचउक्के एक्कं दो उवसमस्स जातिपदो ।
खइयपदं तत्थेक्कं खवगे जिणसिद्धगेसु दुपणचदू ।।८४५।।

अन्वयार्थ - (उवसमस्स जातिपदो) औपशमिक भाव के जाति पद **(अयदुवसमग चउक्के)** असंयतादि चार गुणस्थानों में और उपशम श्रेणी सम्बन्धी चार गुण स्थानों में, क्रम से **(एक्कं दो)** एक और दो पद हैं। **(खइयपदं)** क्षायिक भाव के जातिपद, असंयत आदि चार गुणस्थानों में **(तत्थेक्कं)** क्षायिक सम्यक्त्व रूप एक **(खवगे)** क्षपक श्रेणी के चार गुणस्थानों में **(दु)** सम्यक्त्व और चारित्र रूप दो पद हैं। **(जिणसिद्धगेसु)** सयोग व अयोगि केवली गुणस्थानों में **(पण)** पाँच- सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लब्धि, तथा **(चदु)** सिद्धों में चार-सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, लब्धि जाति पद जानना।

मिच्छतिए मिस्सपदा तिण्णि य अयदम्मि होंति चत्तारि ।
देसतिये पंचपदा तत्तो खीणोत्ति तिण्णि पदा ।।८४६।।

अन्वयार्थ - (मिस्सपदा) क्षायोपशमिक भाव के जाति पद, **(मिच्छतिए)** मिथ्यात्वादि तीन गुणस्थानों में, **(तिण्णि)** तीन-तीन होते हैं, **(य)** और **(अयदम्मि)** असंयत गुणस्थान में, **(चत्तारि)** चार **(होंति)** होते हैं। **(देसतिये)** देशसंयत आदि तीन गुणस्थानों में, **(पंच पदा)** पाँच जाति पद होते हैं। **(तत्तो)** उसके आगे, **(खिणोत्ति)** क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यंत, **(तिण्णि पदा)** तीन जाति पद हैं।

मिच्छे अट्ठुदयपदा तो तिसु सत्तेव तो सवेदोत्ति ।
छस्सुहुमोत्ति य पणगं खीणोत्ति जिणेसु चदुतिदुगं ।।८४७।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में, **(अट्ठुदय पदा)** औदयिक भाव के आठ जाति पद हैं, अर्थात् गति, कषाय, लिंग, लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम और असिद्धत्व रूप ८ पद हैं **(तो)** उससे आगे **(तिसु)** तीन गुणस्थानों में अर्थात् सासादन, मिश्र, असंयत में **(सत्तेव)** सात ही (मिथ्यात्व रहित) हैं। **(तो)** उससे आगे, **(सवेदोत्ति)** देशसंयत से अनिवृत्तिकरण के सवेद भाग तक **(छस्सुहमोत्ति)** छह जाति पद (असंयम बिना) तथा अवेद भाग से सूक्ष्म सांपराय गुणस्थान पर्यंत (वेदरहित), **(पणगं)** पाँच जातिपद हैं। **(खीणोत्ति)** आगे क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यंत (कषाय रहित) **(चदु)** चार

जाति पद हैं। **(तिदुगं जिणेसु)** सयोगि केवली (अज्ञान बिना) तीन और अयोगी केवली में (लेश्या बिना) दो जाति पद हैं।

मिच्छे परिणामपदा दोणि य सेसेसु होदि एक्कं तु ।
जातिपदं पडि वोच्छं मिच्छादिसु भंगपिंडं तु ।।८४८।।

अन्वयार्थ - (परिणाम पदा) पारिणामिक भाव के जाति पद, **(मिच्छे)** मिथ्यात्व गुणस्थान में **(दोण्णि य)** दो ही है। **(सेसेसु तु)** किन्तु शेष गुणस्थानों में **(एक्कं होदि)** एक जातिपद ही होता है। **(जातिपदं पडि)** जाति पद की अपेक्षा, **(मिच्छादिसु)** मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानों में **(भंगपिंडं तु वोच्छं)** भंगों का समुदाय कहूँगा।

किस भाव के कितने जातिपद है यह बतानेवाला कोष्टक -

मूलभाव	जातिपद भावों की संख्या	जातिपद भाव
औपशमिक	२	१) सम्यक्त्व २) चारित्र
क्षायिकभाव	५	१) ज्ञान २) दर्शन ३) लब्धि ४) सम्यक्त्व ५) चारित्र
क्षायोपशमिक	७	१) ज्ञान २) अज्ञान ३) दर्शन ४) लब्धि ५) सम्यक्त्व ६) देशसंयम ७) सरागचारित्र
औदयिक	८	१) गति २) कषाय ३) लिंग ४) मिथ्यात्व ५)अज्ञान ६) असंयम ७) असिद्धत्व ८) लेश्या
पारिणामिक	३	१) भव्यत्व २) अभव्यत्व ३) जीवत्व

पाँच मूलभावों के ५३ उत्तरभावों में से जातिपदरूपभावों का गुणस्थानापेक्षा कोष्टक

मूलभाव	जातिपद भावों की संख्या	जातिपद भाव	गुणस्थान
औपशमिक	१	उपशम सम्यक्त्व	४ से ७ गुणस्थानतक
औपशमिक	२	उपशम सम्यक्त्व,उपशमचारित्र	उपशमश्रेणी में ८ से ११ तक
क्षायिकभाव	१	क्षायिक सम्यक्त्व	४ से ७ गुणस्थानपर्यंत
क्षायिकभाव	२	क्षा. सम्यक्त्व,क्षा.चारित्र	क्षपकश्रेणी में ८,९,१०,१२ गुणस्थान
क्षायिकभाव	५	क्षा. सम्यक्त्व,क्षा. ज्ञान, क्षा. दर्शन,क्षा.चारित्र,क्षा.लब्धि	१३ और १४ गुणस्थान में
क्षायिकभाव	४	क्षा.सम्यक्त्व, ज्ञान,दर्शन,लब्धि	सिद्धों में
क्षायोप-शमिक	३	अज्ञान, दर्शन, लब्धि	१ और २ गुणस्थान में
	३	ज्ञान, दर्शन, लब्धि	तीसरे गुणस्थान में
	४	ज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व	चौथे गुणस्थान में
	५	ज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, देशसंयम	पाँचवे गुणस्थान में
	५	ज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, सरागचारित्र	६-७ गुणस्थान में
	३	ज्ञान, दर्शन, लब्धि	८ से १२ गुणस्थानपर्यंत

मूलभाव	जातिपद भावों की संख्या	जातिपद भाव	गुणस्थान
औदयिक-भाव	८	गति, कषाय, लिंग, मिथ्यात्व, अज्ञान,असंयम,लेश्या,असिद्धत्व	प्रथम गुणस्थान में
	७	उपर्युक्त ८-१ मिथ्यात्व	२,३,४ गुणस्थान में
	६	उपर्युक्त ७-१ असंयम	५,६,७,८,९ सवेदपर्यंत
	५	उपर्युक्त ६-१ वेद	९ अवेद और १०वें गुणस्थान
	४	उपर्युक्त ५-१ कषाय	११ और १२ गुणस्थान में
	३	गति, लेश्या, असिद्धत्व	१३ वें गुणस्थान में
	२	गति, असिद्धत्व	१४ वें गुणस्थान में
पारिणामिक भाव	२	भव्यत्व, अभव्यत्व	प्रथम गुणस्थान में
	१	भव्यत्व	२ रे से १४ वें गुणस्थानपर्यंत
	१	जीवत्व	सिद्धों में

आगे गुण्य-गुणकार व क्षेप तथा इन तीनों की अपेक्षा होने वाले भंगों को ७ गाथाओं में कहते हैं -

अट्ठगुणिज्जा वामे तिसु सग छच्चउसु छक्क पणगं च।
थूले सुहुमे पणगं दुसु चउ तियदगुमदो सुण्णं ।।८४९।।

अन्वयार्थ - (गुणिज्जा) जिनको गुणा जावे ऐसे गुण्य, **(वामे)** मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में, **(अट्ठ)** आठ; **(तिसु)** सासादन, मिश्र और असंयत में **(सग)** सात-सात; **(छच्चदसु)** देशसंयतादि चार में छह; **(थूले)** अनिवृत्तिकरण में **(छक्क पणगं च)** छह और पाँच, **(सुहुमे)** सूक्ष्म साम्पराय में **(पणगं)** पाँच **(दसु)** उपशान्त कषाय और क्षीण कषाय में **(चदु)** चार, **(तिय दगुमदो)** सयोग केवली में तीन, अयोग केवली में दो **(सुण्णं)** सिद्धों में शून्य जानना।

बारट्ठट्ठ छव्वीसं तिसु तिसु बत्तीसयं च चउवीसं ।
तो तालं चउवीसं गुणगारा बार बार णभं ।।८५०।।

अन्वयार्थ - (गुणगारा) गुणकार-जिनसे गुणा किया जाये, **(बारट्ठट्ठ छव्वीसं)** मिथ्यात्व गुणस्थान में-(बारह) १२; सासादन और मिश्र में (आठ-आठ) ८-८, असंयत में (छब्बीस) २६, **(तिसु)** देशसंयत आदि तीन में, **(बत्तीसयं)** (बत्तीस-बत्तीस) ३२-३२; **(च)** और **(तिसु)** क्षपक श्रेणी के तीन में **(चउवीसं)** (चौबीस) २४, **(तालं)** (चालीस) ४० उपशमक के चार गुणस्थानों में, क्षीण कषाय में **(चउवीसं)** (चौबीस) २४; **(बार बार णभं)** सयोगी में बारह, अयोगी में बारह और सिद्धों में शून्य गुणकार होते हैं।

वामे चउदस दुसु दस अडवीसं तिसु हवंति चोत्तीसं ।
तिसु छव्वीस दुदालं खेवा छव्वीस बार बारणवं ।।८५१।।

अन्वयार्थ - (खेवा) क्षेप-जिनको मिलाया जावे; **(वामे)** मिथ्यात्व में, **(चदुदस)** चौदह, **(दुसु)** सासादन और मिश्र में, **(दस)** दस,दस; असंयत में **(अडवीसं)** अट्ठाईस; **(तिसु)** देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त में **(चोत्तीसं)** (चौतीस-चौतीस) ३४-३४ **(हवंति)** होते हैं। **(तिसु)** क्षपक अपूर्वकरणादि तीन में **(छब्बीस)** (छब्बीस-छब्बीस) २६-२६; उपशमक-अपूर्वकरणादि चार में, **(दुदालं)** (बियालीस-बियालीस) ४२-४२; क्षीण कषाय में **(छब्बीस)** (छब्बीस) २६, **(बार बार णवं)** सयोगी में (बारह) १२, अयोगी में (बारह) १२, सिद्धों में **(णवं)** (नौ) ९ क्षेप होते हैं।

एक्कारं दसगुणियं दुसु छावट्ठि दसाहियं विसयं ।
तिसु छव्वीसं विसयं वेदुवसामोत्ति दुसयबासीदी ।।८५२।।

अन्वयार्थ - (एक्कारं दस गुणिदं) ग्यारह गुणित दस अर्थात् ११०, मिथ्यात्व गुणस्थान में, **(दुसु)** सासादन और मिश्र में, **(छावट्ठी)** (छयासठ) ६६-६६, **(दसाहियं बिसदं)** असंयत में (दो सौ दस) २१०; **(तिसु)** देशसंयत, प्रमत्त **और** अप्रमत्त संयतों में, **(छव्वीस बिसदं)** (दो सौ छब्बीस)२२६-२२६; **(वेदुवसामोत्ति)** उपशमक के सवेद भाग तक, **(दुसय बासीदि)** (दो सौ बयासी) २८२-२८२;

बादालं बिण्णिसया तत्तो सुहुमोत्ति दुसय दोसहियं।
उवसंतम्मि य भंगा खवगेसु जहाकमं वोच्छं ।।८५३।।

अन्वयार्थ - (तत्तो) इसके बाद, उपशमक के अवेद भाग से **(सुहुमोत्ति)** सूक्ष्म सांपराय तक **(बादालं बिण्णिसया)** दो सौ बयालीस २४२, **(उवसंतम्मि)** उपशान्त कषाय में, **(दुसय दोसहिदं)** दो सौ दो २०२ **(च भंगा)** भंग होते हैं। **(खवगेसु)** क्षपक के गुणस्थानों में, **(जहाकमं)** यथा क्रम से **(वोच्छं)** कहूँगा।

सत्तरसं दसगुणिदं वेदित्ति सयाहियं तु छादालं।
सुहुमोत्ति खीणमोहे बावीससयं हवे भंगा ।।८५४।।

अन्वयार्थ - क्षपक-अपूर्वकरण से अनिवृत्तिकरण के **(वेदित्ति)** सवेद भाग तक, **(सत्तरसं दसगुणिदं)** दस गुणित सतरह अर्थात् एक सौ सत्तर १७०, **(सुहुमोत्ति)** अनिवृत्तिकरण के अवेद भाग से सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान तक **(सयाहियं तु छादालं)** (एक सौ छियालीस) १४६, **(खीणमोहे)** क्षीणमोह गुणस्थान में **(बावीससयं)** (एक सौ बाईस) १२२ **(भंगा हवे)** भंग होते हैं।

अडदालं छत्तीसं जिणेसु सिद्धेसु होंति णव भंगा ।
एत्तो सव्वपदं पडि मिच्छादिसु सुणुह वोच्छामि ।।८५५।।

अन्वयार्थ - (जिणेसु) सयोगी में **(अडदालं)** (अडतालीस) ४८, अयोगी में **(छत्तीसं)** (छत्तीस) ३६,**(सिद्धेसु)** सिद्धों में **(णव भंगा)** नौ भंग, **(हवंति)** होते हैं। **(एत्तो)** इस प्रकार जातिपद भंगों का कथन करके **(मिच्छादिसु)** मिथ्यादृष्टि आदि गुण स्थानों में **(सव्वपदं पडि)** सर्व पद भंगों को **(वोच्छामि)** मैं कहता हूँ, **(सुणह)** तुम सुनो।

विशेषार्थ - प्रत्येक गुणस्थान में औदयिक भावों के जितने जातिपद होते हैं उतने गुण्य समझना। गुणकार व क्षेप निकालने के लिए मिश्रादिभावों के जितने जातिपद हो उतने भेद ग्रहण करना। किन्तु औदयिक का जातिपद का समूहरूप एक ही भेद ग्रहण करना। प्रत्येक भंग में औदयिक का भेद तो गुणकाररूप जानना। तथा अन्य भावों के भेद क्षेपरूप जानना।

गुणस्थान	गुण्य	गुणकार	क्षेप	कुल जाति भंग
१ मिथ्यादृष्टि	८ ×	१२ = ९६ +	१४	= ११०
२ सासादन	७ ×	८ = ५६ +	१०	= ६६
३ मिश्र	७ ×	८ = ५६ +	१०	= ६६
४ असंयत	७ ×	२६ = १८२ +	२८	= २१०
५ देशसंयत	६ ×	३२ = १९२ +	३४	= २२६
६ प्रमत्त	६ ×	३२ = १९२ +	३४	= २२६
७ अप्रमत्त	६ ×	३२ = १९२+	३४	= २२६
८ उपशमक-अपूर्वकरण	६ ×	४० = २४० +	४२	= २८२
९ उपशमक-अनिवृत्ति.	६ ×	४० = २४० +	४२	= २८२(सवेद तक)
१० उपशमक-सूक्ष्म सांप.	५ ×	४० = २०० +	४२	= २४२ (अवेद से)
११ उपशमक-उपशान्त	४ ×	४० = १६० +	४२	= २०२
८ क्षपक-अपूर्वकरण	६ ×	२४ = १४४ +	२६	= १७०(सवेद तक)
९ क्षपक-अनिवृत्तिकरण	५ ×	२४ = १२० +	२६	= १४६ (अवेद)
१० क्षपक-सूक्ष्म सांपराय	५ ×	२४ = १२० +	२६	= १४६
१२ क्षपक-क्षीण मोह	४ ×	२४ = ९६ +	२६	= १२२
१३ सयोगी	३ ×	१२ = ३६ +	१२	= ४८
१४ अयोगी	२ ×	१२ = २४ +	१२	= ३६
सिद्ध	० ×	० = ० +	९	= ९

दोसंयोगी आदि भंगों में औदयिक संयुक्त भंगों को गुणकार जानना। तथा औदयिक बिना अन्य भावों के संयोग से जो दोसंयोगी आदि भंग हों उन्हें क्षेपरूप जानना। क्षायिक या मिश्र के एक जातिपद के भेद में उसीके अन्य भेद जहाँ सम्भव हों वहाँ स्वसंयोगी भंग होते हैं उन्हें क्षेपरूप जानना। इसप्रकार गुण्य को गुणकार से गुणा करके क्षेप को जोड़ने पर जितने हों उतने भंग जानना। द्विसंयोगादि भंग लिखते समय जातिपद भावों का केवल प्रथम अक्षर लिखा है। गुणकार रूप भंगों के बीच में '×' ऐसा चिन्ह है क्षेप के लिए '+' ऐसा चिन्ह लिखा है।

गुणस्थानों की अपेक्षा से जातिपद भावों के भंगों का कोष्टक

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
मिथ्यात्व	मिश्र औद. पारि	औदयिक के जातिपद	८ गुण्य	
	अज्ञान ८ भव्य	**प्रत्येकभंग**		
	दर्शन अभव्य	औदयिक ८	१ गुण.	
	लब्धि	अज्ञान,दर्शन,लब्धि,भव्य, अभव्य	५ क्षेप	
		द्विसंयोगी भंग		
		(अ×८) (दर्शन×८) (ल×८)	५ गुण.	
		(भ×८) (अभ×८)		
		(अ+भ)(द+भ)(ल+भ)	६ क्षेप	
		(अ+अभ)(द+अभ)(ल+अभ)		
		त्रिसंयोगी भंग		
		(अ×८×भ)(द×८×भ)		
		(ल×८×भ)(अ×८×अभ)		
		(द×८×अभ)(ल×८×अभ)	६ गुण.	
		स्वसंयोगी भंग		
		(अ+अ)(द+द)(ल+ल)	३ क्षेप	
		गुण्य × गुणकार + क्षेप		
		८ × १२ (१+५+६)		
		+१४(५+६+३) = ९६ + १४		११०
सासादन	मिश्र औद. पारि	औदयिक के जातिपद	७ गुण्य	
	अज्ञान ७ भव्य	**प्रत्येकभंग**		
	दर्शन	औदयिक ७	१ गुण.	
	लब्धि	अज्ञान, दर्शन, लब्धि, भव्य,	४ क्षेप	
		द्विसंयोगी भंग		
		(अ×७)(द×७) (ल×७)(भ×७)	४ गुण.	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		(अ+भ)(द+भ)(ल+भ) **त्रिसंयोगी भंग** (अ×७×भ)(द×७×भ) (ल×७×भ) **स्वसंयोगी भंग** (अ+अ)(द+द)(ल+ल) गुण्य × गुणकार + क्षेप ७ × ८ (१+४+३) +१० (४+३+३) = ५६ + १०	३ क्षेप ३ गुण. ३ क्षेप	६६
मिश्र	मिश्र औद. पारि ज्ञान ७ भव्य दर्शन लब्धि	सासादन गुणस्थान के समान ही भंग जानना। इतना विशेष है कि अज्ञान के स्थानपर मिश्र ज्ञान लेना गुण्य ७ × गुणकार ८ + क्षेप १०		६६
असंयत	औप क्षा. मिश्र सम्य. सम्य. ज्ञान (स) दर्शन लब्धि वे.सम्य. औद पारि ७ भव्य	औदयिक के जातिपद ७ **प्रत्येकभंग** औदयिक ७ औप.सम्य.,क्षा.सम्य.,ज्ञान, दर्शन, लब्धि, वेदक सम्यक्त्व, भव्य **द्विसंयोगी भंग** (सम्य×७)(स×७)(ज्ञा×७) (द×७)(ल×७)(वे.स×७)(भ×७) (सम्य+ज्ञा)(सम्य+द)(सम्य+ल) (सम्य+भ)(स+ज्ञा)(स+द) (स+ल)(स+भ)(ज्ञा+भ)(द+भ) (ल+भ) (वे.स+भ)	७ गुण्य १ गुण. ७ क्षेप ७ गुण. १२ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		त्रिसंयोगी भंग (सम्य×ज्ञा×७)(सम्य×द×७) (सम्य×ल×७) (सम्य×भ×७) (स×ज्ञा×७)(स×द×७) (स×ल×७)(स×भ×७) (वे.स×भ×७)(ज्ञा×भ×७) (द×भ×७)(ल×भ×७) (सम्य+ज्ञा+भ)(सम्य+द+भ) (सम्य+ल+भ)(सम्य+ज्ञा+भ) (स+द+भ)(स+ल+भ) **चतु:संयोगी भंग** (सम्य×ज्ञा×भ×७)(सम्य×द×भ ×७)(सम्य×ल×भ×७)(सम्य×ज्ञा ×भ×७)(स×द×भ×७)(स×ल× भ×७) **स्वसंयोगी भंग** (ज्ञा+ज्ञा)(द+द)(ल+ल) गुण्य × गुणकार + क्षेप ७ × २६ (१+७+१२+६) + २८ (७+१२+६+३) = १८२ + २८	१२ गुण. ६ क्षेप ६ गुण. ३ क्षेप	२१०

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
देशसंयम	औप क्षा. मिश्र	औदयिक के जातिपद ६	६ गुण्य	
	सम्य. स. ज्ञान	**प्रत्येकभंग**		
	दर्शन	औदयिक ६	१ गुण.	
	लब्धि	सम्य.,क्षा.स.,ज्ञान, दर्शन, लब्धि,		
	वे.सम्य.	वेदक सम्यक्त्व, देशचारित्र, भव्य	८ क्षेप	
	देशचारित्र	**द्विसंयोगी भंग**		
	औद पारि	(सम्य×६)(स×६)(ज्ञा×६)(द×६)		
	६ भव्य	(ल×६)(वे.स×६)(चा×६)(भ×६)	८ गुण.	
		(सम्य+ज्ञा)(सम्य+द)(सम्य+ल)		
		(सम्य+चा)(सम्य+भ)(स+ज्ञा)		
		(स+द)(स+ल)(स+चा)(स+भ)		
		(वे.स+भ)(ज्ञा+भ)(द+भ)		
		(ल+भ) (चा+भ)	१५ क्षेप	
		त्रिसंयोगी भंग		
		(औपसम्य×ज्ञा×६)(औपसम्य×द×६)		
		(औपसम्य×ल×६)(औपसम्य×चा×६)		
		(औपसम्य×भ×६)(स×ज्ञा×६)		
		(स×द×६)(स×चा×६)(स×ल×६)		
		(स×भ×६)(वे.स×भ×६)		
		(ज्ञा×भ×६)(द×भ×६)		
		(ल×भ×६)(चा×भ×६)	१५ गुण.	
		(सम्य+ज्ञा+भ)(सम्य+द+भ)		
		(सम्य+ल+भ)(सम्य+चा+भ)		
		(स+ज्ञा+भ)(स+द+भ)		
		(स+ल+भ)(स+चा+भ)	८ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के स्थान	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		चतु:संयोगी भंग (सम्य×ज्ञा×भ×६)(सम्य×द×भ×६) (सम्य×ल×भ×६)(सम्य×चा×भ×६) (स×ज्ञा×भ×६)(स×द×भ×६) (स×ल×भ×६) (स×चा×भ×६) **स्वसंयोगी भंग** (ज्ञा+ज्ञा)(द+द)(ल+ल) गुण्य × गुणकार + क्षेप ६ × ३२ (१+८+१५+८) + ३४ (८+१५+८+३) = १९२ + ३४	८ गुण. ३ क्षेप	२२६
प्रमत्त-संयम और अप्रमत्त संयम	औप क्षा. मिश्र सम्य. स ज्ञान दर्शन लब्धि वे.सम्य. सकलचारित्र औद पारि ६ भव्य	देशसंयत के समान ही भंग यहाँ भी जानना। विशेष इतना कि देशचारित्र के स्थानपर सकलचारित्र जानना।		२२६ २२६
अपूर्व-करण उपशमक	औप क्षा. मिश्र सम्य. स. ज्ञान चारित्र दर्शन लब्धि औद पारि ६ भव्य	औदयिक के जातिपद ६ **प्रत्येकभंग** औदयिक ६ औप. सम्य.,औप.चारित्र, क्षा.स., ज्ञान, दर्शन, लब्धि, भव्य	६ गुण्य १ गुण. ७ क्षेप	

गुणस्थान	भंग नाम	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
	द्विसंयोगी भंग	(सम्य×६)(चा×६)(क्षास×६)		
		(ज्ञा×६)(द×६)(ल×६)(भ×६)	७ गुण.	
		(सम्य+ज्ञा)(सम्य+द)(सम्य+ल)		
		(सम्य+भ)(चा+क्षा.स)(चा+ज्ञा)		
		(चा+द)(चा+ल)(चा+भ)(स+ज्ञा)		
		(स+द)(स+ल)		
		(स+भ)(ज्ञा+भ)(द+भ)(ल+भ)	१६ क्षेप	
	त्रिसंयोगी भंग	(सम्य×ज्ञा×६)(सम्य×द×६)		
		(सम्य×ल×६) (सम्य×भ×६)		
		(चा×ज्ञा×६)(चा×द×६)		
		(चा×ल×६)(चा×भ×६)		
		(स×ज्ञा×६)(स×द×६)(स×ल×६)		
		(स×भ×६)(ज्ञा×भ×६)(द×भ×६)		
		(ल×भ×६)(चा×स×६)	१६ गुण.	
		(सम्य+ज्ञा+भ)(सम्य+द+भ)		
		(सम्य+ल+भ)(चा+ज्ञा+भ)		
		(चा+द+भ)(चा+ल+भ)		
		(चा+स+भ)(स+ज्ञा+भ)		
		(स+द+भ)(स+ल+भ)(चा+स+ज्ञा)		
		(चा+स+द)(चा+स+ल)	१३ क्षेप	
	चतु:संयोगी भंग	(सम्य×ज्ञा×६×भ)(सम्य×द×६×भ)		
		(सम्य×ल×६×भ)(चा×ज्ञा×६×भ)		
		(चा×द×६×भ)(चा×ल×भ×६)		
		(चा×स×६×भ)(स×ज्ञा×६×भ)		
		(स×द×६×भ)(स×ल×६×भ)		

गुणस्थान	भंग नाम	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		(चा×स×ज्ञा×६)(चा×स×द×६) (चा×स×ल×६) (स+ज्ञा+चा+भ)(स+चा+द+भ) (स+चा+ल+भ) **पंचसंयोगी भंग** (स×चा×ज्ञा×६×भ) (स×चा×द×६×भ)(स×चा×ल×६×भ) **स्वसंयोगी भंग** (ज्ञा+ज्ञा)(द+द)(ल+ल) गुण्य × गुणकार + क्षेप ६ × ४० (१+७+१६+१३+३) + ४२ (७+१६+१३+३+३) = २४० + ४२	 १३ गुण ३ क्षेप ३ गुण. ३ क्षेप	२८२
सवेदअनि. उपशमक	उपर्युक्त	उपर्युक्त आठवें गुणस्थान के समान भंग		२८२
अवेद अनिवृत्ति उपशमक	औद.६ के उपर्युक्त स्थान पर औद.५ लेना वेद कम होने से	उपर्युक्त आठवें गुणस्थान के समान भंग गुण्य × गुणकार + क्षेप ५ × ४० (१+७+१६+१३+३)+ ४२(७+१६+१३+३+३)= २००+ ४२		२४२
सूक्ष्म सांपराय उपशमक	अवेद उपशमक के समान	गुण्य × गुणकार + क्षेप ५ × ४० (१+७+१६+१३+३)+ ४२(७+१६+१३+३+३)= २००+ ४२		२४२
उपशांत मोह	औद.५ के उपर्युक्त स्थान पर औद.४ लेना	गुण्य × गुणकार + क्षेप ४ × ४० (१+७+१६+१३+३) + ४२(७+१६+१३+३+३)= १६०+ ४२		२०२

गुणस्थान	भंग नाम	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
अपूर्व-क्षपक	क्षा. मिश्र औद पा स. ज्ञान ६ भव्य चारि. दर्शन लब्धि	औदयिक ६ **प्रत्येक भंग** औदयिक ६ सम्यक्त्व,चारित्र,ज्ञान,दर्शन,लब्धि,भव्य **द्विसंयोगी भंग** (स×६)(चा×६)(ज्ञा×६)(द×६) (ल×६)(भ×६) (स+ज्ञा)(स+द)(स+ल)(स+भ) (चा+ज्ञा)(चा+द)(चा+ल)(चा+भ) (ज्ञा+भ)(द+भ)(ल+भ) **त्रिसंयोगी भंग** (स×ज्ञा×६)(स×द×६)(स×ल×६) (स×भ×६)(चा×ज्ञा×६)(चा×द×६) (चा×ल×६)(चा×६×भ) (ज्ञा×६×भ)(द×६×भ)(ल×६×भ) (स+ज्ञा+भ)(स+द+भ)(स+ल+भ) (चा+ज्ञा+भ)(चा+द+भ)(चा+ल+भ) **चतु:संयोगी भंग** (स×ज्ञा×६×भ)(स×द×६×भ) (स×ल×६×भ)(चा×ज्ञा×६×भ) (चा×द×६×भ)(चा×ल×६×भ) **स्वसंयोगी भंग** (ज्ञा+ज्ञा)(द+द)(ल+ल) गुण्य × गुणकार + क्षेप ६ × २४ (१+६+११+६) + २६ (६+११+६+३)=१४४ +२६	६ गुण्य १ गुण. ६ क्षेप ६ गुण. ११ क्षेप ११ गुण. ६ क्षेप ६ गुण ३ क्षेप	१७०

गुणस्थान	भावों के नाम	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
सवेद-अनि-वृत्ति क्षपक	क्षा. मिश्र औद पा स. ज्ञान ६ भव्य चारि. दर्शन लब्धि	अपूर्वकरण क्षपकवत् भंग जानना गुण्य × गुणकार + क्षेप ६ × २४ + २६		१७०
अवेद-अनि-वृत्ति क्षपक	क्षा. मिश्र औद पा सम्य. ज्ञान ५ भव्य चारि. दर्शन लब्धि	अपूर्वकरण क्षपकवत् भंग जानना। यहाँ औदयिक ५ का स्थान होने से ५ गुण्य है। गुण्य × गुणकार + क्षेप ५ × २४ + २६		१४६
सूक्ष्म-सांप-राय क्षपक	क्षा. मिश्र औद पा सम्य. ज्ञान ५ भव्य चारि. दर्शन लब्धि	अपूर्वकरण क्षपकवत् भंग जानना औदयिक ५ का स्थान होने से ५ गुण्य है। गुण्य × गुणकार + क्षेप ५ × २४ + २६		१४६
क्षीण-मोह	क्षा. मिश्र औद पा सम्य. ज्ञान ४ भव्य चारि. दर्शन लब्धि	अपूर्वकरण क्षपकवत् भंग जानना औदयिक जातिपद ४ होने से ४ गुण्य है। गुण्य ४ × गुणकार २४ + क्षेप २६		१२२
सयोग केवली	क्षा. औद पा ज्ञान ३ भव्य दर्शन सम्यक्त्व चारित्र लब्धि	औदयिक ३ **प्रत्येक भंग** औदयिक ३ ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, चारित्र, लब्धि, भव्य **द्विसंयोगी भंग** (ज्ञा×३)(द×३)(स×३)(चा×३) (ल×३)(भ×३) (ज्ञा+भ)(द+भ)(ल+भ)(स+भ) (चा+भ)	३ गुण्य १ गुण. ६ क्षेप ६ गुण ५ क्षेप	

गुणस्थान	भावों के नाम	भंग निकालने की रीति	गुणकार व क्षेप	भंग संख्या
		त्रिसंयोगी भंग (ज्ञा×भ×३)(द×भ×३)(स×भ×३) (चा×भ×३)(ल×भ×३) **स्वसंयोगी भंग** (ल+ल) क्षायिकज्ञान और दर्शन एक एक ही होने से उनका स्वसंयोगी भंग यहाँ नही होता। लब्धि ५ प्रकार की होती है अत: उनका स्वसंयोगी भंग होता है। गुण्य × गुणकार + क्षेप ३ × १२ (१+६+५) + १२ (६+५+१) = ३६ + १२	५ गुण. १ क्षेप	४८
अयोग-केवली	क्षा. मिश्र औद पा सम्य.ज्ञान २ भव्य चारि.दर्शन लब्धि	शेष १३ वें गुणस्थानवत्। यहाँ औदयिक २ होने से २ गुण्य है। गुण्य × गुणकार + क्षेप २ × १२ + १२		३६
सिद्ध	क्षा. पारि सम्यक्त्व जीवत्व ज्ञान दर्शन लब्धि	**प्रत्येक भंग** सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, लब्धि, जीवत्व **द्विसंयोगी भंग** (स+जी)(ज्ञा+जी)(द+जी)(ल+जी) यहाँ औदयिक भावों का अभाव होने से गुण्य व गुणकार का अभाव है। क्षेप को जोड़ने से ५ + ४ = ९ भंग होते हैं	५ क्षेप ४ क्षेप	९

सर्व गुणस्थानों में जातिपद भावों की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेप व भंगों की संख्या - गुण्य × गुणकार + क्षेप = भंग। जैसा मिथ्यात्व में (८×१२)+१४ = ११०

	मिथ्या	सासा	मिश्र	असं	देशसं	प्र.सं.	अप्र.सं	अपू.क्ष	अनि.क्ष
गुण्य	८	७	७	७	६	६	६	६	६/५
गुणकार	१२	८	८	२६	३२	३२	३२	२४	२४
क्षेप	१४	१०	१०	२८	३४	३४	३४	२६	२६
सर्वभंग	११०	६६	६६	२१०	२२६	२२६	२२६	१७०	१७०/१४६

	सू.क्ष.	अपू.उ.	अनि.उ.	सू.उ.	उप.क	क्षीण	सयोग	अयोग	सिद्ध
गुण्य	५	६	६/५	५	४	४	३	२	०
गुणकार	२४	४०	४०	४०	४०	२४	१२	१२	०
क्षेप	२६	४२	४२	४२	४२	२६	१२	१२	९
सर्वभंग	१४६	२८२	२८२/२४२	२४२	२०२	१२२	४८	३६	९

अब सर्व पद के भेद कहते हैं -

भव्विदराणण्णदरं गदीण लिंगाण कोहपहुडीणं ।
इगिसमये लेस्साणं सम्मत्ताणं च णियमेण ।।८५६।।

अन्वयार्थ - **(गदीण)** गतियों में, **(लिंगाण)** वेदों में, **(कोह पहुडीणं)** क्रोधादि कषायों में, **(लेस्साणं)** लेश्याओं में **(च)** और **(सम्मत्ताणं)** सम्यक्त्वों में से **(इगिसमये)** एक समय में **(भव्विदराणण्णदरं)** तथा भव्य-अभव्य अपने भेदों में से कोई एक-एक भेद ही **(णियमेण)** नियम से होते हैं। इन भाव समूहों को पिण्ड पद कहते हैं।

विशेषार्थ - सर्वपदों की अपेक्षा भंग - सर्वपद दो प्रकार के हैं - १) पिण्डपद २) प्रत्येकपद

१) पिण्डपद - जिस भावसमूहमें से एक समय में एक जीव के एक ही भाव होता है सब नहीं होते उस भावसमूह को पिण्डपद कहते हैं। जैसे चारों गतियों में से एक जीव के एक काल में एक ही गति होती है, चारों नहीं होती अत: गति पिण्डपद है। ऐसे पिण्डपद छह ६ हैं - १) भव्य, अभव्य २) ४ गति ३) ३ लिंग ४) ४ कषाय ५) ६ लेश्या

६) ३ सम्यक्त्व

२) प्रत्येकपद - जो भाव एक जीव के एककाल में युगपत् भी संभव हैं उन्हें प्रत्येकपद कहते हैं। जैसे क्षायोपशमिक चार ज्ञान एकसाथ एक जीव के हो सकते हैं अतः वे प्रत्येक पद हैं।

अब प्रत्येक पदों को कहते हैं -

पत्तेयपदा मिच्छे पण्णरसा पंच चेव उवजोगा ।
दाणादी ओदयिये चत्तारि य जीवभावो य ।।८५७।।

अन्वयार्थ - (पत्तेयपदा) एक समय में युगपत् पाये जावे ऐसे प्रत्येक पद, **(मिच्छे)** मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में **(पण्णरसा)** पंद्रह हैं। वे इसप्रकार **(पंच चेव उवजोगा)** ३ अज्ञान और दो दर्शन ये पाँच ही उपयोग, **(दाणादी)** दान आदि पाँच क्षायोपशमिक लब्धि, **(ओदयिये)** औदयिक भाव के,**(चत्तारि य)** मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम और असिद्धत्व ये चार **(जीवभावो य)** और पारिणामिक भावों में जीवत्व भाव, इस प्रकार (३ + २ + ५ + ४ + १) =१५ जानना।

विशेषार्थ - मिथ्यादृष्टि में प्रत्येकपद पन्द्रह १५ होते हैं - तीन अज्ञान, दो दर्शन, दानादि ५ लब्धियाँ, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व और जीवत्व।

पिंडपदा पंचेव य भव्विदरदुगं गदी य लिंगं च ।
कोहादी लेस्सावि य इदि वीसपदा हु उड्ढेण ।।८५८।।

अन्वयार्थ - उपर्युक्त १५ पदों के आगे, मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में **(पिंडपदा)** पिंडपद, **(पंचेव)** पाँच ही हैं **(य)** जो **(भव्विदरदुगं)** भव्यत्व, अभव्यत्व, **(गदी)** गति, **(लिंगं)** वेद, **(कोहादी)** क्रोधादि कषाय, **(लेस्सावि)** और लेश्या ये पाँच पिंडपदों को मिलाकर (१५+५) **(इदि वीसपदा हु)** इस प्रकार बीस पद होते हैं, **(उड्ढेण)** इनको ऊपर ऊपर स्थापित करना चाहिए।

विशेषार्थ - पिण्डपद ५ हैं - १) भव्य-अभव्य २) गति ३) लिंग ४) कषाय ५) लेश्या

पत्तेयाणं उवरिं भव्विदरदुगस्स होदि गदिलिंगे ।
कोहादिलेस्ससम्मत्ताणं रयणा तिरिच्छेण ।।८५९।।

अन्वयार्थ - (पत्तेयाणं) प्रत्येक पदों के **(उवरिं)** ऊपर स्थापित किये गये, **(भव्विदर दुगस्स)** भव्य-अभव्य युगल, **(गदि लिंगे)** गति, लिंग, **(कोहादिलेस्ससम्मत्ताणं)** क्रोधादि चार कषाय, लेश्या और सम्यक्त्व की **(रयणा)** रचना **(तिरिच्छेण)** तिर्यक रूप से **(होदि)** करना चाहिए ।

कुमति	कुश्रुति	विभंग	चक्षु	अचक्षु	दान	लाभ	भोग	उपभोग	वीर्य	मिथ्यात्व	अज्ञान	असंयम	असिद्धत्व	जीवत्व	भव्य	नरक	स्त्री	क्रोध	कृष्ण	औप.
															अभव्य	तिर्यंच	पुं	मान	नील	क्षायिक.
																मनुष्य	नपुं	माया	कापोत	क्षायोप.श
																देव		लोभ	पीत	
																			पद्म	
																			शुक्ल	

एक्कादी दुगुणकमा एक्केक्कं रुंधियूण हेट्ठम्मि ।
पदसंजोगे भंगा गच्छं पडि होंति उवरुवरिं ।।८६०।।

अन्वयार्थ - (एक्कादी) एक से लेकर **(दुगुणकमा)** दूने-दूने रूप क्रम से, **(एक्केक्कं)** एक-एक पद का, **(रुंधियूण)** आश्रय करके, **(हेट्ठम्मि)** नीचे-नीचे के, **(पदसंजोगे)** पदों के संयोग से, **(पडि गच्छं)** गच्छ जितनेवाँ पद होवे, उतने प्रमाण रूप **(भंगा उवरुवरिं)** ऊपर-ऊपर के भंग **(होंति)** होते हैं ।

मिथ्यात्व गुणस्थान में १५ प्रत्येक पदों के प्रत्येकादि भंगों की संख्या

	प्रत्येक भंग	द्विसंयोगी	त्रिसंयोगी	चतुसंयोगी
कुमति कुश्रुत विभंग	१ कुम १ कुश्रु १ विभं	० १(कुम+कुश्रु) २ (कुम+वि) (कुश्रु+वि)	० ० १(कुम+कुश्रु+वि)	
चक्षु	१ चक्षु	३ (कुम+च) (कुश्रु+च) (वि+च)	३(कुम+कुश्रु+च) (कुम+वि+च) (कुश्रु+वि+च)	१(कुम+कुश्रु+वि+च)
अचक्षु	१ अचक्षु	४ (कुम+अच) (कुश्रु+अच) (वि+अच) (च+अच)	६(कुम+कुश्रु+अ) (कुम+वि+अच) (कुम+च+अच) (कुश्रु+वि+अच) (कुश्रु+च+अच) (वि+च+अच)	४ (कुम+कुश्रु+वि+अच) (कुम+कुश्रु+च+अच) (कुश्रु+वि+च+अच) (कुम+वि+च+अच) **अचक्षु पंचसंयोगी १** (कुम+कुश्रु+वि+च+अच)
दान	१ दान	५ (कुम+दा) (कुश्रु+दा) (वि+दा) (च+दा) (अच+दा)	१०(कुम+कु+दा) (कुम+वि+दा) (कुम+च+दा) (कुम+अच+दा) (कुश्रु+वि+दा) (कुश्रु+च+दा) (कुश्रु+अच+दा) (वि+च+दा) (वि+अच+दा) (च+अच+दा)	१० (कुम+कुश्रु+वि+दा) (कुम+कुश्रु+च+दा) (कुम+कुश्रु+अच+दा) (कुम+वि+च+दा) (कुम+वि+अच+दा) (कुम+च+अच+दा) (कुश्रु+वि+च+दा) (कुश्रु+वि+अच+दा) (कुश्रु+च+अच+दा) (वि+च+अच+दा)
दान पंचसंयोगी ५ (कुम+कुश्रु+वि+च+दा)(कुम+कुश्रु+वि+अच+दा) (कुश्रु+वि+च+अच+दा) (कुम+वि+च+अच+दा)(कुम+कुश्रु+च+अच+दा)				
षट्संयोगी १ (कुम+कुश्रु+वि+च+अच+दा)				

	प्र	द्विसं	त्रि	चतु:	पंच	षट्	सप्त	अष्ट	नव	दश	एका	द्वा	त्रयो	चतु	पंच	सर्वभंग
जीवत्व	१	१४	९१	३६४	१००१	२००२	३००३	३४३२	३००३	२००२	१००१	३६४	९१	१४	१	१६३८४
असिद्धत्व	१	१३	७८	२८६	७१५	१२८७	१७१६	१७१६	१२८७	७१५	२८६	७८	१३	१		८१९२
असंयम	१	१२	६६	२२०	४९५	७९२	९२४	७९२	४९५	२२०	६६	१२	१			४०९६
अज्ञान	१	११	५५	१६५	३३०	४६२	४६२	३३०	१६५	५५	११	१				२०४८
मिथ्यात्व	१	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१					१०२४
वीर्य	१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१						५१२
उपभोग	१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१							२५६
भोग	१	७	२१	३५	३५	२१	७	१								१२८
लाभ	१	६	१५	२०	१५	६	१									६४
दान	१	५	१०	१०	५	१										३२
अचक्षु	१	४	६	४	१											१६
चक्षु	१	३	३	१												८
विभग	१	२	१													४
कुश्रुत	१	१														२
कुमति	१															१
															सब जोड़	३२७६७

पन्द्रहवें जीवपद में इतने भंग कैसे होते हैं उसका स्पष्टीकरण

१) प्रत्येक भंग और अन्तिम (पन्द्रहसंयोगी) भंग एकही होता है।

२) द्विसंयोगी और द्विचरम (चौदहसंयोगी) भंग १४ चौदह (एक कम पद प्रमाण) होते हैं।

३) त्रिसंयोगी और त्रिचरम (त्रयोदश संयोगी) भंग इक्यानवे ९१ (दो कम गच्छ का एकबार संकलन मात्र) होते हैं। गच्छ का प्रमाण १५-२= १३

एकवार संकलन $\dfrac{१३ \times \overset{७}{\cancel{१४}}}{\cancel{२} \times १} = \boxed{९१}$

४) चतु:संयोगी और चतुश्चरम (बारहसंयोगी) भंग तीनसौ चौसठ होते हैं अर्थात् तीन कम गच्छ का दो वार संकलनमात्र गच्छ-३

१५-३=१२ का दो वार संकलन $\frac{\cancel{१२}^{४}\times १३\times \cancel{१४}^{७}}{\cancel{३}\times \cancel{२}\times १} = १३\times २८ = \boxed{३६४}$

५) पंचसंयोगी और पंचचरम अर्थात् ग्यारह संयोगी भंग चार कम गच्छ का तीनवार संकलन मात्र होते है गच्छ-४

१५-४=११ का तीन वार संकलन $\frac{११\times \cancel{१२}^{\cancel{३}}\times १३\times \cancel{१४}^{७}}{\cancel{४}\times \cancel{३}\times \cancel{२}\times १} = १३\times ७७ = \boxed{१००१}$

६) षट्संयोगी और षड्चरम अर्थात् दशसंयोगी भंग पाँच कम गच्छ का चार बार संकलन प्रमाण होते हैं १५-५=१० का चार बार संकलन

$$\frac{\cancel{१०}^{२}\times ११\times \cancel{१२}^{\cancel{३}}\times १३\times \cancel{१४}^{७}}{\cancel{५}\times \cancel{४}\times \cancel{३}\times \cancel{२}\times १} = १५४\times १३ = \boxed{२००२}$$

७) सप्तसंयोगी और सप्तचरमसंयोगी अर्थात् नवसंयोगी भंग छह कम गच्छ का पाँचबार संकलनमात्र होते हैं। १५-६=९ का पाँच बार संकलन

$$\frac{\cancel{९}^{३}\times \cancel{१०}^{\cancel{२}}\times ११\times \cancel{१२}^{\cancel{३}}\times १३\times \cancel{१४}^{७}}{\cancel{६}_{\cancel{२}}\times \cancel{५}\times \cancel{४}\times \cancel{३}\times \cancel{२}\times १} = ३\times ११\times १३\times ७ = ३३\times ९१ = \boxed{३००३}$$

८) अष्टसंयोगी भंग सात कम गच्छ का छहबार संकलनमात्र होते हैं।
१५-७=८ का छहबार संकलन

$$\frac{\cancel{८}^{२}\times \cancel{९}^{३}\times \cancel{१०}^{२}\times ११\times \cancel{१२}^{\cancel{२}}\times १३\times \cancel{१४}^{२}}{\cancel{७}\times \cancel{६}\times \cancel{५}\times \cancel{४}\times \cancel{३}\times \cancel{२}\times १}$$

$$२\times ३\times २\times ११\times १३\times २ = १३२\times १३\times २ = १३२\times २६ = \boxed{३४३२}$$

आगे भङ्गों को मिलाने का गाथा सूत्र कहते हैं -

इट्ठपदे रूऊणे दुगसंवग्गम्मि होदि इट्ठधणं ।
असरिच्छाणंतधणं दुगुणेगूणे सगीयसव्वधणं ।।८६१।।

अन्वयार्थ - (इट्ठपदे) इष्ट या विवक्षित पद में **(रूऊणे)** एक कम करने से जो शेष रहे, **(दुगसंवग्गम्मि)** उतने बार दो-दो के अंक लिखकर परस्पर संवर्ग करने से (आपस में गुणा करने से) , **(इट्ठधणं)** विवक्षित पद में भंगों का प्रमाण रूप इष्ट धन, **(होदि)** होता है। **(असरिच्छाणंतधणं)** यही प्रत्येक पदों का अंतधन है। **(दुगुणेगूणे)** इसे दुगुना करके उसमें से एक घटाने से जो प्रमाण हो, **(सगीय सव्वधणं)** उतना प्रथम पद से लेकर विवक्षित पद तक सर्व पदों के भंगों का जोड़ रूप सर्व धन होता है।

विशेषार्थ - सर्वभंगों को जोड़ने का सूत्र - $२^{पद-१}$ = सर्वभंग

विवक्षित पद की संख्यामें से एक घटाकर जितना रहे उतनीबार दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर विवक्षित पद के सर्वभंगों का प्रमाण (इष्टधन) आता है। जैसे पन्द्रहवाँ पद जीवत्व के भंग १५-१=१४ बार दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करना २×२×२×२×२×२×२×२×२×२×२×२×२×२ = १६३८४

(इष्टधन×२)-१= प्रथमपद से लेकर विवक्षितपद पर्यंत सब पदों के भंगों का जोड़रूप सर्वधन

$$=(\text{अंतधन}\times२)-१=(१६३८४\times२)-१=३२७६८-१=३२७६७=\left(\frac{६५५३६}{२}\right)-१=\left(\frac{\text{पणट्ठी}}{२}-१\right)$$

इसप्रकार प्रथमपद से लेकर पन्द्रहवे जीवत्वपद तक सब पदों के भंगों का जोड़रूप सर्वधन ३२७६७ होता हैं।

अब प्रत्येक व पिंड पदों की पद संख्या तथा प्रत्येक पद भंग व पिंड पद भंगों को मिलाकर सर्वपद संख्या बताते हैं।

तेरिच्छा हु सरिच्छा अविरददेसाण खयियसम्मत्तं ।
मोत्तूण संभवं पडि खयिगस्स वि आणए भंगे ।।८६२।।

अन्वयार्थ - पिंड पद रूप भावों की, **(तेरिच्छा हु सरिच्छा)** तिर्यक् बराबर रचना कर, **(अविरददेसाण)** असंयत तथा देशसंयत गुणस्थान में **(खयियसम्मत्तं मोत्तूण)** क्षायिक सम्यक्त्व को छोड़कर, **(संभवं पडि)** अन्य संभवभावों में, **(आणए भंगे)**

यथासंभव भंग लाना चाहिये। **(खयिगस्सवि)** क्षायिक सम्यक्त्व के भी संभव गुणस्थानों को लेकर अलग से भंग लाना चाहिए।

उड्ढतिरिच्छपदाणं दव्वसमासेण होदि सव्वधणं ।
सव्वपदाणं भंगे मिच्छादिगुणेसु णियमेण ।।८६३।।

अन्वयार्थ - (सव्वपदाणं भंगे) सर्व पदों के भंग जानने के लिए, **(मिच्छादिगुणेसु)** मिथ्यात्वादि गुणस्थानों में, **(उड्ढतिरिच्छपदाणं)** ऊर्ध्व रचना वाले प्रत्येक पद और तिर्यक् रचना वाले पिंड पद के भंगरूप **(दव्वसमासेण)** धन को मिलाने पर उस उस गुणस्थान के सर्व पदों का भंगरूप, **(सव्वधणं)** सर्वधन **(णियमेण होदि)** नियम से होता है।

मिच्छादीणं दुति दुसु अपुव्वअणियट्टिखवगसमगेसु ।
सुहुमुवसमगे संते सेसे पत्तेयपदसंखा ।।८६४।।
पण्णर सोलट्ठारस वीसुगुवीसं च वीसमुगुवीसं ।
इगिवीस वीस चोद्दस तेरस पणगं जहाकमसो ।।८६५।।

अन्वयार्थ - (पत्तेयपदसंखा) प्रत्येक पदों की संख्या **(जहाकमसो)** यथाक्रम से **(मिच्छादीणं दुति)** मिथ्यात्व, सासादन इन दो में **(पण्णर)** पन्द्रह १५, मिश्र, असंयत, देशसंयत इन तीन में **(सोल)** सोलह १६, **(दुसु)** प्रमत्त, अप्रमत्त में **(अट्ठारस)** अठारह १८, **(अपुव्वअणियट्टिखवगसमगेसु)** अपूर्वकरण उपशमक-क्षपक में **(वीसुगुवीसं)** बीस २०, अनिवृत्तिकरण उपशमक-क्षपक में उन्नीस १९, **(सुहुमवसमगे)** सूक्ष्म सांपराय-उपशमक में **(च वीसुगुवीसं)** बीस २०, उपशान्तकषाय में उन्नीस १९, **(सेसे)** सूक्ष्म साम्पराय -क्षपक में **(इगिवीस)** इक्कीस २१, क्षीणकषाय में **(बीस)** बीस २०, सयोगी में **(चौद्दस)** चौदह १४, अयोगी में **(तेरस)** तेरह १३, सिद्धों में **(पणगं)** पाँच ५ हैं।

विशेषार्थ - मिथ्यादृष्टि गुणस्थान के पिंडपदों के भंग - मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में प्रत्येक पद पन्द्रह हैं और पिंडपद पाँच है। पूर्वोक्त पदों के सर्वभंग ३२७६७ होते हैं।

१६) भव्यत्व के भंग = जीवत्व के भंग × २ = १६३८४×२ = ३२७६८

अभव्यत्व के भंग = जीवत्व के भंग × २ = १६३८४×२ = ३२७६८

६५५३६

१७) एकगति के भंग = भव्यत्व अभव्यत्व के भंग × २ = **६५५३६×२**

चारों गति के भंग = एकगति के भंग × ४ = ६५५३६×२×४ = **६५५३६×८**

१८) एकलिंग के भंग = एकगति के भंग × २ = **६५५३६×२×२**

नरकगति में १ लिंग+तिर्यंचगति में ३ लिंग+मनुष्यगति में ३ लिंग+देवगतिमें २ लिंग = ९

सर्वलिंग भंग = एकलिंग भंग × ९ = ६५५३६×४×९ = **६५५३६×३६**

१९) एक कषाय के भंग = एक लिंग के भंग×२ = ६५५३६×४×२ = ६५५३६×८

चार गति के लिंग मिलाकर ९ है प्रत्येक लिंग के साथ ४ कषाय के भंग बनेंगे अत: ९×४ = ३६ भंग होते हैं।

सर्व कषाय के भंग = एक कषाय के भंग × ३६ = ६५५३६×८×३६ = **६५५३६×२८८**

एक लेश्या के भंग = एक कषाय के भंग × २ = ६५५३६×८×२ = ६५५३६×१६

चार गति की अपेक्षा से लिंग व कषाय को लेकर लेश्या के भेद निम्नलिखित -

नरकगति → १ लिंग × ४ कषाय × ३ लेश्या = १२

तिर्यंच गति → ३ लिंग × ४ कषाय × ६ लेश्या = ७२

मनुष्य गति → ३ लिंग × ४ कषाय × ६ लेश्या = ७२

देव गति → २ लिंग × ४ कषाय × ६ लेश्या =४८ भवनत्रिक के अपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभलेश्या होती हैं अत: देवगति में ६ लेश्या कही हैं। सर्वभंग **२०४** होते हैं।

लेश्या के सर्वभंग = एकलेश्या के भंग × २०४ = ६५५३६×१६×२०४ = **६५५३६×३२६४**

सर्वपिण्डपदों के भंगों के जोड़ →

भव्यत्व के भंग =	६५५३६ ×	१
गति के भंग =	६५५३६ ×	८
लिंग के भंग =	६५५३६ ×	३६
कषाय के भंग =	६५५३६×	२८८
लेश्या के भंग =	६५५३६ ×	३२६४
	६५५३६ ×	३५९७ पिण्डपद के सर्वभंग

प्रत्येकपद के भंग + पिण्डपद के भंग = मिथ्यादृष्टि के सर्वभंग

$$\left(\frac{६५५३६}{२}\right) - १ + ६५५३६\times३५९७ \quad \text{समच्छेद करके}$$

$$\frac{६५५३६}{२} + \left(\frac{६५५३६\times३५९७\times२}{२}\right) - १$$

$$\left(\frac{६५५३६\times७१९५}{२}\right) - १ \quad \text{इतने मिथ्यादृष्टि गुणस्थान के भंग है}$$

$$३२७६७ + (६५५३६ \times ३५९७) = \boxed{२३५७६५७५९}$$

जितने भव्यत्व के भंग है उतने ही अभव्यत्व के भंग होते हैं पूर्वोक्त १५ प्रत्येकपदों के साथ भव्यत्व भाव के साथ संयोगी भंग होंगे अथवा अभव्यत्व के साथ होंगे। भव्यत्व और अभव्यत्व के भंगों को जोड़कर उनसे दूने एक गति के भंग कहे क्योंकि प्रत्येक गति में भव्यत्व अभव्यत्व दोनों हैं।

२) सासादन गुणस्थान के भंग - सासादन गुणस्थान में मिथ्यात्व नामक प्रत्येकपद नहीं है तथा भव्य-अभव्य पिण्डपद में से अभव्यत्व का अभाव है अत: भव्यत्व को भी प्रत्येकपद में ले लिया है। इसतरह सासादन में प्रत्येकपद पन्द्रह और पिण्डपद चार हैं।

प्रत्येक पद के भंग

क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या	क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या
१	कुमति	१	९	उपभोग	२५६
२	कुश्रुत	२	१०	वीर्य	५१२
३	विभंग	४	११	अज्ञान	१०२४
४	चक्षुदर्शन	८	१२	असंयत	२०४८
५	अचक्षुदर्शन	१६	१३	असिद्धत्व	४०९६
६	दान	३२	१४	जीवत्व	८१९२
७	लाभ	६४	१५	भव्यत्व	१६३८४
८	भोग	१२८		सबका जोड़	३२७६७

$$= \left(\frac{६५५३६}{२}\right) - १$$

क्र.	पिण्डपद	भंगसंख्या
१६	गति	६५५३६ × २
१७	लिंग	६५५३६ × ९
१८	कषाय	६५५३६×७२
१९	लेश्या	६५५३६×८१६
		६५५३६×८९९

जैसे मिथ्यादृष्टि में भंग और रचना का विधान किया उसीप्रकार यहाँ भी जानना। एकपद से दूसरे पद के कुलभंग दूने-दूने होते हैं।

पिण्डपद के भंग

१६) एक गति के भंग = भव्यत्व के भंग × २ = १६३८४×२ = ३२७६८ अर्थात्

चार गति के भंग = एक गति के भंग × ४ = $\frac{६५५३६}{२}$ ×४ = **[६५५३६×२]**

१७) लिंग - एक लिंग के भेद = एक गति के भंग × २ = ३२७६८×२ = ६५५३६

चार गति के मिलकर लिंगभेद ९ होते हैं १+३+३+२ = ९

नर ति.म. देव

सर्वलिंग भंग = एक लिंग के भंग × ९ = **[६५५३६×९]**

१८) कषाय - एक कषाय के भंग = एक लिंग के भंग × २ = ६५५३६ × २

चार गति व लिंग का आश्रय करके कषाय के मिथ्यात्व गुणस्थान के समान ३६ भेद होते हैं।

अत: सर्वकषाय भंग = एक कषाय के भंग × ३६ = ६५५३६ × २ × ३६ = **[६५५३६ ×७२]**

१९) लेश्या - एक लेश्या के भंग = एक कषाय के भंग×२ = ६५५३६×२×२=६५५३६×४ मिथ्यात्वगुणस्थान के समान गति, लिंग और कषाय के आश्रय से लेश्या के २०४ भेद होते हैं अत:

सर्वलेश्या के भंग = एक लेश्या के भंग × २०४ = ६५५३६ × ४ × २०४ = **[६५५३६×८१६]**

सासादन के सर्वभंग = प्रत्येकपद के सर्वभंग + पिण्डपद के सर्वभंग

$$= \left(\frac{६५५३६}{२}\right) - १ + ६५५३६×८९९$$

$$= \left(\frac{६५५३६}{२}\right) - १ + \frac{६५५३६×८९९×२}{२}$$ समसंख्याओं को निकालकर

$$= \left(\frac{६५५३६}{२}\right) - १ + \frac{६५५३६×१७९८}{२}$$

$$= \left(\frac{६५५३६×१७९८+१}{२}\right) - १ = \left(\frac{६५५३६×१७९९}{२}\right) - १$$ सासादन के सर्वभंग

अर्थात् अंकों में (३२७६८ +६५५३६×८९९) - १

= (३२७६८ + ५८९१६८६४) - १ = **[५८९४९६३१]** सासादन के सर्वभंग

३) मिश्रगुणस्थान के भंग

मिश्रगुणस्थान में प्रत्येकपद १६ और पिण्डपद ४ हैं।

क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या	क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या
१	मिश्रमति	१	९	भोग	२५६
२	मिश्रश्रुत	२	१०	उपभोग	५१२
३	मिश्रअवधि	४	११	वीर्य	१०२४
४	चक्षुदर्शन	८	१२	अज्ञान	२०४८
५	अचक्षुदर्शन	१६	१३	असंयत	४०९६
६	अवधिदर्शन	३२	१४	असिद्धत्व	८१९२
७	दान	६४	१५	जीवत्व	१६३८४
८	लाभ	१२८	१६	भव्यत्व	३२७६८

क्र.	पिण्डपद	भंगसंख्या
१७	गति	६५५३६×४
१८	लिंग	६५५३६×१८
१९	कषाय	६५५३६×१४४
२०	लेश्या	६५५३६×१४४०
पिण्डपद के सर्वभंग		६५५३६×१६०६

६५५३६ की संदृष्टि ६५=

१६ प्रत्येकपद के सर्वभंग ६५५३५ अर्थात् ६५५३६-१

पिण्डपद के भंगों का खुलासा

गति		लिंगभंग	
नरकगति	६५= × १	नरकलिंग	१×६५= ×२
तिर्यंचगति	६५= × १	तिर्यंचलिंग	३×६५= ×२
मनुष्यगति	६५= × १	मनुष्यलिंग	३×६५= ×२
देवगति	६५= × १	देवलिंग	२×६५= ×२
जोड़	६५= × ४	जोड़	९×६५= ×२
		अर्थात्	६५= ×१८

कषायभंग		लेश्याभंग
नरकलिंग×क	१×४×६५=×२×२	नरकलिंग १× क४ × ले३×६५=×२×२×२
तिर्यंचलिंग×क	३×४×६५=×२×२	तिर्यंचलिंग३× क४ × ले६ ×६५=×२×२×२
मनुष्यलिंग×क	३×४×६५=×२×२	मनुष्यलिंग ३× क४ × ले६ ×६५=×८
देवलिंग×क	२×४×६५=×२×२	देवलिंग २× क४ × ले३ × ६५=×८
	९×४×६५=×२×२	१८०×६५=×८
	६५=×४×३६	६५=×१४४०
	६५=×१४४	नरक१२+ति.७२+म.७२+दे.२४ = १८०

एक गति के भंग = भव्यत्व ×२ = ३२७६८×२ = ६५५३६ चार गति के भंग ६५५३६×४
एक लिंग के भंग = गति ×२ = ६५५३६×२ चार गति के लिंग ९= ६५५३६×२×९
एक कषाय के भंग= लिंग ×२ = ६५५३६×२×२ सर्व कषाय के भंग = ६५५३६×४×३६
एक लेश्या के भंग=कषाय×२=६५५३६×२×२×२ सर्व लेश्या के भंग=६५५३६×८×१८०

नरकगति में १ लिंग×४ कषाय × ३ लेश्या = १२
तिर्यंच गति में ३ लिंग×४ कषाय × ६ लेश्या = ७२
मनुष्य गति में ३ लिंग×४ कषाय × ६ लेश्या = ७२
देवगति में २ लिंग×४ कषाय ×३ लेश्या = २४
१८०

अत: लेश्या के १८० भंग हुए। मिश्र गुणस्थान में अपर्याप्त अवस्था नहीं है अत: देवों में पर्याप्त की अपेक्षा ३ शुभलेश्या ही होती हैं। मिथ्यादृष्टि में और सासादन में अपर्याप्त भवनत्रिक में ३ अशुभलेश्याएँ होती हैं।

मिश्रगुणस्थान के सर्वभंग = प्रत्येकपद के भंग + पिण्डपद के भंग

६५५३६-१ + ६५५३६ × १६०६ समान गुण्य होने से गुणकार में एक अधिक करना।

६५५३६ × १६०७-१ = १०५३१६३५१ मिश्रगुणस्थान के सर्वभंग

मिच्छाइट्ठिप्पहुडिं खीणकसाओत्ति सव्वपदभंगा ।
पण्णट्ठिं च सहस्सा पंचसया होंति छत्तीसा ।।८६६।।

अन्वयार्थ - (मिच्छाइट्ठिप्पहुडिं) मिथ्यात्व से लेकर **(खीणकसाओत्ति)** क्षीणकषाय पर्यंत **(सव्वपद भंगा)** सर्व पद भंगों का प्रमाण - (प्राप्त करने के लिए गुण्य) **(पण्णट्ठिं च सहस्सा)** पैसठ हजार **(पंचसया छत्तीसा)** पाँच सौ छत्तीस (६५,५३६) **(होंति)** होता है।

तग्गुणगारा कमसो पणणउदेयत्तरीसयाण दलं ।
ऊणट्ठारसयाणं दलं तु सत्तहियसोलसयं ।।८६७।।

अन्वयार्थ - (तग्गुणगारा) उस गुण्य के गुणकार, **(कमसो)** क्रम से -मिथ्यात्व

गुण स्थान में **(पणणउदेयत्तरीसयाण दलं)** इकहत्तर सौ पिच्यानवे का आधा (७१९५ ÷ २) सासादन गुणस्थानमें **(ऊणट्ठारसयाणं दलं)** एक कम अठारह सौ का आधा=१७९९ ÷ २ मिश्र गुण स्थान में **(सत्तहियसोलसय)** सात अधिक सोलह सौ = १६०७

तेवत्तरिं सयाइं सत्तावट्ठीय अविरदे सम्मे ।
सोलस चेव सयाइं चउसट्ठी खइयसम्मस्स ।।८६८।।

अन्वयार्थ - (अविरदे सम्मे) अविरत सम्यक्त्व में, **(तेवत्तरिं सयाइं सत्तावट्ठीय)** तेहत्तर सौसड़सठ ७३६७ **(चेव)** इसी गुणस्थान में **(खइय सम्मस्स)** क्षायिक सम्यक्त्व के **(सोलस सयाइं चउसट्ठी)** सोलह सौ चौसठ १६६४

विशेषार्थ - ४) असंयत गुणस्थान के भंग = असंयत प्रत्येकपद १६, पिण्डपद ५ → गति, लिंग, कषाय, लेश्या, सम्यक्त्व। मिश्र गुणस्थान के समान प्रत्येकपद १६ लेना है, केवल मिश्रज्ञान के स्थानपर ज्ञान ग्रहण करना।

१६ प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़ ६५५३६-१ = ६५५३५

पिण्डपदों के भंग

१७) गति → एकगति के भंग = भव्यत्व के भंग × २ = ३२७६८×२ = ६५५३६
चारगति के भंग = ६५५३६×४

१८) लिंग → एक लिंग के भेद = एकगति के भंग × २ = ६५५३६ × २
चारगति के लिंगभाव ९ अत: सर्वलिंगभंग = ६५५३६×२×९
= ६५५३६ ×१८ लिंगभंग

१९) कषाय → एक कषाय के भंग = एक लिंग के भंग×२ = ६५५३६×२×२ =
= ६५५३६×४

चार गति के लिंग व कषाय के भाव ९×४=३६ होते हैं
अत: सर्वकषायभंग ६५५३६×४×३६= ६५५३६×१४४ कषाय के भंग

२०) लेश्या → एक लेश्या के भंग = एक कषाय के भंग × २ = ६५५३६×४×२ =
६५५३६×८

चार गति के लिंग व कषाय के आश्रय से लेश्या के भाव मिश्रगुणस्थानवत् १८० अत:

सर्व लेश्या के भंग = ६५५३६×८×१८० = **[६५५३६×१४४०]** सर्व लेश्या के भंग

२१) सम्यक्त्व → एक सम्यक्त्व के भंग = एक लेश्या के भंग × २

= ६५५३६×८×२ =६५५३६×१६

उपशमसम्यक्त्व में गति, लिंग, कषाय को लेकर लेश्या के भाव उपर्युक्त १८० होते हैं अत:

१) उपशम सम्यक्त्व के सर्वभंग = ६५५३६×१६×१८०= **[६५= × २८८०]** सर्व लेश्या के भंग

२) वेदकसम्यक्त्व के भी भंग उपर्युक्त **[६५=×२८८०]**

५) क्षायिक सम्यक्त्व के भंग

क्षायिक सम्यक्त्व में लेश्या के भाव

१) नरकगति १ × लिंग १ × क.४ × ले. १ (कापोत) = ४

२) तिर्यंचगति १ × लिंग १ पुं × क ४ × ४ लेश्या (कापोतादि)= १६

(क्षायिक स. तिर्यंच भोगभूमि में ही होता है।)

३) मनुष्यगति १ × लिंग ३ × क.४ × ले. ६ = ७२

४) देवगति १ × लिंग १ पुं × क.४ × ले. ३ = १२

१०४ लेश्या के भाव

क्षायिक सम्यक्त्व के सर्वभंग = ६५५३६×१६×१०४ = ६५५३६×१६६४

असंयत गुणस्थान के सर्वभंगों का जोड़

१६	प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़	६५५३६×१-१
१७	गतिपद के भंग	६५५३६×४
१८	लिंगपद के भंग	६५५३६×१८
१९	कषायपद के भंग	६५५३६×१४४
२०	लेश्यापद के भंग	६५५३६×१४४०
२१	सम्यक्त्व के भंग	६५५३६×५७६०
		६५५३६×७३६७ - १

[४८,२८,०३,७११]

सम्यक्त्व के भंगों का जोड़

१) उपशम ६५=× २८८०

२) वेदक ६५=×२८८०

६५=×५७६०

+ क्षायिक सम्यक्त्व के

६५५३६×१६६४

१०,९०,५१,९०४

ऊणत्तीससयाइं एक्काणउदी य देसविरदम्मि ।

छावत्तरि पंचसया खयियणरे णत्थि तिरियम्मि ।।८६९।।

अन्वयार्थ - (देसविरदम्मि य) देश विरत गुणस्थान में, **(ऊणतीससयाइं एक्काणउदी)** उनतीस सौ इक्यानवे २९९१ इसी गुणस्थान में **(खइय णरे)** क्षायिक सम्यक्त्व में मनुष्य के ही, **(छावत्तरि पंच सया)** पांच सौ छिहत्तर ५७६, **(णत्थि तिरियम्मि)** ये गुणकार तिर्यंच के नहीं हैं।

विशेषार्थ - ५) देशसंयत गुणस्थान के भंग

देशसंयत गुणस्थान में प्रत्येकपद १६ (असंयत के समान) पिण्डपद ५ (असंयत के समान) विशेष इतना असंयम के स्थानपर देशसंयम लेना।

१६ प्रत्येकपदों के भंग एक से लेकर दुगुणे दुगुणे होते हुए भव्यत्व के ३२७६८ होते हैं। सोलहपदों के सर्वभंग = (३२७६८×२) - १ = ६५५३६ - १

पिण्डपदों के भंग

१७) गति→ एक गति के भंग = भव्यत्व के भंग × २ = ३२७६८×२ = ६५५३६

तिर्यंच और मनुष्य दो ही गति हैं अत: गति के सर्वभंग = ६५५३६ × २

१८) लिंग→ एक लिंग के भंग = एक गति के भंग × २ = ६५५३६×२

तिर्यंचगति के ३ लिंग व मनुष्य गति के ३ लिंग ऐसे लिंग के ६ भेद होते हैं।

सर्वलिंग के भंग ६५५३६×२× ६ = ६५५३६×१२

१९) कषाय→ एक कषाय के भंग = एक लिंग के भंग ×२

=६५५३६ ×२×२ = ६५५३६ × ४

दोनों गति के ३ लिंग× ४ कषाय = २×३×४ =२४ कषाय के भाव अत:

कषाय के सर्वभंग = एक कषाय के भंग×२४ = ६५५३६×४×२४ = ६५५३६×९६

२०) लेश्या→ एक लेश्या के भंग = एक कषाय के भंग × २

=६५५३६ × ४ × २ = ६५५३६ × ८

तिर्यंच गति में ३ लिंग× ४ कषाय × ३ शुभलेश्या = ३६ अत: लेश्या के ७२ भाव ।

मनुष्य गति में ३ लिंग× ४ कषाय × ३ शुभलेश्या = ३६ होते हैं।

७२

लेश्या के सर्वभंग = एक लेश्या के भंग×७२ = ६५५३६×८×७२ = ६५५३६×५७६

२१) सम्यक्त्व → एक लेश्या के भंग×२ = ६५५३६×८×२ = ६५५३६×१६

२ गति, ३ लिंग, ४ कषाय, ३ लेश्या के ७२ भेद उपर्युक्त होते हैं अत:

उपशमसम्यक्त्व के सर्वभंग = ६५५३६×१६×७२ = ६५५३६×११५२

वेदकसम्यक्त्व के सर्वभंग = ६५५३६×१६×७२ = ६५५३६×११५२

दोनों सम्यक्त्व का जोड़ = ६५५३६×२३०४

क्षायिक सम्यक्त्व में मनुष्यगति×३लिंग × ४कषाय × ३ लेश्या = ३६ लेश्याभाव अत: क्षायिक सम्यक्त्व के सर्वभंग = एकसम्यक्त्व के भंग × ३६ = ६५५३६×१६×३६ = ६५५३६×५७६

सब पदों के भंगों का जोड़

पदनाम	भंगसंख्या	
१६ प्रत्येकपद	६५५३६×१-१	
१७ गति	६५५३६×२	
१८ लिंग	६५५३६×१२	
१९ कषाय	६५५३६×९६	
२० लेश्या	६५५३६×५७६	
२१ उपशम व वेदक सम्यक्त्व	६५५३६×२३०४	
	६५५३६×२९९१-१	→ १९६०१८१७५
	+	→ देशसंयत गुणस्थान के सर्वभंग
क्षायिक सम्यक्त्व	६५५३६×५७६	→ ३७७४८७३६

इगिदालं च सयाइं चउदालं च य पमत्त इदरे य ।

पुव्वुवसमगे वेदाणियट्टिभागे सहस्समट्ठूणं ।।८७०।।

अन्वयार्थ - (पमत्त इदरे) प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थान में, **(इगिदालं च सयाइं चउदालं च)** इकतालीस सौ चवालीस ४१४४, ४१४४। **(पुव्वुवसमगे)** उपशमक अपूर्वकरण में, **(वेदाणियट्टिभागे)** अनिवृत्तिकरण के सवेद भाग में **(सहस्समट्ठूणं)** एक हजार में आठ कम नौ सौ बियानवे ९९२ हैं।

६) प्रमत्तसंयत के भंग ⟶ प्रत्येकपद १८ और पिण्डपद ४

क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या	क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या	क्र.	प्रत्येकपद	भंगसंख्या
१	मतिज्ञान	१	७	अवधिदर्शन	६४	१३	अज्ञान	४०९६
२	श्रुतज्ञान	२	८	दान	१२८	१४	असिद्धत्व	८१९२
३	अवधिज्ञान	४	९	लाभ	२५६	१५	सकलसंयम	१६३८४
४	मन:पर्यय	८	१०	भोग	५१२	१६	जीवत्व	३२७६८
५	चक्षुदर्शन	१६	११	उपभोग	१०२४	१७	भव्यत्व	६५५३६
६	अचक्षुदर्शन	३२	१२	वीर्य	२०४८	१८	मनुष्यगति	६५५३६×२

पिण्डपदों के भंग -

१९) लिंग ⟶ एक लिंग के भंग = गति के भंग×२ = ६५५३६×२×२ = ६५५३६×४ सर्व तीन लिंग के भंग = ६५५३६×४×३ = **६५५३६ × १२**

२०) कषाय ⟶ एक कषाय के भंग = एक लिंग के भंग × २ =
६५५३६×४×२ = ६५५३६×८

तीन लिंग ३ × ४ कषाय = १२ कषाय के भाव
कषाय के सर्वभंग = ६५५३६×८×१२ = **६५५३६×९६**

२१) लेश्या ⟶ एक लेश्या के भंग = एक कषाय के भंग × २
= ६५५३६×८×२ = ६५५३६×१६

तीन लिंग ३ × ४ कषाय और ३ लेश्या के आश्रय से लेश्या के भाव ३६ होते हैं अत:
लेश्या के सर्वभंग = एक लेश्या के भंग × ३६
= ६५५३६×१६×३६ = **६५५३६×५७६**

२२) सम्यक्त्व ⟶ एक सम्यक्त्व के भंग = एक लेश्या के भंग × २
= ६५५३६×१६×२ = ६५=×३२

तीन सम्यक्त्व के भंग उपर्युक्त लेश्या के ३६ भावों से युक्त होते है अत: ३६×३=१०८
सम्यक्त्व के सर्वभंग = एक सम्यक्त्व के भंग × १०८
= ६५=×३२×१०८ = **६५=×३४५६**

सर्व पदों के भंगों का जोड़ →

पदनाम	भंगसंख्या
१८ प्रत्येकपद	६५५३६×४-१
१९ लिंग	६५५३६×१२
२० कषाय	६५५३६×९६
२१ लेश्या	६५५३६×५७६
२२ सम्यक्त्व	६५५३६×३४५६
जोड़	६५५३६×४१४४-१ → २७१५८११८३ → प्रमत्त गुणस्थान के सर्वभंग

७)अप्रमत्तसंयत के सर्वभंग→ प्रमत्त के समान ६५५३६×४१४४ -१ = २७१५८११८३

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
अपूर्व उपशमक	पूर्वोक्त १८		प्रमत्तसंयतवत् जानना	(६५५३६×४)-१	(६५५३६×४)-१
	१९ शुक्ल लेश्या		मनुष्यगति × २	६५५३६×४	६५५३६×४
		२०लिंग	लेश्या के भंग×२	= ६५=×८	
			तीन लिंग के	६५=×८×३	६५५३६×२४
			एक लिंग के भंग×२=	६५=×१६	
		२१कषाय	तीन लिंग×४ कषाय× १ कषाय के भंग	६५=१६×१२	६५=×१९२
		२२सम्य.	एक सम्य. के भंग= १ कषाय के भंग ×२ = ६५=×१६ लिंग व कषाय के आश्रय से सम्यक्त्व भाव १२ सम्य.के सर्वभंग=१	६५=×३२	
			सम्य.के भंग×१२×२	६५=×३२×२४	६५=×७६८
			अपूर्वकरण उपशमक के सर्वभंग		(६५=×९९२) -१ ६५०११७११

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति भंगसंख्या	सर्वभंग
९ अनि. उपशमक सवेद	पूर्वोक्त १ से १९तक	२० से २२ तक पूर्वोक्त	अपूर्वकरण उपशमक के समान सर्वभंग जानना।	(६५=×९९२)-१ ६५०११७११

अडसट्ठी एक्कसयं कसायभागम्मि सुहुमगे संते ।
अडदालं चउवीसं खवगेसु जहाकमं वोच्छं ।।८७१।।

अन्वयार्थ - (कसाय भागम्मि) अवेद अनिवृत्तिकरण के कषाय भाग में **(अडसट्ठी एक्क सयं)** एक सौ अडसठ १६८ गुणकार **(सुहुमगे)** सूक्ष्म सांपराय में, **(अडदालं)** अडतालीस ४८, उपशांत कषाय में **(चउवीसं)** चौबीस २४ **(संते)** गुणकार होते हैं। **(खवगेसु)** क्षपक श्रेणी के गुणस्थानों में **(जहाकमं)** यथाक्रम से **(वोच्छं)** कहूँगा।

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
अनि. उपशमक अवेद	पूर्वोक्त १ से १९ तक		१९ प्रत्येकपदोंके भंगों काजोड़ अपूर्वकरणवत्		(६५=×८)-१
		२०कषाय	एक कषाय के भंग लेश्यासे दुगुणे ६५=×४×२	६५=×८	६५=×३२
			४ कषायके भंग	६५=×८×४	
		२१सम्य.	एक सम्य. के भंग = १ कषाय के भंग×२= ६५=×८×२	६५=×१६	
			दो सम्यक्त्वके४ कषाय को लेकर सर्वभंग = १ सम्य.के भंग×२×४	६५=×१६×२×४	६५=×१२८
			अवेद अनिवृत्ति उपशमक के सर्वभंग		(६५=×१६८)-१ ११०१००४७

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
१० सूक्ष्म सांपराय उपशमक	पूर्वोक्त१से १९ शुक्ल लेश्यातक	२० तक सम्यक्त्व	१९प्रत्येकपदोंके भंगों का पूर्वोक्तजोड़ शुक्ल लेश्या के भंग६५=×४		(६५=×८) - १
			लेश्या के भंग×२ = सूक्ष्म लोभके भंग= ६५=×४×२		६५=×८
			एक सम्य. के भंग= सूक्ष्मलोभ के भंग×२ =६५=×८×२	६५=×१६	
			२ सम्यक्त्वके भंग=६५=×१६×२		६५=×३२
			सूक्ष्मसांपराय उपशमक के सर्वभंग		(६५=×४८)-१ ३१४५७२७
११ उपशान्त कषाय	१ से १९ लेश्या तक	२०सम्य.	१९ प्रत्येक पदोंके भंगों का जोड़		(६५=×८)-१
			एक सम्य. के भंग = लेश्या के भंग×२ ६५=×४×२	६५=×८	
			२ सम्यक्त्व के भंग	६५=×८×२	६५=×१६
			उपशान्त कषाय के सर्वभंगों का जोड़ ग्यारहवें गुणस्थानमें कषाय का अभाव है अतः कषायपद नहीं हैं		(६५=×२४)-१ १५७२८६३

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
८ अपूर्व-करण क्षपक	१ से १९ शुक्ललेश्या तक		लेश्या के भंग	६५=×४	
	२०क्षायिक सम्यक्त्व		क्षायिकसम्यक्त्व के भंग =लेश्याभंग×२	६५=×८	
			२० प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़		६५=×१६-१
		२१ लिंग	१ लिंगके भंग = सम्यक्त्व के भंग×२	६५=×१६	
			३ लिंगके भंग=	६५=×१६×३	६५=×४८
		२२कषाय	१ कषाय के भंग = १ लिंग के भंग×२	६५=×३२	
			३लिंग×४कषाय=१२ कषाय के भंग		
			अत: सर्व कषायके भंग	६५=×३२×१२	६५=×३८४
					६५=×४४८-१
			अपूर्वकरण क्षपक के सर्वभंगों का जोड़		२९३६०१२७
९अनि-वृत्तिसवेद क्षपक	१ से२० क्षा.सम्य. तक	२१लिंग २२कषाय	अपूर्वकरण क्षपक के समान सर्वभंग हैं।		(६५=×४४८)-१ २९३६०१२७

गुणस्थान	प्रत्येकपद	पिंडपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
९अनि- वृत्तिअवेद क्षपक	१ से२० क्षा.सम्य. तक उपर्युक्त २० पद	२१कषाय	२० प्रत्येक पदोंके भंगों का जोड़ सम्यक्त्व के भंग = १ कषाय के भंग = सम्यक्त्व के भंग×२ ६५=×८×२ ४ कषाय के सर्वभंग=	 ६५=×८ ६५=×१६ ६५=×१६×४	(६५=×१६)-१ ६५=×६४
			अनिवृत्ति अवेदक्षपक के सर्वभंगों का जोड़		(६५=×८०)-१ ५२४२८७९
१० सूक्ष्म सांपराय क्षपक	१ से २० क्षा.सम्य. तक २१सू.लोभ		क्षायिकसम्यक्त्व के भंग सू.लोभ के भंग = सम्यक्त्व के दुगुणे २१ प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़ (अन्तधन×२-१)	६५=×८ ६५=×१६	(६५=×३२)-१ २०९७१५१
१२ क्षीण कषाय	१ से २० क्षा.सम्य. तक		२० प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़ (२० वें पदके भंग×२)-१ (६५=८×२)-१		(६५=×१६)-१ १०४८५७५

गुणस्थान	प्रत्येकपद	भंग निकालने की पद्धति	भंगसंख्या	सर्वभंग
१३सयोग केवली	१ केवलज्ञान		१	
	२ केवलदर्शन	केवलज्ञान के भंग×२=१×२	२	
	३ क्षा.सम्यक्त्व	केवलदर्शन के भंग×२=२×२	४	
	४ क्षा.चारित्र	क्षा.सम्यक्त्वके भंग×२=४×२	८	
	५ क्षा. दान	क्षा.चारित्र के भंग×२=८×२	१६	
	६ क्षायिक लाभ	क्षा.दान के भंग×२=१६×२	३२	
	७ क्षायिक भोग	क्षा.लाभ के भंग×२=३२×२	६४	
	८ क्षा. उपभोग	क्षा.भोग के भंग×२=६४×२	१२८	
	९ क्षा.अनंतवीर्य	क्षा.उपभोग के भंग×२=१२८×२	२५६	
	१० असिद्धत्व	क्षा.अ.वीर्य के भंग×२=२५६×२	५१२	
	११ जीवत्व	असिद्धत्व के भंग×२=५१२×२	१०२४	
	१२ भव्यत्व	जीवत्व के भंग×२=१०२४×२	२०४८	
	१३ मनुष्यगति	भव्यत्व के भंग×२=२०४८×२	४०९६	
	१४ शुक्ललेश्या	मनुष्यगति के भंग×२=४०९६×२	८१९२	
		सबभंगों का जोड =८१९२×२-१		१६३८३
१३अयोग केवली	१ से १३ मनुष्य गति तक उपर्युक्त पद	मनुष्यगति के भंग ४०९६ १३ प्रत्येकपदों के भंगों का जोड़ (४०९६×२)-१		८१९१
सिद्ध	१ केवलज्ञान		१	
	२ केवलदर्शन		२	
	३ क्षा.सम्यक्त्व		४	
	४ अनंतवीर्य		८	
	५ जीवत्व		१६	
		सब का जोड़ (१६×२)-१	३१	३१

विशेषार्थ - आठवें गुणस्थान से एक शुक्ललेश्या ही पायी जाती है अत: आठवे गुणस्थान से लेश्या प्रत्येकपद बनता है। दसवें गुणस्थान में केवल सूक्ष्म लोभ ही पाया जाता है अत: वह प्रत्येकपद है। क्षपकश्रेणीपर एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है अत: क्षपकश्रेणीपर सम्यक्त्व प्रत्येकपद है।

गुणस्थान की अपेक्षा ऊर्ध्व-तिर्यक् पदसम्बन्धी सर्वपद के भंगों की सन्दृष्टि

गुणस्थान	ऊर्ध्व पद	तिर्यग् पद	गुण्य	गुणकार	ऋण	सर्वपदों की भंगसंख्या में
मिथ्यात्व	१५	५	६५५३६	७१९५/२	१	$\left(६५५३६\times\frac{७१९५}{२}\right)-१$ $=\frac{४७१५३१५२०}{२}-१$ $=२३५७६५७५९$
सासादन	१५	४	६५५३६	१७९९/२	१	$\left(६५५३६\times\frac{१७९९}{२}\right)-१$ $=\frac{११७८९९२६४}{२}-१$ $=५८९४९६३१$
मिश्र	१६	४	६५५३६	१६०७	१	(६५५३६×१६०७)-१ =१०५३१६३५१
असंयत (क्षायो.व उप.सम्य)	१६	५	६५५३६	७३६७	१	(६५५३६×७३६७)-१ =४८२८०३७११
क्षायिक सम्यक्त्व	१६	५	६५५३६	१६६४	१	(६५५३६×१६६४)-१ =१०९०५१९०३
देशसंयत (क्षायो. व उप.सम्य)	१६	५	६५५३६	२९९१	१	(६५५३६×२९९१)-१ =१९६०१८१७५
क्षायिक सम्यक्त्व	१६	५	६५५३६	५७६	१	(६५५३६×५७६)-१ =३७७४८७३५
प्रमत्तसंयत	१८	४	६५५३६	४१४४	१	(६५५३६×४१४४)-१ =२७१५८११८३
अप्रमत्त	१८	४	६५५३६	४१४४	१	(६५५३६×४१४४)-१ =२७१५८११८३
अपूर्वकरण (उपशमक)	१९	३	६५५३६	९९२	१	(६५५३६×९९२)-१ =६५०११७११

गुणस्थान	ऊर्ध्व पद	तिर्यग् पद	गुण्य	गुणकार	ऋण	सर्वपदों की भंगसंख्या में
अपूर्वकरण क्षपक	२०	२	६५५३६	४४८	१	(६५५३६×४४८)-१ =२९३६०१२७
अनिवृत्ति सवेद उपशमक	१९	३	६५५३६	९९२	१	(६५५३६×९९२)-१ =६५०११७११
अवेद उपशमक	१९	२	६५५३६	१६८	१	(६५५३६×१६८)-१ =११०१००४७
सवेदक्षपक	२०	२	६५५३६	४४८	१	(६५५३६×४४८)-१ =२९३६०१२७
अवेदक्षपक कषायसहित	२०	१	६५५३६	८०	१	(६५५३६×८०)-१ =५२४२८७९
सू.सांपराय (उपशमक)	२०	१	६५५३६	४८	१	(६५५३६×४८)-१ =३१४५७२७
क्षपक	२१	०	६५५३६	३२	१	(६५५३६×३२)-१ =२०९७१५१
उपशांतक.	१९	१	६५५३६	२४	१	(६५५३६×२४)-१ =१५७२८६३
क्षीणकषाय	२०	०	६५५३६	१६	१	(६५५३६×१६)-१ =१०४८५७५
सयोग के.	१४	०	२५६	६४	१	(२५६×६४)-१ =१६३८३
अयोग के.	१३	०	२५६	३२	१	(२५६×३२)-१ = ८१९१
सिद्ध	५	०	०	०	०	शुद्धभंग ३१

अडदालं चारिसया अपुव्वअणियट्टिवेदभागे य ।
सीदी कसायभागे तत्तो बत्तीस सोलं तु ।।८७२।।

अन्वयार्थ - (अपुव्वअणियट्टिवेदभागे य) क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थान में और अनिवृत्तिकरण क्षपक के सवेद भाग में **(चारिसया अडदालं)** चारसौ अडतालीस ४४८, **(कसायभागे सीदी)** अनिवृत्तिकरण क्षपक अवेद भाग और कषाय भाग में अस्सी ८०, **(तत्तो)** उसके आगे क्षपक सूक्ष्मसांपराय और क्षीणकषाय में **(बत्तीस सोलं तु)** क्रम से बत्तीस ३२ और सोलह १६ हैं।

जोगिम्मि अजोगिम्मि य बेसदछप्पणयाण गुणगारा ।
चउसट्ठी बत्तीसा गुणगुणिदेक्कूणया सव्वे ।।८७३।।

अन्वयार्थ - (जोगिम्मि अजोगिम्मि य) सयोगी और अयोगी में **(बेसदछप्पणयाण)** गुण्य दो सौ छप्पन २५६, २५६ **(गुणगारा)** और गुणकार क्रम से, **(चउसट्ठी बत्तीसा)** चौसठ ६४ और बत्तीस ३२ होते हैं। **(गुणगुणिदेक्कूणया)** गुण्य को गुणकार से गुणा करके एक कम करने पर, **(सव्वे)** सर्व पद भंगों का प्रमाण प्राप्त होता है।

सिद्धेसु सुद्धभंगा एक्कतीसा हवंति णियमेण ।
सव्वपदं पडि भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ।।८७४।।

अन्वयार्थ - (सिद्धेसु) सिद्धों में **(सुद्धभंगा)** गुण्य गुणकार के भेद से रहित शुद्ध भंग **(सव्वपदं पडि भंगा)** सर्व पदरूप भंग **(एक्कतीसा)** इकतीस ३१ **(णियमेण)** नियम से **(हवंति)** होते हैं। **(असहायपरक्कमुद्दिट्ठा)** इस प्रकार सहायता रहित पराक्रम वाले श्री वर्धमान तीर्थंकर ने कहा है।

आदेसेवि य एवं संभवभावेहि ठाणभंगाणि ।
पदभंगाणि य कमसो अव्वामोहेण आणेज्जो ।।८७५।।

अन्वयार्थ -(आदेसेवि य एवं) आदेश में अर्थात् मार्गणाओं में भी गुणस्थानवत् **(संभव भावेहिं)** यथा संभव होने वाले भावों से होने वाले **(ठाणभंगाणि)** स्थान भंगों **(पदभंगाणि य)** और पद भंगों को **(कमसो)** क्रम से **(अव्वामोहेण)** मोह से रहित होकर

(आणेज्जो) लाना चाहिए।

एकान्त मतों के भेद -

असिदिसदं किरियाणं अक्किरियाणं च आहु चुलसीदी।
सत्तट्ठण्णाणीणं वेणयियाणं तु बत्तीसं ।।८७६।।

अन्वयार्थ - (किरियाणं) क्रिया वादियों के, **(असिदिसदं)** एक सौ अस्सी १८०, **(अक्किरियाणं)** अक्रिया वादियों के **(चुलसीदी)** चौरासी ८४, **(सत्तट्ठण्णाणीणं)** अज्ञानवादियों के सडसठ ६७, **(वेणयियाणं)** वैनयिकों के,**(बत्तीसं)** बत्तीस ३२ **(च आहु)** भेद कहे हैं।

अत्थि सदो परदोवि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था।
कालीसरप्पणियदिसहावेहिं य तेहि भंगा हु ।।८७७।।

अन्वयार्थ - (अत्थि) अस्ति, (सर्वप्रथम ऐसा पद लिखना) **(सदो परदोवि य)** उसके ऊपर स्वत: परत: **(णिच्चाणिच्चत्तणेण य)** और नित्य-अनित्य, उसके ऊपर **(णवत्था)** जीव-अजीव आदि ९ पदार्थ **(कालीसरप्पणियदिसहावेहिं य)** काल, ईश्वर, आत्मा, नियति और स्वभाव लिखना। **(ते हि भंगा हु)** इस प्रकार १×४×९×५ = १८० क्रिया वादियों के भंग-भेद होते हैं।

अत्थि सदो परदो वि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था।
एसिं अत्था सुगमा कालादीणं तु वोच्छामि ।।८७८।।

अन्वयार्थ - (अत्थि) अस्ति **(सदो परदो वि य)** स्वत: या परत: , **(णिच्चाणिच्चत्तणेण य)** नित्यपने से या अनित्य पने से, **(णवत्था)** नौ पदार्थ , **(एसिं अत्था सुगमा)** इनका अर्थ सुगम है **(कालादीणं दु वोच्छामि)** कालवाद आदि का अर्थ कहूँगा।

विशेषार्थ - एकान्तमतों के ३६३ भेद -

१) क्रियावादियों के १८०+अक्रियावादि ८४+अज्ञानवादी ६७ + वैनयिक वादी ३२ = ३६३

१) क्रियावादियों के १८० भेद

काल	ईश्वर	आत्मा	नियति	स्वभाव				
जीव	अजीव	पुण्य	पाप	आस्रव	बन्ध	संवर	निर्जरा	मोक्ष
स्वतः	परतः	नित्यत्वेन	अनित्यत्वेन					
अस्ति								

१×४×९×५ = १८० भेद होते हैं।

अस्ति का अर्थ 'है' ऐसा होता है सो क्रियावादी वस्तु को अस्तिरूप ही मानकर क्रिया का स्थापन करते हैं। अपने स्वरूप चतुष्टय से अस्ति मानते हैं और परचतुष्टय से भी अस्तिरूप ही मानते हैं, नित्यपने से शाश्वत अस्तिरूप मानते हैं, अनित्यपने से क्षणिक अस्तिरूप मानते हैं। जीवादि नौ पदार्थों को मानते हैं।

उपर्युक्त पदों को लेकर अक्षसंचार क्रम के द्वारा जिस प्रकार जीवकाण्ड के गुणस्थान अधिकार में प्रमादों के भंगों का कथन किया है उसीप्रकार यहाँ भी भंग जानना। जैसे प्रथम भंग - १) स्वतः होते हुए जीव काल के द्वारा अस्ति किया जाता है।
२) परतः जीव काल के द्वारा अस्ति किया जाता है।
३) नित्य होते हुए जीव काल के द्वारा अस्ति किया जाता है।
४) अनित्य होते हुए जीव काल के द्वारा अस्ति किया जाता है।

अनन्तर जीव के स्थानपर अजीवादि को लेकर चार चार भंग होने से काल के साथ छत्तीस भंग होते हैं। इसीप्रकार ईश्वर आदि पदों को लेकर ३६-३६ भंग होते हैं। ३६×५=१८०।

क्रियावादी के १८० भंगों का गूढयन्त्र

काल ०	ईश्वर ३६	आत्मा ७२	नियति १०८	स्वभाव १४४				
जीव ०	अजीव ४	पुण्य ८	पाप १२	आस्रव १६	बन्ध २०	संवर २४	निर्जरा २८	मोक्ष ३२
स्वतः १	परतः २	नित्यरूप से ३	अनित्यरूप से ४					

काल आदि का अर्थ क्रम से कहते हैं -

कालो सव्वं जणयदि कालो सव्वं विणस्सदे भूदं ।
जागत्ति हि सुत्तेसु वि ण सक्कदे वंचिदुं कालो ।।८७९।।

अन्वयार्थ - (कालो सव्वं जणयदि) काल सबको उत्पन्न करता है, **(कालो सव्वं विणस्सदे)** काल ही सब का विनाश करता है। **(सुत्तेसु वि भूदं जागत्ति हि)** और काल ही सोते हुए प्राणियों को जगाता है **(कालो)** ऐसे काल को **(वंचिदुं)** ठगने में **(ण सक्कदे)** कोई समर्थ नहीं है। इस प्रकार काल से सर्व कार्य मानना काल वाद कहलाता है।

अण्णाणी हु अणीसो अप्पा तस्स य सुहं च दुक्खं च ।
सग्गं णिरयं गमणं सव्वं ईसरकदं होदि ।।८८०।।

अन्वयार्थ - (अप्पा) आत्मा **(अण्णाणी)** अज्ञानी अर्थात् ज्ञान से रहित है, **(अणीसो हु)** अनाथ है, अर्थात् कुछ भी करने में समर्थ नहीं है। **(तस्स य)** और उसका अर्थात् आत्मा का **(सुहं च दुखं)** सुख और दुःख **(सग्गं णिरयं गमणं च)** और स्वर्ग, नरक गमन आदि **(सव्वं ईसरकदं)** सब ईश्वर कृत **(होदि) है।** इस प्रकार ईश्वर का किया सर्व कार्य मानना ईश्वरवाद है।

एक्को चेव महप्पा पुरिसो देवो य सव्ववावी य ।
सव्वंगणिगूढोवि य सचेयणो णिग्गुणो परमो ।।८८१।।

अन्वयार्थ - (एक्को चेव महप्पा) संसार में, एक ही महान आत्मा है। **(पुरिसो देवो य)** वही पुरुष है, वही देव है, **(सव्ववावी य)** वही सर्वव्यापी है, **(सव्वंगणिगूढोवि य)** सर्वांगपने से अगम्य है, **(सचेयणो)** चेतना सहित है, **(णिग्गुणो)** निर्गुणी है, **(परमो)** उत्कृष्ट है। इस प्रकार आत्म स्वरूप से ही सबको मानना आत्म वाद का अर्थ है।

जत्तु जदा जेण जहा जस्स य णियमेण होदि तत्तु तदा।
तेण तहा तस्स हवे इदि वादो णियदिवादो दु ।।८८२।।

अन्वयार्थ - (जत्तु) जो **(जदा)** जिस समय **(जेण)** जिससे, **(जहा)** जैसे **(जस्स य)** और जिसको **(णियमेण होदि)** नियम से होता है **(तत्तु)** वह **(तदा)** उस समय

(तेण) उससे **(तहा)** वैसे **(तस्स)** उसके ही **(हवे)** होता है, **(इदि वादो)** ऐसा नियम से सभी वस्तु को मानना **(णियदिवादो दु)** नियति वाद कहलाता है।

को करइ कंटयाणं तिक्खत्तं मियविहंगमादीणं ।
विविहत्तं तु सहाओ इदि सव्वंपि य सहाओ त्ति ।।८८३।।

अन्वयार्थ - (कंटयाणं तिक्खत्तं) कंटक आदि को तीक्ष्ण **(मियविहंगमादीणं)** मृग व पक्षी आदिकों में **(विविहत्तं)** विविधपना,**(को करइ)** कौन करता है, (ऐसा प्रश्न करने पर यही उत्तर मिलता है कि) **(सव्वंपि)** सभी में भी **(इदि)** यह **(तु सहाओ)** स्वभाव ही है **(सहाओ त्ति)** स्वभाव से ही होता है ऐसे सबको मानना स्वभाव वाद है।

विशेषार्थ - १) कालवाद का अर्थ - काल ही सबको उत्पन्न करता है और काल ही सबको नष्ट करता है। प्राणियों के सोनेपर भी काल जागृत रहता है। काल को कोई नहीं ठग सकता, इसप्रकार काल से ही सब कार्य मानना कालवाद कहलाता है।

२) ईश्वरवाद का अर्थ - आत्मा अज्ञानी है, अनाथ है कुछ भी करने में समर्थ नहीं है। उसका सुख, दुख, स्वर्ग या नरक में जाना सब ईश्वर के अधीन है इसप्रकार ईश्वर का किया सर्व कार्य मानना ईश्वरवाद है।

३) आत्मवाद - संसार में एक ही महान आत्मा है, वही पुरुष है, देव है, सर्वव्यापी है, सर्वांग से गुप्त है, चेतना सहित है, निर्गुण है, सर्वोत्कृष्ट है। इसप्रकार आत्मस्वरूप से ही सभी को मानना आत्मवाद का अर्थ है।

४) नियतिवाद - जो जब जिसद्वारा जैसे जिसका नियम से होनेवाला है वह उसी काल में उसीके द्वारा उसीरूप से नियम से उसका होता है ऐसा मानना नियतिवाद है।

५) स्वभाववाद - काँटे आदि को तीक्ष्ण किसने बनाया? मृग पशुपक्षी नाना प्रकार के किसने बनाये ऐसा पूछनेपर उत्तर देता है - स्वभाव से ही ऐसा है। उसमें अन्य कोई कारण नहीं है ऐसे सबको स्वभाव से ही मानना स्वभाववाद है।

अक्रियावादी के ८४ भेद -

णत्थि सदो परदोवि य सत्तपयत्था य पुण्णपाऊणा ।
कालादियादिभंगा सत्तरि चदुपंतिसंजादा ।।८८४।।

णत्थि य सत्त पदत्था णियदीदो कालदो तिपंतिभवा ।
चोद्दस इदि णत्थित्ते अक्किरियाणं च चुलसीदी ।।८८५।

अन्वयार्थ - (णत्थि) सर्वप्रथम 'नास्ति' पद लिखना, **(सदो परदोवि य)** उसके ऊपर स्वतः और परतः पदों को लिखना। **(सत्तपयत्था)** सात पदार्थों को **(य पुण्णपाऊणा)** पुण्य-पाप के बिना लिखना। उनके ऊपर **(कालादियादिभंगा)** कालादि पाँच पद लिखना, **(चदुपंतिसंजादा)** इस प्रकार चार पंक्तियों का परस्पर गुणा करने पर **(सत्तरि)** सत्तर भंग होते हैं। तथा

(णत्थि) नास्ति पद **(सत्त पदत्था)** उसके ऊपर सात पदार्थ **(णियदीदो)** नियति **(कालदो)** और काल से **(तिपंति)** इस प्रकार तीन पंक्तियों से **(भवा चोद्दस)** उत्पन्न हुए चौदह पद होते हैं। **(इदि णत्थित्ते)** इनका योग अर्थात् दोनों नास्तियों को मिलाने पर ७० + १४ = ८४ **(अक्किरियाणं च)** अक्रियावादियों के **(चुलसीदी)** चौरासी भंग होते हैं।

विशेषार्थ - अक्रियावादी वस्तु को नास्तिरूप मानकर क्रिया का स्थापन नहीं करता है।

७० भङ्गों की रचना १×२×७×५=७०

काल	ईश्वर	आत्मा	नियति	स्वभाव		
०	१४	२८	४२	५६		
जीव	अजीव	आस्रव	संवर	निर्जरा	बन्ध	मोक्ष
०	२	४	६	८	१०	१२
स्वतः	परतः					
१	२					
नास्ति						

१४ भङ्गों की रचना ७×२ = १४

नियति	काल					
जीव	अजीव	आस्रव	संवर	निर्जरा	बन्ध	मोक्ष
		नास्ति				

भङ्ग - १) जीव स्वतः काल से नास्ति किया जाता है।

२) जीव परतः काल से नास्ति किया जाता है।

इसीप्रकार जीव के स्थानपर अजीवादि कहनेपर १४ भंग एक काल के आश्रय से

हुए। काल के स्थानपर ईश्वरादि कहनेपर ७० भंग होते हैं। १४×५ = ७०

१) जीव नियति से नास्ति किया जाता है।

२) जीव काल से नास्ति किया जाता है।

इसीप्रकार जीव के स्थानपर अजीवादि कहनेपर १४ भंग होते हैं। इसप्रकार ७०+१४ मिलकर ८४ भंग अक्रियावादियों के होते हैं।

अज्ञान वाद के भंग -

को जाणइ णवभावे सत्तमसत्तं दयं अवच्चमिदि ।
अवयणजुदसत्ततयं इदि भंगा होंति तेसट्ठी ।।८८६।।
को जाणइ सत्तचऊ भावं सुद्धं खु दोण्णिपंतिभवा ।
चत्तारि होंति एवं अण्णाणीणं तु सत्तट्ठी ।।८८७।।

अन्वयार्थ - (णवभावे) जीवादि नौ पदार्थों में से प्रत्येक को **(सत्तमसत्तं)** अस्ति, नास्ति रूप, **(दयं)** अस्तिनास्ति, **(अवच्चमिदि)** अवक्तव्य और **(अवयणजुद)** अवक्तव्य सहित **(सत्ततयं)** अस्ति आदि तीन भंग, इस प्रकार सात भंगों से ऐसा स्वरूप है, **(को जाणइ)** ऐसा कौन जानता है, **(इदि तेसट्ठी भंगा होंति)** इस प्रकार ९×७=६३ त्रेसठ भंग होते हैं।

(सत्तचऊ) सद्, असद्, सदसत्, अवाच्य ये चार भाव **(भावं सुद्धं खु)** और शुद्ध भाव **(दोण्णि पंति भवा)** दो पंक्ति में लिखने से, **(चत्तारि होंति)** चार भंग होते हैं **(को जाणइ)** ऐसा कौन जानता है **(एवं)** इस प्रकार **(अण्णाणीणं)** अज्ञान वादियों के **(तु सत्तट्ठी)** सड़सठ भंग होते हैं।

विशेषार्थ - अज्ञानवाद के ६७ भेद - अज्ञानवादी अज्ञान को ही पुरस्कृत करते हैं। जीवादि ९ पदार्थों में से एक एक को सप्तभंग से जानना। ९×७ = ६३

९ पदार्थ - जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य, पाप

७ भंग - अस्ति, नास्ति, अस्तिनास्ति, अवक्तव्य, अस्तिअवक्तव्य, नास्तिअवक्तव्य, अस्तिनास्तिअवक्तव्य

अज्ञानवाद के ६३ भंग

१) जीव है ऐसा कौन जानता है।

२) जीव नहीं है ऐसा कौन जानता है।

३) जीव है भी और नहीं भी है ऐसा कौन जानता है।

४) जीव अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है।

५) जीव अस्ति अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है।

६) जीव नास्ति अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है।

७) जीव अस्ति नास्ति अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है।

इसीप्रकार जीव के स्थानपर अजीवादि रखनेपर ६३ भेद होते हैं।

अज्ञानवाद के ४ भंग

अस्ति नास्ति अस्तिनास्ति अवक्तव्य

शुद्धपदार्थ

१) शुद्ध पदार्थ है ऐसा कौन जानता है इत्यादि ४ भंग

उपर्युक्त ६३+४=६७ भेद अज्ञानवाद के होते है।

वैनयिकवाद के मूल भंग -

मणवयणकायदाणगविणवो सुरणिवइणाणिजदिबुड्ढे ।
बाले मादुपिदुम्मि य कायव्वो चेदि अट्ठचऊ ।।८८८।।

अन्वयार्थ -(सुरणवइणाणिजदिबुड्ढे) देव, राजा, ज्ञानी, यति, बूढा **(बाले)** बालक, **(मादुपिदुम्मि य)** और माता, पिता इन आठ की, **(मणवयणकायदाणगविणवो)** मन, वचन, काय और दान देकर विनय **(कायव्वो)** करनी चाहिए। **(चेदि अट्ठचऊ)** इस प्रकार वैनयिक वाद के ८×४=३२ भेद हैं।

विशेषार्थ - वैनयिकवाद के ३२ भेद -

देव, राजा, ज्ञानी, यति, बूढा, बालक, माता और पिता इन आठ की मन, वचन, काय और दानसम्मान से विनय करनी चाहिए। इसप्रकार वैनयिकवाद के ८×४=३२ भेद हैं। विनयवादी गुण अवगुण की परीक्षारहित विनय से ही सिद्धि मानते हैं।

३२ भंगों की रचना -

सुर	नृपति	यति	ज्ञानी	वृद्ध	बाल	माता	पिता

मन	वचन	काय	दान

सच्छंददिट्ठिहि वियप्पियाणि तेसट्ठिजुत्ताणि सयाणि तिण्णि ।
पासंडिणं वाउलकारणाणि अण्णाणिचित्ताणि हरंति ताणि ।८८९।।

अन्वयार्थ - (सच्छंददिट्ठिहि) इस प्रकार स्वच्छंद अर्थात् अपना मन माना जिनका श्रद्धान है ऐसे पुरुषों ने, ये **(तेसट्ठिजुत्ताणि सयाणि तिण्णि)** तीन सौ त्रेसठ **(वियप्पियाणि)** भेद कल्पित किये हैं, जो **(पासंडिणं)** पाखण्डी जीवों को **(वाउलकारणाणि)** व्याकुलता उत्पन्न करने वाले हैं और **(ताणि)** उन **(अण्णाणि चित्ताणि)** अज्ञानी जीवों के चित्त का **(हरंति)** हरण करने वाले हैं।

इतर एकान्तवाद -

आलस्सड्ढो णिरुत्थाहो फलं किंचिण्ण भुंजदे ।
थणं खीरादिपाणं वा पउरुसेण विणा ण हि ।।८९०।।

अन्वयार्थ - (आलस्सड्ढो) जो आलस्य से सहित हो, **(णिरुत्थाहो)** उत्साह से रहित हो, वह **(फलं किंचिण्ण भुंजदे)** कुछ भी फल नहीं भोग सकता। जैसे **(थणं खीरादिपाणं वा)** स्तनों का दूध पीना, **(पउरुसेण विणा ण हि)** पुरुषार्थ के बिना नहीं हो सकता, उसी प्रकार पुरुषार्थ से ही सब कार्य होते हैं, ऐसा मानना पौरुष वाद है।

विशेषार्थ - १) पौरुषवाद - जो आलस्य से सहित हो तथा उत्साह व उद्यमरहित हो वह कुछ भी फल नही भोग सकता। बिना पौरुष के माता के स्तन से दूध भी नही पिया जा सकता है अत: पौरुष से ही कार्य की सिद्धि होती है ऐसा मानना पौरुषवाद है।

दइवमेव परं मण्णे धिप्पउरुसमण्णत्थयं ।
एसो सालसमुत्तुंगो कण्णो हण्णइ संगरे ।।८९१।।

अन्वयार्थ - (दइवमेव) दैव को ही **(परं)** उत्तम **(मण्णे)** मैं मानता हूँ, **(धिप्पउरु समण्णत्थयं)** निरर्थक पुरुषार्थ को धिक्कार हो! देखो! **(एसो साल समुत्तुंगो)** साल वृक्ष के समान ऊँचा **(कण्णो)** कर्ण राजा, **(संगरे)** युद्ध में, **(हण्णइ)** मारा गया ।

विशेषार्थ - २) दैववाद - मै दैव को सर्वोत्कृष्ट मानता हूँ। पौरुष निरर्थक है उसे धिक्कार हो। देखो सालवृक्ष की तरह ऊँचा कर्ण महाभारत के युद्ध में मारा गया। इसप्रकार

दैव से ही सिद्धि माननेवाला दैववादी है।

संजोगमेवेत्ति वदंति तण्णा णेवेक्कचक्केण रहो पयादि ।
अंधो य पंगू य वणप्पविट्ठा ते संपजुत्ता णयरं पविट्ठा ।८९२।।

अन्वयार्थ - (तण्णा) यथार्थ ज्ञानी **(संजोगमेवेत्ति)** संयोग से ही कार्य की सिद्धि, **(वदंति)** मानते हैं, या कहते हैं, क्योंकि **(णेवेक्कचक्केण)** न एक पहिये से ही **(रहो)** रथ **(पयादि)** चल सकता है तथा **(अंधो य)** एक अंधा और **(पंगू य)** दूसरा लंगडा **(वणप्पविट्ठा)** वन में प्रविष्ट हुए, वन में आग लग जाने से **(ते)** वे दोनों **(संपजुत्ता)** मिलकर **(णयरं)** नगर में **(पविट्ठा)** प्रविष्ट हुए । इस प्रकार संयोग से कार्य की सिद्धि मानने वाले संयोग वादी हैं।

विशेषार्थ - ३) संयोगवाद - दैव और पौरुष इन दोनों के संयोग से ही कार्यसिद्धि मानते है। एक पहिये से रथ नहीं चल सकता। एक अन्धा और एक लंगडा वन में फँस गये। अचानक दोनों का वहाँ मिलाप हुआ और अन्धे के ऊपर लंगडा पुरुष बैठ गया और इस तरह दोनों नगर में आ गये। इसप्रकार संयोग से ही कार्यसिद्धि माननेवाला संयोगवादी है।

सइउट्ठिया पसिद्धी दुव्वारा मेलिदेहि वि सुरेहिं ।
मज्झिमपंडवखित्ता माला पंचसुवि खित्तेव ।।८९३।।

अन्वयार्थ - (सइउट्ठिया) एक ही बार उठी हुई **(पसिद्धी)** लोक प्रसिद्धि, **(सुरेहिं वि)** देवों से भी **(मेलिदेहिं)** मिलकर **(दुव्वारा)** दूर नहीं हो सकती। जैसे, द्रौपदी ने **(माला)** माला **(मज्झिमपंडवखित्ता)** केवल मध्यवर्ती पांडव अर्थात् अर्जुन को डाली, किन्तु **(पंचसुवि खित्तेव)** ''पाँचों को ही माला डाली'' ऐसी प्रसिद्धि हो गयी। इस प्रकार लोकवादी लोक प्रवृत्ति को ही सर्वस्व मानते हैं ।

विशेषार्थ - ४) लोकवाद - एक बार जो बात लोक में फैल जाती है उसे सब देव भी मिलकर मिटा नहीं सकते। जैसे दौपदी ने अर्जुन के गले में वरमाला डाली थी किन्तु लोक में प्रसिद्ध हो गया कि पाँचो पाण्डवों के गले में माला डाली है। इसप्रकार लोकवादी लोकप्रवृत्ति को ही सर्वस्व मानते हैं।

जावदिया वयणबहा तावदिया चेव होंति णयवादा ।
जावदिया णयवादा तावदिया चेव होंति परसमया ।।८९४।।

अन्वयार्थ - **(जावदिया वयणबहा)** जितने वचन के मार्ग हैं, **(तावदिया)** उतने **(चेव)** ही **(णयवादा)** नयवाद **(होंति)** होते हैं । **(जावदिया णयवादा)** और जितने नयवाद हैं, **(तावदिया)** उतने **(चेव)** ही **(परसमया)** पर समय, **(होंति)** होते हैं ।

विशेषार्थ - जितने वचन के मार्ग है उतने नयवाद हैं और जितने नयवाद हैं उतने परसमय हैं। जो कुछ भी वचन बोले जाते हैं वे किसी अपेक्षा से कहे जाते हैं। अपेक्षा ही नय है। अपेक्षारहित वचन ग्रहण करना मिथ्यामत है।

परसमयाणं वयणं मिच्छं खलु होइ सव्वहा वयणा ।
जइणाणं पुण वयणं सम्मं खु कहंचिवयणादो ।।८९५।।

अन्वयार्थ - **(परसमयाणं)** परमत के, **(वयणं)** वचन, **(सव्वहा)** सर्वथा रूप, **(वयणा)** कहने से **(खलु)** नियम से, **(मिच्छं)** असत्य **(होदि)** होते हैं। **(पुण)** और **(जइणाणं)** जैनमत के **(वयणं)** वचन **(कहंचिवयणादो)** कथंचित बोलने से **(खु सम्मं)** सत्य हैं ।

विशेषार्थ - निरपेक्षा नया मिथ्या सापेक्षा वस्तु तेऽर्थकृत्।

अन्य दर्शनों का वचन मिथ्या है क्योंकि वे वस्तु को सर्वथा एकरूप ही मानते हैं। किन्तु जैनों का वचन सत्य है क्योंकि वे वस्तु को कथंचित् उसरूप कहते हैं।

।।इति भाव चूलिका सम्पूर्णम् ।।

८ त्रिकरणचूलिकाधिकारः

णमह गुणरयणभूसण सिद्धंतामियमहद्धि भवभावं।
वरवीरणंदिचंदं णिम्मलगुणमिंदणंदिगुरुं ।।८९६।।

अन्वयार्थ - **(गुणरयणभूसण)** हे गुणरूपी रत्नों के आभूषण (चामुण्डराय)! तुम **(सिद्धंतामियमहद्धि भवभावं)** सिद्धान्तशास्त्ररूपी अमृतमय महासमुद्र में से जिनका भाव उत्पन्न हुआ है ऐसे **(वरवीरणंदिचंद)** उत्कृष्ट वीरनन्दि नामा आचार्यरूपी चन्द्रमा को तथा **(णिम्मल गुणमिंदणंदिगुरुं)** निर्मलगुणरूप इन्द्रनन्दि नामक गुरु को **(णमह)** नमस्कार करो।

तीन करणों का स्वरूप -

इगिवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं ।
पढमं अधापवत्तं करणं तु करेदि अपमत्तो ।।८९७।।

अन्वयार्थ - **(इगिवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि)** चारित्र मोहनीय की २१ प्रकृतियों का क्षय अथवा उपशम करने के लिए **(तिकरणाणि)** अध:प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण ये विशुद्धि रूप तीन करण होते हैं। **(तहिं)** उनमें **(पढमं)** प्रथम **(अधापवत्तं करणं)** अध:प्रवृत्तकरण को **(अपमत्तो)** सातिशय अप्रमत्त संयत गुणस्थानवर्ती जीव **(तु करेदि)** करता है।

विशेषार्थ - अनन्तानुबंधी ४ कषाय को छोडकर शेष चारित्रमोह की प्रकृतियों का क्षपण अथवा उपशम करने के लिए कारण तीन प्रकार के परिणाम हैं - १) अध:प्रवृत्तकरण २) अपूर्वकरण ३) अनिवृत्तिकरण
उनमें से अध:प्रवृत्तकरण को सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती करता है।

जम्हा उवरिमभावा हेट्ठिमभावेहि सरिसगा होंति ।
तम्हा पढमं करणं अधापवत्तोत्ति णिद्दिट्ठं ।।८९८।।

अन्वयार्थ - (जम्हा) जिस कारण इस प्रथम करण में, **(उवरिमभावा)** उपरितन समयवर्ती भाव (परिणाम) **(हेट्ठिमभावेहिं)** अधस्तन समय सम्बन्धी भावों के **(सरिसगा)** समान **(होंति)** होते हैं, **(तम्हा)** इसलिए **(पढमं करणं)** प्रथम करण का, **(अधापवत्तोत्ति)** ''अध:प्रवृत्तकरण'' ऐसा अन्वर्थ नाम **(णिद्दिट्ठं)** कहा गया है।

अंतोमुहुत्तमेत्तो तक्कालो होदि तत्थ परिणामा ।
लोगाणमसंखपमा उवरुवरिं सरिसवड्ढिगया ।।८९९।।

अन्वयार्थ - (तक्कालो) उस अध:प्रवृत्त करण का काल **(अंतोमुहुत्तमेत्तो)** अन्तर्मुहूर्त मात्र है। **(तत्थ)** उस काल में **(परिणामा)** जीव के परिणाम, **(लोगाणमसंखपमा)** असंख्यात लोकप्रमाण **(होदि)** होते हैं, और वे परिणाम प्रथम समय से लेकर, **(उवरुवरिं)** आगे आगे के समयों में **(सरिसवड्ढिगया)** समान वृद्धि (चय) रूप से अन्त समय पर्यन्त होते हैं।

बावत्तरितिसहस्सा सोलसचउचारि एक्कयं चेव ।
धण अद्धाणविसेसे तियसंखा होइ संखेज्जे ।।९००।।

अन्वयार्थ - यहाँ अंकसंदृष्टि में, सर्वघन **(बावत्तरितिसहस्सा)** तीन हजार बहत्तर, अध:प्रवृत्तकरण का काल **(सोलस)** सोलह समय, तिर्यग् गच्छ (अनुकृष्टि खण्ड) **(चउ)** चार, (उर्ध्वरूपवृद्धि का प्रमाण) विशेष **(चारि)** ४, (तिर्यग्रूप अनुकृष्टि में वृद्धि का प्रमाण) **(एक्कयं)** एक; **(धण अद्धाणविसेसे)** सर्व धन, काल और विशेष, विशेष होते हैं। और वृद्धि अर्थात् चय को सिद्ध करने के लिए, **(तियसंखा)** तीन संख्या **(संखेज्जे)** संख्यात की सहनानी, **(होइ)** होती है।

विशेषार्थ - १) अध:प्रवृत्तकरण -

जिस करण में ऊपर के समयसंबंधी भाव नीचे के समय सम्बन्धी भावों के समान होते हैं उस करण को अध:प्रवृत्तकरण कहते हैं। जैसे किसी जीव के दुसरे-तिसरे आदि समयों में जैसा भाव होता है वैसा भाव किसी जीव के पहले समय में ही होता है।

अध:प्रवृत्तकरण के परिणामों की ऊर्ध्व और अनुकृष्टि रचना का गणित -

१) **सर्वधन** - करण के सर्वसमयसंबंधी परिणामों का समूह

२) **आदिधन** - चयरहित सर्वसमयसंबंधी सदृशधनों का जोड़

३) **चयधन** - सर्वसमयसंबंधी चयों का जोड़

४) **ऊर्ध्वगच्छ** - करणकाल के समयों का प्रमाण (समयों की रचना ऊपर ऊपर होती है अत: उसे ऊर्ध्वगच्छ कहते हैं।)

५) **तिर्यग् गच्छ (अनुकृष्टि गच्छ)**- एक समय के परिणामों के खण्डों का प्रमाण

६) **ऊर्ध्वचय** - प्रतिसमय समानरूप से बढ़नेवाले परिणामों का प्रमाण

७) **अनुकृष्टिचय** - प्रत्येक खण्ड में बढ़नेवाले परिणामों का प्रमाण

	प्रमाण	**अंकसंदृष्टि**	**अर्थसंदृष्टि**
सर्वधन	असंख्यातलोक	३०७२	$\equiv \partial$
ऊर्ध्वगच्छ	अंतर्मुहूर्त	१६	२१११
अनुकृष्टि गच्छ	ऊर्ध्वगच्छ / संख्यात	$\frac{१६}{४}$ = ४	$\frac{२१११}{१}$ = २११ (१ कटा हुआ)
ऊर्ध्वचय	सर्वधन / (पद)^२×संख्यात	$\frac{३०७२}{१६×१६×३}$ = ४	$\equiv \partial$ २१११।२१११।१
अनुकृष्टिचय	ऊर्ध्वचय / अनुकृष्टिगच्छ	$\frac{४}{४}$ = १	$\equiv \partial$ २१११।२१११।१।२११

चय लाने के लिए संख्यात ३ माना   संदृष्टि १

चयधन लाने का सूत्र

चयधन = $\frac{पद-१}{२}$ × चय × गच्छ $\frac{१६-१}{२}$ ×४×१६ = $\frac{१५}{२}$ × ४ × १६ (२ और १६ कटे, ऊपर ८)

= ६०×८ = **४८०**

आदिधन = सर्वधन - चयधन

३०७२ - ४८० = **२५९२** आदिधन

आदिधणादो सव्वं पचयधणं संखभागपरिमाणं ।
करणे अधापवत्ते होदि त्ति जिणेहि णिद्दिट्ठं ।।९०१।।

अन्वयार्थ - **(अधापवत्ते करणे)** अध:प्रवृत्त करण में, **(सव्वं पचयधणं)** सर्व प्रचय धन, **(आदिधणादो)** आदिधन के, **(संखभागपरिमाणं)** संख्यातवें भाग प्रमाण **(होदि)** होता है, **(त्ति जिणेहि)** ऐसा जिनेन्द्र देव ने **(णिद्दिट्ठं)** कहा हैं।

विशेषार्थ - आदिधन के संख्यातवें भागप्रमाण चयधन होता है। इसे त्रैराशिक द्वारा सिद्ध करते हैं।

४८० की एक शलाका होती है तो २५९२ में कितनी शलाका होगी ?

प्रमाण	फलराशि	इच्छाराशि	लब्ध
४८०	१	२५९२	$\frac{\text{फल}\times\text{इच्छा}}{\text{प्रमाण}} = \frac{\text{१}\times\text{२५९२ (२७)}}{\text{४८० (५)}} = \boxed{\frac{\text{२७}}{\text{५}}}$ शलाका

दूसरा त्रैराशिक

प्रमाण	फलराशि	इच्छाराशि	लब्ध
$\frac{\text{२७}}{\text{५}}$ शलाका में	२५९२ धन	१ शलाका में कितना ?	$\frac{\text{२५९२}}{\frac{\text{२७}}{\text{५}}}$
$= \frac{\text{२५९२}\times\text{५}}{\text{२७}} = \boxed{\text{४८०}}$ चयधन			

अत: यहाँ चयधन आदिधन के $\boxed{\frac{\text{२७}}{\text{५}}}$ भागप्रमाण है।

उभयधणे सम्मिलिदे पदकदिगुणसंखरूवहदपचयं ।
सव्वधणं तं तम्हा पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ।।९०२।।

अन्वयार्थ - **(उभयधणे)** उभयधन अर्थात् आदिधन और चयधन को, **(सम्मिलिदे)** मिलाने पर **(सव्वधणं)** सर्व धन होता हैं, अथवा **(पदकदिगुणसंखरूवहदपचयं)** पद के वर्ग को संख्यात से गुणा करके पुन: चय से गुणा

करने पर सर्वधन का प्रमाण होता है। (सर्वधन = आदिधन + चयधन) अथवा (सर्वधन = गच्छ^{२} × संख्यात × चय) तथा **(पदकदि- संखेण)** पद के वर्ग से तथा संख्यात से **(तं)** सर्वधन को **(भाजिदे)** भाग देने पर **(पचयं)** चय प्राप्त होता है।

$$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{पद}^{२} \times \text{संख्यात}} = \text{चय}$$

सर्वधन = आदिधन + चयधन = २५९२ + ४८० = $\boxed{३०७२}$

अथवा

सर्वधन = (गच्छ)^{२} × संख्यात × चय

अंकसंदृष्टि = $(१६)^{२} \times ३ \times ४ = २५६ \times ३ \times ४ = ७६८ \times ४ = \boxed{३०७२}$

अर्थसंदृष्टि = $\frac{(२\cancel{१}११ \times २\cancel{१}११) \times \cancel{१} \times \equiv \partial}{\cancel{२}१११ । \cancel{२}११\cancel{१} । \cancel{१}} = \boxed{\equiv \partial}$ → सर्वधन

इसलिए सर्वधन को पद के वर्ग व संख्यात से भाग देनेपर चय का प्रमाण आता है।

चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं ।
आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणं ।।९०३।।

अन्वयार्थ - (दव्वं) सर्व द्रव्य में से **(चयधणहीणं)** चयधन घटाने पर आदिधन प्राप्त होता है, उसे **(पदभजिदे)** पद से भाग देने पर **(आदिपरिमाणं)** प्रथम समय सम्बन्धी परिणामों का प्रमाण प्राप्त **(होदि)** होता है। आदि = $\frac{(\text{सर्वधन - चयधन})}{\text{गच्छ}}$

(आदिम्मि) प्रथम समय के प्रमाण में **(चये उड्ढे)** एक एक चय की वृद्धि करने पर **(पडिसमयधणं तु भावाणं)** प्रत्येक समय सम्बन्धी धन अर्थात् द्वितीय आदि समयों के परिणामों का प्रमाण प्राप्त होता है।

प्रथमसमयसंबंधी परिणामपुंज = $\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}} = \frac{२५९२}{१६} = \boxed{१६२}$

द्वितीयसमयसंबंधी परिणामपुंज = प्रथमसमय परिणामपुंज + १ ऊर्ध्वचय
१६२ + ४ = **१६६**

इसीमें एक एक ऊर्ध्वचय मिलानेपर तृतीयादि समयों के परिणामों का प्रमाण आता है। जैसे

समय	१	२	३	४	५	६	७	८
परिणामपुंज	१६२	१६६	१७०	१७४	१७८	१८२	१८६	१९०
समय	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
परिणामपुंज	१९४	१९८	२०२	२०६	२१०	२१४	२१८	२२२

पचयधणस्साणयणे पचयप्पभवं तु पचयमेव हवे ।
रूऊण पदं तु पदं सव्वत्थ वि होइ णियमेण ।।९०४।।

अन्वयार्थ - (पचयधणस्साणयणे) प्रचय धन प्राप्त करने में जो वृद्धि हुई हैं, वह **(पचयं)** प्रचय है। **(पभवं)** प्रभव - जो आदि में होता है, **(तु पचयमेव हवे)** वह प्रचय ही है। **(रूऊण पदं तु पदं)** गच्छ में से एक कम यहाँ पद का प्रमाण है। इस प्रकार **(सव्वत्थवि)** सर्वत्र **(णियमेण)** नियम से **(होइ)** होता है।

विशेषार्थ - चयधन निकालने का दूसरा सूत्र -

चयधन प्राप्त करने में चय और प्रभव (आदि) चय ही होता है।

प्रथम समय के परिणामों में चय नहीं हैं। दूसरे समय में एक चय मिलाया वह आदि हो गया। उत्तरोत्तर एक एक चय बढ़ता गया वही उत्तर अर्थात् चय है। दूसरे समय में ४, तीसरे समय में ४+४, चौथे समय में ४+४+४ इसप्रकार एक एक चय अन्तिम समय तक बढ़ता गया इन सबका जोड़ चयधन कहलाता है।

यहाँपर प्रथम समय में चय का अभाव है अत: गच्छ का प्रमाण एक कम पद है १६-१ = १५

$$\text{चयधन} = \left\{\left[\left(\frac{\text{पद}-१}{२}\times\text{चय}\right)+\text{आदि}\right]\times\text{गच्छ}\right\}$$

पद १५

२११३-१

$$\left[\left(\frac{१५-१}{२}\times ४\right)+४\right]\times १५$$

$$\left(\frac{१४}{\not{२}}\times \overset{२}{\not{४}}\right)+४\ \times १५ = \left[२८+४\right]\times १५$$

$$३२\times १५ = \boxed{४८०}\ \text{चयधन}$$

अर्थसंदृष्टि से -

$$\left[\left(\frac{(२११३-१)-१}{२}\times\frac{\equiv\partial}{२११३।२११३।३}\right)+\frac{\equiv\partial}{२११३।२११३।३}\right]\times २११३-१$$

$$\left[\frac{\equiv\partial\ २११३-२}{२११३।२११३।३।२}+\frac{\equiv\partial\ २}{२११३।२११३।३\ २}\right]\times २११३-१ \text{ दो का समच्छेद करना}$$

$$\left[\frac{\equiv\partial\ २११३-२+२}{२११३।२११३।३।२}\right]\times २११३-१$$

दो घाटि और दो अधिक अपवर्तित हो गया

$-२+२ = ०$

$$\frac{\equiv\partial\ २\not{१}१३}{२११३।२\not{१}१३।३।२}\times २११३-१$$

$$\boxed{\frac{\equiv\partial\times २११३-१}{२११३।३।२}}\ \text{चयधन}$$

चयधन निकालने का प्रथम सूत्र

$$\text{चयधन} = \frac{\text{पद}-१}{२}\times\text{चय}\times\text{गच्छ}$$

$$\frac{२११३-१}{२}\times\frac{\equiv\partial}{२११३।२\not{१}१३।३}\times २\not{१}१३$$

अपवर्तन करने पर

$$\boxed{\frac{\equiv\partial\ २११३-१}{२११३।३।२}}\qquad \frac{\equiv\partial\ \overset{१\frown}{२११३}}{२११३।३।२}$$

(एक घाटि को संख्या के ऊपर १⌢ ऐसे लिखने की पद्धति है।)

आदिधन = सर्वधन - चयधन → ३०७२ - ४८० = २५९२

अर्थसंदृष्टि $\equiv \partial$ - $\equiv \partial$ २१११-१ / २१११।१।२ समच्छेद करनेपर

$\equiv \partial$ २१११।१।२ / २१११।१।२ - $\equiv \partial$ २१११-१ / २१११।१।२

ऋणराशि के एक ऋण के प्रमाण को अलग रखना $\equiv \partial$ / २१११।१।२

शेष

$\equiv \dfrac{\partial \text{ २१११।१।२}}{\text{२१११।१।२}} - \dfrac{\equiv \partial \text{ २१११}}{\text{२१११।१।२}}$

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर ऋणराशि के एक गुणकार को कम करना

$\equiv \partial$ २१११।१।२^(१−) / २१११।१।२

ऋण का ऋण राशि का धन होता है अत: अलग रखे हुए ऋण को उपर्युक्त लब्ध में मिलाना

$\equiv \partial$ २१११।१।२^(१−) / २१११।१।२ + $\equiv \partial$ / २१११।१।२

समच्छेद है अत: समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकारपर एक अधिक किया

$\equiv$ २१११।१।२^(१−) + १ / २१११।१।२

आदिधन

प्रथम समय परिणाम पुंज $= \dfrac{\text{आदिधन}}{\text{पद}} = \dfrac{\text{२५९२}}{\text{१६}}$ = १६२ =

$\equiv \partial$ २१११।१।२^(१−) + १ / २१११।१।२।२१११

द्वितीयसमय परिणाम पुंज = प्रथमसमयपरिणामपुंज + ऊर्ध्वचय १६२ + ४ = १६६

$\equiv \partial$ २१११।१।२^(१−) + १ / २१११।१।२।२१११ + $\equiv \partial$ / २१११।२१११।१

दो का समच्छेद करना

$\equiv \partial$[२१११।(१।२-१)] + १ / २१११।१।२।२१११ + $\equiv \partial$ २ / २१११।२१११।१।२

समान संख्याओं को निकालना

$$\equiv \partial \frac{\left[२१११।(१\times२-१)\right]+१+२}{२१११।२१११।१।२} = \boxed{\equiv \partial \frac{\overline{^{३}\,२१११।१\times२}}{२१११।२१११।१।२}}$$

द्वितीयसमयसंबंधी परिणामपुंज

द्विचरम समयसंबंधी परिणामपुंज = प्रथमसमयसंबंधी परिणामपुंज + (चय×गच्छ-२)

अंकसंदृष्टि से १६२ + (४×१६-२) = १६२ + (४ × १४) = १६२ + ५६ = २१८

$$\left(\equiv \partial \frac{२१११।(१\times२-१)+१}{२१११।२१११।१।२}\right) + \left(\equiv \partial \frac{२१११-२}{२१११।२१११।१}\right)$$

यहाँ अन्य सब भागहार समान है केवल धनराशि में २ भागहार समान नहीं है इसलिए धनराशि में २ का भाग देना और २ का गुणा करना।

$$\left(\equiv \partial \frac{२१११(१\times२-१)+१}{२१११।२१११।१।२}\right) + \left(\equiv \partial \frac{(२१११-२)\times२}{२१११।२१११।१\times२}\right)$$

धनराशि के ऋणराशि २ का प्रमाण अलग रखना $\equiv \partial \frac{२\times२}{२१११।२१११\times१\times२}$

शेष $$\left(\equiv \partial \frac{२१११(१\times२-१)+१}{२१११।२१११।१।२}\right) + \left(\equiv \partial \frac{२१११\times२}{२१११।२१११।१\times२}\right)$$

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर धनराशि का २ गुणकार मिलाना

$$\equiv \partial \frac{२१११(१\times२-१+२)+१}{२१११।२१११।१।२}$$

$$\equiv \partial \frac{\left\{२१११(१\times२+१)\right\}+१}{२१११।२१११।१।२}$$ इसमें से अलग रखे हुए ऋणराशि को घटाना

$$\equiv \partial \frac{\left\{२१११(१\times२+१)\right\}+१}{२१११।२१११।१।२} - \equiv \partial \frac{४}{२१११।२१११।१।२}$$

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में ऋणराशि का ४ गुणकार घटाना

$$\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}+१-४}{२१११।२१११।१।२}$$

$$\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}-३}{२१११।२१११।१।२}$$

शास्त्र की पद्धति से उपर्युक्त संख्या

३ ——⌒——   १ —— $\equiv \partial$ २१११।१।२   २१११।२१११।१।२

द्विचरमसमय परिणामपुंज

चरमसमयसंबंधी परिणामपुंज = द्विचरमसमयसंबंधी परिणामपुंज + १ चय

अंकसंदृष्टि से २१८ + ४ = २२२

$$\left(\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}-३}{२१११।२१११।१।२}\right) + \frac{\equiv \partial}{२१११।२१११।१}$$

दो का समच्छेद करने पर

$$\left(\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}-३}{२१११।२१११।१।२}\right) + \frac{\equiv \partial\ २}{२१११।२१११।१।२}$$

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में धनराशि का २ गुणकार मिलाना

$$\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}-३+२}{२१११।२१११।१।२}$$

$$\equiv \partial \frac{\{२१११(१\times२+१)\}-१}{२१११।२१११।१।२} =$$

१ ——⌒——   १ —— $\equiv \partial$ २१११ । १।२   २१११।२१११।१।२

चरमसमयसंबंधी परिणामपुंज

अनुकृष्टि के प्रथम खण्ड का प्रमाण कहते हैं -

पडिसमयधणेवि पदं पचयं पभवं च होइ तेरिच्छे ।
अणुकड्डिपदं सव्वद्धाणस्स य संखभागो दु ।।९०५।।

अन्वयार्थ - (पडिसमयधणेवि) प्रत्येक समय के सर्वधन में, **(पदं)** अनुकृष्टि के गच्छ, **(पचयं)** चय, **(पभवं)** आदि (प्रभव) सभी की रचना, **(तेरिच्छे)** तिर्यक् **(होइ)** होती हैं।**(अणुकड्डिपदं)** अनुकृष्टिका गच्छ,**(सव्वद्धाणस्स)** सर्व अध्वान अर्थात् उर्ध्वगच्छ का, **(संखभागो दु य)** संख्यातवें भागप्रमाण निश्चय से होता है। $\text{अनुकृष्टि गच्छ} = \frac{\text{उर्ध्वगच्छ}}{\text{संख्यात}}$

अणुकड्डिपदेण हिदे पचये पचयो दु होइ तेरिच्छे ।
पचयधणूणं दव्वं सगपदभजिदं हवे आदी ।।९०६।।

अन्वयार्थ -(अणुकट्टी पदेण हदे) अनुकृष्टि के गच्छ का भाग, **(पचये)** उर्ध्वचय में देने पर, **(तेरिच्छे पचयो)** अनुकृष्टि का चय होता है। $\text{अनुकृष्टि चय} = \frac{\text{उर्ध्वचय}}{\text{अनुकृष्टि गच्छ}}$

(दव्वं) अनुकृष्टि के सर्वधन में से **(पचयधणूणं)** अनुकृष्टि के चयधन को कम करने पर जो प्रमाण आता है उसमें **(सगपद भजिदं)** अपने-अपने गच्छ का भाग देने पर **(आदी हवे)** अनुकृष्टि के प्रथम खण्ड का प्रमाण होता है।

आदिम्मि कमे वड्ढदि अणुकड्डिस्स य चयं तु तेरिच्छे ।
इदि उड्ढतिरियरयणा अधापवत्तम्मि करणम्मि ।।९०७।।

अन्वयार्थ - (आदिम्मि) प्रथम खण्ड से आगे द्वितीयादि खण्डों में, **(तेरिच्छे)** तिर्यग् रूप से **(अणुकड्डिस्स)** अनुकृष्टि का **(चयं तु)** एक-एक चय **(कमे वड्ढदि)** क्रम से बढ़ता है। तब द्वितीयादि का प्रमाण होता है । **(इदि)** इस प्रकार **(उड्ढतिरियरयणा)** उर्ध्व और तिर्यग् रचना **(अधापवत्तम्मि)** अध:प्रवृत्त, **(करणम्मि)** करण में जानना चाहिए।

विशेषार्थ - अनुकृष्टिरचना

अनुकृष्टि गच्छ (पद) = $\frac{\text{ऊर्ध्वगच्छ}}{\text{संख्यात}}$ $\frac{\text{२११}\cancel{\text{४}}}{\cancel{\text{४}}}$ = २११ $\frac{\text{१६}}{\text{४}}$ = $\boxed{\text{४}}$

अनुकृष्टि चय = $\frac{\text{ऊर्ध्वचय}}{\text{अनुकृष्टिगच्छ}}$ $\frac{\equiv\partial}{\text{२१११।२१११।१।२११}}$ $\frac{\text{४}}{\text{४}}$ = $\boxed{\text{१}}$

अनुकृष्टिचयधन = $\frac{\text{पद-१}}{\text{२}}$ × चय × गच्छ $\frac{\text{३}}{\cancel{\text{२}}}$ × १ × $\overset{\text{२}}{\cancel{\text{४}}}$

$\frac{\text{२११ -१}}{\text{२}}$ × $\frac{\equiv\partial}{\text{२१११।२१११।१।}\cancel{\text{२}}\text{११}}$ × $\cancel{\text{२}}\text{११}$ = $\boxed{\text{६}}$

$\boxed{\frac{\equiv\partial\ \text{२११}^{\text{१}}}{\text{२१११।२१११।१।२}}}$ **अनुकृष्टि चयधन**

अनुकृष्टि आदिधन = अनुकृष्टि सर्वधन - चयधन = १६२ -६ = १५६

यहाँ पर प्रथमादि समयसंबंधी परिणामपुंज सर्वधन समझना

प्रथमसमयसंबंधी आदिधन = $\frac{\equiv\partial\ \overline{\text{२१११ । १।२}}^{\,\text{१}}}{\text{२१११।२१११।१।२}}$ — $\frac{\equiv\partial\ \text{२११}^{\text{१}}}{\text{२१११।२१११।१।२}}$

यहाँ सर्व भागहार समान है। ऋणराशि के गुणकार के ऊपर एक घाटि है उसके प्रमाण को अलग स्थापित करना २११ इस गुणकार के साथ जो गुण्यराशि और भागहार राशि है उतना एक का प्रमाण जानना → $\frac{\equiv\partial}{\text{२१११।२१११।१।२}}$

शेष राशि

$$\rightarrow\left(\frac{\equiv\partial\{\text{२१११।(१।२-१)}\}+\text{१}}{\text{२१११।२१११।१।२}}\right)-\left(\frac{\equiv\partial\ \text{२११}}{\text{२१११।२१११।१।२}}\right)$$

शास्त्र पद्धति से समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में एक कम करना

$$\equiv \frac{\partial\{\text{२३३(३(३।२-१)-१)}\}+\text{१}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}} \longrightarrow \equiv \frac{\partial\ \text{२३३३।३।२}^{\text{१ — १ — १}}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}}$$

शेष अलग रखे हुए ऋण को मिलाना क्योंकि ऋण का ऋण राशि का धन होता है।

अत:

$$\equiv \frac{\partial\ \text{२३३३।३।२}^{\text{१ — १ — १}}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}} + \equiv \frac{\partial}{\text{२३३३।२३३३।३।२}}$$

समच्छेद है अत: दोनो राशि की समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर अधिक एक करना

$$\equiv \frac{\partial\ \text{२३३}\{\text{३(३।२-१)-१}\}+\text{१}+\text{१}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}} \longrightarrow \equiv \frac{\partial\ \text{२३३}\{\text{३(३।२-१)-१}\}+\text{२}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}}$$

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\ \text{२३३।३। ३।२}^{\text{२ — १ — १}}}{\text{२३३३।२३३३।३।२}}}$$

प्रथमसमय संबंधी आदिधन

प्रथमसमयसंबंधी प्रथमखण्ड $= \dfrac{\text{प्रथमसमयसंबंधी आदिधन}}{\text{अनुकृष्टि गच्छ}}$ $\qquad \dfrac{\text{१५६}}{\text{४}} = \text{३९}$

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\ \text{२३३।३। ३।२}^{\text{२ — १ — १}}}{\text{२३३३।२३३३।३।२।२३३}}}$$

= प्रथमखण्ड

प्रथमसमयसंबंधी द्वितीयखंड = प्रथमसमयप्रथमखंड + एक अनुकृष्टि चय $\qquad$ ३९+१ =४०

$$\equiv \frac{\partial\ \text{२३३}\{\text{३(३×२-१)-१}\}+\text{२}}{\text{२३३३।२३३३।३।२३३।२}} + \equiv \frac{\partial}{\text{२३३३।२३३३।३।२३३}}$$

$$\frac{\equiv\partial\left[\text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})\}-\text{१}\right]+\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}+\frac{\equiv\partial\times\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।}\times\text{२}}$$

(दो का समच्छेद करने पर)

$$\frac{\equiv\partial\left[\text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})\}-\text{१}\right]+\text{२}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}$$

$$\boxed{\frac{\equiv\partial\ \overline{\text{२११।१।१।२}}^{\,\text{४}}}{\text{२१११।२१११।२११।१।२}}}$$

प्रथमसमयसंबंधी
द्वितीयखंड

प्रथमसमयसंबंधी अंतिम खंड = प्रथम खंड + (चय × अनुकृष्टि पद-१)

= ३९+(१×४-१) = ३९ + ३ = ४२

$$\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})-\text{१}\}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।२११।१।२}}+\frac{\equiv\partial\times\ \text{२११}-\text{१}}{\text{२१११।२१११।२११।१}}$$

२ का समच्छेद करना

$$\frac{\equiv\partial\left[\text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})\}-\text{१}\right]+\text{२}}{\text{२१११।२१११।२११।१।२}}+\frac{\equiv\partial\times(\text{२११}-\text{१})\times\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।}\times\text{२}}$$

धनराशिमें जो एक घटिका प्रमाण है उसको अलग रखना $\frac{\equiv\partial\ \text{२}}{\text{२१११।२१११।२११।१।२}}$

$$\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})-\text{१}\}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।२११।१।२}}+\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\times\text{२}}{\text{२१११।२१११।२११।१}\times\text{२}}$$

$$\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})-\text{१}+\text{२}\}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}$$

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में धनराशि के दो गुणकार को मिलाना -१+२=+१

$$\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})+\text{१}\}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}$$

अलग रखे हुये ऋण को घटाना

$$\frac{\equiv\partial\ \text{२११}\{\text{१}(\text{१}\times\text{२}-\text{१})+\text{१}\}+\text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}-\frac{\equiv\partial\ \text{२}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}$$

≡ ∂ २११{१(१×२-१)+१}+२ - २
२१११।२१११।१।२११।२

१ ———   १⌓ १⌓   ≡ ∂ २११।१।१।२   २१११।२१११।२११।१।२

→ प्रथम समय संबंधी अंतिम खण्ड

द्वितीयसमयसंबंधी प्रथमखण्डधन → प्रथमसमय अनुकृष्टिप्रथमखण्डधन + अनुकृष्टिचय

३९ + १ = ४०

२ ———
१ ———
१⌓
≡ ∂ २११।१। १।२
२१११।२१११।२११।१।२
+ ≡ ∂
२१११।२१११।२११।१

२ ———
१ ———
१⌓
≡ ∂ २११। १। १।२
२१११।२१११।२११।१।२
+ ≡ ∂ ×२
२१११।२१११।२११।१×२

दो का समच्छेद

द्वितीयसमय संबंधी प्रथमखण्ड →

४ ———   १ ———   १⌓   ≡ ∂ २११। १।१।२   २१११।२१११।२११।१।२

समान संख्याओं को निकालकर दो अधिक में धनराशि के दो गुणकार को मिलानेपर ४ अधिक हो गये।

द्वितीयसमयसंबंधी अन्तिम अनुकृष्टि खण्डधन →

द्वितीयसमयसंबंधी प्रथम अनुकृष्टि खंड + (अनुकृष्टिचय×अनुकृष्टिपद -१)

४०+(१×४-१) = ४०+३ = ४३

४ ———
१ ———
१⌓
≡ ∂ २११।१।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
+ ≡ ∂ ×२११-१
२१११।२१११।२११।१

दो का समच्छेद करना

४ ———
१ ———
१⌓
≡ ∂ २११। १।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
+ ≡ ∂ ×२११-१×२
२१११।२१११।२११।१×२

धनराशि के ऋण को अलग स्थापित करना ≡ ∂ २
२११११।२१११।२११।१×२

४ १ १
≡ ∂ २११। १। १।२ + ≡ ∂ २११×२
२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१।२

४ १ १
≡ ∂ २११। १। १।२
२१११।२१११।२११।१।२

संख्यात गुणकार के ऊपर एक कम था उसमें धनराशि दो गुणकार को मिलानेपर एक अधिक रह गया -१+२=+१

४ १ १
≡ ∂ २११। १। १।२ — ≡ ∂ २
२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१।२

लब्ध में अलग रखे ऋण को घटाना

२ १ १ ≡ ∂ २११। १।१।२ २१११।२१११।२११।१।२

सर्व गुणकार के ऊपर ४ अधिक है उसमें ऋणराशि के दो गुणकार को घटानेपर दो अधिक रह गया। +४-२ = +२

द्विचरमसमय अनुकृष्टि प्रथमखण्डधन

प्रथमसमय अनुकृष्टि प्रथमखण्डधन + (अनुकृष्टिचय × ऊर्ध्वपद - २)

३९+(१×१६-२)=३९+१४ = ५३

२ १ १
≡ ∂ २११।१।१।२ + ≡ ∂ ×२१११-२
२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१

दो का समच्छेद करना

२ १ १
≡ ∂ २११। १।१।२ + ≡ ∂ (२१११-२)×२
२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१×२

धनराशि के ऋण को अलग स्थापित करना ≡ ∂ २×२
२१११।२१११।२११।१।२

शेष

२ १ १

≡∂ २११। १। १।२ + ≡∂ २१११×२

२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१×२

मूलराशि के १।२ के ऊपर के एक घाटि मे धनराशि के दो गुणकार को मिलानेपर एक अधिकहो गया -१+२ = +१

अलग रखे हुए ऋण को लब्ध में से घटाना

२ १ १

≡∂ २११। १ । १।२

२१११।२१११।२११।१।२

२ १ १

≡∂ २११। १ । १।२ — ≡∂ ४

२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१।२

२ १ १   ≡∂ २११। १। १।२   २१११।२१११।२११।१।२

+२-४ = -२ रह गये

द्विचरमसमय अनुकृष्टि चरमखण्डधन =

द्विचरमसमय अनुकृष्टि प्रथमखण्डधन + (अनुकृष्टिचय × अनुकृष्टिपद - १)

५३+(१×४-१)=५३+३=५६

२ १ १

≡∂ २११। १। १।२ + ≡∂ २११-१

२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१

दो का समच्छेद करना

२ १ १

≡∂ २११। १।१।२ + ≡∂ (२११-१)×२

२१११।२१११।२११।१।२ २१११।२१११।२११।१×२

एक घाटि का प्रमाण अलग रखना ≡∂ १×२

२१११।२१११।२११।१×२

शेष प्रमाण

२ — (१ — (१—))

≡ ∂ २११। १। १।२ / २१११।२१११।२११।१।२ + ≡ ∂ २११। २ / २१११।२१११।२११।१।२

२ — (१ — (१—))

≡ ∂ २११। १।१।२ / २१११।२१११।२११।१।२

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार १ (१—) / १।१।२ के ऊपर एक घाटि है उसमें धन-राशि का दो गुणकार मिलाने से एक अधिक होगा -१+२= +१

अलग रहे ऋण को घटाना

२ — (१ — (१—))

≡ ∂ २११। १।१।२ / २१११।२१११।२११।१।२ — ≡ ∂ २ / २१११।२१११।२११।१।२

४ — (१ — (१—))   ≡ ∂ २११। १। १।२ / २१११।२१११।२११।१।२

द्विचरमसमय अनुकृष्टि चरम खण्डद्रव्य

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर दो घाटि है उसमें दो घटाने से -२-२ = -४ चार घाटि हो जाता है।

चरमसमय अनुकृष्टि प्रथमखण्ड धन =

द्विचरमसमय अनुकृष्टि प्रथम खण्ड + एक अनुकृष्टि चय

२ — (१ — (१—))

≡ ∂ २११। १।१।२ / २१११।२१११।२११।१।२ + ≡ ∂ / २१११।२१११।२११।१

दो का समच्छेद करने पर

२ — (१ — (१—))

≡ ∂ २११। १।१।२ / २१११।२१११।२११।१।२ + ≡ ∂ २ / २१११।२१११।२११।१।२

१ ⌒
१—
≡ ∂ २११। ११।१।२
२१११।२१११।२११।१।२

चरमसमय अनुकृष्टि प्रथम खण्डधन

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर जो दो घाटि है उसमें धनराशि के दो गुणकार को मिलाने पर शून्य हो जाता है -२+२=०

चरमसमय अनुकृष्टिचरम खण्डधन =

चरमसमय अनुकृष्टि प्रथम खण्डधन + (अनुकृष्टिचय ×अनुकृष्टि पद - १)

५४+(१×४-१)=५४+३=५७

१ ⌒
१—
≡ ∂ २११। ११।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
+
≡ ∂ २११-१
२१११।२१११।२११।१

दो का समच्छेद करना

१ ⌒
१—
≡ ∂ २११। ११।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
+
≡ ∂ (२११-१)×२
२१११।२१११।२११।१।२

धनराशि के एक घाटि के प्रमाण को अलग स्थापित करना

≡ ∂ ।२
२१११।२१११।२११।१।२

१ ⌒
१—
≡ ∂ २११। १ ।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
+
≡ ∂ २११। २
२१११।२१११।२११।१।२

१ ———
१—
≡ ∂ २११। ११।१।२
२१११।२१११।२११।१।२

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर एक घाटि है उसमें धनराशि के दो गुणकार को मिलानेसे एक अधिक होता है -१+२=+१

अलग रखे ऋण को घटाना

१ ———
१—
≡ ∂ २११। ११।१।२
२१११।२१११।२११।१।२
—
≡ ∂ २
२१११।२१११।२११।१।२

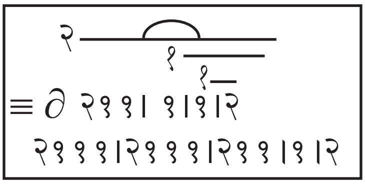

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर दो घाटि करना

चरमसमय अनुकृष्टि चरम खण्डधन

अप्रमत्त संयत गुणस्थानवर्ती जीव उपशमश्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी चढ़ने के लिए अध:प्रवृत्त करण करता है। उसका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र है। अनिवृत्तिकरण के काल से संख्यातगुणा काल अपूर्वकरण का है और उससे भी संख्यातगुणा काल अध:प्रवृत्तकरण का है। उसमें जो संज्वलन कषाय के देशघाति स्पर्धकों के उदयरूप विशुद्धिपरिणामों के स्थान हैं वे अन्य प्रत्याख्यानादि कषायों के साथ उदय में आनेवाले संज्वलन कषाय के सर्वघाति स्पर्धकों के उदयरूप संक्लेश स्थानों के असंख्यातवें भाग हैं फिर भी वे असंख्यात लोकप्रमाण हैं।

$$\text{संज्वलनदेशघातिस्पर्धक विशुद्धिपरिणाम स्थान} = \frac{\text{सर्वघाति स्पर्धक कषाय संक्लेशस्थान}}{\text{असंख्यात}}$$

अध:प्रवृत्तकरण के प्रथमसमय के प्रथम अनुकृष्टिखंड का जघन्य विशुद्धि परिणाम अष्टांकरूप अर्थात् अनन्तगुणवृद्धि रूप है पूर्व परिणाम के अविभाग प्रतिच्छेदों के प्रमाण से अनन्तगुणे अविभाग प्रतिच्छेदों का समूहरूप स्थान है। जैसे जैसे निर्मलता होती है वैसे वैसे विशुद्धता के अविभाग प्रतिच्छेद बढ़ते हैं। इससे यहाँ अनन्तगुणापन संभव होता हैं। उस प्रथम खण्ड के जघन्य परिणाम से उसका ही उत्कृष्ट परिणाम अनन्तगुणा है क्योंकि उन दोनों के बीच में असंख्यात लोकप्रमाणबार षट्स्थानपतित वृद्धियाँ होती हैं। वह इसप्रकार है :- जघन्यपरिणाम अष्टांकरूप—— उसके ऊपर अनन्तभागवृद्धि सूच्यंगुलके असंख्यातवे भाग बार——एकबार असंख्यातभागवृद्धि——फिर अनन्तभागवृद्धि २/∂बार——दूसरीबार असंख्यातभागवृद्धि सूच्यंगुल के असंख्यातवे भाग की संदृष्टि २/∂ जानना।

इसप्रकार असंख्यातभागवृद्धि २/∂ बार → अनन्तभागवृद्धि २/∂ बार → एकबार संख्यातभाग वृद्धि → अनन्तभागवृद्धिपूर्वक असंख्यातभागवृद्धि २/∂ बार → अनन्तभागवृद्धि २/∂बार—दूसरी बार संख्यातभागवृद्धि →इसप्रकार संख्यातभागवृद्धि २/∂ बार→ अनन्तभागवृद्धि २/∂ बार→ एकबार संख्यातगुणवृद्धि→ २/∂ बार

अनन्तभागवृद्धि असंख्यात भागवृद्धि संख्यात भागवृद्धि → $\text{२}/\partial$ बार अनन्तभागवृद्धि → दूसरी बार संख्यातगुणवृद्धि → इसप्रकार $\text{२}/\partial$ बार संख्यातगुणवृद्धि → $\text{२}/\partial$ बार अनन्तभागवृद्धि → एकबार असंख्यातगुणवृद्धि — पूर्ववत् अनन्तभागवृद्धि असंख्यात भाग वृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि क्रम से $\text{२}/\partial$ बार → अनन्तभागवृद्धि $\text{२}/\partial$ बार — दूसरीबार असंख्यातगुणवृद्धि → इसप्रकार असंख्यातगुणवृद्धिस्थान $\text{२}/\partial$ बार → अनन्तभागवृद्धि $\text{२}/\partial$ बार → एकबार **अनंतगुणवृद्धि** इसप्रकार एक षट्स्थान पूर्ण होता है। यह द्वितीय षट्स्थानवृद्धि का प्रथम स्थान जानना।

एक षड्वृद्धि के स्थान =

$$\left(\frac{\text{सूच्यंगुल}}{\text{असंख्यात}} + \text{१}\right)^{\text{३}} \times \left(\frac{\text{सूच्यंगुल}}{\text{असंख्यात}} + \text{१}\right)^{\text{२}} = \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$$

एक षड्वृद्धि में परिणामों की संख्या

	अर्थसंदृष्टि	**अंकसंदृष्टि**	
अष्टांक अनन्तगुणवृद्धि	१	१	१
सप्तांक असंख्यातगुणवृद्धि	$\text{२}/\partial$	२	२
षडंक संख्यातगुणवृद्धि	$\underset{\partial}{\text{२}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$	२×३	६
पंचांक संख्यातभागवृद्धि	$\underset{\partial}{\text{२}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$	२×३×३	१८
चतुरंक असंख्यातभागवृद्धि	$\underset{\partial}{\text{२}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$	२×३×३×३	५४
उर्वंक अनन्तभागवृद्धि	$\underset{\partial}{\text{२}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \times \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$	२×३×३×३×३	१६२
सबका जोड़	$\overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \; \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \; \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \; \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}} \; \overset{\text{१-}}{\underset{\partial}{\text{२}}}$		२४३

यहाँ सुच्यंगुल के असंख्यातवें भाग का प्रमाण अंकसंदृष्टि से २ माना है अतः २+१=३ हो गये।

जीवकाण्ड के ज्ञानमार्गणा अधिकार में पर्यायसमास श्रुतज्ञान के वर्णन में षट्स्थान वृद्धि का जैसा कथन किया है वैसा यहाँ जानना।

इसप्रकार ऐसे षट्स्थान प्रथमसमय के प्रथम अनुकृष्टि खंड में असंख्यात लोकप्रमाण है अत: जघन्य से उत्कृष्टस्थान अनन्तगुणा है। प्रथम खण्ड के उत्कृष्ट परिणाम से दूसरे खण्ड का जघन्य परिणाम अनन्तगुणा है क्योंकि षट्वृद्धि में प्रथम स्थान अष्टांकरूप होता है और अंतिमस्थान उर्वंकरूप होता है। प्रथमखण्ड का उत्कृष्ट परिणाम उर्वंकरूप है और द्वितीय खण्ड का जघन्य परिणाम अष्टांकरूप है अत: अनन्तगुणितपना संभव है। इसप्रकार सब खण्डों में अपने अपने जघन्य से अपना अपना उत्कृष्टस्थान अनन्तगुणा है और उस उत्कृष्ट से अनन्तर खण्ड का जघन्यस्थान अनन्तगुणा है।

समय क्र.	परिणामसंख्या	प्रथम खण्ड	द्वितीय खण्ड	तृतीय खण्ड	चतुर्थ खण्ड
१६	२२२	५४	५५	५६	५७
१५	२१८	५३	५४	५५	५६
१४	२१४	५२	५३	५४	५५
१३	२१०	५१	५२	५३	५४
१२	२०६	५०	५१	५२	५३
११	२०२	४९	५०	५१	५२
१०	१९८	४८	४९	५०	५१
९	१९४	४७	४८	४९	५०
८	१९०	४६	४७	४८	४९
७	१८६	४५	४६	४७	४८
६	१८२	४४	४५	४६	४७
५	१७८	४३	४४	४५	४६
४	१७४	४२	४३	४४	४५
३	१७०	४१	४२	४३	४४
२	१६६	४०	४१	४२	४३
१	१६२	३९	४०	४१	४२

यहाँ प्रथम समय के प्रथम खण्ड और अन्तिम समय के अन्तिम खण्ड को छोड़कर सब ऊपर के खण्डसंबंधी परिणाम और नीचे के खण्डसंबंधी परिणाम परस्पर में यथासम्भव समानता रखते हैं। इसीसे इसे अध:प्रवृत्तकरण कहते हैं।

अंतोमुहुत्तकालं गमियूण अधापवत्तकरणं तं ।
पडिसमयं सुज्झंतो अपुव्वकरणं समल्लियइ ।।९०८।

अन्वयार्थ - सातिशय अप्रमत्त संयमी **(पडिसमयं)** समय-समय प्रति, **(सुज्झंतो)** अनन्तगुणी विशुद्धि से बढ़ता हुआ ।**(अंतोमुहुत्तकालं गमियूण)** अन्तर्मुहूर्त कालपर्यन्त **(अधापवत्तकरणं)** अध:प्रवत्त करण को करता है, **(तं)** पुन: उसको समाप्त करके **(अपुव्वकरणं)** अपूर्वकरण को **(समल्लियइ)** प्राप्त होता है।

प्रतिसमय अनन्तगुण विशुद्धि से बढ़ता हुआ सातिशय अप्रमत्त इस अध:प्रवृत्त करण के अन्तर्मुहूर्त काल को बिताकर अपूर्वकरण को करता है।

अंक संदृष्टि से अपूर्वकरण परिणामों का कथन -

छण्णउदिचउसहस्सा अट्ठ य सोलसधणं तदद्धाणं ।
परिणामविसेसो वि य चउ संखापुव्वकरणम्मि ।।९०९।।

अन्वयार्थ - **(अपुव्वकरणम्मि)** अपूर्वकरण में **(छण्णउदिचउसहस्सा)** चार हजार छियानवे (४०९६) **(धणं)** सर्वधन **(अट्ठ य सोलस)** आठ और सोलह क्रमसे **(तदद्धाणं)** उसका गच्छ (८) और **(परिणाम विसेसो वि)** परिणाम विशेष अर्थात् चय १६, **(चउ)** चार, **(संखा)** संख्यात की संदृष्टि होती है।

अंतोमुहुत्तमेत्ते पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
कमउड्ढापुव्वगुणे अणुकट्ठी णत्थि णियमेण ।।९१०।।

अन्वयार्थ - **(अंतोमुहुत्तमेत्ते)** अपूर्वकरण का काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। **(पडिसमयमसंखलोगपरिणामा)** इसमें प्रति समय असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम पाये जाते हैं। **(कमउड्ढा)** और वे प्रथम समय से अन्तिम समय पर्यन्त समान चयरूप बढ़ते हैं। **(पुव्वगुणे)** अपूर्वकरण में **(अणुकट्ठी)** अनुकृष्टि रचना **(णियमेण)** नियम से **(णत्थि)**

नहीं होती है।

विशेषार्थ - २) अपूर्वकरण - जिस कारण से ऊपरवर्ती जीवों के परिणाम निचले समयवर्ती जीवों के समान नहीं होते। प्रत्येक समय में नाना जीवों की अपेक्षा अपूर्व-अपूर्व ही परिणाम होते हैं अत: इसे अपूर्वकरण कहते हैं।

	अर्थसंदृष्टि	**अंकसंदृष्टि**
सर्वधन - अपूर्वकरण के परिणाम	असंख्यात लोक×असंख्यात लोक ≡ ∂ ≡ ∂	४०९६
पद - अपूर्वकरण का काल	अंतर्मुहूर्त २११	८
चय - प्रतिसमयवृद्धि का प्रमाण	$\frac{\equiv\partial\ \equiv\partial}{\text{२११।२११।१}}$	१६
चय लाने के लिए संख्यात का प्रमाण	१	४

इसमें अनुकृष्टिरचना नहीं हैं क्योंकि ऊपर के समय के परिणामों की नीचे के समयों के परिणामों के साथ समानता नहीं पायी जाती हैं।

अपूर्वकरण परिणाम = अध:प्रवृत्तकरण परिणाम × असंख्यातलोक

$$\equiv\partial \times \equiv\partial$$

अपूर्वकरणकाल = $\frac{\text{अध:प्रवृत्तकरणकाल}}{\text{संख्यात}}$ $\quad \frac{\text{२११४}}{\text{४}} = \boxed{\text{२११}}$

अपूर्वकरण चय = $\frac{\text{सर्वधन}}{\text{पदका वर्ग} \times \text{संख्यात}}$ $\quad \frac{\equiv\partial\ \equiv\partial}{\text{२११।२११।१}} \quad \frac{\text{४०९६}}{\text{८×८×४}} = \boxed{\text{१६}}$

चयधन = $\frac{\text{पद-१}}{\text{२}} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$ $\quad \frac{\text{२११-१}}{\text{२}} \times \frac{\equiv\partial\ \equiv\partial}{\text{२११।२११।१}} \times \text{२११}$

$$\frac{\text{८-१}}{\text{२}} \times \frac{\text{१६}}{} \times \text{८}$$

$$\boxed{\frac{\equiv\partial\ \equiv\partial\ \text{२११-१}}{\text{२११।१।२}}} \qquad \text{७×८×८} = \boxed{\text{४४८}}$$

आदिधन = सर्वधन - चयधन   ४०९६ - ४४८ = ३६४८

              १⌒
≡ ∂ ≡ ∂ - ≡ ∂ ≡ ∂ २११   समच्छेद करने पर
        २११।१।२

                    १⌒
≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२ - ≡ ∂ ≡ ∂ २११
२११।१।२   २११।१।२

≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२	ऋणराशि के एक प्रमाण को अलग रखना।

शेष प्रमाण   ≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२ - ≡ ∂ ≡ ∂ २११
       २११।१।२   २११।१।२

            १⌒
≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२   समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर ऋणराशि के एक गुणकार को कम किया।
२११ ।१। २

अलग रखे हुए ऋण को 'ऋणस्य ऋण राशेर्धनं' इस न्याय से लब्धराशि में मिलाना।

            १⌒
≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२ + ≡ ∂ ≡ ∂   समच्छेद है इसलिए समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार के ऊपर धनराशि का एक गुणकार जोड़ना।
२११ ।१। २   २११।१।२

१ ‾‾‾‾‾‾‾‾ १⌒ ≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२ २११।१।२	→ आदिधन

प्रथम समयवर्ती परिणाम = आदिधन / पद   ३६४८ / ८ = ४५६

१ ‾‾‾‾‾‾‾‾ १⌒ ≡ ∂ ≡ ∂ २११।१।२ २११।१ ।२ ।२११	→ प्रथम समयवर्ती परिणाम

प्रथम समय के परिणाम में एक एक चय बढ़ानेपर द्वितीयादि समयों का परिणाम धन आता है।   ४५६   ४७२   ४८८   ५०४   ५२०   ५३६   ५५२   ५६८

चरमसमयवर्ती परिणाम = प्रथमसमयवर्ती परिणाम + (चय×पद -१)

१———

≡∂≡∂ २११।१ ।२ + ≡∂≡∂ २११-१

२११।२११।१।२ २११।२११।१

४५६ + (१६×८-१)
४५६ + (१६×७)
४५६ + ११२
= ५६८

समच्छेद करनेपर

१———

≡∂≡∂ २११।१ ।२ + ≡∂≡∂ २११-१×२

२११।२११।१।२ २११।२११।१ ×२

धनराशि के ऋण को अलग रखना ≡∂≡∂ २
२११।२११।१।२

शेष राशि

१———

≡∂≡∂ २११।१ ।२ + ≡∂≡∂ २११।२

२११।२११।१।२ २११।२११।१।२

१———
१—
≡∂≡∂ २११।१।२
२११।२११।१।२

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में धनराशि के २ गुणकार को मिलाना
—१+२=+१
१।२ के ऊपर जो एक घाटि था उसमें २ मिलाने से एक अधिक रह गया।

अलग रखे हुए ऋण को 'धनस्य ऋणं राशे ऋणं' इस न्याय से घटाना।

१———
१—
≡∂≡∂ २११।१।२ - ≡∂≡∂ २
२११।२११।१।२ २११।२११।१।२

१———   १—   ≡∂≡∂ २११।१।२   २११।२११।१।२

अंतिम समय के परिणाम

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में ऋणराशि के २ गुणकार को घटाना २११।१।२ गुणकार के ऊपर एक अधिक है उसमें ऋणराशि के २ गुणकार को घटानेसे एक घाटि रहता है +१-२=-१

अपूर्वकरण के प्रथम समयसंबंधी जघन्य विशुद्धि परिणाम अध:प्रवृत्तकरण के अन्तसमय के अन्तिम अनुकृष्टि खण्ड के उत्कृष्ट विशुद्ध परिणामों से भी अनन्तगुणित हैं। उस जघन्य परिणाम से उसी समय का उत्कृष्ट विशुद्धि परिणाम अनन्तगुणा है। क्योंकि अपूर्वकरण में भी प्रत्येक समय के परिणामों में असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थान होते हैं। उससे दूसरे समय संबंधी जघन्य विशुद्धि परिणाम अनन्तगुणा है। इसीप्रकार अन्तिम समयपर्यन्त जानना। यहाँ ऊपर के समयों में होनेवाले परिणाम नीचे के समय में होनेवाले परिणामों के समान कभी भी नहीं होते इसलिए इसका नाम अपूर्वकरण है।

अनिवृत्तिकरण का स्वरूप -

एक्कम्मि कालसमये संठाणादीहि जहा णिवट्टंति ।
ण णिवट्टंति तहंवि य परिणामेहिं मिहो जे हु ।।९११।।

अन्वयार्थ - (जे हु एक्कम्मि कालसमये) जो जीव अनिवृत्तिकरण काल के विवक्षित एक समय में, **(जहा)** जैसे **(संठाणादीहि)** शरीर के आकार व वर्णादि से, **(णिवट्टंति)** भेदरूप होते हैं। **(तहंवि य)** उस प्रकार **(परिणामेहिं मिहो)** परिणामों से परस्पर **(ण णिवट्टंति)** भेदरूप नहीं होते हैं।

होंति अणियट्टिणो ते पडिसमयं जस्सि एक्कपरिणामो।
विमलयरझाणहुदबहसिहाहि णिद्दड्ढ कम्मवणा ।।९१२।।

अन्वयार्थ - (जस्सि एक्कपरिणामो पडिसमयं) जिस करण में प्रतिसमय जीवों के एक रूप ही परिणाम होते हैं, **(ते)** वे जीव **(विमलयरझाणहुदबहसिहाहि)** अतिशय निर्मल ध्यानरूपी अग्नि की शिखा से **(णिद्दड्ढकम्मवणा)** जलाये हैं कर्मरूपी वन जिन्होंने ऐसे **(अणियट्टिणो)** अनिवृत्तिरूप **(होंति)** होते हैं ।

विशेषार्थ - ३) अनिवृत्तिकरण

अनिवृत्तिकरण काल के विवक्षित एक समय में वर्तमान त्रिकालवर्ती नाना जीव जैसे शरीर का आकार, वर्ण, वय, अवगाहना, वेष, भाषा आदि से परस्पर में भेद को प्राप्त होते हैं उसप्रकार अध:करण व अपूर्वकरण की तरह विशुद्ध परिणामों के द्वारा भेद को प्राप्त नहीं होते।

जिनको अनिवृत्तिकरण में आये पहला समय है उन सब त्रिकालवर्ती अनन्त जीवों के परिणाम समान ही होते हैं, अन्य-अन्य रूप नहीं होते, इसी तरह द्वितीयादि समयवर्ती जीवों के परिणामों में भी समानता पायी जाती है।

जिस करण में प्रतिसमय जीवों के एक-एक ही परिणाम होते हैं और वे परिणाम अतिशय निर्मल ध्यानरूप की शिखा के द्वारा कर्मरूपी वन को जला देनेवाले होते हैं। उन्हें अनिवृत्ति कहते हैं। उसका काल अंतर्मुहूर्त २१ हैं जो अंकसंदृष्टि से चार माना है।

समय	**परिणाम संख्या**
चतुर्थ समय - १	तीसरे से चौथे समय में अनन्तपट विशुद्धि
तृतीय समय - १	दूसरे से तीसरे समय में अनन्तपट विशुद्धि
द्वितीय समय - १	पूर्वसमय से अनन्तगुणित विशुद्धि
प्रथम समय - १	

।। इति त्रिकरण चूलिका अधिकार सम्पूर्ण ।।

९. कर्मस्थितिरचनाधिकार

सिद्धे विसुद्धणिलये पणट्ठकम्मे विणट्ठसंसारे।
पणमिय सिरसा वोच्छं कम्मट्ठिदिरयणसब्भावं।।९१३।।

अन्वयार्थ - (पणट्ठकम्मे) प्रकृष्ट रूप से नष्ट हुए हैं, घाति-अघाति कर्म जिनके, **(विणट्ठसंसारे)** विशिष्ट रूप से नष्ट किया है चतुर्गति भ्रमण रूप संसार जिन्होंने, **(विसुद्धणिलये)** इसलिए जिनका विशुद्ध आत्मप्रदेशों में अवस्थान है ऐसे **(सिद्धे)** सिद्ध परमेष्ठी को **(सिरसा)** मस्तक झुकाकर **(पणमिय)** नमस्कार करके **(कम्मट्ठि-दिरयणसब्भावं)** कर्म स्थिति की रचना के सद्भाव का **(वोच्छं)** कथन करता हूँ।

विशेषार्थ - मै नेमिचन्द्राचार्य कर्ता जिनके कर्म नष्ट हुए हैं और संसार का भी नाश किया है ऐसे शुद्ध आत्मप्रदेश निवासरूप सिद्धों को मस्तक से नमस्कार करके कर्मस्थिति रचना के सद्भाव को कहता हूँ।

कम्मसरूवेणागयदव्वं ण य एदि उदयरूवेण ।
रूवेणुदीरणस्स य आबाहा जाव ताव हवे ।।९१४।।

अन्वयार्थ - (कम्मसरूवेणागयदव्वं) कर्मस्वरूप से परिणत हुआ जो कार्मण द्रव्य **(जाव)** जब तक **(उदयरूवेण ण एदि य)** उदय रूप से नहीं आता, **(उदीरणस्स रुवेण य)** या उदीरणा रूप नहीं होता, **(ताव)** तब तक का काल **(आबाहा)** आबाधा **(हवे)** होती है।

उदयं पडि सत्तण्हं आबाहा कोडकोडिउवहीणं ।
बाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ।।९१५।।

अन्वयार्थ - (उदयं पडि) उदय की अपेक्षा, **(सत्तण्हं)** आयु कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की, **(कोडकोडिउवहीणं)** एक कोडाकोडीसागर स्थिति की, **(आबाहा)** आबाधा **(बाससयं)** १०० वर्ष है। **(सेसट्ठिदीणं च)** और शेष स्थितियों की आबाधा भी,

(तप्पडिभागेण य) इसी प्रतिभाग से जानना चाहिए।

अंतो कोडाकोडिट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
संखेज्जगुणविहीणं सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ।।९१६।।

अन्वयार्थ - (अंतो कोडाकोडिट्ठिदिस्स) अन्त:कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थिति की **(अंतोमुहुत्तमाबाहा)** अन्तर्मुहूर्त मात्र आबाधा है तथा, **(सव्वजहण्णट्ठिदिस्स)** सभी जघन्य स्थितियों की आबाधा, **(संखेज्जगुणविहीणं)** संख्यातगुणाहीन अर्थात् अन्तर्मुहूर्त के संख्यातवें भाग **(हवे)** होती है।

पुव्वाणं कोटितिभागादासंखेपअद्धओत्ति हवे ।
आउस्स य आबाहा ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ।।९१७।।

अन्वयार्थ - (आउस्स य आबाहा) आयुकर्म की आबाधा, **(पुव्वाणं कोटितिभागादासंखेपअद्धओत्ति हवे)** कोटि पूर्व वर्ष के तृतीय भाग से असंक्षेपाद्धा पर्यन्त जानना। **(ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ण)** आयुकर्म की आबाधा, आयु के प्रतिभाग रूप नहीं होती।

विशेषार्थ - आबाधा - कर्मस्वरूप से परिणत कार्मणद्रव्य जबतक उदयरूप से या उदीरणारूप से परिणमित नहीं होता तबतक उस काल को आबाधा कहते हैं।

उदय की अपेक्षा आबाधा

कर्म	उत्कृष्टस्थिति	उत्कृष्ट आबाधा
नामगोत्र ज्ञाना.दर्शन.अंतराय वेदनीय	एक कोडाकोडीसागरकी २० कोडाकोडीसागरकी ३० कोडाकोडीसागरकी	१०० वर्ष २००० वर्ष ३००० वर्ष
मोहनीय	७० कोडाकोडीसागरकी अन्त :कोडाकोडीसागरकी ९,२५,९२,५९२ $\frac{१६}{२७}$ सागरकी	७००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त
आयुकर्म		एक कोटी पूर्व के त्रिभागसे लेकर एक एक समय कम असंक्षेपाद्धापर्यन्त

एक कोडाकोडीसागर की १०० वर्ष आबाधा तो २० कोडाकोडी सागर की कितनी आबाधा? इस त्रैराशिक विधि से सभी कर्मों की आबाधा निकलती है।

प्रमाण	फल	इच्छा	
१ को. २ सागर	१०० वर्ष	२० को.२ सागर	$\frac{100 \times 20 \text{ को}/.2 \text{ सागर}}{1 \text{ को}./2 \text{ सागर}}$ = २००० वर्ष

१ दिन = ३० मुहूर्त, १ वर्ष = ३६० दिन, १ वर्ष के मुहूर्त ३०×३६० = १०,८००
१०० वर्ष के मुहूर्त = १०८०० × १०० = १०,८०,००० दस लाख अस्सी हजार

प्रमाण	फल	इच्छा
१०,८०,००० मुहूर्त आबाधा	१००००००००००००००० एक कोडाकोडीसागरकी	१ मुहूर्त आबाधा कितनी स्थितिकी होगी?
$\frac{1000000000000000}{1080000}$ = ९२५९२५९२$\frac{16}{27}$		इतनी स्थिति की एक मुहूर्त आबाधा होती है

आयुकर्म की आबाधा स्थिति के प्रतिभाग के अनुसार साध्य नहीं है। जितनी भुज्यमान आयु शेष रहनेपर परभव की आयु बंधती है उतनी ही उसकी आबाधा का प्रमाण है। कर्मभूमि में आयु का त्रिभाग शेष रहने पर आयु के बन्ध की योग्यता है। कर्मभूमि की उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि है अत: एक पूर्वकोटि का त्रिभाग आयु की उत्कृष्ट आबाधा है।

असंक्षेपाद्धा - जिससे आयु की आबाधा का संक्षेप नहीं पाया जाता ऐसे अद्धा अर्थात् काल को 'असंक्षेपाद्धा' कहते हैं। वह आयु की जघन्य आबाधा है।

उदीरणा की अपेक्षा आबाधा काल -

आवलियं आबाहा उदीरणमासेज्ज सत्तकम्माणं।
परभविय आउगस्स य उदीरणा णत्थि णियमेण ।।९१८।।

अन्वयार्थ - (उदीरणमासेज्ज) उदीरणा का आश्रय करके **(सत्तकम्माणं)** आयु कर्म के बिना सात कर्मों की, **(आबाहा)** आबाधा, **(आवलियं)** आवली मात्र होती है। **(परभविय)** परभव सम्बन्धी, **(आउगस्स य)** आयु की **(उदीरणा)** उदीरणा **(णियमेण)** नियम से **(णत्थि)** नहीं होती है।

विशेषार्थ - आयु बिना सात कर्मों की उदीरणा की अपेक्षा आबाधा आवलीमात्र है। बंधने के बाद यदि उदीरणा होगी तो आवलीकाल बीतनेपर हो जाती है। परभव की आयु की उदीरणा इस भव में नहीं होती यह नियम है।

उदय में आयी हुई भुज्यमान आयु की ही उदीरणा होती है। उनमें भी देव, नारकी, चरमशरीरी और असंख्यात वर्ष की आयुवाले मनुष्यों और तिर्यंचों की आयु के पूर्ण निषेकों की उदीरणा होकर आयु का अपवर्तनाघात नहीं होता। कुछ परमाणुओं की उदीरणा हो सकती है।

आबाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं ।
आउस्स णिसेगो पुण सगट्ठिदी होदि णियमेण ।।९१९।।

अन्वयार्थ -(आबाहूणियकम्मट्ठिदी) आबाधा काल से हीन कर्म स्थिति प्रमाण, बंध के समय **(सत्तकम्माणं)** सात कर्मों की, **(णिसेगो दु)** निषेक रचना होती है। **(पुण)** किन्तु **(आउस्स)** आयुकर्म की **(णिसेगो)** निषेक रचना, **(सगट्ठिदी)** जितनी स्थिति बंधती है, उतने प्रमाण **(णियमेण)** नियम से **(होदि)** होती है।

आबाहं बोलावि य पढमणिसेगम्मि देइ बहुगं तु ।
तत्तो विसेसहीणं बिदियस्सादिमणिसेओत्ति ।।९२०।।

अन्वयार्थ - ज्ञानावरणादि कर्मों के स्थितिबंध में, **(आबाहं बोलावि य)** आबाधा काल का उल्लंघन करके **(पढमणिसेगम्मि)** प्रथम समय में प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक में, **(बहुगं देइ तु)** बहुत द्रव्य देता है **(तत्तो)** उससे ऊपर **(बिदियस्सादिमणिसेओत्ति)** द्वितीय गुणहानि के प्रथम निषेक पर्यन्त **(विसेसहीणं)** एक-एक चय रूप से हीन-हीन द्रव्य देने योग्य है।

बिदिये बिदियणिसेये हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु ।
एवं गुणहाणिं पडि हाणी अद्धद्धयं होदि ।।९२१।।

अन्वयार्थ - (बिदिये) द्वितीय गुणहानि के, **(बिदियणिसेये)** दूसरे निषेक में **(हाणी)** हानि का प्रमाण, **(पुव्विल्लहाणिअद्धं तु)** प्रथम गुणहानि चय के प्रमाण से आधा

जानना चाहिए। **(एवं)** इसी प्रकार **(गुणहाणिं पडि)** ऊपर भी प्रत्येक गुणहानि में **(हाणी)** हानि रूप चय का प्रमाण, **(अद्धद्धयं होदि)** आधा-आधा होता है।

विशेषार्थ - निषेकरचना

आयु विना ७ कर्मों के निषेक= कर्मस्थिति - आबाधाकाल (आबाधा से हीन कर्म स्थितिप्रमाण)

आयुकर्म के निषेक = पूर्णस्थितिप्रमाण

आयुकर्म की आबाधा पूर्वभव की आयु के साथ ही बीत जाती है। ज्ञानावरण आदि कर्मों की स्थिति में से आबाधाकाल बीतने के बाद प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक में बहुत द्रव्य दिया जाता है। उससे ऊपर द्वितीयादि निषेकों में एक एक चय घटता हुआ द्रव्य दिया जाता है। जहाँपर प्रथम निषेक का प्रमाण आधा होता है वहाँ से दूसरी गुणहानि प्रारंभ होती है। यहाँ द्रव्य की गुणितरूप से हानि हुई इसलिये इसे गुणहानि कहते हैं। द्वितीय गुणहानि के प्रथम निषेकपर्यंत चय समान रहता है। दूसरी गुणहानि के दूसरे निषेक में पूर्व गुणहानि से आधे चय की हानि होती है। पहली गुणहानि में जो प्रत्येक निषेक में हानिरूप चय का प्रमाण था उससे दूसरी गुणहानि में हानिरूप चय का प्रमाण आधा होता है। इसीप्रकार ऊपर भी प्रत्येक गुणहानि में हानिरूप चय का प्रमाण आधा-आधा होता है।

दव्वट्ठिदिगुणहाणीणद्धाणं दलसलाणिसेयछिदी ।
अण्णोण्णगुणसलावि य जाणेज्जो सव्वठिदिरयणे ।।९२२।।

अन्वयार्थ - (सव्वठिदिरयणे) सर्व कर्मों की स्थिति रचना में, **(दव्व)** द्रव्य **(ट्ठिदिगुणहाणीणद्धाणं)** स्थिति आयाम, गुणहानि आयाम **(दलसला)** दल शलाका अर्थात् नानागुणहानि **(णिसेयछिदी)** निषेकच्छेद अर्थात् दो गुणहानि **(अण्णोण्णगुणसलावि य)** और अन्योन्याभ्यस्त राशि **(जाणेज्जो)** ये छह राशि जानना।

अंक संदृष्टि से कथन -

तेवट्ठिं च सयाइं अडदाला अट्ठ छक्क सोलसयं ।
चउसट्ठिं च विजाणे दव्वादीणं च संदिट्ठी ।।९२३।।

अन्वयार्थ - (दव्वादीणं च संदिट्ठी) द्रव्यादिकों की संदृष्टि **(तेवट्ठिं च**

सयाइं) त्रेसठ सौ ६३०० द्रव्य, **(अडदाला)** स्थिति अड़तालीस ४८, **(अट्ठ)** गुणहानि आयाम आठ **(छक्क)** नाना गुणहानि छह **(सोलसयं)** दो गुणहानि सोलह, **(चउसट्ठिं य)** अन्योन्याभ्यस्त राशि चौसठ **(विजाणे)** जानना।

दव्वं समयपबद्धं उत्तपमाणं तु होदि तस्सेव ।
जीवसहत्थणकालो ठिदि अद्धा संखपल्लमिदा ।।९२४।।

अन्वयार्थ - (समयपबद्धं) एक समय में जितने परमाणु बंधते हैं, **(तस्सेव)** उनका प्रमाण, **(दव्वं)** द्रव्य **(होदि)** है। **(उत्तपमाणं)** पूर्वोक्त प्रमाण - जिनका कथन पहले प्रदेश बंध अधिकार में किया है। **(जीव सहत्थण कालो)** बंधा हुआ समयप्रबद्ध वह जब तक जीव के साथ अवस्थान रूप से रहे, सो **(ठिदि अद्धा)** स्थिति का अद्धा (काल) आयाम है, वह **(संखपल्लमिदा)** संख्यात पल्य प्रमाण है।

विशेषार्थ - सब कर्मों की स्थिति रचना में छह राशि जानने योग्य हैं -

१) **द्रव्य -** कर्मरूप परिणमें पुद्गलपरमाणुओं के प्रमाण को द्रव्यराशि कहते हैं।
२) **स्थिति -** कर्मों की स्थिति के समयों का प्रमाण (जीव के साथ रहने का काल)
३) **गुणहानिआयाम -** एक गुणहानि के समयों का प्रमाण
४) **नाना गुणहानि -** सब स्थितियों में गुणहानियों का प्रमाण
५) **दो गुणहानि -** गुणहानि आयाम का दूना प्रमाण
६) **अन्योन्याभ्यस्त राशि -** नाना गुणहानिप्रमाण दो का अंक रखकर परस्पर में गुणा करनेपर आया हुआ प्रमाण।

राशि	प्रमाण	अर्थसंदृष्टि	अंकसंदृष्टि
द्रव्य	समयप्रबद्ध	स ∂	६३००
स्थिति	संख्यातपल्य	प १	४८
गुणहानि आयाम	स्थिति / नाना गुणहानि	प १ / छे-व छे	८
नाना गुणहानि	पल्य के अर्धच्छेद -वर्गशलाका के अर्धच्छेद	छे-वछे	६
दो गुणहानि	गुणहानि आयाम × २	प १ / छे-व छे × २	१६
अन्योन्याभ्यस्त राशि	पल्य / वर्ग शलाका	प / व	६४

द्रव्य, स्थिति, गुणहानि आयाम, दो गुणहानि इनकी संदृष्टि सातों कर्मों की समान है। यद्यपि सब कर्मों का द्रव्य और स्थिति हीनाधिक है तथापि सामान्य से द्रव्य समयप्रबद्धप्रमाण और स्थिति संख्यात पल्य प्रमाण है। किन्तु नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि समान नहीं है।

मिच्छे वग्गसलायप्पहुडिं पल्लस्स पढममूलोत्ति ।
वग्गहदी चरिमो त्तच्छिदिसंकलिदं चउत्थो य ।।९२५।।

अन्वयार्थ - (मिच्छे) मिथ्यात्व कर्म में **(वग्गसलायप्पहुडिं)** पल्य की वर्ग शलाका को आदि लेकर **(पल्लस्स पढममूलोत्ति)** पल्य के प्रथम वर्गमूल पर्यन्त, **(वग्गहदी)** उन वर्गों का परस्पर गुणा करने पर **(चरिमो)** चरम अर्थात् अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण होता है, **(त्तच्छिदिसंकलिदं)** और उनकी अर्धच्छेद राशियों को संकलित करने से **(चउत्थो य)** चतुर्थ राशि अर्थात् नाना गुणहानि का प्रमाण होता है।

वग्गसलागेणवहिदपल्लं अण्णोण्णगुणिदरासी हु ।
णाणागुणहाणिसला वग्गसलच्छेदणूणपल्लछिदी ।।९२६।।

अन्वयार्थ -(वग्गसलागेणवहिदपल्लं) पल्य की वर्ग शलाका का भाग पल्य में देने से **(अण्णोण्णगुणिदरासी हु)** अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण होता है तथा **(वग्गसल-च्छेदणूण पल्लछिदी)** पल्य की वर्ग शलाका के अर्धच्छेदों को पल्य के अर्धच्छेदों में से घटाने पर जो प्रमाण होता है वह **(णाणागुणहाणिसला)** नाना गुणहानि शलाका जानना चाहिए।

विशेषार्थ - मिथ्यात्व की नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि -

द्विरूपवर्गधारा में पल्य की वर्गशलाका से लेकर पल्य के प्रथमवर्गमूल पर्यन्त स्थानों को, उनके अर्द्धच्छेदों को और उनकी ही वर्गशलाकाओं को स्थापन करके तीन पंक्ति करना पल्य के वर्गशलाका के अर्धच्छेदों से उसके वर्ग के अर्धच्छेद दुगुने होते हैं उससे आगे आगे के वर्गों के अर्धच्छेद दुगुने दुगुने होते हैं। उलटे क्रमसे देखनेपर पल्य के अर्धच्छेदों से, पल्य के प्रथम वर्गमूल के अर्धच्छेद आधे, उससे द्वितीय वर्गमूल के अर्धच्छेद आधे

इसप्रकार पीछे-पीछे के वर्गों के अर्धच्छेद आधे-आधे होते हैं। आगे आगे वर्गों की वर्गशलाका पूर्व-पूर्व स्थानों से एक-एक बढ़ती है।

राशि	पल्य की वर्ग शलाका	उसका वर्ग	पल्य के अर्धच्छेद	उसकावर्ग०० ०० पल्यका तृ.वर्गमूल	पल्यका द्वितीय वर्गमूल	पल्यका प्रथम वर्गमूल	पल्य
प्रथम पंक्ति	व	व व	छे	छेछे ००० मू३	मू२	मू१	प
द्वितीयपंक्ति उपर्युक्तराशि के अर्धच्छेद	छे	छे २	व	व२ ००० छे २२२	छे २२	छे २	छे
तृतीयपंक्ति उपर्युक्तराशि की वर्ग शलाका	व (वर्गशला. की वर्गशला.)	व^{१-}	छे (वर्गश. के अर्धच्छेद)	१- छे ३⌒ व	२⌒ व	१⌒ व	व

अर्धच्छेद के अर्धच्छेद उस राशि की वर्गशलाका प्रमाण होते हैं अत: पल्य के अर्धच्छेद के अर्धच्छेद 'व' प्रमाण लिखे हैं। वर्गशलाका के वर्गशलाका की संदृष्टि भी 'व' है और पल्य के वर्गशलाका की संदृष्टि भी 'व' ही है।

पल्य के अर्धच्छेद की वर्गशलाका वर्गशलाका के अर्धच्छेद प्रमाण हैं अत: तृतीय पंक्ति में 'छे' लिखा है। इधर से देखे तो वर्गशलाका एक-एक अधिक है उधर से देखे तो वर्गशलाका एक-एक कम है।

प्रथमपंक्ति के पल्य के प्रथम वर्गमूलपर्यन्त राशि को परस्पर में गुणा करनेपर पल्य की वर्गशलाका का भाग पल्य में देनेपर जो प्रमाण आवे उतना होता है। वही अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण होता है।

दूसरी पंक्ति को जोड़नेपर 'पल्यके अर्धच्छेद — पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेद'

इतना आता है। दूसरी पंक्ति की संख्या दुगुनी-दुगुनी है अतः 'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तर भजियं।' इस संकलनसूत्र से संकलन करना।

अंतधन = छे   आदि = व छे

$$\frac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार})-\text{आदि}}{\text{गुणकार}-१} \quad \frac{(\text{छे}\times\cancel{२})-\text{व छे}}{\cancel{२} \quad २-१} = \text{छे - व छे}$$

इतना प्रमाण नाना गुणहानि का जानना।

अंकसंदृष्टि से पल्य = ६५५३६, पल्य की वर्गशलाका ४, पल्य का प्रथम वर्गमूल २५६

प्रथम पंक्ति	४	१६	२५६
द्वितीय पंक्ति अर्धच्छेद	२	४	८
तृतीय पंक्ति वर्गशलाका	१	२	३

प्रथमपंक्ति का परस्पर गुणाकार

४×१६×२५६ = ४×४०९६ = १६३८४

$$\frac{\text{पल्य}}{\text{वर्गशलाका}} \quad \frac{६५५३६}{४} = \boxed{१६३८४}$$

अन्योन्याभ्यस्त

द्वितीय पंक्ति का जोड अंतधन $\frac{(८\times२)-२}{१}$

$= \frac{१६-२}{१} = १४$ नानागुणहानि

तीसरी पंक्ति का यहाँ प्रयोजन नही हैं।

सव्वसलायाणं जदि पयदणिसेये लहेज्ज एक्कस्स ।
किं होदित्ति णिसेये सलाहिदे होइ गुणहाणी ।।९२७।।

अन्वयार्थ - (सव्वसलायाणं) सर्व नाना गुणहानि शलाकाओं के **(जदि)** यदि **(पयदणिसेये)** पूर्वोक्त स्थिति के सर्व निषेक **(लहेज्ज)** प्राप्त होते हैं, तो **(एक्कस्स)** एक गुणहानि शलाका के **(किं होदित्ति)** कितने होंगे इस त्रैराशिक विधि के अनुसार **(णिसेये)** निषेकों में **(सलाहिदे)** शलाकाओं का भाग देने पर जो राशि हो वह **(होइ गुणहाणी)** गुणहानि आयाम का प्रमाण होता है।

विशेषार्थ - सर्व नाना गुणहानि शलाकाओं के यदि स्थिति के सब निषेक होते हैं तो एक गुणहानि शलाका के कितने निषेक होंगे ? ऐसा त्रैराशिक करनेपर गुणहानि आयाम का प्रमाण आता है।

प्रमाण	फल	इच्छा	लब्ध
छे - व छे	प १	१	$\frac{\text{प १×१}}{\text{छे - व छे}}$ → गुणहानि आयाम

दोगुणहाणिपमाणं णिसेयहारो दु होइ तेण हिदे ।
इट्‌ठे पढमणिसेये विसेसमागच्छदे तत्थ ।।९२८।।

अन्वयार्थ - (दोगुणहाणिपमाणं) गुणहानि के प्रमाण को दुगुणा करने पर दो गुणहानि का प्रमाण होता है, **(णिसेयहारो दु होइ)** वहीं निषेकहार होता है। इस निषेकहार से **(इट्‌ठे)** इष्ट **(पढमणिसेये)** विवक्षित गुणहानि के प्रथम निषेक में **(तेण हिदे)** भाग देने पर **(तत्थ विसेसमागच्छदे)** उस गुणहानि में विशेष अर्थात् चय का प्रमाण आता है।

विशेषार्थ - दो गुणहानि = निषेकहार।

इस निषेकहार से विवक्षित गुणहानि के प्रथम निषेक में भाग देनेपर जो प्रमाण आवें वही उस गुणहानि में विशेष का प्रमाण होता है इसे ही चय कहते हैं।

$$\frac{\text{प्रथम निषेक}}{\text{दो गुणहानि}} = \text{चय} \qquad \frac{\text{५१२}}{\text{१६}} = \text{३२ चय}$$

रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं तु चरिमगुणदव्वं ।
होदि तदो दुगुणकमो आदिमगुणहाणिदव्वोत्ति ।।९२९।।

अन्वयार्थ - (रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं) एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशि से सर्व द्रव्य को भाग देने से जो प्रमाण आवे, वह **(तु चरिमगुणदव्वं)** अंतिम गुणहानि का द्रव्य **(होदि)** होता है, **(तदो)** उससे अर्थात् अन्तिम गुणहानि के द्रव्य से **(दुगुणकमो)** दुगुने-दुगुने क्रम से **(आदिमगुणहाणिदव्वोत्ति)** प्रथम गुणहानि पर्यन्त द्रव्य जानना चाहिए।

विशेषार्थ - $\dfrac{\text{द्रव्य}}{\text{अन्योन्यभ्यास्तराशि} - १}$ = अन्तिम गुणहानिद्रव्य का प्रमाण

$\dfrac{६३००}{६४ - १} = \dfrac{६३००}{६३}$ = १०० अन्तिम गुणहानिद्रव्य का प्रमाण

इससे पाँचवी आदि गुणहानियों में दुगुना-दुगुना द्रव्य प्रथम गुणहानिपर्यन्त होता है। १००।२००।४००।८००।१६००।३२००

चय का प्रमाण निकालने का सूत्र -

रुऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयभागहारेण ।
हदगुणहाणिविभजिदे सगसगदव्वे विसेसा हु ।।९३०।।

अन्वयार्थ -(रुऊणद्धाणद्धेणूणेण) एक कम गुणहानि आयाम के प्रमाण को आधा करके **(णिसेयभागहारेण)** निषेक भागहार में से **(हदगुणहाणिविभजिदे)** घटाकर गुणहानि आयाम को गुणा करने पर जो प्रमाण हो उसका भाग **(सगसगदव्वे)** अपने अपने द्रव्य में देने से जो प्रमाण आवे वह **(विसेसा हु)** चय का प्रमाण होता है।

विशेषार्थ -

$$\frac{\text{गुणहानिद्रव्य}}{\text{गुणहानि आयाम} \times \text{निषेकहार} - \left(\frac{\text{गुणहानि आयाम} - १}{२}\right)} = \text{चय}$$

$$\frac{३२००}{८\times\left\{१६ - \frac{(८-१)}{२}\right\}} = \frac{३२००}{८\times\left(१६-\frac{७}{२}\right)} = \frac{३२००}{८\times\left(\frac{१६\times२}{२} - \frac{७}{२}\right)}$$

$$\frac{३२००}{८\times\frac{(३२-७)}{२}} = \frac{३२००}{८ \times \frac{२५}{२}} = \frac{\overset{३२}{\cancel{१२८}}\;\cancel{३२००}\times\overset{१}{\cancel{२}}}{\cancel{८}\times\cancel{२५}_{१}}$$

= ३२ प्रथम गुणहानि का चय

इसीप्रकार द्वितीयादि गुणहानि का चय आता है।

द्वितीय गुणहानि का चय = $$\frac{१६००}{८\times १६ - \frac{(८-१)}{२}} = \frac{१६००}{८\times \frac{२५}{२}} = \frac{१६००\times २}{८\times २५} = \boxed{१६}$$

तृतीय गुणहानि का चय = $$\frac{८००}{८\times १६ - \frac{(८-१)}{२}} = \frac{८००}{८\times \frac{२५}{२}} = \frac{८००\times २}{८\times २५} = \boxed{८}$$

चतुर्थ गुणहानि का चय = $$\frac{४००}{८\times १६ - \frac{(८-१)}{२}} = \frac{४००}{८\times \frac{२५}{२}} = \frac{४००\times २}{८\times २५} = \boxed{४}$$

पंचम गुणहानि का चय = $$\frac{२००}{८\times १६ - \frac{(८-१)}{२}} = \frac{२००}{८\times \frac{२५}{२}} = \frac{२००\times २}{८\times २५} = \boxed{२}$$

षष्ठ गुणहानि का चय = $$\frac{१००}{८\times १६ - \frac{(८-१)}{२}} = \frac{१००}{८\times \frac{२५}{२}} = \frac{१००\times २}{८\times २५} = \boxed{१}$$

प्रथम गुणहानि का चयधन = $\frac{\text{पद}-१}{२}\times$ चय $\times$ पद = $\frac{८-१}{२}\times ३२ \times ८ = ८९६$

सर्वद्रव्य - चयधन = आदिधन   ३२००-८९६ = २३०४ प्रथम गुणहानि का आदिधन

$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गुणहानि आयाम}}$ = प्रथम निषेक $\frac{२३०४}{८} = २८८$ प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक (चयहीन क्रम से अंतिम निषेक)

इसमें एक एक चय बढ़ाने पर द्वितीयादि निषेक होते हैं।

२८८ + ३२ = ३२०, ३२० + ३२ = ३५२, ३८४,४१६,४४८,४८०,५१२

यहाँ दो सौ अठ्ठासी को प्रथम निषेक इसलिए कहा हैं कि उसके ऊपर ही चय की वृद्धि होकर आगे के निषेक बनते हैं। वास्तव में वह गुणहानि का अन्तिम निषेक है। प्रथम निषेक ५१२ है। इसी प्रकार आगे की गुणहानियों में भी जानना।

द्वितीयगुणहानि का चयधन= $\frac{७}{२}$ × १६× ८ = ४४८

द्वितीयगुणहानि का आदिधन = १६०० - ४४८ = ११५२

द्वितीयगुणहानि का प्रथमनिषेक = $\frac{११५२}{८}$ = १४४

इसीप्रकार सर्व शेष गुणहानियों का प्रथम निषेक निकालकर उसमें उस गुणहानि का एक एक चय बढ़ाने पर द्वितीयादि निषेकों का प्रमाण आता है।

अंकसंदृष्टि की अपेक्षा गुणहानि रचना

प्रथमगुणहानि	द्वितीयगुणहानि	तृतीयगुणहानि	चतुर्थगुणहानि	पंचमगुणहानि	षष्ठगुणहानि
२८८	१४४	७२	३६	१८	९
३२०	१६०	८०	४०	२०	१०
३५२	१७६	८८	४४	२२	११
३८४	१९२	९६	४८	२४	१२
४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३
४४८	२२४	११२	५६	२८	१४
४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५
५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६
३२००	१६००	८००	४००	२००	१००

अर्थसंदृष्टि रूप से यथार्थ कथन -

कोई जीव किसी एक विवक्षितसमय में मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग के द्वारा आयु के बिना सात कर्मों के उत्कृष्ट समयप्रबद्ध को ग्रहण करता है।

उत्कृष्ट समयप्रबद्ध = जघन्य समयप्रबद्ध × $\frac{\text{पल्य के अर्धच्छेद}}{\text{असंख्यात}}$ स × $\frac{\text{छे}}{\partial}$

अपवर्तन करनेपर स ∂ उत्कृष्ट समयप्रबद्ध

मोहनीय का द्रव्य $= \dfrac{\text{उत्कृष्ट समयप्रबद्ध}}{\text{सात}} = \genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial}{७}$

मोहनीय सर्वघातिद्रव्य $= \dfrac{\text{मोहनीय द्रव्य}}{\text{अनन्त}} = \genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial}{७\ \text{ख}}$ इसका बटवारा मिथ्यात्व और १६ कषायों में होता है अत: मिथ्यात्व द्रव्य $= \dfrac{\text{मोहनीय सर्वघातिद्रव्य}}{१७} = \genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial}{७\ \text{ख}\ १७}$

मिथ्यात्व की अन्योन्याभ्यस्त राशि $= \dfrac{\text{पल्य}}{\text{पल्यवर्गशलाका}} = \dfrac{\text{प}}{\text{व}}$ संदृष्टि 'अ'

चरमगुणहानिद्रव्य $= \dfrac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{अन्योन्याभ्यस्त}-१} = \genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial}{७\ \text{ख}\ १७\ \overset{१\frown}{\text{अ}}}$

इसके नीचे प्रत्येक गुणहानि में दुगुणा दुगुणा द्रव्य होता है।

द्विचरमगुणहानिद्रव्य = चरमगुणहानिद्रव्य × २ = $\genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial \times २}{७\ \text{ख}\ १७\ \overset{१\frown}{\text{अ}}}$

प्रथम गुणहानिद्रव्य = चरमगुणहानिद्रव्य × $\dfrac{\text{अन्योन्याभ्यस्त}}{२} = \boxed{\genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial \times \quad \text{अ}}{७\ \text{ख}\ १७\ \overset{१\frown}{\text{अ}}\ २}}$

द्वितीय गुणहानि का द्रव्य $= \dfrac{\text{प्रथमगुणहानिद्रव्य}}{२} = \genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial \times \quad \text{अ}}{७\ \text{ख}\ १७\ \overset{१\frown}{\text{अ}}\ २।२}$

गुणहानि का चय $= \dfrac{\text{स्वगुणहानिद्रव्य}}{\text{गुण.आयाम} \times \left\{\text{निषेकहार} - \left(\dfrac{\text{गुण.आयाम}-१}{२}\right)\right\}}$

एक कम गुणहानि का आधा $\genfrac{}{}{0pt}{}{\overset{१\frown}{\text{गु}}}{२}$ निषेकहार = गु २

$$\text{गु}\ २ - \left(\frac{\text{गु}-१}{२}\right) = \frac{\text{गु}\ २\times २}{२} - \frac{\text{गु}-१}{२} = \frac{\text{गु}\ ४ - (\text{गु}-१)}{२} = \frac{\text{गु}\ ३ + १}{२}$$

प्रथमगुणहानि का चय $\boxed{\genfrac{}{}{0pt}{}{\text{स}\,\partial \quad \text{अ}}{७\ \text{ख}\ १७\ \overset{१\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \genfrac{}{}{0pt}{}{\overset{१-}{\text{गु}}}{२}\ ३}}$

इसी प्रकार अपनी अपनी गुणहानि के द्रव्य में गु गु ३ (१— / २) भाग देनेपर चय का प्रमाण आता है।

और अपने अपने चय को एक कम गुणहानि आयाम के आधे गु (१⌒ / २) से और गुणहानि आयाम 'गु' से गुणा करनेपर अपना अपना चयधन आता है।

	चय	चयधन
अन्तिम गुणहानि	स ∂ ७ ख १७ अ (१⌒) गु गु ३ (१—) २	स ∂ × गु × गु (१⌒) ७ ख १७ अ (१⌒) गु गु ३ २ (१—) २
द्विचरम गुणहानि	स ∂ २ ७ ख १७ अ (१⌒) गु गु ३ (१—) २	स ∂ २ गु गु (१⌒) ७ ख १७ अ (१⌒) गु गु ३ २ (१—) २
मध्यम गुणहानियाँ	० ० ० ० ०	० ० ० ० ०
द्वितीय गुणहानि	स ∂ अ ७ ख १७ अ (१⌒) २।२ गु गु ३ (१—) २	स ∂ अ गु गु (१⌒) ७ ख १७ अ (१⌒) २ २ गु गु ३ २ (१—) २
प्रथम गुणहानि	स ∂ अ ७ ख १७ अ (१⌒) २ गु गु ३ (१—) २	स ∂ अ गु गु (१⌒) ७ ख १७ अ (१⌒) २ गु गु ३ २ (१—) २

प्रथम निषेक प्राप्त करने का नियम -

पचयस्स य संकलणं सगसगगुणहाणिदव्वमज्झम्मि ।
अवणिय गुणहाणिहिदे आदिपमाणं तु सव्वत्थ ।।९३१।।

अन्वयार्थ - (पचयस्स य संकलणं) सर्व चयधन को, **(सगसगगुणहाणिदव्वमज्झम्मि)** अपनी अपनी गुणहानि के सर्व द्रव्य में से, **(अवणिय)** कम करके **(गुणहाणिहिदे)** उसमें गुणहानि आयाम का भाग देने पर जो लब्ध आवे, वह **(आदिपमाणं तु सव्वत्थ)** सर्वत्र आदि निषेक का प्रमाण होता है। उसमें एक-एक चय बढ़ाने पर द्वितीयादि निषेकों का प्रमाण होता है।

विशेषार्थ - उपर्युक्त चयधनों को अपनी अपनी गुणहानि के द्रव्य में से घटानेपर

जो शेष रहे उसमें गुणहानि आयाम का भाग देनेपर जो प्रमाण हो वह अपनी अपनी गुणहानि के प्रथम निषेक का (अधिक संकलन की अपेक्षा) प्रमाण होता है यही चयहानि क्रम की अपेक्षा अन्तिम निषेक जानना।

प्रथम गुणहानि का आदिधन = प्रथम गुणहानि का सर्वधन - प्रथम गुणहानि का चयधन

१)

स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ २ - स ∂ अ ~~गु~~ गु̂ / ७ ख १७ अ̂ २ ~~गु~~ गु ३ ~~२~~ ~~२~~

स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ २ - स ∂ अ गु̂ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३

समच्छेद करने के लिए गु ३ से गुणा किया और भाग दिया

स ∂ अ गु ३ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३ - स ∂ अ गु̂ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३

मूलराशि के एक अधिक का प्रमाण अलग रखना ऋणराशि के एक घाटि का प्रमाण

स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३ स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ ।२। गु ३

ऋण का ऋण मूलराशि का धन होता है इस न्याय से मूलराशि का एक प्रमाण अलग रखा है उसमें ऋण के एक घाटि के प्रमाण को मिलाना।

स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ ।२। गु ३ + स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३

धनराशि स ∂ अ २ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३ दोनों राशि समान होने से दोगुनी हो गयी।

जैसे १० + १० = १० × २ = २०

दो गुणकार को भागहार एक अधिक तीन गुणहानि का भागहार करना क्योंकि भागहार का भागहार राशि का गुणकार होता है।

स ∂ अ / ७ ख १७ अ̂ २ गु ३/२ इस धनराशि को अलग रखना।

एक अधिक प्रमाण अलग निकालने के बाद शेष राशि - एक घाटि का प्रमाण अलग रखने के बाद शेष ऋणराशि

$$\frac{\text{स } \partial \text{ अ गु ३}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ |\text{२}|\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \text{३}} - \frac{\text{स } \partial \text{ अ गु}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \text{३}}$$

छेद समान है अत: समान संख्याओं को निकालकर शेष तीन गुणहानि में से एक गुणहानि कम करने से दो गुणहानि शेष रहती है।

$$\frac{\text{स } \partial \text{ अ गु २}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \text{३}}$$

दो गुणकार को भागहारभूत ${}^{१}\overline{\text{गु}}\ \text{३}$ का भागहार करना

$$\frac{\text{स } \partial \text{ अ गु}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}$$

इसमें उपर्युक्त अलग रखी धनराशि को मिलाना

$$\frac{\text{स } \partial \text{ अ गु}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}} + \frac{\text{स } \partial \text{ अ}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}$$

छेद समान है मूलराशि में धनराशि का एक गुणकार अधिक करना

$$\boxed{\frac{\text{स } \partial \text{ अ } {}^{१}\overline{\text{गु}}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}}$$

प्रथम गुणहानि का आदिधन

$$\text{प्रथमनिषेक} = \frac{\text{आदिधन}}{\text{गुणहानिआयाम}}$$

$$\text{२८८} = \frac{\text{२३०४}}{\text{८}}$$

$$\boxed{\frac{\text{स } \partial \text{ अ } {}^{१}\overline{\text{गु}}}{\text{७ ख १७ } {}^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{२ } {}^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}\ \text{गु}}}$$

प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक अधिक संकलन की अपेक्षा समझना।

गुणहानि की अपेक्षा (हीनसंकलन की अपेक्षा) यह अंतिम निषेक आता है।

इसके नीचे एक-एक चय अधिक होते होते चरमनिषेक (प्रथमनिषेक हीन संकलन की अपेक्षा) में एक कम गुणहानि मात्र चय अधिक होकर दोगुणहानिमात्र चय होते हैं।

अंतिम निषेक = चय × दोगुणहानि अथवा प्रथमनिषेक + (गुणहानि-१×चय)

अंकसंदृष्टि ३२ × १६ = ५१२ २८८ + (७ × ३२)

२८८ + २२४ = ५१२

अर्थसंदृष्टि = $\boxed{\dfrac{स\ \partial\ अ\ \ गु\ २}{७\ ख\ १७\ \overset{१\frown}{अ}\ २\ \overset{१—}{गु}\ \underset{२}{३}\ गु}}$ अंतिम निषेक

$$\frac{स\ \partial\ अ\ \overset{१—}{गु}}{७\ ख\ १७\ \overset{१\frown}{अ}\ २\ \overset{१—}{गु}\ \underset{२}{३}\ गु} + \frac{स\ \partial\ अ\ \overset{१\frown}{गु}}{७\ ख\ १७\ \overset{१\frown}{अ}\ २\ \overset{१—}{गु}\ \underset{२}{३}\ गु}$$

एक अधिक गुणहानि में एक कम गुणहानि मिलाने से दो गुणहानि का प्रमाण होता है।

$$(गु + १) + (गु - १) = गु\ २$$

$\boxed{\dfrac{स\ \partial\ अ\ \ गु\ २}{७\ ख\ १७\ \overset{१\frown}{अ}\ २\ \overset{१—}{गु}\ \underset{२}{३}\ गु}}$ अंतिम निषेक

हीनक्रम की अपेक्षा त्रिकोणरचना के समान जानना अर्थात्

$$\frac{\text{प्रथमगुणहानि धन}}{\text{गुणहानिआयाम}} = \text{मध्यमधन} \qquad \frac{\text{मध्यमधन}}{\text{निषेकहार} - \left(\frac{\text{गुण-१}}{२}\right)} = \text{चय} \qquad \frac{३२००}{८} = ४०० \qquad \frac{४००}{१६ - \frac{७}{२}} = \frac{४००}{\frac{२५}{२}} = ३२$$

$$\text{प्रथमगुणहानिधन} = \frac{स\ \partial}{\overset{१\frown}{अ}} \times \frac{अ}{२}$$

$$\frac{\text{समयप्रबद्ध}}{\text{अन्योन्या} - १} \times \frac{\text{अन्योन्या}}{२} \qquad \text{अतः}\ \frac{स\ \partial\ अ}{\overset{१\frown}{अ}\ २\ \ गु} = \text{मध्यमधन}$$

$$\text{निषेकहार} - \frac{(\text{गुणहानि-१})}{२} \qquad \frac{गु\ ४ - (गु-१)}{२}$$

चार गुणहानि में एक कम गुणहानि घटाने से $\dfrac{गु२\times२}{२} - \dfrac{गु - १}{२} = \dfrac{गु\ ४}{२} - \dfrac{(गु-१)}{२}$

तीन गुणहानि अधिक एक प्रमाण शेष रहता है $\overset{१—}{गु}\ \underset{२}{३}$

$$\frac{\text{स}\ \partial\ \text{अ}}{\overset{\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}} = \text{चय} \quad \frac{४००}{\frac{२५}{२}} = \frac{४००\times२}{२५} = \boxed{३२}$$ अंकसंदृष्टि

चय × दो गुणहानि = प्रथमनिषेक → $$\frac{\text{स}\ \partial\ \text{अ}\ \text{गु}२}{\overset{\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$$ अंकसंदृष्टि ३२×१६=५१२

ऊपर एक एक चय हीन होकर एक कम गुणहानिप्रमाण चय कम करनेपर चरमनिषेक आता है।

अंतिमनिषेक = प्रथमनिषेक -(गुण-१×चय) अथवा चय × गुणहानि +१

$$\frac{\text{स}\ \partial\ \text{अ}\ \text{गु}२}{\overset{\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}} - \frac{\text{स}\ \partial\ \text{अ}\ \overline{\overset{\frown}{\text{गु}}}}{\overset{\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}} = \frac{\text{स}\ \partial\ \text{अ}\ \overline{\text{गु}}}{\overset{\frown}{\text{अ}}\ २\ \text{गु}\ \overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$$ → ३२×९=२८८ अंतिमनिषेक

इसीप्रकार शेष गुणहानियों में भी लाना चाहिये।

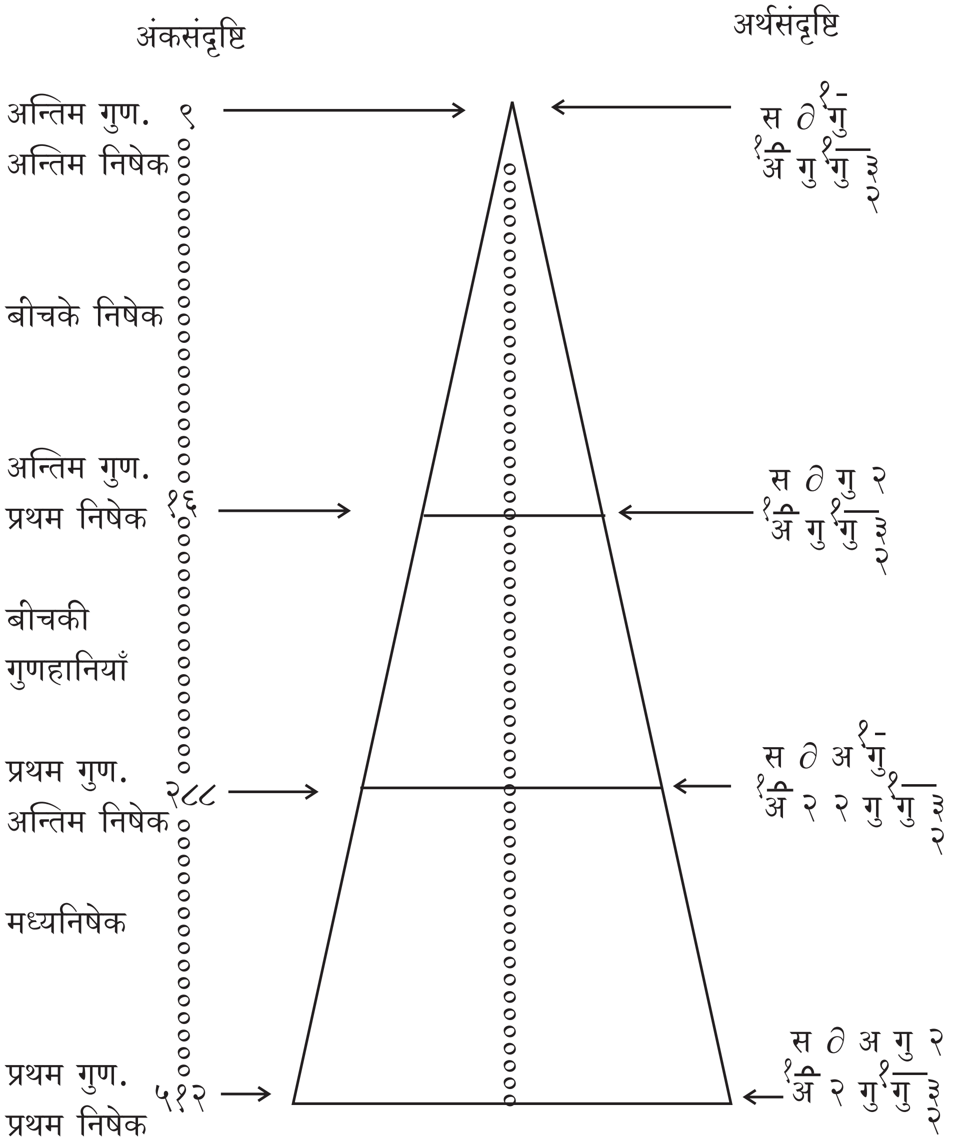

इसप्रकार मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति व उत्कृष्ट समयप्रबद्ध की अपेक्षा जानना।

सव्वासिं पयडीणं णिसेयहारो य एयगुणहाणी ।
सरिसा हवंति णाणागुणहाणिसलाओ वोच्छामि ।।९३२।।

अन्वयार्थ - (**सव्वासिं**) सभी (**पयडीणं**) मूल प्रकृतियों का, (**णिसेयहारो य एय गुणहाणी**) निषेक हार अर्थात् दो गुणहानि और एक गुणहानि आयाम ये दोनों तो (**सरिसा हवंति**) समान होते हैं (**णाणागुणहाणिसलाओ**) नाना गुणहानि शलाकाए स्थिति के अनुसार हैं अत: समान नहीं हैं (**वोच्छामि**) सो उन नाना गुणहानि शलाकाओं को कहते हैं।

विशेषार्थ - अन्यत्र जहाँ जैसी स्थिति और समयप्रबद्ध हो वैसी स्थिति और द्रव्य का प्रमाण जानना। गुणहानि आयाम और दो गुणहानि का प्रमाण सर्वत्र समान है। नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि स्थिति के अनुसार होते हैं। स्थिति कम तो नानागुणहानि कम होगी और स्थिति अधिक हो तो नानागुणहानि अधिक बनेगी।

जैसे $\frac{४८}{८}$ = ६ गुणहानियाँ $\frac{४०}{८}$ = ५ गुणहानियाँ

मिच्छत्तस्स य उत्ता उवरीदो तिण्णि तिण्णि सम्मिलिदा ।
अट्ठगुणेणूणकमा सत्तसु रयिदा तिरिच्छेण ।।९३३।।

अन्वयार्थ - (**मिच्छत्तस्स य उत्ता**) पूर्व में मिथ्यात्व की नाना गुणहानि का प्रमाण कहा, वह पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेद को आदि करके,पल्य के प्रथम वर्गमूल के अर्धच्छेद पर्यन्त जो दूने-दूने अर्धच्छेद एक-एक वर्ग में कहे गये हैं, उनका स्थापन करके (**उवरीदो**) उपरितन (**तिण्णि तिण्णि**) पल्य के प्रथम वर्गमूल से लेकर तीन तीन वर्ग स्थानों के अर्धच्छेद (**सम्मिलिदा**) मिलाने से वे (**अट्ठगुणेणूणकमा**) ८-८ गुणे कम अनुक्रम से होते हैं, (**सत्तसु**) और उनकी सात स्थानों में पृथक् पृथक् (**तिरिच्छेण**) तिर्यक् रूप से (**रयिदा**) रचना होती है ।

विशेषार्थ - पूर्व में मिथ्यात्व की नाना गुणहानि का प्रमाण कहा था वह इसप्रकार है , पल्य के प्रथम वर्गमूल के अर्धच्छेद से लेकर पल्य की वर्गशलाका राशितक के वर्गस्थानों के अर्धच्छेदों को जोड़ने से जो प्रमाण आता है वही मिथ्यात्व की नाना गुणहानि का प्रमाण है। पल्य की वर्गशलाका से लेकर पल्यके प्रथममूलपर्यंत अर्धच्छेद दुगुणे दुगुणे हैं। उन्हें स्थापन करके ऊपरसे अर्थात् पल्य के प्रथमवर्गमूल से लेकर तीन तीन वर्गस्थानों की अर्धच्छेद राशि को मिलानेपर वे क्रमसे आठ-आठ गुणा हीन अनुक्रम से होती है। उसीको सिद्ध करते हैं।

पल्य के अर्धच्छेद→ छे, पल्य के प्रथमवर्गमूल के अर्धच्छेद, पल्य के अर्धच्छेदों से आधे छे/२ इससे दूसरे वर्गमूल के अर्धच्छेद आधे छे/२×२ है इसप्रकार पिछले पिछले वर्गस्थानों के अर्धच्छेद आधे-आधे जानना।

पल्य के प्रथम वर्गमूल के अर्धच्छेद	**द्वितीय वर्गमूल के अर्धच्छेद**	**तृतीय वर्गमूल के अर्धच्छेद**
अंतधन $\frac{छे}{२}$	$\frac{छे}{२×२} = \frac{छे}{४}$	$\frac{छे}{२×२×२} = \frac{छे}{८}$ आदि

$$संकलन\ सूत्र = \frac{(अंतधन×गुणकार) - आदि}{गुणकार - १} = \frac{\left(\frac{छे}{\cancel{२}} × \cancel{२}\right) - \frac{छे}{८}}{२ - १}$$

$$छे - \frac{छे}{८} = \frac{छे\ ८}{८} - \frac{छे}{८} = \boxed{\frac{छे\ ७}{८}}$$ तीनों का संकलन

चौथे वर्गमूलके अर्धच्छेद	**पाँचवे वर्गमूलके अर्धच्छेद**	**छठे वर्गमूलके अर्धच्छेद**
$\frac{छे}{८×२} = \frac{छे}{१६}$ अंतधन	$\frac{छे}{८×२×२} = \frac{छे}{३२}$	$\frac{छे}{८×२×२×२} = \frac{छे}{६४}$ आदि

$$संकलन = \frac{छे}{८×\cancel{२}} × \cancel{२} - \frac{छे}{८×८} = \frac{छे}{८} - \frac{छे}{८×८} = \frac{छे\ ८}{८×८} - \frac{छे}{८×८} = \boxed{\frac{छे\ ७}{८×८}}$$

तीनों का संकलन

सातवें वर्गमूलके अर्धच्छेद	**आठवे वर्गमूलके अर्धच्छेद**	**नौवे वर्गमूलके अर्धच्छेद**
$\frac{छे}{८×८×२} = \frac{छे}{१२८}$ अंतधन	$\frac{छे}{८×८×४} = \frac{छे}{२५६}$	$\frac{छे}{८×८×८} = \frac{छे}{५१२}$ आदि

संकलन= $\left(\frac{\text{छे}}{८\times८\times\cancel{७}}\times\cancel{७}\right)-\frac{\text{छे}}{८\times८\times८}=\frac{\text{छे}}{८\times८}-\frac{\text{छे}}{८\times८\times८}=\frac{\text{छे}\ ८}{८\times८\times८}-\frac{\text{छे}}{८\times८\times८}$

$= \boxed{\frac{\text{छे}\ ७}{८\times८\times८}}$ तीनों का संकलन

इसी तरह उतरते उतरते तीन-तीन वर्गस्थानों के अर्धच्छेद जोड़नेपर आठ-आठगुणा हीन होते जाते हैं। उतरते-उतरते पल्य की वर्गशलाका के आठवें वर्ग के अर्धच्छेद पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेदों से आठबार दोगुणित अर्थात् २५६ गुणे, सातवें वर्ग के अर्धच्छेद १२८ गुणे और छठे वर्ग के अर्धच्छेद चौसठ गुणे होतें हैं।

पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेद ⟶ व छे, उसके वर्ग के अर्धच्छेद व छे ×२, द्वितीय वर्ग के अर्धच्छेद व छे×२×२, तृतीय वर्ग के अर्धच्छेद व छे×२×२×२= व छे ८, चतुर्थ वर्ग के अर्धच्छेद व छे ८×२, पाँचवें वर्ग के अर्धच्छेद व छे ८×२×२, छठे वर्ग के अर्धच्छेद व छे ८×२×२×२ = व छे ८× ८, सातवें वर्ग के अर्धच्छेद व छे ८×८×२, आठवें वर्ग के अर्धच्छेद व छे ८×८×२×२ = व छे ८×८×४,

पल्य की वर्गशलाका के आठवें वर्गके अर्धच्छेद	**सातवें वर्गके अर्धच्छेद**	**छठे वर्ग के अर्धच्छेद**
व छे×८×८×४ अंतधन	व छे×८×८×२	व छे×८×८ आदि

तीनों का संकलन (व छे × ८×८×४×२(गुणकार)) - व छे ८× ८×१

= व छे ८ × ८ × ८ - व छे ८ × ८

समान संख्याओं को निकालकर शेष गुणकार में से ऋणराशि का एक गुणकार कम करना

= $\boxed{\text{व छे} \times ८ \times ८ \times ७}$

पाचवें वर्ग के अर्धच्छेद	**चौथे वर्ग के अर्धच्छेद**	**तीसरे वर्गके अर्धच्छेद**
व छे×८×४ अंतधन	व छे×८×२	व छे×८×१ आदि

तीनों का संकलन → व छे × ८×४×२ - व छे ८× १ = व छे ८ × ८ - व छे ८ × १
= **व छे × ८ × ७**

द्वितीय वर्ग के अर्धच्छेद	प्रथम वर्गके अर्धच्छेद	पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेद
व छे × ४	व छे×२	व छे

तीनों का संकलन व छे × ४×२ - व छे = व छे ८ - व छे = **व छे ७**

इसप्रकार तीन-तीन वर्गों के अर्धच्छेदों का जोड़ आठ-आठ गुणा हीन होता है।

पल्य के १-२-३ रे वर्गमूलों के अर्धच्छेदों का जोड़	छे ७ / ८ (अन्त)
पल्य के ४-५-६ ठे वर्गमूलों के अर्धच्छेदों का जोड़	छे ७ / ८ ८
पल्य के ७-८-९ वें वर्गमूलों के अर्धच्छेदों का जोड़	छे ७ / ८ ८ ८
००००० पल्य की वर्गशलाका के ८-७-६ ठे वर्गों के अर्धच्छेदों का जोड़	०००० व छे ७।८।८
पल्य की वर्गशलाका के ५-४-३ रे वर्गों के अर्धच्छेदों का जोड़	व छे ७।८
पल्य की वर्गशलाका के २-१ ले वर्गों के अर्धच्छेद और पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेदों का जोड़	व छे ७ (आदि)

$$\frac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$$

इस संकलनसूत्र से उपर्युक्त सब संख्याओं का जोड़ करना

$$\frac{\left(\frac{\text{छे } ७}{८} \times ८\right) - \text{व छे } ७}{८-१} = \frac{\text{छे } ७ - \text{व छे } ७}{७} = \frac{(\text{छे} - \text{व छे})\cancel{७}}{\cancel{७}} = \boxed{\text{छे-वछे}}$$

अर्थात् पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेद से न्यून पल्य के अर्धच्छेद इतनी ७० कोडाकोडी सागर स्थिति की नाना गुणहानि शलाकाएँ होती हैं।

नानागुणहानि प्रमाण बार दो-दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करने से अन्योन्याभ्यस्त राशि आती है।

पल्य के अर्धच्छेद प्रमाण दो का अंक रखकर परस्पर में गुणा करनेपर पल्य होता है और पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेद प्रमाण दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करने से पल्य की वर्गशलाका होती है।

विरलनराशि से जितने हीन रूप होते हैं उतने प्रमाण दो का परस्पर गुणा करने से उत्पन्न हुई राशि उत्पन्न राशि का भागहार होती है। इसलिए पल्य भाज्यराशि और पल्य की वर्गशलाका भागहार राशि होती है। अर्थात्

$$\frac{\text{पल्य}}{\text{पल्य की वर्गशलाका}} = \frac{\text{प}}{\text{व}}$$

यह ७० कोडाकोडी सागर की अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण है।

तत्थंतिमं छिदिस्स य अट्ठमभागो सलायछेदा हु ।
आदिमरासिपमाणं दसकोडाकोडिपडिबद्धे ।।९३४।।

अन्वयार्थ - (दसकोडाकोडिपडिबद्धे) दस कोडा कोडी सागर की स्थिति में, नाना गुणहानि शलाका सम्बन्धी **(तत्थंतिमं छिदिस्स य)** अन्तधन छे **(अट्ठमभागो)** (पल्य के अर्धच्छेद का) आठवा भाग है, और **(सलायछेदा हु)** वर्ग शलाका के अर्धच्छेद **(आदिमरासिपमाणं)** आदिधन का प्रमाण है।

इगिपंतिगदं पुध पुध अप्पिट्ठेण य हदे हवे णियमा ।
अप्पिट्ठस्स य पंति णाणागुणहाणिपडिबद्धा ।।९३५।।

अन्वयार्थ - (इगिपंतिगदं) शेष छह पंक्तियों में एक-एक पंक्ति में **(पुध पुध)** पृथक् पृथक् **(अप्पिट्ठेण य हदे)** अपने इष्ट का भाग देने पर **(णियमा अप्पिट्ठस्स)** नियम से अपनी अपनी इष्ट राशि जो वीस कोडाकोडी सागर है उसकी **(णाणागुणहाणिपडिबद्धा य पंति हवे)** नाना गुणहानि शलाका की पंक्तियाँ होती हैं।

अप्पिट्ठपंतिचरमो जेत्तियमेत्ताणि वग्गमूलाणं ।
छेदणिवहोत्ति णिहाणिय सेसं च य मेलिदे इट्ठा ।।९३६।।

अन्वयार्थ - (अप्पिट्ठपंतिचरमो) अपनी अपनी इष्ट पंक्तियों में जितने इष्ट स्थान

हो, **(जेत्तियमेत्ताणि)** उतने **(वग्गमूलाणं)** वर्गमूलों के **(छेदणिवहोत्ति)** अर्धच्छेदों के समूहरूप **(णिहाणिय)** ऐसा निर्धारण कर **(सेसं च)** और शेष को **(य मेलिदे)** मिलाने पर **(इट्ठा)** विवक्षित कर्म की स्थिति सम्बन्धी नाना गुणहानि होती हैं।

इट्ठसलायपमाणे दुगसंवग्गे कदे दु इट्ठस्स ।
पयडिस्स य अण्णोण्णब्भत्थपमाणं हवे णियमा ।।९३७।।

अन्वयार्थ - (इट्ठसलायपमाणे) तथा अपनी अपनी नाना गुणहानि शलाका प्रमाण **(दुगसंवग्गे कदे)** दो के अंक लिखकर गुणा करने पर **(दु इट्ठस्स पयडिस्स)** अपनी इष्ट कर्म प्रकृति सम्बन्धी **(य अण्णोण्णब्भत्थपमाणं)** अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण **(हवे णियमा)** नियम से होता है।

विशेषार्थ - अब ७० कोडाकोडीसागर को प्रमाणराशि बनाकर और पूर्वोक्त तीन-तीन वर्गों के अर्धच्छेदों के जोड़ को फलराशि बनाकर दस कोडाकोडी सागरप्रमाण इच्छाराशि करके १० कोडाकोडी सागर की नाना गुणहानि निकालते हैं।

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	छे ७ / ८	सा.१०को२	छे ७ / ८ × १०को.२ / ७०को.२	छे १(अंत) / ८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८	सा.१०को२	छे ७ / ८।८ × १०को.२ / ७०को.२	छे १ / ८।८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८।८	सा.१०को २	छे ७ / ८।८।८ × १०को.२ / ७०को.२	छे १ / ८।८।८
oooooo	oooooo	oooooo	oooooo	oooooo
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.१०को २	व छे ८।८।७ × १०को.२ / ७०को.२	व छे ८।८
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.१०को २	व छे ८।७ × १०को.२ / ७०को.२	व छे ८
सा.७०को२	व छे ७	सा.१०को २	व छे ७ × १०को.२ / ७०को.२	व छे

उपर्युक्त सब लब्धराशियों का जोड़ $\dfrac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$

$$\frac{\left(\frac{\text{छे}^{१}}{\not{८}} \times \not{८}\right) - \text{व छे } १}{८-१} = \boxed{\frac{\text{छे} - \text{वछे}}{७}}$$ दश कोडाकोडी सागर की नाना गुणहानि शलाका

इतनी बार दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करने से १० कोडाकोडी सागर की अन्योन्याभ्यस्त राशि आती है।

उसका प्रमाण लाने के लिए उस नानागुणहानि में $\dfrac{\text{छे} - \text{वछे}}{७} = \dfrac{\text{छे}}{७} - \dfrac{\text{वछे}}{७}$

जो ऋण का प्रमाण $\dfrac{\text{वछे}}{७}$ है उसको अलग रखना।

शेष प्रमाण $\dfrac{\text{छे}}{७}$ इसको संदृष्टि के लिए आठ से गुणा करना और आठ से भाग देना

$\dfrac{\text{छे}\times८}{७\times८}$ इसमें से एक रूप को अलग रखना वह एकरूप $\dfrac{\text{छे } १}{७/८}$

शेष प्रमाण $\dfrac{\text{छे}\times\not{७}}{\not{७}\times८} = \dfrac{\text{छे}}{८}$ (पल्य के अर्धच्छेदों का आठवाँ भाग)

इतनीबार दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर पल्य का तीसरा वर्गमूल आता है क्योंकि भागहार के जितने अर्धच्छेद होते हैं उतने वर्गस्थान भाज्यराशि से नीचे जानेपर उत्पन्न राशि का प्रमाण होता है। जैसे पल्य का प्रमाण ६५५३६ माना, उसके अर्धच्छेद १६ है $\dfrac{१६}{४}$ इतनी बार दो के अंक रखनेपर ६५५३६ का दूसरा वर्गमूल का प्रमाण १६ आता है, क्योंकि भागहार ४ के अर्धच्छेद दो है अत: ६५५३६ के नीचे दूसरा वर्गस्थान १६ है।

$\dfrac{१६}{४} = ४$ चार बार दो के अंक रखनेपर २×२×२×२ = १६ ही आता है। यहाँ $\dfrac{\text{छे}}{८}$ में भागहार आठ है उसके अर्धच्छेद तीन होते हैं अत: पल्य से नीचे तीसरा वर्गस्थान पल्य का तीसरा वर्गमूल है।

गुणकार में से जो एक गुणकार का प्रमाण है वह $\frac{\text{छे}}{७\times८}$ पल्य के अर्धच्छेदों का छप्पनवा भाग है इसमें से अलग रखी हुई ऋणराशि $\frac{\text{वछे}}{७}$ घटाना जो शेष रहे उतने प्रमाण दो के अंक मांडकर परस्पर गुणा करनेपर पल्य का पाँचवा वर्गमूल × असंख्यात प्रमाण आता है, क्योंकि भागहारभूत ५६ के अर्धच्छेद ५ से अधिक है अत: पल्य के पाँचवे वर्गमूल से असंख्यातगुणी संख्या होती है।

इस राशि को पूर्वोक्त पल्य के तीसरे वर्गमूल में गुणा करना क्योंकि विरलनराशि में जितनी संख्या अधिक होती है उतने प्रमाण दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करने से जो राशि होती है वह गुणकाररूप होती है जैसे ४+२ बार दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर २×२×२×२=१६ और दो बार दो का गुणा २×२ = ४ अत: १६×४ = ६४ उत्पन्न राशि है ४+२=६ छह बार दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर भी ६४ ही आते हैं।

पल्य का ३ रा वर्गमूल × पल्य का ५ वा वर्गमूल × असंख्यात

= पल्य का ३ रा वर्गमूल × असंख्यात

संदृष्टि → | मू ३ ∂ | **१० कोडाकोडी सागर की अन्योन्याभ्यस्त राशि।**

पल्य के ५ वें वर्गमूल को असंख्यात से गुणा करनेपर असंख्यात संख्या ही होती हैं।

२० कोडाकोडी सागर स्थितिसंबंधी नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्तराशि

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	छे ७ ८	सा.२०को २	छे ७ × (२०को.२)/(७०को.२) ८	छे २(अंत) ८
सा.७०को२	छे ७ ८।८	सा.२०को २	छे ७ × (२०को.२)/(७०को.२) ८।८	छे २ ८।८
सा.७०को२	छे ७ ८।८।८	सा.२०को २	छे ७ × (२०को.२)/(७०को.२) ८।८।८	छे २ ८।८।८
००००००	००००००	००००००	००००००	००००००
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.२०को २	व छे ८।८।७ × (२०को.२)/(७०को.२)	व छे ८।८।२
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.२०को २	व छे ८।७ × (२०को.२)/(७०को.२)	व छे ८।२
सा.७०को२	व छे ७	सा.२०को २	व छे ७ × (२०को.२)/(७०को.२)	व छे २

उपर्युक्त लब्धराशियों का जोड → [(अंतधन×गुणकार) - आदि] / [गुणकार - १]

[((छे २ / ~~८~~) × ~~८~~) - व छे २] / [८-१] = [छे२ - वछे२] / [७] = **[छे -।२ / ७]** २० कोडाकोडी सागर की नाना गुणहानि

पल्य के अर्धच्छेदों में वर्गशलाका के अर्धच्छेदों को कम करने के लिए किंचित न्यून की संदृष्टि की क्योंकि वह प्रमाण अल्प है।

छे-२ / ७ इतनी बार दो दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर २० कोडाकोडी सागर की अन्योन्याभ्यस्त राशि आती है। उसका प्रमाण लाने के लिये छे - २ / ७ आठ से गुणा करना और आठ से भाग देना।

$\frac{\text{छे-२×८}}{\text{७×८}}$ एकरूप को अलग रखना एक का प्रमाण $\frac{\text{छे-२×१}}{\text{७×८}}$

शेष $\frac{\text{छे-२×७}}{\text{७×८}_{४}} = \frac{\text{छे-}}{\text{४}}$ इतनी बार दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर पल्य का दूसरा वर्गमूल होता है। क्योंकि भागहार ४ के अर्धच्छेद २ हैं अत: पल्य के नीचे दूसरा वर्गस्थान पल्य का दूसरा वर्गमूल है। मू-२ अलग रखे हुए एक का प्रमाण $\frac{\text{छे-२।१}}{\text{७।८}}$ इतनी बार दो का अंक लिखकर परस्पर गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात हुआ उससे पूर्वोक्त मू-२ को गुणा करनेपर अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण असंख्यात गुणित किंचित् कम पल्य का दूसरा वर्गमूल हुआ।

मू-२ ∂ २० कोडाकोडी सागर स्थिति की अन्योन्याभ्यस्त राशि।

३० कोडाकोडीसागर की नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्तराशि

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	छे ७ / ८	सा.३०को २	छे ७ / ८ × ३०को.२ / ७०को.२	छे ३(अंत) / ८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८	सा.३०को २	छे ७ / ८।८ × ३०को.२ / ७०को.२	छे ३ / ८।८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८।८	सा.३०को २	छे ७ / ८।८।८ × ३०को.२ / ७०को.२	छे ३ / ८।८।८
oooooo	oooooo	oooooo	oooooo	oooooo
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.३०को २	व छे ८।८।७ × ३०को.२ / ७०को.२	व छे ८।८।३
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.३०को २	व छे ८।७ × ३०को.२ / ७०को.२	व छे ८।३
सा.७०को२	व छे ७	सा.३०को २	व छे ७ × ३०को.२ / ७०को.२	व छे ३

उपर्युक्त लब्धराशियों का जोड $\rightarrow \dfrac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$

$$\frac{\left(\frac{\text{छे}}{१}^{३}\times ८\right) - \text{व छे ३}}{८-१} = \frac{\text{छे३} - \text{वछे३}}{७} = \boxed{\frac{(\text{छे} - \text{वछे})३}{७}}$$

पल्य के अर्धच्छेदों में से वर्गशलाका के अर्धच्छेद कम करने के लिए किंचित् न्यून की संदृष्टि की है। $\boxed{\frac{\text{छे}-३}{७}}$ **३० कोडाकोडी सागर की नाना गुणहानि**

इतनी बार दो दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करना।

$\frac{\text{छे}-३}{७}$ इसको संदृष्टि के लिए आठ से गुणा करना और आठ का भाग देना।

$\frac{\text{छे}-३\times८}{७\times८}$ इसमें से एक गुणकार के प्रमाण $\frac{\text{छे}-३\times१}{७\times८}$ अलग रखना

शेष प्रमाण $\frac{\text{छे}-३\times७}{७\times८} = \frac{\text{छे}-३}{८}$ इसमें से एकगुणा $\frac{\text{छे}-१}{८}$ प्रमाण दो अंक रखकर परस्पर गुणा करने से पल्य का तृतीय वर्गमूल मू-३ होता है और शेष दोगुणा $\frac{\text{छे}-२}{८} = \frac{\text{छे} -}{४}$ इतने प्रमाण वार दो का अंक लिखकर परस्पर गुणा करनेपर पल्य का द्वितीय वर्गमूल होता है। इनको परस्पर गुणा करनेपर मू २× मू ३ प्रमाण होगा उसमें से कुछ कम करना मू-२×मू-३ पुनश्च एक गुणकार अलग रखा था $\frac{\text{छे}-३\times१}{७\times८}$ किंचित् न्यून तीन गुणे पल्य के अर्धच्छेदों का छप्पनवा भाग था उतने प्रमाण दो के अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात हुआ उससे गुणा करनेपर

$\boxed{\text{मू-२×मू-३×}\partial}$ **३० कोडाकोडी सागर की अन्योन्याभ्यस्त राशि**

४० कोडाकोडी सागर स्थिति की नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	$\frac{\text{छे ७}}{८}$	सा.४० को २	$\frac{\text{छे ७}}{८} \times \frac{\text{४०को.२}}{\text{७०को.२}}$	$\frac{\text{छे ४(अंत)}}{८}$
सा.७०को२	$\frac{\text{छे ७}}{८।८}$	सा.४० को २	$\frac{\text{छे ७}}{८।८} \times \frac{\text{४०को.२}}{\text{७०को.२}}$	$\frac{\text{छे ४}}{८।८}$

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	छे ७ / ८।८।८	सा.४० को २	छे ७ / ८।८।८ × ४०को.२ / ७०को.२	छे ४ / ८।८।८
० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ०
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.४० को २	व छे ८।८।७ × ४०को.२ / ७०को.२	व छे ८।८।४
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.४० को २	व छे ८।७ × ४०को.२ / ७०को.२	व छे ८।४
सा.७०को२	व छे ७	सा.४०को २	व छे ७ × ४०को.२ / ७०को.२	व छे ४

उपर्युक्त लब्धराशियों का जोड → $\frac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$

$$\frac{\left(\frac{\text{छे}}{\cancel{८}}^{४}\times\cancel{८}\right) - \text{व छे } ४}{८-१} = \frac{\text{छे}४ - \text{वछे}४}{७} = \boxed{\frac{\text{छे} - ४}{७}}$$

४० कोडाकोडी सागर स्थिति की नाना गुणहानि

इसको संदृष्टि के लिए ८ से गुणा करना व ८ से भाग देना $\frac{\text{छे}-४\times८}{७\times८}$ एकप्रमाण को अलग रखना $\frac{\text{छे}-४\times१}{७\times८}$ शेष प्रमाण $\frac{\text{छे}-\cancel{४}\times\cancel{७}}{\cancel{७}\times\cancel{८}_{२}} = \frac{\text{छे} -}{२}$

इतनीबार दो का अंक रखकर गुणा करने से पल्य का प्रथमवर्गमूल होता है क्योंकि भागहार दो के अर्धच्छेद एक है अत: पल्य से नीचे पहला वर्गस्थान पल्य का प्रथमवर्गमूल है। पृथग् रखे हुए एकप्रमाण $\frac{\text{छे}-४\times१}{७\times८}$ इतनी बार दो का गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात होता है। उससे पूर्वोक्त मू-१ को गुणा करनेपर मू-१।∂ असंख्यात गुणा कुछ कम पल्य का प्रथम वर्गमूल

मू-१।∂ **४० कोडाकोडीसागर स्थिति की अन्योन्याभ्यस्त राशि**

५० कोडाकोडी स्थिति की नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	छे ७ / ८	सा.५० को २	छे ७ / ८ × ५०को.२ / ७०को.२	छे ५ (अंत) / ८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८	सा.५० को २	छे ७ / ८।८ × ५०को.२ / ७०को.२	छे ५ / ८।८
सा.७०को२	छे ७ / ८।८।८	सा.५० को २	छे ७ / ८।८।८ × ५०को.२ / ७०को.२	छे ५ / ८।८।८
००००००	००००००	००००००	००००००	००००००
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.५० को २	व छे ८।८।७ × ५०को.२ / ७०को.२	व छे ८।८।५
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.५० को २	व छे ८।७ × ५०को.२ / ७०को.२	व छे ८।५
सा.७०को२	व छे ७	सा.५०को २	व छे ७ × ५०को.२ / ७०को.२	व छे ५

उपर्युक्त लब्धराशियों का जोड $\rightarrow \dfrac{(\text{अंतधन}\times\text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$

$$\frac{\left(\frac{\text{छे}^{५}}{\cancel{८}}\times\cancel{८}\right) - \text{व छे }५}{८-१} = \frac{\text{छे}५ - \text{वछे}५}{७} = \boxed{\frac{(\text{छे}-\text{वछे})५}{७}}$$ कुछ कम पाँचगुणा पल्यके अर्धच्छेदों का सातवाँ भाग

$\longrightarrow$ ५० कोडाकोडी सागर स्थिति की नाना गुणहानि

इसको संदृष्टि के लिए ८ से गुणा करना व ८ से भाग देना $\dfrac{\text{छे}-५\times८}{७\times८}$ इसमें से एक गुणकार के प्रमाण को अलग रखना $\dfrac{\text{छे}-५\times१}{७\times८}$

शेष प्रमाण $\dfrac{\text{छे}-५\times\cancel{७}}{\cancel{७}\times८} = \dfrac{\text{छे}-५}{८}$ इसमें से एक गुणा पल्य के अर्धच्छेदों का आठवाँ भाग $\dfrac{\text{छे}-१}{८}$ प्रमाण दो का अंक रखकर परस्पर गुणा

करने से पल्य का तृतीय वर्गमूल मू३ होता है शेष $\frac{छे-४}{८} = \frac{छे -१}{२}$ इतनी बार दो का अंक रखकर परस्पर गुणा करनेपर पल्य का प्रथम वर्गमूल होता है उन दोनों का परस्पर गुणा करना मू ३ × मू १। पृथग् रखे हुए एक गुणकार का प्रमाण = $\frac{छे-५}{७×८}$ इतनी बार दो का परस्पर गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात का प्रमाण आता है। उससे पूर्वोक्त संख्या को गुणा करनेपर मू १।मू ३। ∂ इतनी ५० कोडाकोडीसागर स्थिति की अन्योन्याभ्यस्त राशि आती है।

६० कोडाकोडीसागर की नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि

प्रमाण	फल	इच्छा	त्रैराशिक विधान	लब्ध
सा.७०को२	$\frac{छे ७}{८}$	सा.६० को २	$\frac{छे ७}{८} × \frac{६०को.२}{७०को.२}$	$\frac{छे ६}{८}$ (अंत)
सा.७०को२	$\frac{छे ७}{८।८}$	सा.६० को २	$\frac{छे ७}{८।८} × \frac{६०को.२}{७०को.२}$	$\frac{छे ६}{८।८}$
सा.७०को२	$\frac{छे ७}{८।८।८}$	सा.६० को २	$\frac{छे ७}{८।८।८} × \frac{६०को.२}{७०को.२}$	$\frac{छे ६}{८।८।८}$
oooooo	oooooo	oooooo	oooooo	oooooo
सा.७०को२	व छे ८।८।७	सा.६० को २	व छे ८।८।७ × $\frac{६०को.२}{७०को.२}$	व छे ८।८।६
सा.७०को२	व छे ८।७	सा.६० को २	व छे ८।७ × $\frac{६०को.२}{७०को.२}$	व छे ८।६
सा.७०को२	व छे ७	सा.६०को २	व छे ७ × $\frac{६०को.२}{७०को.२}$	व छे ६

उपर्युक्त लब्धराशियों का जोड → $\frac{\left(\frac{छे^{६}}{८}×८\right) - व छे ६}{८-१} = \frac{छे ६ - व छे ६}{७}$

$= \frac{(\text{छे - वछ})६}{७} = \boxed{\frac{\text{छे - ६}}{७}}$ **६० कोडाकोडी सागर की नानागुणहानि का प्रमाण**

इसको संदृष्टि के लिए ८ से गुणा करना और ८ से भाग देना $\frac{\text{छे}-६\times८}{७\times८}$

इसमें से एक गुणकार के प्रमाण को $\frac{\text{छे}-६\times१}{७\times८}$ अलग रखना।

शेष प्रमाण $\frac{\text{छे}-६\times\cancel{७}}{\cancel{७}\times८} = \frac{\text{छे}-६}{८} = \frac{\text{छे}-३}{४}$ इसमें से एक गुणकार प्रमाण $\frac{\text{छे}-१}{४}$ बार दो का अंक रखकर गुणा करनेपर पल्य का द्वितीय वर्गमूल तथा शेष $\frac{\text{छे}-२}{४} = \frac{\text{छे} -१}{२}$ इतनी बार दो का अंक रखकर गुणा करनेपर पल्य का प्रथम वर्गमूल होता है

अत: मू १ × मू २ इतना प्रमाण हुआ। पृथक् रखे हुये $\frac{\text{छे}-६\times१}{७\times८}$ इतनी बार दो का अंक रखकर गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात होता है उससे पूर्वोक्त संख्या को गुणा करनेपर $\boxed{\text{मू}१।\text{मू}२।\partial}$ **६० कोडाकोडीसागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि आती है**

ज्ञानावरणादि मूल कर्म प्रकृतियों की अन्योन्याभ्यस्त राशि -

आवरणवेदणीये विग्घे पल्लस्स बिदियतदियपदं।
णामागोदे बिदियं संखातीदं हवंति त्ति ।।९३८।।

अन्वयार्थ - (आवरणवेदणीये) ज्ञानावरण, दर्शनावरण और वेदनीय, **(विग्घे)** और अन्तराय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति ३० कोडा कोडी सागर प्रमाण हैं, अत: इनकी अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण **(संखातीदं)** असंख्यात **(पल्लस्स)** पल्य के **(बिदियतदियपदं)** द्वितीय वर्गमूल से गुणित तृतीय वर्गमूल प्रमाण है। **(णामागोदे)** नाम और गोत्र कर्म की उत्कृष्ट स्थिति २० कोडा कोडी सागर हैं, अत: इनकी अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण **(बिदियं)** असंख्यात पल्य के द्वितीय वर्गमूल प्रमाण **(हवंति त्ति)** होती हैं।

विशेषार्थ - ७० कोडाकोडीसागर की नानागुणहानि छे-वछे और अन्योन्याभ्यस्त राशि $\frac{\text{प}}{\text{व}}$ पहले ही निकाली है।

कर्म	उत्कृष्टस्थिति	नानागुणहानि	अन्योन्याभ्यस्त
दर्शन मोहनीय	सा.७० को २	छे - वछे	प / व पल्य / वर्गशलाका
चारित्र मोहनीय	सा.४० को २	छे - ४ / ७	मू १ ∂ पल्यवर्गमूल×असंख्यात
ज्ञानावरण, दर्शनावरण वेदनीय, अंतराय	सा.३० को २	छे -।३ / ७	मू २।मू३।∂ पल्यद्वि.मूल× तृ.मूल × असंख्यात
नाम, गोत्र	सा.२० को २	छे -।२ / ७	मू २।∂ पल्यद्वि.मूल×असंख्यात
आयु	३३ सागर	छे - वछे।३३ / ७० को २	

आउस्स य संखेज्जा तप्पडिभागा हवंति णियमेण ।
इदि अत्थपदं जाणिय इट्ठठिदिस्साणए मदिमं ।।९३९।।

अन्वयार्थ - (आउस्स य) और आयुकर्म के **(संखेज्जा)** संख्यात **(तप्पडिभागा)** उसके प्रतिभाग **(णियमेण हवंति)** नियम से होते हैं। **(इदि)** इस प्रकार **(मदिमं)** बुद्धिमानों को **(अत्थपदं जाणिय)** विवक्षित पदों को जानकर **(इट्ठठिदिस्साणए)** विवक्षित स्थिति की नाना गुणहानि शलाका जानना चाहिए।

विशेषार्थ - आयुकर्म की नाना गुणहानि

प्रमाण	फल	इच्छा
सा.७० को.२ की	छे-वछे इतनी नानागुणहानि	३३ सागर की कितनी नानागुणहानि ?

छे-वछे × ३३ सागर / ७० को. २ सागर = छे-वछे ३३ / ७० को.२

उक्कस्सट्ठिदिबंधे सयलाबाहा हु सव्वठिदिरयणा।
तक्काले दीसदि तो धो धो बंधट्ठिदीणं च ।।९४०।।

अन्वयार्थ - (उक्कस्सट्ठिदिबंधे) विवक्षित प्रकृति का उत्कृष्ट स्थितिबंध होने पर **(तक्काले सयलाबाहा)** उस काल में संपूर्ण उत्कृष्ट आबाधा **(हु सव्वठिदिरयणा)** और सर्व स्थिति की निषेक रचना **(दीसदि)** दिखाई देती है। **(तो धो धो)** उस स्थिति के अंतिम निषेक से नीचे नीचे प्रथम निषेक पर्यन्त **(बंधट्ठिदीणं च)** स्थितिबंध रूप निषेकों की एक एक समय हीन स्थिति **(दीसदि)** दिखाई देती है।

आबाधा काल के व्यतीत होने की विधि -

आबाधाणं बिदियो तदियो कमसो हु चरिमसमयो दु ।
पढमो बिदियो तदियो कमसो चरिमो णिसेओ दु ।।९४१।।

अन्वयार्थ - बन्ध होने के अनन्तर **(आबाधाणं)** आबाधा काल का **(बिदियो)** द्वितीय समय होता है, **(कमसो तदियो हु चरिमसमयो दु)** क्रमसे तृतीय आदि एक एक समय व्यतीत होने पर आबाधा का अन्तिम समय प्राप्त होता है। तथा आबाधा काल समाप्त होने पर **(पढमो बिदियो तदियो)** प्रथम, द्वितीय, तृतीयादि से **(चरिमो णिसेओ दु)** अन्तिम निषेक पर्यन्त **(कमसो)** क्रमसे निषेकों की रचना होती है।

समयपबद्धपमाणं होदि तिरिच्छेण वट्टमाणम्मि ।
पडिसमयं बंधुदओ एक्को समयप्पबद्धो दु ।।९४२।।

अन्वयार्थ - (वट्टमाणम्मि) वर्तमान समय में विवक्षित कर्म की आबाधा रहित उत्कृष्ट स्थिति मात्र गलितावशेष प्रथम निषेक से चरम निषेक पर्यन्त **(तिरिच्छेण)** तिर्यक् रूप से स्थित सम्पूर्ण **(समयपबद्धपमाणं)** समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य उदय में आता है। **(पडिसमयं)** प्रति समय **(बंधुदओ)** बंध और उदय **(एक्को समयप्पबद्धो दु)** एक एक समयप्रबद्ध प्रमाण होता है।

विशेषार्थ - विवक्षित प्रकृति का उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होते ही उसके बंध के समय में ही उत्कृष्ट आबाधा और सर्वस्थिति की रचना होती है। अन्तिम निषेक की स्थिति विवक्षित स्थिति प्रमाण ही होती है। उसके नीचे नीचे प्रथम निषेकपर्यन्त स्थिति एक-एक

समय हीन होती जाती है।

ज्ञानावरण की उत्कृष्ट स्थिति ३० को २ सागर

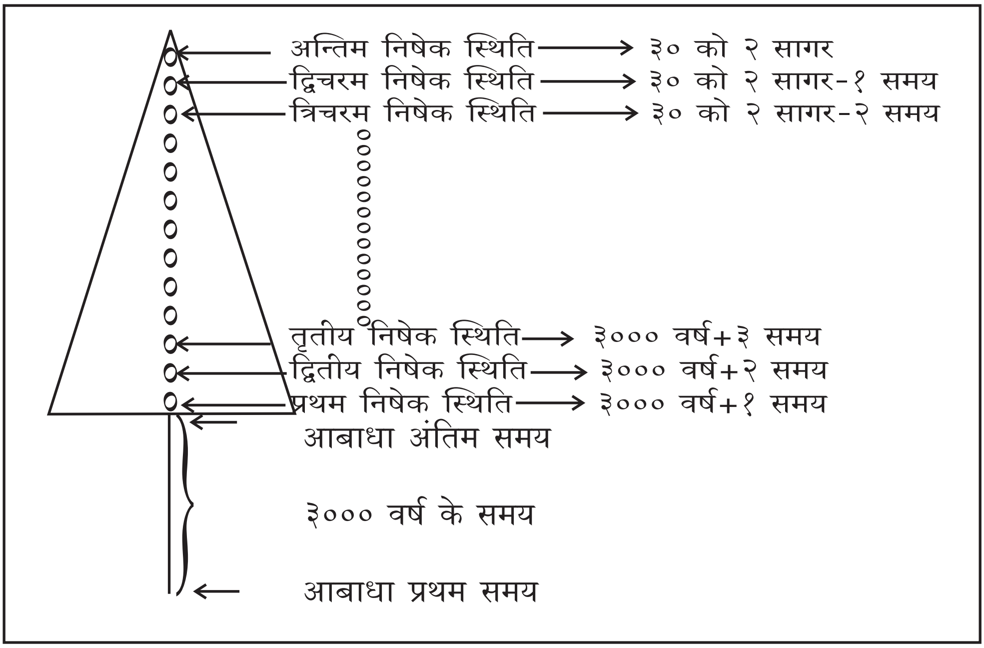

जिस जिस समय में जितने जितने परमाणुओं का समूहरूप निषेक है उस उस समय उतने उतने परमाणु उदयरूप होते हैं। उस उदयरूप समय के अनंतर वे परमाणु कर्मस्वभाव को छोड़ देते हैं।

प्रतिसमय एक एक समयप्रबद्ध का ही बंध होता है और प्रतिसमय एक एक समयप्रबद्ध उदयरूप होता है। विवक्षित किसी एक वर्तमान समय में विवक्षित मोहनीय कर्म की आबाधारहित उत्कृष्ट स्थितिमात्र काल में समय-समय में बंधनेवाले समयप्रबद्ध में से जिन निषेकों की निर्जरा हो गयी उनकी तो निर्जरा हो गयी, शेष रहे निषेकों में से प्रथम समयप्रबद्ध के अन्तिम निषेक से लगाकर अन्तिम समयप्रबद्ध के प्रथम निषेकपर्यन्त तिर्यग् रचनारूप एक-एक निषेक मिलकर सम्पूर्ण एक समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य होता है। उसका वर्तमान समय में उदय होता है।

प्रतिसमय एक-एक समयप्रबद्ध का बंध और उदय होता है फिर भी सत्त्वद्रव्य कुछ कम डेढ़गुणहानि से गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। त्रिकोणरचना के सर्वद्रव्य का जोड़

कर देनेपर नियम से इतना ही होता है।

यहाँ अंकसंदृष्टि से स्पष्ट करते हैं -

जिस समयप्रबद्ध के सर्वनिषेक सत्ता में हैं उसके अडतालीस निषेक नीचे लिखे। उसके ऊपर जिस समयप्रबद्ध का प्रथम निषेक गल गया उसके सैंतालीस निषेक लिखे। उसके ऊपर जिसका पहला और दूसरा निषेक गल गया उसके छियालीस निषेक लिखे। इस प्रकार एक-एक निषेक हीन लिखते-लिखते अन्तमें जिस समयप्रबद्ध के सैतालीस निषेक गल गये उसका एक अंतिम निषेक लिखा। यह सत्ता की अपेक्षा रचना जानना। यथा वर्तमान विवक्षित समय से आगे जैसे एक समयप्रबद्ध का बन्ध होता है वैसे ही एक समय प्रबद्ध की निर्जरा होती है। अत: जैसे सत्ता की रचना कही वैसे ही जानना। इस त्रिकोणयन्त्र की रचना का जोड़ किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। यही सत्त्व द्रव्य का प्रमाण है। विवक्षित वर्तमान समय में जिस समयप्रबद्ध के सैतालीस निषेक पहले गल गये उसका एक अंतिम निषेक उदयरूप होता है। जिसके छियालीस निषेक गल गये उसका द्विचरम निषेक उदयरूप है। अंत का निषेक आगामी समय में उदय में आयेगा। इसी क्रमसे जिसका एक भी निषेक नहीं गला उसका प्रथम निषेक उदयरूप है, अन्य निषेक आगामी समयों में क्रम से उदय में आयेंगे। इस प्रकार अंत के निषेक से लगाकर प्रथम निषेक पर्यन्त सब निषेकों को जोड़ देनेपर एक समयप्रबद्ध का उदय होता है।

उसके ऊपर उस विवक्षित समय के अनंतर जो वर्तमान समय होता है उसमें जिस समयप्रबद्ध का पहले अंत निषेक उदय में आया था उसके तो सर्व निषेक गल चुके। किंतु जिसका द्विचरम निषेक उदय में आया था उसका यहाँ अंत का निषेक उदयरूप होता है। इस तरह पूर्वोक्त प्रकार से एक एक निषेक का उदय होते जिसके प्रथम निषेक का उदय पहले हुआ था उसका यहाँ दूसरे निषेक का उदय होता है और उस समयप्रबद्ध के पीछे जो समयप्रबद्ध बंधा था उसका प्रथम निषेक उदयरूप होता है। इस प्रकार से एक दूसरे विवक्षित समय में भी समयप्रबद्ध का ही उदय होता है। इस प्रकार प्रतिसमय एक समयप्रबद्ध का उदय होता है। इसीसे त्रिकोणरचना दो रूप में की है। उसमें कुछ आदि निषेक और कुछ अंत निषेक लिखे हैं और बीच में बिंदी लिखी है उसके स्थान में मध्य के निषेक जानना।

ऊपर के त्रिकोणाकार में
वर्तमान में सत्त्वरूप निषेक

वर्तमान में
उदयरूप
निषेक

																९
															९	१०
														९	१०	११
													९	१०	११	१२
												९	१०	११	१२	१३
											९	१०	११	१२	१३	१४
										९	१०	११	१२	१३	१४	१५
									९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
									१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	०
									११	१२	१३	१४	१५	१६	०	०
									१२	१३	१४	१५	१६	०	०	०
									०	१४	१५	१६	०	०	०	२४०
								००००००	१४४	१५	१६	०	०	०	२४०	२५६
							९	००००००	१६०	१६	०	०	०	२४०	२५६	२८८
						९	१०	००००००	१७६	०	०	०	२४०	२५६	२८८	३२०
					९	१०	११	००००००	१९२	०	०	२४०	२५६	२८८	३२०	३५२
				९	१०	११	१२	००००००	२०८	२२४	२४०	२५६	२८८	३२०	३५२	३८४
			९	१०	११	१२	१३	००००००	२२४	२४०	२५६	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६
		९	१०	११	१२	१३	१४	००००००	२४०	२५६	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८
↓	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	००००००	२५६	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०
९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	००००००	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२
०	०	०	०	०	०	०	०	००००००	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२	
०	०	०	०	०	०	०	०	००००००	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२		
०	०	०	०	०	०	०	२८८	००००००	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२			
०	०	०	०	०	०	२८८	३२०	००००००	४१६	४४८	४८०	५१२				
०	०	०	०	०	२८८	३२०	३५२	००००००	४४८	४८०	५१२					
०	०	०	०	२८८	३२०	३५२	३८४	००००००	४८०	५१२						
०	०	०	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	००००००	५१२							
०	०	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	००००००								
०	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	००००००								
२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२									
३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२										
३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२											
३८४	४१६	४४८	४८०	५१२												
४१६	४४८	४८०	५१२													
४४८	४८०	५१२														
४८०	५१२															
५१२																

नीचे के त्रिकोणाकार में
पूर्व में गल चुके निषेक

सत्ता रूप कर्मों के द्रव्य का प्रमाण -

सत्तं समयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणि ताडियं ऊणं ।
तियकोणसरूवट्ठिददव्वे मिलिदे हवे णियमा ।।९४३।।

अन्वयार्थ -(सत्तं) सत्ता रूप कर्मों का द्रव्य **(दिवड्ढगुणहाणिताडियं ऊणं)** कुछ कम डेढ़ गुणहानि गुणित **(समयपबद्धं)** समयप्रबद्ध प्रमाण है और **(तियकोण सरूवट्ठिद दव्वे)** त्रिकोण रचना में स्थित सर्व द्रव्य को **(मिलिदे)** जोड़ने पर इतना ही प्रमाण **(णियमा हवे)** नियम से होता है।

उवरिमगुणहाणीणं धणमंतिमहीणपढमदलमेत्तं ।
पढमे समयपबद्धं ऊणकमेण ट्ठिया तिरिये ।।९४४।।

अन्वयार्थ -(पढमे समयपबद्धं) त्रिकोण रचना में विवक्षित वर्तमान समय में प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक में तिर्यक् रूप से लिखे निषेकों का समुदाय समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। **(ऊणकमेण ट्ठिया तिरिये)** और उसके ऊपर द्वितीय निषेक से अन्तिम गुणहानि के अन्तिम निषेक पर्यन्त क्रम से चय प्रमाण कम होती हुई तिर्यग् रचना रूप द्वितीयादि **(उवरिमगुणहाणीणं)** उपरिम गुणहानियों के **(धणमंतिमहीणपढमदलमेत्तं)** जोड़ में से अन्तिम गुणहानि का जोड़ घटाकर जो प्रमाण हो उसका आधा होता है।

$\frac{६३०० - १००}{२}$ = ३२०० और प्रथम गुणहानि का जोड़, गुणहानि के प्रमाण से गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है।

विशेषार्थ - त्रिकोणरचना में विवक्षित वर्तमान समय में प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक में तिर्यक्रूप से लिखे निषेकों का समुदायरूप सम्पूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। उसके ऊपर दूसरे निषेक से लेकर अंतिम गुणहानि के अंतिम निषेक पर्यन्त एक-एक चय हीन(निषेक) होता है। उसमें द्वितीयादि गुणहानि का धन अंतिम गुणहानि के जोडरूप धन को अपनी अपनी पहली गुणहानि के जोड में से घटाने पर जो जो प्रमाण हो उसका आधा आधा होता है। अर्थात्

द्वितीयादि गुणहानि का धन = $\frac{\text{प्रथम गुणहानि का धन — अंतिम गुणहानि का धन}}{२}$

प्रथमगुणहानि का धन = समयप्रबद्ध × गुणहानि आयाम = ६३०० × ८

द्वितीयादि गुणहानि का धन $= \frac{६३०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{६२०० \times ८}{२} = ३१०० \times ८$

त्रिकोण रचना में जो नीचे-नीचे प्रथम पंक्ति में तिर्यक्‌रूप से लिखा उसको प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक कहते हैं। उसके ऊपर की पंक्ति में जो लिखे उनको प्रथम गुणहानि का द्वितीयादि निषेक कहते हैं। गुणहानि आयाम प्रमाण पंक्ति पूर्ण होनेपर उसके ऊपर जो पंक्ति है उसको द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक कहते हैं। उसके ऊपर की पंक्ति को दूसरा निषेक कहते हैं। इस तरह से गुणहानि प्रमाण पंक्ति पूर्ण होनेपर उसके ऊपर की पंक्ति को तीसरी गुणहानि का प्रथम निषेक कहते हैं। इसी प्रकार अन्त की गुणहानि पर्यन्त जानना। इसे अंकसंदृष्टिरूप त्रिकोणयंत्र में दिखाते हैं -

नीचे ही नीचे बराबर पंक्ति रूप में नौ के निषेक से लेकर पाँच सौ बारह पर्यन्त सब निषेक लिखे हैं। उनको प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक कहते हैं। इसका जोड सम्पूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण तिरसठ सौ होता है। उससे ऊपर दूसरी पंक्ति में नौ के निषेक से लगाकर चार सौ अस्सी के निषेक पर्यन्त निषेक लिखे हैं। उसको प्रथम गुणहानि का दूसरा निषेक कहते हैं। इसका जोड़ पाँच सौ बारह हीन समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। उससे ऊपर तीसरी पंक्ति में नौ के निषेक से लगाकर चार सौ अड़तालीस के निषेक पर्यन्त लिखे हैं। उसको प्रथम गुणहानि का तीसरा निषेक कहते हैं। इसका जोड़ इससे पूर्व की पंक्ति के जोड़ में से चार सौ अस्सी घटानेपर जो शेष रहे उतना है। इस प्रकार अन्त की गुणहानि के अन्तिम निषेक पर्यन्त जोड़ एक-एक निषेकरूप चयसे हीन होता जाता है। इस प्रकार अड़तालीस पंक्तियाँ होती हैं। उनमें एक से लगाकर आठ पंक्ति पर्यन्त प्रथम गुणहानि का प्रथमादि निषेक कहते हैं।

उसके ऊपर नौंवी पंक्ति से लगाकर सोलहवी पंक्ति पर्यन्त द्वितीय गुणहानि के प्रथमादि निषेक कहते हैं। इस प्रकार आठ-आठ पंक्तियों की एक गुणहानि जानना। उनमें जो चय घटाये थे उनको मिलानेपर प्रथम गुणहानि के तिरसठ सौ को आठ (गुणहानि) से गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना है। उसमें से अन्त की गुणहानि का जोड़ आठ गुणा सौ है, उसे घटानेपर आठ गुणा बासठ सौ होता है। उसका आधा आठ गुणा इकतीस सौ होता है। यही दूसरी गुणहानि का जोड़ है। उसमें अन्त की गुणहानि का जोड़ आठ गुणा सौ घटाने पर आठ गुणा तीस सौ होता है। उसका आधा आठ गुणा पन्द्रह सौ होता है। यही तीसरी

गुणहानि का जोड़ है। इसी प्रकार अन्त की गुणहानि पर्यन्त जानना।इन सबको जोड़ने की विधि प्रथम गुणहानि में जो चय घटाये उनको जोड़नेपर प्रथम गुणहानि में ऋण होता है। उसका आधा दूसरी गुणहानि में ऋण होता है। इसी प्रकार अन्त की गुणहानि पर्यन्त आधा-आधा होता है। इन सब को जोड़कर पूर्व प्रमाण में से घटानेपर जो शेष रहे वही त्रिकोणयन्त्र का जोड़ होता है।

प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक में संपूर्ण समयप्रबद्ध ६३०० है। द्वितीय निषेक में ५१२ से हीन समयप्रबद्ध है ६३००-५१२ = ५७८८ , तृतीय निषेक में प्रथम ५१२ और द्वितीय ४८० निषेक से हीन समयप्रबद्ध ६३००-(५१२+४८०) = ५३०८ है। इसप्रकार प्रथमादि निषेकों के क्रमसे एक-एक अधिक चय घटता होता है। इन अभावरूप निषेकों के प्रमाण को मिलानेपर प्रथम गुणहानि का जोड़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्ध ६३००×८ प्रमाण होता है क्योंकि प्रथम पंक्ति का जोड़ समयप्रबद्धप्रमाण है और ऋण मिलानेपर अन्य पंक्तियों का जोड़ भी समयप्रबद्ध प्रमाण होता है।

प्रथमगुणहानि में अभावद्रव्य

कुल निषेक

८ वें निषेक में	५१२	४८०	४४८	४१६	३८४	३५२	३२०	३२०×१
७ वें निषेक में	५१२	४८०	४४८	४१६	३८४	३५२		३५२×२
६ ठे निषेक में	५१२	४८०	४४८	४१६	३८४			३८४×३
५ वें निषेक में	५१२	४८०	४४८	४१६				४१६×४
४ थे निषेक में	५१२	४८०	४४८					४४८×५
३ रे निषेक में	५१२	४८०						४८०×६
२ रे निषेक में	५१२							५१२×७

इस अभावद्रव्य में द्वितीयादि निषेकों में जितने चय कम है उतने मिलाना

४८०+३२	४४८+(३२×२)	४१६+(३२×३)	३८४+(३२×४)	३५२+(३२×५)	३२०+(३२×६)
४८०+३२	४४८+(३२×२)	४१६+(३२×३)	३८४+(३२×४)	३५२+(३२×५)	
४८०+३२	४४८+(३२×२)	४१६+(३२×३)	३८४+(३२×४)		
४८०+३२	४४८+(३२×२)	४१६+(३२×३)			
४८०+३२	४४८+(३२×२)				
४८०+३२					

इस प्रकार सब अभावद्रव्य में ऋण मिलानेपर सर्व निषेक ५१२ प्रथम निषेक प्रमाण हो जाते है।

५१२×७
५१२×६
५१२×५
५१२×४
५१२×३
५१२×२
५१२×१

इन सब ऋणों का जोड़ एक कम गच्छ का एक बार संकलन मात्र प्रथम निषेक प्रमाण होता है।

गच्छ = ८   संकलन पद्धति

$\frac{\text{गच्छ - १}}{२} \times \frac{\text{गच्छ}}{१} \times$ प्रथम निषेक

$५१२ \times \frac{७}{२} \times \frac{८}{१} = ५१२ \times २८ = १४३३६$

ऋणसंकलन की संदृष्टि→ $५१२ | \frac{\overset{१}{\overline{८}}}{२} | \frac{८}{१}$ → प्रथम ऋण द्रव्य

अभावद्रव्य में जो ऋण मिलाया उसका जोड़

आठवे निषेक में ३२×२१
सातवे निषेक में ३२×१५
छठे निषेक में ३२×१०
पाँचवे निषेक में ३२×६
चौथे निषेक में ३२×३
तीसरे निषेक में ३२×१

इन सब का जोड़ दो कम गच्छ का दो बार संकलनमात्र चयप्रमाण होता है।

$\frac{\text{गच्छ-२}}{३} \times \frac{\text{गच्छ -१}}{२} \times \frac{\text{गच्छ}}{१} \times ३२$

$३२ \times \frac{८-२}{३} \times \frac{८-१}{२} \times \frac{८}{१} = \frac{६}{३} \times \frac{७}{२} \times \frac{८}{१} \times ३२$

५६ × चय = ३२ × ५६ = १७९२

संदृष्टि→ $३२ | \frac{\overset{२}{\overline{८}}}{३} | \frac{\overset{१}{\overline{८}}}{२} | \frac{८}{१}$ → द्वितीयऋणद्रव्य

प्रथमगुणहानिका जोड़   सर्वधन - (प्रथमऋण - द्वितीयऋण)

६३०० × ८ - (१४३३६-१७९२)

५०४०० - १२५४४

प्रथमगुणहानिका जोड़ → | ३७८५६ |

अर्थसंदृष्टि →

सर्वधन	प्रथमऋण	द्वितीयऋण
६३०० × ८	$५१२\overset{१}{\overline{८}}।८$ २ १	$३२\overset{२}{\overline{८}}\overset{१}{\overline{८}}।८$ ३ २ १

प्रथमऋण में से दूसरा ऋण घटाकर जो शेष रहे उसे सर्वधन में से कम करनेपर प्रथमगुणहानि का जोड़ होता है।

प्रथमऋण - द्वितीयऋण

$५१२ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; - \; ३२ \times \overset{२}{\overline{८}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ प्रथम निषेक को दो गुणहानि
२ १ ३ २ १ से भेदने पर ५१२ = ३२×८ × २

$३२ \times ८ \times २ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; - \; ३२ \times \overset{२}{\overline{८}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ समच्छेद करनेपर
२ १ ३ २ १

$३२ \times ८ \times २ \times ३ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; - \; ३२ \times \overset{२}{\overline{८}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$
३ २ १ ३ २ १

$३२ \times ८ \times ६ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; - \; ३२ \times \overset{२}{\overline{८}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ यहाँ छह गुणहानि का प्रमाण
३ २ १ ३ २ १ है उसमें से एक गुणहानि का

$३२ \times ८ \times १ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; - \; ३२ \times \overset{२}{\overline{८}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ प्रमाण लेकर ऋण घटाना।
३ २ १ ३ २ १ शेष पाँच गुणहानि का प्रमाण
अलग रखना $३२ \times ८ \times ५ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$
३ २ १

$३२ \times २ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ सब संख्या समान है बत्तीस के आगे गुणहानि
३ २ १ का गुणकार है उसमें दो कम गुणहानि प्रमाण

कम करनेपर ८-(८-२) = २ दो शेष रहा। अलग रखे पाँच गुणहानि के प्रमाण में उपर्युक्त लब्ध को मिलाने से शुद्ध ऋण प्राप्त होता है।

$३२ \times ८ \times ५ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८ \; + \; ३२ \times २ \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$
३ २ १ ३ २ १

$३२ \times ८ \times \overset{२}{\overline{५}} \times \overset{१}{\overline{८}} \times ८$ ६	शेष शुद्ध ऋण

शेष शुद्ध ऋण दो अधिक पाँच गुणहानिगुणित एक कम गुणहानिमात्र गच्छ का एकबार संकलन का त्रिभागमात्र चयप्रमाण होता है।

प्रथम गुणहानि का	ऋणसहितधन	शुद्धऋण
	६३००×८	२— १⌓ ३२।८।५।८।८ ६

द्वितीयगुणहानि का ऋणसहित सर्वधन → $\frac{\text{प्रथमगुणहानि का ऋणसहितधन - अन्तिमगुण. ऋणसहित धन}}{२}$

$$\frac{६३०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{६२०० \times ८}{२} = \boxed{३१०० \times ८}$$

तृतीयगुणहानि का सर्वधन → $\frac{\text{द्वितीयगुणहानि का धन - अन्तिम गुणहानि का धन}}{२}$

$$\frac{३१०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{३००० \times ८}{२} = \boxed{१५०० \times ८}$$

चतुर्थगुणहानि का सर्वधन → $\frac{\text{तृतीयगुणहानि का धन - अन्तिम गुणहानि का धन}}{२}$

→ $$\frac{१५०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{१४०० \times ८}{२} = \boxed{७०० \times ८}$$

पंचमगुणहानि का सर्वधन → $\frac{\text{चतुर्थगुणहानि का धन - अन्तिम गुणहानि का धन}}{२}$

$$\frac{७०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{६०० \times ८}{२} = \boxed{३०० \times ८}$$

षष्ठगुणहानि का सर्वधन → $\frac{\text{पंचमगुणहानि का धन - अन्तिम गुणहानि का धन}}{२}$

$$\frac{३०० \times ८ - १०० \times ८}{२} = \frac{२०० \times ८}{२} = \boxed{१०० \times ८}$$

उपर्युक्त सर्व गुणहानियों का धन ऋणसहित जान लेना।

इन सब धनों का जोड़ करने के लिए सब संख्या समान गुणितरूप करने के लिए एक एक गुणहानि के धन में १०० × ८ (चरमगुणहानि का धनमात्र) ऋण मिलाना।

			दो से संभेदन करना
षष्ठ गुणहानि धन	१०० × ८ + १०० × ८	= २००×८	१००× ८×२ आदि
पंचम गुणहानि धन	३०० × ८ + १०० × ८	= ४००×८	२००× ८×२
चतुर्थ गुणहानि धन	७०० × ८ + १०० × ८	= ८००×८	४००× ८×२
तृतीय गुणहानि धन	१५०० × ८ + १०० × ८	= १६००×८	८००× ८×२
द्वितीय गुणहानि धन	३१०० × ८ + १०० × ८	= ३२००×८	१६००× ८×२
प्रथम गुणहानि धन	६३०० × ८ + १०० × ८	= ६४००×८	३२००× ८×२ अंत

गुणकाररूप संख्याओं का संकलनसूत्र -

$$\frac{(\text{अंतधन} \times \text{गुणकार})\text{-आदि}}{\text{गुणकार - १}} = \frac{(३२०० \times ८ \times २ \times २) - १०० \times ८ \times २}{२ - १}$$

$$६४०० \times ८ \times २ - १०० \times ८ \times २ = \boxed{६३०० \times ८ \times २}$$ **सर्व गुणहानियों का ऋणसहित धन**

द्वितीयादि गुणहानियों का ऋण क्रम से आधा आधा है -

षष्ठ गुणहानि ऋण	$\frac{१ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	३९२
पंचम गुणहानि ऋण	$\frac{२ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	७८४
चतुर्थ गुणहानि ऋण	$\frac{४ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	१५६८
तृतीय गुणहानि ऋण	$\frac{८ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	३१३६
द्वितीय गुणहानि ऋण	$\frac{१६ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	६२७२
प्रथम गुणहानि ऋण	$\frac{३२ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}$	१२५४४

सब ऋणों का जोड़ $\longrightarrow \frac{(\text{अंतधन} \times \text{गुणकार}) - \text{आदि}}{\text{गुणकार} - १}$

अंकसंदृष्टि $\longrightarrow$ (१२५४४ ×२)-३९२ = २५०८८ - ३९२ = २४६९६

अर्थसंदृष्टि $\longrightarrow \frac{३२ \times ८ \times \overset{२—}{५} \times ८ \times \overset{१⌂}{८} \times २}{६} - \frac{१ \times ८ \times \overset{२—}{५} \times ८ \times \overset{१⌂}{८}}{६}$

$\frac{६४ \times ८ \times \overset{२—}{५} \times ८ \times \overset{१⌂}{८}}{६} - \frac{१ \times ८ \times \overset{२—}{५} \times ८ \times \overset{१⌂}{८}}{६}$

$\boxed{\frac{६३ \times \overset{२—}{८} \times ५ \times \overset{१⌂}{८} \times ८}{६}}$ सब गुणहानियों के ऋणों का जोड़

छह गुणहानियों में मिलाया हुआ दूसरा ऋण नानागुणहानि गुणित अंतगुणहानि का धनमात्र है ⟶ **१०० × ८× ६** द्वितीय ऋण

	सर्वगुणहानियों का धन	**प्रथम ऋण**	**द्वितीयऋण**
संदृष्टि	६३००×८×२	(२— , १) ६३×८×५×८×८ / ६	१००×८×६
अंकों में	१,००,८००	२४६९६	४८००

सर्व गुणहानियों का धन - (प्रथम ऋण + द्वितीय ऋण) = सर्वधन

१,००८०० - (२४६९६ + ४८००) = १००८०० - २९४९६

= **७१३०४** त्रिकोण रचना का जोड़

सब राशियों को समयप्रबद्ध के प्रमाण में बनाने के लिए उपर्युक्त तीनों राशियों को उत्कृष्ट समयप्रबद्ध प्रमाण शलाका का (६३०० का) भाग देना।

सर्वधन	प्रथमऋण	द्वितीयऋण
६३००×८×२ / ६३००	(२— , १) ६३×८×५×८×८ / ६३००×६ / १००	१००×८×६ / ६३०० / ६३
अपवर्तन करनेपर ८×२	(२— , १) ८×५×८×८ / १००×६	८×६ / ६३

ये सब राशियाँ समयप्रबद्ध प्रमाण है अत:

स ∂ ८।२   **स ∂ (२— , १) ८।५।८।८ / १००×६**   **स ∂ ८।६ / ६३**

प्रथम ऋण में $\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}|५|\overset{१\frown}{८}|८}{१००\times ६}$ सौ का चार से भेद करनेपर १००= २५ × ४

$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५\times \overset{१\frown}{८}\times ८}{२५\times ४\times ६}$ २५ = तीनगुणहानि + १ = ८× ३+१ = $\overset{१—}{८}|३$

$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५\times \overset{१\frown}{८}\times ८}{\overset{१—}{८}\times ३\times ४\times ६}$ ४× ६ = २४ अर्थात तीन गुणहानि का प्रमाण होता है

$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५\times \overset{१\frown}{८}\times ८}{\overset{१—}{८}\times ३\times ८\times ३}$ गुणहानि ८ का अपवर्तन करनेपर

$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५\times \overset{१\frown}{८}}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$ आठ के गुणकार के ऊपर एक कम है उसको अलग स्थापन करके शेष को अलग स्थापना

ऋणराशि	ऋण का ऋण
$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५\times ८}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$	$\text{स}\ \partial \frac{\overset{२—}{८}\times ५}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$

दोनो राशियों में पाँच गुणहानि ८× ५ के ऊपर दो अधिक का प्रमाण है उस दो के प्रमाण को व शेष के प्रमाण को अलग अलग स्थापन करना।

ऋणराशि	ऋण का ऋण
$\text{स}\ \partial \frac{८\times ५\times ८}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$	$\text{स}\ \partial \frac{८\times ५}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$

→ पाँच गुणहानि का प्रमाण

ऋण का धन	ऋण के ऋण का धन
$\text{स}\ \partial \frac{२\times ८}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$	$\text{स}\ \partial \frac{२}{\overset{१—}{८}\times ३\times ३}$

→ दो रूप का प्रमाण

यहाँ अपवर्तन करने के लिए प्रथम ऋण के धन को ऊपर नीचे तीन से गुणा करना

प्रथमऋण का धन $\dfrac{स\,\partial\ २\times८}{\overset{१—}{८}\times३\times३} \longrightarrow \dfrac{स\,\partial\ ३\times२\times८}{\overset{१—}{८}\times३\times३\times३} = \dfrac{स\,\partial\ ६।८}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$

इन छह रूपों में से पाँचरूप लेकर ऊपर की ऋणराशि में मिलाना

$$\frac{स\,\partial\ ८।५।८}{\overset{१—}{८}।३।३} + \frac{स\,\partial\ ५।८}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$
तीन का समच्छेद करना

$$स\,\partial\,\frac{८।५।८।३}{\overset{१—}{८}।३।३।३} + स\,\partial\,\frac{५।८}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$
अन्य सब संख्याओं को समान देखकर शेष ८।३ गुणकार के ऊपर धनराशि का १ गुणकार मिलाना

$$स\,\partial\,\frac{८।५।\overset{१—}{८}।३}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$
$\overset{१—}{८}।३$ का अपवर्तन करनेपर

प्रथम ऋण का $\boxed{स\,\partial\,\dfrac{८।५}{९}}$ इतना शेष रहता है।

छह में से पाँच रूप लेकर शेष रहे एक रूप को ऋण के ऋणमें से घटाते है। अर्थात् उतना ऋण का ऋण कम होगा।

ऋण का ऋण - धन का शेष एकरूप

$$स\,\partial\,\frac{८।५}{\overset{१—}{८}।३।३} - स\,\partial\,\frac{८।१}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$
समच्छेद करने के लिए ऊपर नीचे ३ से गुणा करना

$$स\,\partial\,\frac{८।५।३}{\overset{१—}{८}।३।३।३} - स\,\partial\,\frac{८।१}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$

$$स\,\partial\,\frac{८\times१५}{\overset{१—}{८}।३।३।३} - स\,\partial\,\frac{८}{\overset{१—}{८}।३।३।३}$$
समान संख्याओं को निकालकर शेष रहे १५ गुणकार में ऋण राशि का एक गुणकार कम करना

$$स\,\partial\,\frac{८।१५-१}{\overset{१—}{८}।३।३।३} = स\,\partial\,\frac{८।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।३} = \left(\frac{८।\overset{१—}{५}।३}{\overset{१—}{८}।३।९}\right) \rightarrow \text{संदृष्टि}$$

इसको ऊपर नीचे तीन से गुणित करना और उसमें ऋणके ऋण के धन को जोड़ना।

$$स\,\partial\,\frac{८।३।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।३।३} + स\,\partial\,\frac{।२}{\overset{१—}{८}।३।३}$$

समच्छेद करने के लिए ऋण के धन को ऊपर नीचे ९ से गुणा करना

$$स\,\partial\,\frac{८।३।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।३।३} + स\,\partial\,\frac{।२।९}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$$

$$स\,\partial\,\frac{८।३।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।९} + स\,\partial\,\frac{।१८}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$$

इन अठारह रूपों में से १४ रूप लेकर जोड़ना और ४ रूप का प्रमाण $स\,\partial\,\frac{।४}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$ अलग रखना

$$स\,\partial\,\frac{८।३।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।९} + स\,\partial\,\frac{।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$$

सब गुणकार भागहार समान देखकर शेष ८ ।३ के ऊपर धनराशि का एक गुणकार जोड़ना

$$स\,\partial\,\frac{\overset{१—}{८}।३।१४}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$$

अपवर्तन करनेपर शेष

$$स\,\partial\,\frac{१४}{२७} = \boxed{स\,\partial\,\frac{१}{२}}$$

एक कम को गिनती में न लेते हुए अपवर्तन करनेपर समयप्रबद्ध आधा रहा।

अलग रखे चार का प्रमाण $स\,\partial\,\frac{४}{\overset{१—}{८}।३।३।९}$ समयप्रबद्ध का असंख्यातवाँ भागमात्र है उसको $स\,\partial\,\frac{१}{२}$ प्रमाण में साधिक करना $स\,\partial\,\frac{\overset{|}{१}}{२}$ यह ऋण की ऋण राशि है। उपर्युक्त ऋण को द्वितीय ऋण में कम करना।

द्वितीय ऋण स ∂ $\frac{८।६}{६३}$ अर्थात् $\frac{\text{गुणहानि} \times \text{नानागुणहानि}}{\text{अन्योन्याभ्यस्त राशि - १}}$ इतना प्रमाण है

अर्थसंदृष्टि से नाना गुणहानि छे-व छे गुणहानि आयाम → $\frac{\text{स्थिति}}{\text{नानागुणहानि}}$

$\frac{\text{प १}}{\text{छे-व छे}}$ (संख्यातपल्य) अन्योन्याभ्यस्तराशि $\frac{\text{प}}{\text{व}}$

इसलिए द्वितीय ऋण = स∂ $\frac{\text{प१} \times \text{छे - व छे}}{\text{छे-व छे । } \frac{\text{प}}{\text{व}} \text{ -१}}$ अपवर्तन करनेपर पल्य की छे-वछे का अपवर्तन हो गया शेष संख्यात वर्गशलाका आती है स ∂ $\frac{\text{प१} \times \text{ व}}{\text{प}}$ = स ∂ व १

इस द्वितीय ऋण में उपर्युक्त ऋण का ऋण घटानेपर कुछ कम होगा स ∂ व १- प्रथम ऋण ऐसा स ∂ $\frac{८।५}{९}$ शेष रहा था उसे संदृष्टि के लिए ऊपर नीचे दो से गुणना

स ∂ $\frac{८।५।२}{९।२}$ = स ∂ $\frac{८।१०}{१८}$ इन दसरूपों में से एक रूप अलग रखकर स ∂ $\frac{८।१}{१८}$

शेष स ∂ $\frac{८।९}{१८}$ = स ∂ $\frac{८।१}{२}$ इसको स ∂ ८।२ दो गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्ध

में से घटानेपर स ∂ ८।२ - स ∂ $\frac{८}{२}$ समच्छेद करनेपर स ∂ $\frac{८।२।२}{२}$ - स ∂ $\frac{८}{२}$

स ∂ $\frac{८।४-१}{२}$ = स ∂ $\frac{८।३}{२}$ डेढ़गुणहानि प्रमाण समयप्रबद्ध रहा

इसमें पुन: पृथक् रखा हुआ गुणहानि का स ∂ ८/१८ भाग और द्वितीय ऋण कुछ कम संख्यात वर्गशलाकाप्रमाण घटाने के लिए डेढ़गुणहानि के आगे कुछ कम की संदृष्टि करनेपर

कुछ कम डेढ़गुणहानिगुणित समयप्रबद्ध प्रमाण | स ∂ १२— | सत्त्वद्रव्य होता है।

| स ∂ १२— | **त्रिकोणरचना संकलित सर्वधन**

स्थिति के भेद -

अंतो कोडाकोडिट्ठिदित्ति सव्वे णिरंतरट्ठाणा ।
उक्कस्सट्ठाणादो सण्णिस्स य होंति णियमेण ।।९४५।।

अन्वयार्थ - (सण्णिस्स य) संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के आयु कर्म के बिना शेष सात कर्मों की **(उक्कस्सट्ठाणादो)** उत्कृष्ट स्थिति से लेकर **(अंतो कोडाकोडिट्ठिदित्ति)** अन्त: कोडा कोडी सागर प्रमाण जघन्य स्थिति पर्यन्त एक-एक समय कम के क्रम लिए हुए **(सव्वे)** सभी **(णिरंतर)** निरन्तर **(ट्ठाणा)** स्थिति के भेद हैं। वे संख्यात पल्य प्रमाण हैं।

संखेज्जसहस्साणिवि सेढीरूढम्हि सांतरा होंति ।
सगसग अवरोत्ति हवे उक्कस्सादो दु सेसाणं ।।९४६।।

अन्वयार्थ - (सेढीरूढम्हि) सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम, उपशम अथवा क्षपक श्रेणी के सम्मुख हुए ऐसे, मिथ्यात्व, असंयत, देशसंयत, अप्रमत्त और अपूर्वकरणादि तीन गुणस्थानवर्ती उपशम या क्षपक श्रेणी पर चढ़ने वाले जीवों के **(सांतरा)** (अर्थात् एक-एक कम होने का नियम नहीं है, क्यों कि स्थिति कांडक और बंधापसरण के द्वारा एक साथ स्थिति का घात व अल्प स्थिति का बंध होने से) सान्तर स्थिति के भेद, **(संखेज्जसहस्साणिवि)** संख्यात हजार **(होंति)** होते हैं। **(सेसाणं दु)** और शेष जीवों के **(उक्कस्सादो)** उत्कृष्ट से लेकर **(सगसग अवरोत्ति हवे)** अपनी अपनी जघन्य स्थिति पर्यन्त एक-एक समय कम क्रम से निरन्तर स्थिति के भेद हैं।

विशेषार्थ - संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के आयुकर्म के बिना सात कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति से लेकर अन्त: कोटाकोटी सागरप्रमाण जघन्य स्थिति पर्यन्त क्रम से एक-एक समयहीन सब निरन्तर स्थिति के भेद संख्यात पल्यमात्र हैं।

उत्कृष्टस्थिति ⟶ ७० को.२ सागर अर्थात् ७०० कोडाकोडी कोडाकोडी पल्य=संदृष्टि प ११

जघन्यस्थिति ⟶ अन्त:कोडाकोडीसागर अर्थात् संख्यात पल्य = संदृष्टि प१

स्थितिभेद = $\left(\frac{\text{अंत - आदि}}{\text{वृद्धि}}\right) + १ = \left(\frac{\text{प११ - प१}}{१}\right) + १$ समान संख्या को निकालकर संख्यात

= प१ (१ -१)+१ गुणकार में ऋणराशि का एक गुणकार कम करना

स्थितिभेद = $\boxed{\overset{१}{\text{प१}}\ \overset{१}{१}}$

प्रमाण	फल	इच्छा
सा. २० को. २	सा. अन्त को. २ की जघन्यस्थिति इतनी तो	सा. ३० को. २ की कितनी ?

$$\frac{\text{सा. अन्त को. २} \times \text{सा. ३० को. २}}{\text{सा. २० को. २}} = \text{सा.अन्तः को. २} \times \frac{३}{२}$$

तीस कोडाकोडी सागरवाले
ज्ञानावरणादि कर्मों की जघन्यस्थिति

सान्तर स्थिति के भेद

सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम, उपशमश्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी के अभिमुख हुए क्रम से मिथ्यादृष्टि, असंयत, देशसंयत, अप्रमत्त, अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानवर्ती जीवों के सान्तर स्थिति के भेद संख्यात हजार हैं।

तीन करण परिणामों के काल में संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरण होते हैं। वहाँपर प्रत्येक एक-एक स्थितिबन्धकाल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण बीतनेपर पल्य का संख्यातवाँ भाग पूर्वस्थिति में कम करके बाँधता है। इसप्रकार पल्य का संख्यातवाँ भाग कम करके संख्यातहजार बार करता है। सूक्ष्मसांपराय में वेदनीय की १२ मुहूर्त, नामगोत्र की आठ मुहूर्त, शेष कर्मों की एक अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त स्थिति को बाँधता है। इसप्रकार सान्तर स्थिति के भेद संख्यातहजार १०००१ होते हैं।

आउट्ठिदिबंधज्झवसाणठाणा असंखलोगमिदा ।
णामागोदे सरिसं आवरणदु तदियविग्घे य ।।९४७।।

सव्वुवरि मोहणीये असंखगुणिदक्कमा हु गुणगारो ।
पल्लासंखेज्जदिमो पयडिसमाहारमासेज्ज ।।९४८।।

अन्वयार्थ - (पयडिसमाहारमासेज्ज) प्रकृतिभेदों का आश्रय करके **(आउट्ठिदि बंधज्झवसाण ठाणा)** आयुकर्म के स्थितिबंधाध्यवसायस्थान **(असंखलोगमिदा)** असंख्यात लोकमात्र हैं उसके पश्चात् **(णामागोदे सरिसं)** नाम और गोत्र के स्थितिबंध अध्यवसायस्थान समान, उसके पश्चात् **(आवरणदु तदियविग्घे य)** दो आवरणकर्म ज्ञानावरण, दर्शनावरण, तीसरा वेदनीय कर्म और अंतराय इनके स्थितिबंधाध्यवसायस्थान परस्पर समान, **(सव्वुवरि)** सब से ऊपर **(मोहणीये)** मोहनीय के स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान हैं **(असंखगुणिदक्कमा)** ये क्रम से असंख्यातगुणित हैं **(हु गुणगारो)** गुणकार का प्रमाण **(पल्लासंखेज्जदिमो)** सर्वत्र पल्य का असंख्यातवा भाग है।

अवरट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा असंखलोगमिदा ।
अहियकमा उक्कस्सट्ठिदिपरिणामोत्ति णियमेण ।।९४९।।

अन्वयार्थ - (अवरट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा) जघन्य स्थिति के बंधाध्यवसाय स्थान, **(असंखलोगमिदा)** असंख्यात लोक प्रमाण है। **(उक्कस्सट्ठिदिपरिणामोत्ति)** जो उत्कृष्ट स्थिति पर्यन्त, **(अहियकमा)** क्रम से अधिक अधिक होते गये हैं।

अहियागमणणिमित्तं गुणहाणी होदि भागहारो दु ।
दुगुणं दुगुणं वड्ढी गुणहाणिं पडि कमेण हवे ।।९५०।।

अन्वयार्थ - (अहियागमणणिमित्तं) विवक्षित गुणहानि में अधिक रूप चय का प्रमाण लाने के लिए, अन्तिम निषेक में **(गुणहाणी होदि भागहारो दु)** दो गुणहानि का भाग दिया जाता है। और दु शब्द से (अथवा प्रथम निषेक में) एक अधिक गुणहानि का भाग देकर चय का प्रमाण आता है। **(गुणहाणिं पडि)** तथा प्रत्येक गुणहानि में **(दुगुणं दुगुणं)** दूनी-दूनी **(वड्ढी)** वृद्धि **(कमेण हवे)** क्रम से होती है। अर्थात् चय का प्रमाण दूना-दूना जानना।

ठिदिगुणहाणिपमाणं अज्झवसाणम्मि होदि गुणहाणी ।
णाणागुणहाणिसला असंखभागो ठिदिस्स हवे ।।९५१।।

अन्वयार्थ - (ठिदिगुणहाणिपमाणं) पहले बंध का कथन करते समय कर्म स्थिति की रचना में गुणहानि का जैसा प्रमाण कहा है, **(अज्झवसाणम्मि)** वैसा ही यहाँ अध्यवसाय स्थानों में भी **(गुणहाणी)** गुणहानि का प्रमाण **(होदि)** होता है। तथा नाना गुणहानियों का जो प्रमाण **(ठिदिस्स)** स्थितिबंध में कहा है उसका **(असंखभागो)** असंख्यातवाँ भाग प्रमाण **(णाणागुणहाणिसला)** अध्यवसायस्थानों में नाना गुणहानि शलाका का प्रमाण **(हवे)** होता है।

विशेषार्थ - स्थिति के भेदों में कारणभूत कषायाध्यवसायस्थान अर्थात् स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान

आयुकर्म के स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान सबसे थोडे असंख्यात लोकप्रमाण हैं। इससे नाम, गोत्र के पल्य के असंख्यातवें भाग गुणे होते हुए परस्पर समान हैं। उनसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अन्तराय के पल्य के असंख्यातवें भाग गुणे होते हुए चारों के परस्पर समान है। उनसे मोहनीय के पल्य के असंख्यातवें भाग गुणे हैं।

कर्म का नाम	**आयु**	**नाम, गोत्र**	**ज्ञा. द. वे. अं.**	**मोह**
प्रमाण	$\equiv \partial$ असंख्यात लोक	$\equiv \partial \mid \frac{\text{प}}{\partial}$ असंख्यात लोक × पल्य ÷ असंख्यात	$\equiv \partial \mid \frac{\text{प}\ \text{प}}{\partial\ \partial}$	$\equiv \partial \mid \frac{\text{प}\ \text{प}\ \text{प}}{\partial\ \partial\ \partial}$

सब मूलप्रकृतियों के अपने अपने उदय से उत्पन्न हुए परिणाम अपने अपने स्थितिबन्ध के कारण होते हैं। अत: उन्हें स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान कहते हैं उनका यहाँ ग्रहण है।

शंका - पहले कहे आयु आदि कर्मों के स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानों से पीछे कहे कर्मों के स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान असंख्यात गुणे कैसे हैं? क्योंकि स्वभाव से ही मिथ्यात्व, असंयम, कषायरूप प्रत्ययों के द्वारा सब कर्म समान हैं। ऊपर के कर्मों के स्थितिबन्धस्थान अधिक होने से स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान अधिक हो सकते हैं असंख्यातगुणे नहीं ?

समाधान - नीचे के उदयस्थानों से ऊपर के कर्मों के उदयस्थान बहुत होने से असंख्यात गुणे होने में विरोध नही है। अर्थात् अपने अपने उदय से होनेवाले आत्मा के परिणामों का नाम स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान है। आयु आदि कर्मों के उदयस्थानों से नाम आदि कर्मों के उदयस्थान बहुत हैं अतः असंख्यातगुणे कहे हैं।

जघन्य आदि स्थिति के कारणभूत स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानों का प्रमाण⟶

मोहनीय जघन्यस्थिति ⟶ अन्त:कोटाकोटीसागर⟶ संख्यात पल्य प१

उत्कृष्टस्थिति⟶ ७० कोडाकोडीसागर⟶ संख्यात पल्य प१।१

स्थितिभेद पूर्वोक्त

१ —— १ ⌒
प १।१

जघन्य स्थितिबन्ध के कारणभूत परिणाम⟶ असंख्यात लोकप्रमाण $\equiv\partial$

द्वितीयादि स्थिति भेद से लेकर उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त स्थितिबन्ध के कारणभूत परिणाम ⟶ एक एक चय अधिक हैं।

अधिक संकलन की अपेक्षा चय निकालने की पद्धति

$\frac{\text{प्रथम निषेक}}{\text{गुणहानि} + १}$ = चय   अंकसंदृष्टि से $\frac{२८८}{९}$ = **३२** अथवा

$\frac{\text{अंतिम निषेक}}{\text{दो गुणहानि}}$ = चय   अंकसंदृष्टि से $\frac{५१२}{१६}$ = **३२**

	प्रथम गुण.	द्वि. गुण.	तृ. गुण.	चतुर्थ गुण.	पंचम गुण.	अंत गुण.
$\frac{\text{अंतनिषेक}}{\text{२ गुणहानि}}$	$\frac{१६}{८\times२}$	$\frac{३२}{८\times२}$	$\frac{६४}{८\times२}$	$\frac{१२८}{८\times२}$	$\frac{२५६}{८\times२}$	$\frac{५१२}{८\times२}$
$\frac{\text{प्रथमनिषेक}}{\text{गुणहानि}+१}$	$\frac{९}{८+१}$	$\frac{१८}{८+१}$	$\frac{३६}{८+१}$	$\frac{७२}{८+१}$	$\frac{१४४}{८+१}$	$\frac{२८८}{८+१}$
चय	१	२	४	८	१६	३२

अर्थसंदृष्टि ⟶ $\frac{\text{स्थितिसंबंधी नानागुणहानि}}{\text{असंख्यात}}$ =स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानकी नानागुणहानि

$$\frac{\text{पल्य के अर्धच्छेद - वर्गशलाका के अर्धच्छेद}}{\text{असंख्यात}} =$$

$$\frac{\text{छे - व छे}}{\partial} =$$ स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान की नानागुणहानि

जैसे कर्मस्थिति में गुणहानि का प्रमाण कहा है वैसे ही कषायाध्यवसायस्थान में भी जानना अर्थात्

$$\frac{\text{स्थितिसंबंधी नानागुणहानि}}{\text{असंख्यात}} = \text{गुणहानि आयाम}$$ स्थितिभेद $^{१}\overline{\text{प ११}^{१\frown}}$ यहाँपर स्थितिभेदों को स्थिति जानना

$$\frac{^{१}\overline{\text{प ११}^{१\frown}}}{\frac{\text{छे - व छे}}{\partial}}$$ कषायाध्यवसायस्थानों का गुणहानि आयाम का प्रमाण

जितना गुणहानि आयाम का प्रमाण है उतने जघन्यस्थिति से लेकर स्थिति के भेद प्रथम गुणहानि का आयाम जानना। जघन्यस्थिति के कारणभूत जो अध्यवसायस्थानों का प्रमाण है वही प्रथम निषेक का प्रमाण जानना। उसमें एक चय मिलानेपर एक समय अधिक जघन्यस्थिति के कारणभूत अध्यवसायस्थानों के प्रमाणरूप दूसरा निषेक होता है। इस प्रकार एक-एक चय अधिक प्रथम गुणहानि के अन्तिम निषेकपर्यन्त जानना। उसके ऊपर उतने ही स्थिति के भेदों की दूसरी गुणहानि होती है। उसमें भी निषेक, चय आदि का प्रमाण प्रथम गुणहानि से दुगुना जानना।

जघन्य चय का कथन -

लोगाणमसंखपमा जहण्णउड्ढिम्मि तम्हि छट्ठाणा ।
ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं होंति सत्तण्हं ।।९५२।।

अन्वयार्थ - (सत्तण्हं) आयुकर्म के बिना सात कर्मों के **(ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं)** स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों की **(जहण्णउड्ढिम्मि)** जघन्य वृद्धि में **(लोगाणमसंखपमा)** असंख्यात लोक प्रमाण **(तम्हि छट्ठाणा)** छह स्थान पतित वृद्धियाँ **(होंति)** होती हैं।

विशेष :- स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानों के जघन्य स्थान के ऊपर असंख्यात लोक

प्रमाण षट्स्थान पतित वृद्धियाँ हो जाने पर दूसरा स्थान होता है। यह वृद्धि का कथन अविभागी प्रतिच्छेदों की अपेक्षा है, क्योंकि संख्या की अपेक्षा अनन्तवें भाग और अनन्तगुणी वृद्धि संभव नहीं है।

सबसे जघन्य चय भी इतना बड़ा है कि उसमें असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानपतित वृद्धियाँ होती हैं।

आयुकर्म के स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानों में विशेषता-

आउस्स जहण्णट्ठिदिबंधणजोग्गा असंखलोगमिदा ।
आवलियसंखभागेणुवरुवरिं होंति गुणिदकमा ।।९५३।।

अन्वयार्थ - (आउस्स) आयुकर्म के **(जहण्णट्ठिदिबंधणजोग्गा)** सर्व जघन्य स्थिति बंध के योग्य अध्यवसाय स्थान **(असंखलोगमिदा)** असंख्यात लोक प्रमाण हैं। **(आवलियसंख भागेणुवरुवरिं)** उससे आगे-आगे के स्थान में उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त, आवली के असंख्यातवें भाग से - ऊपर-ऊपर **(गुणिदकमा होंति)** गुणित क्रम होते हैं।

पल्लासंखेज्जदिमा अणुकड्डी तत्तियाणि खंडाणि ।
अधियकमाणि तिरिच्छे चरिमं खंडं च अहियं तु ।।९५४।।

अन्वयार्थ - (अणुकड्डी) स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों की अनुकृष्टि रचना में **(पल्लासंखेज्जदिमा)** पल्य के असंख्यातवें भाग अनुकृष्टि पदों (गच्छ) का प्रमाण है, **(तत्तियाणि खंडाणि)** और उतने ही अनुकृष्टि खण्ड होते हैं। **(तिरिच्छे अधियकमाणि)** वे खण्ड तिर्यक् (बराबर) रचना किये गये क्रम से अनुकृष्टि के चय से अधिक अधिक हैं, **(चरिमं खंडं च अहियं तु)** किन्तु जघन्य खण्ड से अंतिम खण्ड कुछ ही विशेष अधिक होता है। अर्थात् दुगुना-तिगुना नहीं होता ।

विशेष चय का प्रमाण -

लोगाणमसंखमिदा अहियपमाणा हवंति पत्तेयं ।
समुदायेणवि तच्चिय ण हि अणुकड्ढिम्मि गुणहाणि ।।९५५।

अन्वयार्थ - (पत्तेयं) प्रत्येक गुणहानि में **(अहियपमाणा)** अधिक का प्रमाण **(लोगाणमसंखमिदा हवंति)** सामान्य से असंख्यात लोक मात्र ही है, जबकि पूर्व पूर्व गुणहानि से चय का प्रमाण दुना-दुना होता है। **(समुदायेण वि तच्चिय)** और सर्व चय समूहों को मिलाने से भी असंख्यात लोक प्रमाण ही होता है। **(ण हि अणुकड्ढिम्मि गुणहाणि)** अनुकृष्टि में गुणहानि की रचना नहीं है।

विशेषार्थ - सर्वजघन्य स्थितिबन्ध के कारणभूत स्थितिबंधाध्यवसायस्थान $\rightarrow$ असंख्यातलोकप्रमाण $\equiv \partial$ द्वितीय स्थितिबंध के कारणभूत स्थान $\rightarrow$

जघन्य स्थिति के कारणभूत स्थान × आवलि का असंख्यातवाँ भाग $\equiv \partial \times \frac{२}{\partial}$

इसी प्रकार उत्कृष्टस्थितिपर्यन्त क्रमसे आवली के असंख्यातवें भाग से गुणित अध्यवसायस्थान होते हैं।

स्थितिभेद	स्थितिबंधाध्यवसायस्थान
१६ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
१५ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
१४ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
१३ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
१२ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
११ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४×४
१० वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४×४
९ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४×४
८ वा	२२×४×४×४×४×४×४×४
७ वा	२२×४×४×४×४×४×४
६ वा	२२×४×४×४×४×४
५ वा	२२×४×४×४×४
४ था	२२×४×४×४
३ रा	२२×४×४
२ रा	२२×४
१ ला	२२

अंकसंदृष्टि से आयुकर्म के स्थितिभेद ⟶ १६ जघन्य स्थिति के अध्यवसायस्थान ⟶ २२
आवली का असंख्यातवाँ भाग ⟶ ४ माना

नीचे की स्थिति के बन्ध के कारण अध्यवसायस्थानों से ऊपर की स्थितिबन्ध के कारणभूत अध्यवसाय स्थानों में नाना जीवों की अपेक्षा समानता भी पायी जाने से यहाँ अनुकृष्टि का विधान भी संभव है। ऊपर और नीचे में समानता का नाम ही अनुकृष्टि है।

जिन परिणामों से जघन्य स्थिति का बन्ध होता है उन्ही कुछ परिणामों के द्वारा किसी को एक समय अधिक जघन्य स्थिति, दो समय अधिक जघन्यस्थिति इत्यादिक स्थिति का बन्ध होता है। अनुकृष्टि गच्छ का प्रमाण ४ माना

अनुकृष्टि चय = १ चयधन $= \frac{\text{गच्छ-१}}{२} \times \text{चय} \times \text{गच्छ} = \frac{४-१}{२} \times १ \times ४ = \boxed{६}$

आदिधन = प्रथमस्थितिद्रव्य - चयधन $= २२ - ६ = \boxed{१६}$

$\frac{\text{आदिधन}}{\text{अनुकृष्टिगच्छ}}$ = जघन्यखण्ड $\frac{१६}{४} = \boxed{४}$ = जघन्यस्थिति के अनुकृष्टि का जघन्य खण्ड

द्वितीय खण्ड = जघन्यखण्ड + एक चय = ४ + १ = ५ उत्कृष्ट खण्डपर्यन्त एक-एक चय बढ़ाना प्रथम स्थिति के चार खण्ड = ४,५,६,७

दूसरे स्थान में द्रव्य २२×४ इसके चार भाग करके एक भाग २२×१ अलग रखना शेष २२×४-१ ऐसा अंतखण्ड में देना। एक भाग बाईस है उसमें से चार पूर्वोक्त अंतखंड में देना। ५,६,७ प्रथमादि खंडो में देना दूसरे स्थान के ४ खण्ड ५,६,७, २२×४-१+४ । तीसरे स्थान में द्रव्य २२×४×४ इसका एकभाग ग्रहण करने के लिए अंत के चार गुणकार में से एक घटाना शेष २२।४।४-१ इसे अंतखण्ड में देना। एक भाग का प्रमाण २२×४ इसमें से एक भाग २२×१ अलग रखकर शेष २२×४-१ उपान्त खण्ड में देना। एक भाग बाइस रहा इसमें से ४ उपान्त खण्ड में, ५ अंतखण्ड में, ६ प्रथमखण्ड में, ७ द्वितीय खंड में देना। इसी क्रम से जितना अपना सर्वद्रव्य हो उसमें चार का भाग देकर एकभाग घटाने के लिये अंत में जो चार का गुणकार है उसमें से एक घटाकर अवशेष अंतखंड में देना। वहाँ सर्वद्रव्य में जितनी बार बाईस को चार का गुणकार था उतनी बार वहाँ भी चार का

गुणकार जानना। वहाँ अंत के चार के गुणकार में से एक घटाने के लिये आगे-१ ऐसी संदृष्टि जानना। पुनश्च पश्चात एक-एक भाग का उससे एक-एक बार कम चारगुणा बाईस रहता जायेगा, उस-उस का एक-एक भाग ग्रहण करने के लिये अंत के चार के गुणकार में से एक कम करने की आगे ऐसी -१ संदृष्टि करके उपांतादि खण्डों में देना। ऐसा विधान प्रथम खण्ड तक करनेपर भी यदि अवशेष रहे तो पुनश्च अंतखण्डादि में उसीप्रकार क्रमसे अधिक करना।

इस प्रकार विधान करनेपर जहाँ एक बार चार का गुणकार रह जाये वहाँ उसके गुणकार में से एक घटाया उसका प्रमाण बाईस, उसमें से चार तो इसी के ऊपर अधिक करना और इसके आगे के खण्ड हो उनमें पाँच, छह,सात देना आगे खण्ड न हो तो प्रथमादि पहले खण्डों में देना।

आयु कर्म के अन्तखण्ड में सर्वद्रव्य पन्द्रह बार चारगुणा बाईस ऐसा २२।४।१५ (१५ बार) उसके अंत के गुणकार में से एक घटानेपर अवशेष ऐसा २२।४।१५-१ अंतखण्ड में देना। पुनश्च एक-एक भाग में से एक-एक भाग घटाकर तीसरे , दूसरे, पहले खण्ड में देना २२।४।१४-१; २२।४।१३-१; २२।४।१२-१। पुनश्च इस पहले खण्ड में दिये हुये द्रव्य के एक-एक भाग में से एक-एक भाग घटाकर पुनश्च अंतादि खण्डों में अधिक करना - २२।४।११-१; २२।४।१०-१; २२।४।९-१; २२।४।८-१। पुनश्च इस प्रथम खण्ड में दिये हुये द्रव्य के एक-एक भाग में से एक-एक भाग घटाकर पुनश्च अंतादि खण्डों में अधिक करना - २२।४।७-१; २२।४।६-१; २२।४।५-१; २२।४।४-१। पुनश्च इस प्रथम खण्ड में दिये हुये द्रव्य के एक-एक भाग में से एक-एक भाग घटाकर फिर से अंतादि खण्डों में अधिक करना- २२।४।३-१; २२।४।२-१; २२।४-१। यहाँ द्वितीय खण्ड में दिये हुये द्रव्य का एक भाग बाइस रहा इनमें से चार तो इसके ऊपर देना; पाँच,छह इसके आगे के तीसरे, चौथे खण्ड में अधिक करना। अवशेष इसके पहले के प्रथम खंड में देना।

आयु कर्म के स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों की अनुकृष्टि खण्ड रचना

नाम	सर्वद्रव्यप्रमाण	प्रथम खंड	द्वितीय खंड	तृतीय खंड	चतुर्थ खंड
अंतस्थान	२२।४।१५	७ २२।४।४-१ २२।४।८-१ २२।४।१२-१	४ २२।४।४-१ २२।४।५-१ २२।४।९-१ २२।४।१३-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१ २२।४।१०-१ २२।४।१४-१	६ २२।४।३-१ २२।४।७-१ २२।४।११-१ २२।४।१५-१
उपांतस्थान	२२।४।१४	६ २२।४।३-१ २२।४।७-१ २२।४।११-१	७ २२।४।४-१ २२।४।८-१ २२।४।१२-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१ २२।४।९-१ २२।४।१३-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१ २२।४।१०-१ २२।४।१४-१
मध्य स्थान	००	००	०००	०००	०००
आठवाँस्थान	२२।४।७	७ २।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१	६ २२।४।३-१ २२।४।७-१
सातवाँ स्थान	२२।४।६	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१
छठा स्थान	२२।४।५	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१
पाँचवाँ स्थान	२२।४।४	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१
चौथा स्थान	२२।४।३	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१
तीसरा स्थान	२२।४।२	६	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१
दूसरा स्थान	२२।४	५	६	७	४ २२।४-१
पहला स्थान	२२	४	५	६	७

उपर्युक्त कोष्टक की संख्याओं को गुणाकार करके लिखनेपर निम्नलिखित प्रकार से संख्या आती है।

नाम	सर्वद्रव्यप्रमाण	प्रथम खंड	द्वितीय खंड	तृतीय खंड	चतुर्थ खंड
०००००००००	०००००००००	०००००००००	०००००००००	०००००००००	०००००००००
आठवाँस्थान	३६०४४८	४२३१	१६९६६	६७८५३	२७१३९८
सातवाँ स्थान	९०११२	१०६२	४२३१	१६९६६	६७८५३
छठा स्थान	२२५२८	२६९	१०६२	४२३१	१६९६६
पाँचवाँ स्थान	५६३२	७०	२६९	१०६२	४२३१
चौथा स्थान	१४०८	७	७०	२६९	१०६२
तीसरा स्थान	३५२	६	७	७०	२६९
दूसरा स्थान	८८	५	६	७	७०
पहला स्थान	२२	४	५	६	७

पहले स्थान का खुलासा पूर्व में किया है। दूसरे स्थान में ८८ हैं उसमें से प्रथम द्वितीय, तृतीय खंड में पहले स्थान के दूसरे, तीसरे, चौथे खंड में जो प्रमाण है उतना ही देना है। इन तीन खंडों में देनेपर जो शेष ७० रहता है वह चौथे खंड में देना। इसीप्रकार तीसरे स्थान में कुल परिणाम २२×४×४=३५२ हैं उसमें से दूसरे स्थान के दूसरे, तीसरे, चौथे खंड के समान ही क्रम से प्रथम, द्वितीय, तृतीय खंड में देना ६+७+७०=८३ जो शेष रहा ३५२-८३ = २६९ उसे चौथे खंड में देना। इसीप्रकार आगे सर्वत्र जानना। आयु कर्म के जघन्यस्थिति को कारणभूत द्वितीयादि खंड के ५,६,७ परिणाम जघन्यस्थिति +१ समय प्रमाण द्वितीयस्थिति को भी कारणभूत है और चौथे खण्ड के परिणाम ७० नये हैं जो जघन्यस्थिति को कारण नहीं हैं। प्रत्येक स्थान के अंतिम खंड के परिणाम नवीन है जो पूर्वस्थिति को कारण नहीं हैं। यहाँ अंकसंदृष्टि से बताया है उसीप्रकार वास्तविक स्वरूप जान लेना। **मोह की स्थितिरचना→**

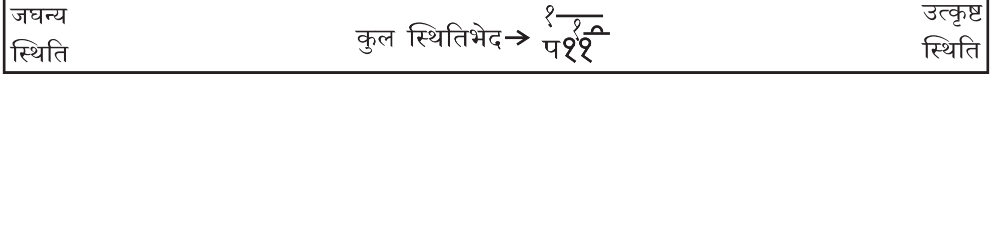

स्थिति की संदृष्टि △। प्रथम जघन्यस्थिति संख्यातपल्यमात्र, आगे एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह, सात आदि एक-एक समय अधिक होते हुये अंत में सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एक समय कम उत्कृष्टस्थितिमात्र और उत्कृष्टस्थिति दो बार संख्यात गुणित पल्यप्रमाण जानना। नानागुणहानि आदि का स्पष्टीकरण पहले किया है वह जानना।
मोहनीय के स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानों के द्रव्यादिक का प्रमाण →

द्रव्य	**स्थिति**	**दो गुणहानि**	**नानागुणहानि**	**अन्यो.राशि**
असंख्यातलोक × $\frac{\text{प}}{\text{असंख्यात}}$ ३ बार	संख्यात पल्य -१+१	$\frac{\frac{\text{संख्यात पल्य}\times २}{\text{पल्यछेद-वर्गछे.}}}{\text{असंख्यात}}$	$\frac{\text{पल्यछेद-वर्गशलाका के अर्धच्छेद}}{\text{असंख्यात}}$	$\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$
≡ ∂। $\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{प}}{\partial}\frac{\text{प}}{\partial}$	प ११ १ — १ ⌒	$\frac{\text{प ११ २ (१ — १⌒)}}{\text{छे⌒व छे} \; \partial}$	छे⌒व छे ∂	$\frac{\text{प}}{\partial}$

अन्योन्याभ्यस्त की लघुसंदृष्टि → अ गुणहानि → गु
यहाँ अधिक क्रमसे रचना है अत: कर्मस्थिति की अपेक्षा जो अन्तिमगुणहानि है वह यहाँपर प्रथमगुणहानि समझना। कर्मस्थिति की अपेक्षा जो प्रथमगुणहानि है वह यहाँपर अंतिमगुणहानि समझना। अत:

प्रथमगुणहानिद्रव्य = $\frac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{अन्योन्याभ्यस्त-१}}$ अंकसंदृष्टि $\frac{६३००}{६३}$ = १००

अर्थसंदृष्टि ≡ $\frac{\partial \text{ प प प}}{१\text{⌒अ} \; \partial\,\partial\,\partial}$

द्वितीयादि गुणहानियों में दूना-दूना होता है २००,४००,८००,१६००,३२००

चरमगुणहानिद्रव्य = प्रथमगुणहानिद्रव्य × $\frac{\text{अन्योन्याभ्यस्त}}{२}$ = १००× $\frac{६४}{२}$ =३२००

≡ $\frac{\partial \text{ प प प अ}}{१\text{⌒अ} \; \partial\,\partial\,\partial \; २}$ चरमगुणहानिद्रव्य

अंकसंदृष्टि अर्थसंदृष्टि

$$\text{मध्यधन} = \frac{\text{प्रथमगुणहानिद्रव्य}}{\text{गुणहानि आयाम}} = \frac{१००}{८} \qquad \frac{\equiv \partial \text{ प प प}}{{}^{१}\text{अ } \partial\partial\partial \text{ गु}}$$

$$\text{चय} = \frac{\text{मध्यधन}}{\text{दोगुणहानि} - \frac{(\text{गुणहानि} - १)}{२}}$$

$$\text{अंकसंदृष्टि} \rightarrow \frac{१००}{८\times१६-\frac{७}{२}} = \frac{१००}{८\times\frac{३२-७}{२}} = \frac{१००}{८\times\frac{२५}{२}} = \frac{१००\times२}{८\times२५} = १ \text{ चय}$$

$$\text{अर्थसंदृष्टि} \rightarrow \text{दो गुणहानि} - \frac{(\text{गुणहानि} - १)}{२}$$

$$\text{दो गुणहानि } ८\times२-\frac{(८-१)}{२} = \frac{(८\times२\times२)-(८-१)}{२} = \frac{८\times४-(८-१)}{२} = \frac{(८\times३)+१}{२}$$

$$\boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प}}{{}^{१}\text{अ } \partial\partial\partial \text{ गु } \frac{१}{\text{गु}}\frac{३}{२}}} \rightarrow \text{चय}$$

चार गुणहानि में से एक कम गुणहानि घटानेपर एक अधिक तीन गुणहानि शेष रहती है ३२ - ७ = २५= ८×३+१

अधिकसंकलन की अपेक्षा -

प्रथम निषेक= चय × गुणहानि +१

१ × (८ + १) = ९

अर्थसंदृष्टि

$$\frac{\equiv \partial \text{ प प प}}{{}^{१}\text{अ } \partial\partial\partial \text{ गु } \frac{१}{\text{गु}}\frac{३}{२}} \times \frac{१}{\text{गु}} \text{ प्रथम निषेक}$$

द्वितीयादि निषेक एक-एक चय अधिक होते हैं ९,१०,११,१२,१३,१४,१५.......

अंतनिषेक = चय × दो गुणहानि

अंकसंदृष्टि → १×८×२ = १६

अर्थसंदृष्टि

$$\boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प गु } २}{{}^{१}\text{अ } \partial\partial\partial \text{ गु } \frac{१}{\text{गु}}\frac{३}{२}}} \rightarrow \text{अंतनिषेक}$$

इसीतरह गुणहानि गुणहानि प्रति द्रव्य और चय दूना-दूना होता है

$$\frac{\text{चरमगुणहानिद्रव्य}}{\text{गुणहानि आयाम}} = \text{मध्यधन} = \frac{३२००}{८} = ४०० \quad \boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प अ}}{{}^{१}\text{अ } \partial\partial\partial \text{ २ गु}}} \text{ मध्यधन}$$

$$\frac{\text{मध्यधन}}{\text{गुणहानि } २-\left(\frac{\text{गुण.}-१}{२}\right)} = \frac{४००}{१६-\frac{७}{२}} = \frac{४००}{\frac{३२-७}{२}} = \frac{४००}{\frac{२५}{२}} = \frac{४००\times२}{२५} = \boxed{३२}$$

$$\boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प अ}}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ २\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}}$$ **चरमगुणहानि का चय**

चरमगुणहानि प्रथम निषेक = चय × गुणहानि +१ $\quad$ ३२ × ९ = २८८

$$\frac{\equiv \partial \text{ प प प अ } ^{१}\overline{\text{गु}}}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ २\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$$

द्वितीयादि निषेकों में एक एक चय अधिक होते हैं

३२०, ३५२, ३८४,४१६, ४४८, ४८०,५१२

अंत निषेक = चय × दो गुणहानि $\quad$ ३२ × १६ = ५१२

$$\boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प अ गु } २}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ २\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}}$$ **चरमगुणहानि अंत निषेक**

	प्रथम गुणहानि			**म. गु.**	**अंत गुणहानि**		
	ज. △ प१	०००००	△	००	△	०००००	उ.△ प११
	प्रथमनिषेक	मध्यनि.	अंत निषेक	००	प्रथमनिषेक	मध्यनि.	अंतनिषेक
अर्थ संदृष्टि	$\frac{\equiv\partial\text{।पपप}\,^{१}\overline{\text{गु}}\ \partial\partial\partial}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$	०००००	$\frac{\equiv\partial\text{।पपपगु}२\ \partial\partial\partial}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$	००	$\frac{\equiv\partial\text{।पपपअगु}\ \partial\partial\partial२}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$	०००००	$\frac{\equiv\partial\text{।पपपअगु}२\ \partial\partial\partial२}{^{१}\widehat{\text{अ}}\ \text{गु}\ ^{१}\overline{\text{गु}}\ \frac{३}{२}}$
अंक सं.	९	०००००	१६	००	२८८	०००००	५१२

उपर्युक्त कोष्टक में प्रारंभ में जघन्य स्थिति व अन्त में उत्कृष्ट स्थिति का प्रमाण लिखा है। उसके नीचे उन स्थितियों के कारणभूत स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों का प्रमाण

लिखा है प्रथम और अंतिम गुणहानि के प्रथम और अंतिम निषेक लिखे हैं, मध्यनिषेक ग्रहण करने के लिये बिंदियों की संदृष्टि लिखी है। उनमें जघन्यस्थिति को कारण प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक व उत्कृष्ट स्थिति को कारण अंतिमगुणहानि का अंतिमनिषेक जानना। इसलिए उनको जघन्य उत्कृष्ट स्थिति के नीचे लिखा है, बीच के निषेक मध्य स्थितिभेदों के कारण हैं इसलिए मध्य में लिखे हैं।

मोहनीय के स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानों की अनुकृष्टि रचना का विधान

अनुकृष्टि गच्छ → $\dfrac{\text{स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानों का गुणहानि आयाम(ऊर्ध्वगच्छ)}}{\text{संख्यात}}$

अर्थसंदृष्टि → $\dfrac{\overline{^{१}\text{प १ } \overset{\frown}{^{१}\text{१}}}}{\text{छे}\underset{\partial}{-}\text{व छे}}$ गुणहानि आयाम अंकों में $\dfrac{८}{२}$ = $\boxed{४}$

संख्यात का भाग देनेपर $\dfrac{\overline{^{१}\text{प १ } \overset{\frown}{^{१}\text{१}}}}{\text{छे}\underset{\partial}{-}\text{व छे१}}$ अपवर्तन करनेपर $\boxed{\dfrac{\text{प}}{\partial}}$ अनुकृष्टि गच्छ

अनुकृष्टि चय → $\dfrac{\text{ऊर्ध्वचय (प्रथम गुणहानि चय)}}{\text{अनुकृष्टि गच्छ}}$ → $\boxed{\dfrac{\equiv\ \partial\ \text{प प प}}{\overset{\frown}{^{१}\text{अ}}\ \partial\,\partial\,\partial\ \text{गु}\ \overline{^{१}\text{गु}}\,\underset{२}{\text{३}}\ \dfrac{\text{प}}{\partial}}}$ = $\boxed{\dfrac{१}{४}}$ अंकों में

अनुकृष्टि गच्छ में गुणहानि रचना नहीं हैं क्योंकि सर्वोत्कृष्ट खण्डों में जघन्य खण्ड से एक कम गुणहानि गच्छ प्रमाण चयों की अधिकता पायी जाती है। वहाँ दूना प्रमाण नहीं होता। गुणहानि में सब प्रमाण आधा होता है।

अनुकृष्टि चयधन → अनुकृष्टि चय × $\dfrac{\text{अनु.गच्छ} -१}{२}$ × गच्छ

यहाँ प्रथमगुणहानि के प्रथमनिषेक की अनुकृष्टि रचना में द्रव्य का प्रमाण जानना।

वह यह है $\boxed{\dfrac{\equiv\ \partial\ \text{प प प } \overline{^{१}\text{गु}}}{\overset{\frown}{^{१}\text{अ}}\ \partial\,\partial\,\partial\ \text{गु}\ \overline{^{१}\text{गु}}\ \underset{२}{\text{३}}}}$ अंकसंदृष्टि से → $\boxed{९}$

$$\text{चय} \times \frac{\text{पद}-१}{२} \times \text{पद}$$

$$\text{चयधन} \rightarrow \frac{\equiv \partial \text{ प प प}}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \cancel{\text{प}}} \times \frac{{}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{\partial\ २} \times \frac{\cancel{\text{प}}}{२\ \cancel{\partial}} \rightarrow \frac{\equiv \partial \text{ प प प}\ {}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \cdot\ \partial\ २\ \cdot\ २}$$

$$\frac{१}{\cancel{४}} \times \frac{४-१}{२} \times \cancel{४} = \boxed{\frac{३}{२}}\ \text{चयधन}$$

आदिधन ⟶ प्रथम निषेक द्रव्य - चयधन

$$\frac{\equiv \partial \text{ प प प}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \cdot\ २} - \frac{\equiv \partial \text{ प प प}\ {}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \cdot\ \partial\ २\ \cdot\ २}$$

यहाँपर छेद समान है अत: समान संख्याओं को निकालकर शेष रहे $^{१}\overline{\text{गु}}$ गुणकार में

ऋणराशि का $\frac{{}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{\partial\ २}$ गुणकार कम करना

$$\text{आदिधन} \rightarrow \frac{\equiv \partial \text{ प प प}\left({}^{१}\overline{\text{गु}} - \frac{{}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{\partial\ २}\right)}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \cdot\ २}$$

$$\text{अंकसंदृष्टि } ९ - \frac{३}{२} = \frac{१८-३}{२} = \boxed{\frac{१५}{२}}$$

आदिधन

$$\text{प्रथम खण्ड} \rightarrow \frac{\text{आदिधन}}{\text{अनु.गच्छ}} \qquad \frac{९ - \frac{३}{२}}{४} = \frac{१५}{२\times४} = \frac{१५}{८} = \boxed{१\frac{७}{८}}$$

प्रथम गुणहानि जघन्य स्थिति से प्रतिबद्ध अनुकृष्टि प्रथम खण्ड

$$\boxed{\frac{\equiv \partial \text{ प प प}\,|\ {}^{१}\overline{\text{गु}} - \frac{{}^{१}\overset{\frown}{\text{प}}}{\partial\ २}}{{}^{१}\bar{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ {}^{१}\overline{\text{गु}}\ ३\ \text{प}\ \cdot\ २\ \partial}}$$

द्वितीयादि खण्डों में एक एक चय अधिक होता है।

जघन्य स्थितिप्रतिबद्ध अनुकृष्टि चरम खण्ड→ प्रथम खण्ड + चय ×(अनुकृष्टि गच्छ-१)

$$\equiv \frac{\partial\, प\, प\, प\, \left({}^{१}\widehat{गु} - \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २} \right)}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३\ प}{२\ \partial}} + चय\ \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial}$$

इन सब खण्डों का जोड़ करनेपर जघन्यस्थितिप्रतिबद्ध स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों का प्रमाण आता है। उसी को सिद्ध करते हैं -

आदिधन → मुख अर्थात् प्रथमखण्ड × पद

$$\equiv \frac{\partial\, प\, प\, प\, \left({}^{१}\overline{गु} - \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २} \right)}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३\ प}{२\ \partial}} \times \frac{प}{\partial}$$

सर्वधन = आदिधन + चयधन

$$\equiv \frac{\partial\, प\, प\, प\, \left({}^{१}\overline{गु} - \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २} \right)}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३}{२}} + \frac{\partial\, प\, प\, प\, \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २}}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३}{२}}$$

$$\equiv \frac{\partial\, प\, प\, प\, \left({}^{१}\overline{गु} - \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २} + \frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २} \right)}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३}{२}}$$

अन्य सब भाज्य भागहार राशि समान है अतः मूलराशि के ${}^{१}\overline{गु} - {}^{१}\widehat{प}$ गुणकार में $\frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २}$ गुणकार मिलाया ${}^{१}\overline{गु}$ में जो $\frac{{}^{१}\widehat{प}}{\partial\, २}$ कम था वह मिलाने से ${}^{१}\overline{गु}$ प्रमाण ही रहा

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\, प\, प\, प\, {}^{१}\overline{गु}}{{}^{१}\widehat{अ}\ \partial\,\partial\,\partial\ गु\ {}^{१}\overline{गु}\ \frac{३}{२}}}$$

सर्वधन (प्रथमगुणहानि प्रथमनिषेक)

अंकसंदृष्टि में (आदिधन + चयधन) $\frac{१५}{२} + \frac{३}{२} = \frac{१८}{२} = \boxed{९}$ **प्रथमगुणहानि प्रथमनिषेक**

इसीप्रकार प्रत्येक निषेक की अनुकृष्टि खण्डों की रचना जानना।

प्रथम गुणहानि के अंतनिषेक की अनुकृष्टि रचना -

प्रथम गुणहानि अंतनिषेक द्रव्य $\longrightarrow \equiv \dfrac{\partial\ \text{प प प गु २}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}$

सर्वधन - चयधन = आदिधन — अंकसंदृष्टि

$$\equiv \frac{\partial\ \text{प प प गु २}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}} - \equiv \frac{\partial\ \text{प प प}\ \frac{\text{१}\widehat{\text{प}}}{\partial\ \text{२}}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}$$

$$\text{१६} - \frac{\text{३}}{\text{२}} = \frac{\text{३२-३}}{\text{२}} = \frac{\text{२९}}{\text{२}}$$

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\ \text{प प प गु२} - \frac{\text{१}\widehat{\text{प}}}{\partial\ \text{२}}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}}}$$ आदिधन

$$\frac{\text{आदिधन}}{\text{अनु.गच्छ}} = \text{प्रथमखण्ड} \longrightarrow \equiv \frac{\partial\ \text{प प प गु२} - \frac{\text{१}\widehat{\text{प}}}{\partial\ \text{२}}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}\ \frac{\text{प}}{\partial}}$$

$$\frac{\text{२९}}{\text{२×४}} = \frac{\text{२९}}{\text{८}} = \boxed{\text{३}\frac{\text{५}}{\text{८}}}$$

द्वितीयादि खण्ड एक-एक चय अधिक है।

चरम खण्ड = प्रथम खण्ड + चय ×(अनुकृष्टि गच्छ-१) — अंकसंदृष्टि

$$\equiv \frac{\partial\ \text{प प प गु×२} - \frac{\text{१}\widehat{\text{प}}}{\partial\ \text{२}}\ \text{प} + \text{चय}\ \frac{\text{१}\widehat{\text{प}}}{\partial}}{\text{१}\widehat{\text{अ}}\ \partial\partial\partial\ \text{गु}\ \overline{\text{१गु}}\ \frac{\text{३}}{\text{२}}\ \frac{\text{प}}{\partial}}$$

$$\frac{\text{२९}}{\text{८}} + \frac{\text{१}}{\text{४}} \times \text{३} = \frac{\text{२९}}{\text{८}} + \frac{\text{३}}{\text{४}}$$

$$\frac{\text{२९+६}}{\text{८}} = \frac{\text{३५}}{\text{८}} = \boxed{\text{४}\frac{\text{३}}{\text{८}}}$$

इन सब खण्डों को मिलानेपर अन्तिमनिषेक का प्रमाण आता है।

$$\text{३}\frac{\text{५}}{\text{८}} + \text{३}\frac{\text{७}}{\text{८}} + \text{४}\frac{\text{१}}{\text{८}} + \text{४}\frac{\text{३}}{\text{८}} = \text{१४}\frac{\text{५+७+१+३}}{\text{८}}\quad \text{सर्वधन}$$

$$= \text{१४}\frac{\text{१६}}{\text{८}} = \text{१४+२} = \boxed{\text{१६}}\quad \text{अन्तिमनिषेक}$$

आदिधन + चयधन = सर्वधन

आदिधन → मुख × पद
$$\equiv \frac{\partial\,\text{प प प गु२} - \dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial\,२} \times \dfrac{\text{प}}{\partial}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;३\;\dfrac{\text{प}}{२\,\partial}}$$

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\,\text{प प प गु२} - \dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial\,२}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}}}$$

चयधन → $\dfrac{\text{मुख + भूमि}}{२}$ × पद

एक चय = मुख (आदि) पद → $\dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial}$

एक कम गच्छप्रमाण चय → भूमि (अन्त)

$$\left(\frac{\overset{\text{मुख}}{\equiv \dfrac{\partial\,\text{प प प}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;३\;\dfrac{\text{प}}{२\,\partial}}} + \overset{\text{भूमि}}{\equiv \dfrac{\partial\,\text{प प प}\;\dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;३\;\dfrac{\text{प}}{२\,\partial}}}}{२}\right) \times \overset{\text{पद}}{\frac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial}}$$

समान संख्याओं को निकालकर एक कम पल्य के असंख्यातवें भाग में मुख का १ गुणकार जोड़नेपर $\dfrac{\text{प}}{\partial}$ हुआ

$$\equiv \frac{\partial\,\text{प प प}\;\dfrac{\text{प}}{\partial}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;३\;\dfrac{\text{प}}{२\,\partial}} \qquad \boxed{\equiv \frac{\partial\,\text{प प प}\;\dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}\;२}} \text{ चयधन}$$

$$\overset{\text{आदिधन}}{\equiv \frac{\partial\,\text{प प प गु२} - \dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial\,२}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}}} \;\overset{+}{+}\; \overset{\text{चयधन}}{\equiv \frac{\partial\,\text{प प प}\;\dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial}\;२}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}}}$$

$$\equiv \frac{\partial\,\text{प प प गु२} - \dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial\,२} + \dfrac{^{१}\overline{\text{प}}}{\partial\,२}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}}$$

एक कम पल्य के असंख्यातवें भाग का आधा कम करना है और उतना ही मिलाना है तो शेष कुछ नहीं रहा।

$$\boxed{\equiv \frac{\partial\,\text{प प प गु २}}{^{१}\overline{\text{अ}}\;\partial\partial\partial\;\text{गु}\;\overline{^{१}\text{गु}}\;\dfrac{३}{२}}}$$ **चरम निषेक मात्र मूलधन**

आदिधन + चयधन

$$\frac{२९}{२} + \frac{३}{२} = \frac{३२}{२}$$

$\boxed{= १६}$

इसी तरह अन्यगुणहानि में भी जानना। अंकसंदृष्टि द्वारा दिखाते हैं।

प्रथमगुणहानि प्रथम निषेक → ९ अनुकृष्टि गच्छ → ४ ऊर्ध्वचय → १

अनुकृष्टि चय → $\frac{१}{४}$ चयधन → $\frac{३}{२} \times \frac{१}{४} \times ४ = \frac{३}{२}$

प्रथमनिषेक द्रव्य - चयधन= आदिधन $\frac{\text{आदिधन}}{\text{अनु. गच्छ}}$ → प्रथमखण्ड

$$९ - \frac{३}{२} = \frac{१८-३}{२} = \frac{१५}{२}$$

यहाँपर शास्त्र में प्रथम निषेक की $\dfrac{\frac{९-३}{२}}{४}$ ऐसी ही संदृष्टि रखी है उसका गणित करने पर $१\frac{७}{८}$ आता है वह लिखा है।

$$\frac{\frac{९-३}{२}}{४} = \frac{१५}{२\times४} = \frac{१५}{८} \quad \boxed{= १\frac{७}{८}}$$

प्रथमखण्ड + चय = द्वितीयखण्ड

$$\frac{१५}{८} + \frac{१}{४} = \frac{१५+२}{८} = \frac{१७}{८} = २\frac{१}{८}$$

द्वितीयखण्ड + चय = तृतीयखण्ड

$$\frac{१७}{८} + \frac{१}{४} = \frac{१७+२}{८} = \frac{१९}{८} = २\frac{३}{८}$$

तृतीयखण्ड + चय = चतुर्थखण्ड

$$\frac{१९}{८} + \frac{१}{४} = \frac{१९+२}{८} = \frac{२१}{८} = २\frac{५}{८}$$

इसको शास्त्र में इसप्रकार लिखाहै $\dfrac{\frac{९-३}{२} + १}{४}$ इसका उत्तर $२\frac{१}{८}$ ही आता है। पूर्व-पूर्व संख्या में १-१ मिलाते गये फिर ४ का भाग दिया तो $\frac{१}{४}$ चय मिलाया जैसा ही हुआ। यहाँ अधिक की संदृष्टि + ऐसी की है।

सर्व द्रव्य	प्रथमखण्ड		द्वितीयखण्ड		तृतीयखण्ड		चतुर्थखण्ड	
१६	$\frac{\frac{९-३}{२}+७}{४}=$	$३\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+८}{४}=$	$३\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+९}{४}=$	$४\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+१०}{४}=$	$४\frac{३}{८}$
१५	$\frac{\frac{९-३}{२}+६}{४}=$	$३\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+७}{४}=$	$३\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+८}{४}=$	$३\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+९}{४}=$	$४\frac{१}{८}$
१४	$\frac{\frac{९-३}{२}+५}{४}=$	$३\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+६}{४}=$	$३\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+७}{४}=$	$३\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+८}{४}=$	$३\frac{७}{८}$
१३	$\frac{\frac{९-३}{२}+४}{४}=$	$२\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+५}{४}=$	$३\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+६}{४}=$	$३\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+७}{४}=$	$३\frac{५}{८}$
१२	$\frac{\frac{९-३}{२}+३}{४}=$	$२\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+४}{४}=$	$२\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+५}{४}=$	$३\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+६}{४}=$	$३\frac{३}{८}$
११	$\frac{\frac{९-३}{२}+२}{४}=$	$२\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+३}{४}=$	$२\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+४}{४}=$	$२\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+५}{४}=$	$३\frac{१}{८}$
१०	$\frac{\frac{९-३}{२}+१}{४}=$	$२\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+२}{४}=$	$२\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+३}{४}=$	$२\frac{५}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+४}{४}=$	$२\frac{७}{८}$
९	$\frac{\frac{९-३}{२}}{४}=$	$१\frac{७}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+१}{४}=$	$२\frac{१}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+२}{४}=$	$२\frac{३}{८}$	$\frac{\frac{९-३}{२}+३}{४}=$	$२\frac{५}{८}$

गुण.	सर्वद्रव्य	प्रथम खंड	द्वितीय खंड	तृतीय खंड	चतुर्थ खंड	००००	चरम खंड	आदिधन	उत्तरधन
चरम स्थिति	≡ ∂ प प प गु २ ∂ ∂ ∂ १अ गु १गु̄ ३ २	१ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१– १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	२– १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	३– १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	००००	१ १ ≡ ∂ प प प गु२-प चय प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प गु२-प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂
द्विचरम स्थिति	१ ≡ ∂ प प प गु २ ∂ ∂ ∂ १अ गु १गु̄ ३ २	१ १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१– १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	२– १ ≡ ∂ प प प गु२-प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	००००	१ १ १ ≡ ∂ प प प गु२-प चय प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ १ ≡ ∂ प प प गु२-प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂
मध्य स्थिति	००००००	००००००	००००००	००००००	००००००	००००	००००००	००००००	००००००
द्वितीय स्थिति	२– ≡ ∂ प प प गु ∂ ∂ ∂ १अ गु १गु̄ ३ २	२– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	३– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	४– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	५– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	००००	२–१ १ ≡ ∂ प प प गु-प चय प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	२–१ ≡ ∂ प प प गु-प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂
प्रथम जघन्य स्थिति	१– ≡ ∂ प प प गु ∂ ∂ ∂ १अ गु १गु̄ ३ २	१– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	२– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	३– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	४– १ ≡ ∂ प प प गु- प ∂ ∂ ∂ ∂ २ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	००००	१–१ १ ≡ ∂ प प प गु-प चय प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१–१ ≡ ∂ प प प गु-प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂	१ ≡ ∂ प प प प प ∂ ∂ ∂ ∂ २ ∂ १अ गु १गु̄ ३ प २ ∂

पूर्व में प्रथमखण्ड और चरमखण्ड का प्रमाण निकाला है। द्वितीयादि खण्डों का प्रमाण निकालने के लिए एक एक चय मिलाना है। वहाँ प्रथम खण्डकी अन्य समानता देखकर एक अधिक गुणहानिरूप गुणकार में एक-एक अधिकता करनेपर दो अधिक गुणहानि, तीन अधिक गुणहानि, चार अधिक गुणहानि रूप द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ खण्ड होता है।

द्वितीय निषेक का द्रव्य → प्रथमनिषेक + चय

$$\equiv \frac{\partial\,\text{प}\,\text{प}\,\text{प}\,\overset{१-}{\text{गु}}}{{}^{१}\hat{\text{अ}}\,\partial\,\partial\,\partial\;\text{गु}\;\overset{१-}{\text{गु}}\;\frac{३}{२}} + \equiv \frac{\partial\,\text{प}\,\text{प}\,\text{प}}{{}^{१}\hat{\text{अ}}\,\partial\,\partial\,\partial\;\text{गु}\;\overset{१-}{\text{गु}}\;\frac{३}{२}}$$

$$\rightarrow \boxed{\equiv \frac{\partial\,\text{प}\,\text{प}\,\text{प}\,\overset{२-}{\text{गु}}}{{}^{१}\hat{\text{अ}}\,\partial\,\partial\,\partial\;\text{गु}\;\overset{१-}{\text{गु}}\;\frac{३}{२}}}$$

इसीप्रकार आगे भी जानना। द्वितीय निषेक के प्रथमादि खण्ड प्रथमनिषेक के प्रथमादि खण्डों से एक एक चय अधिक है। अत: गुणकार में एक-एक अधिकता करनेपर इसके खण्ड होते हैं। अंतनिषेक का द्रव्य पहले बताया है वह जानना। उसमें से उत्तरधन घटाकर अनुकृष्टि गच्छ का भाग देनेपर प्रथम खण्ड होता है। इसमें एक एक चय मिलाने के लिए दो गुणहानि के ऊपर एक, दो, तीन की अधिकता करनेपर द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ खण्ड होते हैं तथा एक कम अनुकृष्टि गच्छ की अधिकता करनेपर अंतखण्ड होता है। अंतनिषेक में से एक ऊर्ध्वचय कम करनेपर उपान्तनिषेक प्राप्त होता है अत: दो गुणहानिरूप गुणकार में से एक कम किया। इसके प्रथमादि खंडों में अंतनिषेक के प्रथमादि खंडों में से एक एक अनुकृष्टि चय कम होते हैं अत: प्रथम खण्ड में दो गुणहानि गुणकार के ऊपर एक कम की, द्वितीय खण्ड में पूर्ण दो गुणहानि, तृतीय खण्ड में एक अधिक दो गुणहानि, चतुर्थ खण्ड में दो अधिक दो गुणहानि, अंत खण्ड में दो कम अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण चय अधिक की संदृष्टि की है। यहाँ गुणहानि, दो गुणहानि के आगे गुणकार है उसमें से अधिक हीन करनेपर गुणहानिप्रमाण अधिक हीन होता है अत: गुणहानि और दो गुणहानि ही में हीन अधिक किये हैं। आगे ऋणराशि है वह है ही।

प्रथमादि निषेकों के प्रथम खण्ड के आगे अनुकृष्टि गच्छ का गुणकार करने पर सर्वत्र आदिधन जानना। उत्तर धन पहले कहा है वही सर्वत्र जानना।

जैसे यहाँ प्रथम गुणहानि की रचना की है वैसे ही दूना दूना प्रमाण सहित द्वितीयादि गुणहानियों की रचना जानना।

पढमं पढमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ।।९५६।।

अन्वयार्थ - इस प्रकार अनुकृष्टि रचना में प्रथमादि गुणहानियों में अनुकृष्टि का **(पढमं पढमं खंडं)** प्रथम-प्रथम खंड **(पेक्खिऊण)** परस्पर में देखने पर **(अण्णोण्णं)** एक दूसरे से, **(विसरिच्छं)** विसदृश (असमान) है। **(हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिम-जहण्णं)** अपने-अपने नीचे के प्रथम खण्ड के उत्कृष्ट स्थान से ऊपर के प्रथम खण्ड के जघन्य स्थान शक्ति की अपेक्षा अनन्त गुणा है।

बिदियं बिदियं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ।।९५७।।

अन्वयार्थ - (बिदियं बिदियं खंडं) गुणहानियों में प्रथमादि निषेकों के द्वितीय-द्वितीय खंड अंतिम निषेक के द्वितीय खंड पर्यन्त निरन्तर **(पेक्खिऊण)** देखने पर एक एक चय प्रमाण अधिक हैं, इसलिए **(अण्णोण्णं)** परस्पर में **(विसरिच्छं)** विसदृश (असमान) हैं, क्योंकि **(हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिम जहण्णं)** अधस्तन द्वितीय खण्ड के उत्कृष्ट स्थान से उपरितन द्वितीय खण्ड के जघन्य स्थान शक्ति की अपेक्षा अनन्त गुणा है।

तथा ऐसे ही तृतीय तृतीय आदि खण्डों में असमानता जानना चाहिए। इस प्रकार एक कम अनुकृष्टि प्रमाण खण्डों की असमानता होती है।

चरिमं चरिमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ।।९५८।।

अन्वयार्थ - गुणहानि के प्रथमादि निषेकों के, **(चरिमं चरिमं खंडं)** अन्तिम-अन्तिम खण्ड अन्तिम निषेक के अन्तिम खण्ड पर्यन्त निरन्तर **(पेक्खिऊण)** देखनेपर एक-एक चय प्रमाण अधिक हैं इसलिए, **(अण्णोण्णं)** परस्पर में **(विसरिच्छं)** विसदृश हैं **(हेट्ठिलुक्कस्सा-दोणंतगुणादुवरिमजहण्णं)** और शक्ति की अपेक्षा अपने से अधस्तन

अन्तिम खण्ड के उत्कृष्ट स्थान से उपरितन अन्तिम खण्ड का जघन्य स्थान अनन्त गुणा है।

हेट्ठिमखंडुक्कस्सं उव्वंकं होदि उवरिमजहण्णं ।
अट्ठंकं होदि तदोणंतगुणं उवरिमजहण्णं ।।९५९।।

अन्वयार्थ - जिस कारण तिर्यग् रूप रचना में ऊपर-ऊपर लिखे हुए खंडों में, अपने से **(हेट्ठिमखंडुक्कस्सं)** अधस्तन खण्ड का उत्कृष्ट अध्यवसायस्थान पूर्व स्थान से **(उव्वंकं)** उर्वङ्क अर्थात् अनन्तभागवृद्धि को लिए हुए है तथा अधस्तन खण्ड के उत्कृष्ट से **(उवरिमजहण्णं)** उपरितन खण्ड का जघन्य अध्यवसाय स्थान **(अट्ठंकं)** अष्टाङ्क अर्थात् अनन्तगुण वृद्धि को **(होदि)** लिए हुए है **(तदोणंतगुणं)** इस कारण से **(उवरिमजहण्णं)** अधस्तन खण्ड के उत्कृष्ट से उपरितन खण्ड का जघन्य स्थान अनन्त गुणा कहा है।

विशेषार्थ - प्रथमादि गुणहानियों में अनुकृष्टि का पहला पहला खण्ड परस्पर देखनेपर विसदृश है। संख्यारूप से समान नहीं है और शक्ति की अपेक्षा भी अपने-अपने नीचे के उत्कृष्ट स्थान से ऊपर का जघन्य स्थान भी अनन्तगुणा है। अत: पहला पहला खण्ड समान नहीं है।

प्रथमादि गुणहानियों में अनुकृष्टि का दूसरा दूसरा खण्ड गुणहानि के अन्तिम निषेक के दूसरे खण्ड पर्यन्त एक एक चय अधिक है अत: स्थानसंख्या और शक्तिभेद से समान नहीं हैं। नीचे के दूसरे खण्ड के उत्कृष्ट से ऊपर के दूसरे खण्ड का जघन्य भी अनन्तगुणा है। इसीप्रकार तीसरे आदि सर्व खण्डों की भी असमानता जानना। नीचे के खण्डों का उत्कृष्ट स्थान ऊर्वंक अर्थात् अनन्तभागवृद्धिरूप है और ऊपर के खण्ड का जघन्यस्थान अष्टांक अर्थात् अनन्तगुणवृद्धि को लिए हुए है इस कारण से नीचे के खण्ड के उत्कृष्ट से ऊपर के खण्ड का जघन्य स्थान अनन्तगुणा कहा है।

अवरुक्कस्सठिदीणं जहण्णमुक्कस्सयं च णिव्वग्गं ।
सेसा सव्वे खंडा सरिसा खलु होंति उड्ढेण ।।९६०।।

अन्वयार्थ - (अवरुक्कस्सठिदीणं जहण्णमुक्कस्सयं च णिव्वग्गं) जघन्य स्थिति के कारणभूत अध्यवसाय स्थानों के प्रथम खण्ड और उत्कृष्ट स्थिति के कारणभूत अध्यवसायों के अन्तिम खण्ड ये दोनों तो निर्वर्ग हैं अर्थात् किसी भी खण्ड से सर्वथा समान

नहीं हैं। और **(सेसा सव्वे खंडा)** शेष सर्व खण्ड **(उड्ढेण)** ऊपर ऊपर **(सरिसा खलु होंति)** अन्य खण्डों के समान हैं।

विशेषार्थ - जघन्य स्थिति का जघन्य खण्ड और उत्कृष्ट स्थिति का उत्कृष्ट खण्ड निर्वर्ग हैं अर्थात् किसी भी खण्ड के समान नहीं हैं। शेष सब खण्ड ऊपर ऊपर अन्य खण्डों के समान हैं।

अट्ठण्हं पि य एवं आउजहण्णट्ठिदिस्स वरखंडं ।
जाव य ताव य खंडा अणुकड्ढिपदे विसेसहिया ।।९६१।।
तत्तो उवरिमखंडा सगसगउक्कस्सगोत्ति सेसाणं ।
सव्वे ठिदीण खंडाऽसंखेज्जगुणक्कमा तिरिये ।।९६२।।

अन्वयार्थ - (अट्ठण्हं पि य एवं) आठों कर्मों की अनुकृष्टि रचना समान है अर्थात् जैसी मोहनीय कर्म की अनुकृष्टि रचना कही गई है वैसी ज्ञानावरणादि कर्मों की भी जानना, किन्तु **(आउजहण्णट्ठिदिस्स)** आयु कर्म की तिर्यग् रचना में जघन्य स्थितिबंध के कारणभूत अध्यवसाय स्थानों की **(अणुकड्ढिपदे)** अनुकृष्टि रचना में **(जाव य ताव य खंडा)** जितने खण्ड हैं उतने खण्ड **(विसेसहिया)** चय कर विशेष अधिक हैं।

(तत्तो) उससे आगे **(उवरिमखंडा)** ऊपर के खण्ड **(सगसगउक्कस्सगोत्ति)** अपने अपने उत्कृष्ट खण्ड पर्यन्त तथा **(सेसाणं ठिदीण खंडा)** शेष स्थितियों के अपने अपने जघन्य खण्ड से अपने अपने उत्कृष्ट खण्ड पर्यन्त **(सव्वे तिरिये)** सब तिर्यक् रचना रूप खण्ड **(असंखेज्जगुणक्कमा)** क्रमसे असंख्यातगुणे -असंख्यात गुणे हैं।

विशेषार्थ - जैसी मोहनीय की रचना की है, वैसी ही अपने अपने द्रव्यादि के अनुसार शेष छह कर्मों की रचना जानना।

आयुकर्म के अनुकृष्टि गच्छ के खंड जबतक जघन्यस्थिति के अन्तिमखण्ड आता है तबतक चय अधिक है। उससे आगे जघन्यस्थिति के उत्कृष्ट खण्ड से ऊपर के स्थितिखंड अपने अपने उत्कृष्टखण्डपर्यंत असंख्यातगुणे हैं तथा शेष स्थितियों के अपने अपने जघन्यखण्ड से अपने अपने उत्कृष्ट खण्डपर्यंत सर्व खण्ड असंख्यात गुणे-असंख्यातगुणे हैं।

अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थानों का कथन -

रसबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखलोगमेत्ताणि ।
अवरट्ठिदिस्स अवरट्ठिदिपरिणामम्मि थोवाणि ।।९६३।।

अन्वयार्थ - (रसबंधज्झवसाणट्ठाणाणि) अनुभागबंधाध्यवसाय स्थान **(असंखलोगमेत्ताणि)** असंख्यात लोक प्रमाण (असंख्यात लोक × असंख्यात लोक) हैं। इसमें **(अवरट्ठिदिस्स)** जघन्य स्थिति सम्बन्धी स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों में **(अवरट्ठिदिपरिणामम्मि)** जघन्य स्थिति परिणामों में अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान अन्य स्थिति बंधाध्यवसाय सम्बन्धी अनुभागाध्यवसाय परिणामों की अपेक्षा **(थोवाणि)** स्तोक हैं।

तत्तो कमेण वड्ढदि पडिभागेण य असंखलोगेण ।
अवरट्ठिदिस्स जेट्ठट्ठिदिपरिणामो त्ति णियमेण ।।९६४।।

अन्वयार्थ - (तत्तो) उसके पश्चात् **(कमेण)** क्रम से **(अवरट्ठिदिस्स)** जघन्य स्थिति के जघन्य परिणाम सम्बन्धी प्रथम निषेक रूप अनुभागाध्यवसाय स्थान से **(जेट्ठट्ठिदिपरिणामो त्ति)** उत्कृष्ट स्थिति के उत्कृष्ट अनुभागाध्यवसान स्थान पर्यन्त **(असंखलोगेण पडिभागेण य)** असंख्यात लोक रूप प्रतिभागहार से (असंख्यातवें भाग से) **(वड्ढदि)** बढ़ते बढ़ते अनुभागाध्यवसाय स्थान **(णियमेण)** नियम से जानना चाहिए।

विशेषार्थ - अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान

अनुभागबंधाध्यवसाय स्थान = असंख्यात लोक × असंख्यात लोक

$$\equiv\partial \quad \times \quad \equiv\partial$$

उनमें जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान में अनुभागाध्यवसाय स्थान =

जघन्य स्थिति बन्धयोग्य अध्यवसायस्थान × असंख्यात लोक = ९ × $\equiv\partial$

वे अन्य स्थितिबंधसम्बन्धी अनुभागाध्यवसायों से थोड़े हैं।

यहाँपर १) द्रव्य = जघन्य स्थितिसंबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थान → $\boxed{\equiv\partial \times \equiv\partial}$

२) नानागुणहानि → $\dfrac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात} \times \text{असंख्यात}}$ → $\boxed{\begin{matrix}२\\ \partial\partial\end{matrix}}$

३) गुणहानि आयाम → $\dfrac{\text{स्थिति}}{\text{नाना गुणहानि}}$ → $\boxed{\begin{matrix}\frac{९}{२}\\ \partial\partial\end{matrix}}$ दो गुणहानि $= \dfrac{९}{\begin{matrix}२\\ \partial\partial\end{matrix}} \times २$

४) अन्योन्याभ्यस्त राशि → $\dfrac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$ → $\boxed{\dfrac{२}{\partial}}$

लघुसंदृष्टि - गुणहानि → गु , अन्योन्याभ्यस्तराशि → अ

प्रथम गुणहानि द्रव्य → $\dfrac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{अन्योन्याभ्यस्त - १}}$ → $\boxed{\dfrac{\equiv\partial \; \equiv\partial}{\text{अ} - १}}$

अन्तिम गुणहानि द्रव्य → प्रथमगुणहानिद्रव्य × $\dfrac{\text{अन्योन्याभ्यस्त}}{२}$ → $\boxed{\dfrac{\equiv\partial \; \equiv\partial}{\text{अ} - १} \; \dfrac{\text{अ}}{२}}$

मध्यधन → $\dfrac{\text{प्रथम गुणहानिद्रव्य}}{\text{गुणहानि आयाम}}$ → $\boxed{\dfrac{\equiv\partial \; \equiv\partial}{(\text{अ} - १) \; \text{गु}}}$

चय → $\dfrac{\text{मध्यधन}}{\text{दो गुणहानि - } \dfrac{(\text{गुणहानि} - १)}{२}}$ → $\boxed{\dfrac{\equiv\partial \; \equiv\partial}{(\text{अ} - १) \; \text{गु} \; (\text{गु} - १) \; \frac{३}{२}}}$

प्रथमनिषेक → चय × गुणहानि + १ → $\boxed{\dfrac{\equiv\partial \; \equiv\partial \; (\text{गु} - १)}{(\text{अ} - १) \; \text{गु} \; (\text{गु} - १) \; \frac{३}{२}}}$

द्वितीयादि निषेकों में एक एक चय अधिक होता है। द्वितीयादि गुणहानियों में निषेक और चय का प्रमाण दूना-दूना जानना। अर्थात् जघन्य स्थिति के जघन्य परिणाम संबंधी प्रथम निषेकरूप अनुभागाध्यवसायस्थानों से उस जघन्य स्थिति के द्वितीयादि

परिणाम संबंधी द्वितीयादि निषेकरूप अनुभागाध्यवसाय स्थान प्रथम गुणहानि के अन्तिमनिषेक पर्यन्त एक एक चय अधिक हैं। यहाँ सर्वद्रव्य में असंख्यात लोक से भाग देनेपर चय का प्रमाण होता है।

	प्रथमगुणहानि	द्वितीयगुणहानि	तृतीयगुणहानि	मध्यम	चरमगुणहानि
अंतिम निषेक	≡∂ ≡∂ गु२ १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ गु२।२ १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ गु२।२।२ १अ गु १गु ३ २	००००	≡∂ ≡∂ अ गु२। १अ गु १गु २ ३ २
मध्यम निषेक	० ० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ० ०	००००	० ० ० ० ० ० ०
तृतीय निषेक	≡∂ ≡∂ ३गु १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ ३गु२ १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ ३गु२।२ १अ गु १गु ३ २	००००	≡∂ ≡∂ अ ३गु १अ गु १गु २ ३ २
द्वितीय निषेक	≡∂ ≡∂ २गु १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ २गु२ १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ २गु२।२ १अ गु १गु ३ २	००००	≡∂ ≡∂ अ २गु १अ गु १गु २ ३ २
प्रथम निषेक	≡∂ ≡∂ १गु १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ १गु२ १अ गु १गु ३ २	≡∂ ≡∂ १गु२।२ १अ गु १गु ३ २	००००	≡∂ ≡∂ अ १गु १अ गु १गु २ ३ २

इस रचना में जघन्यस्थितिसंबंधी स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों में जो अनुभागाध्यवसाय स्थान हैं उनकी गुणहानि रचना की हैं। उसमें प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चरमगुणहानि दिखायी है। जघन्यस्थिति को कारणभूत जो स्थितिबंधाध्यवयाय स्थान हैं उनको फैलाकर उतने निषेक (स्थिति) समझना और उन एक एक निषेक में प्राप्त हुआ जो प्रमाण है वह अनुभागाध्यवसाय स्थान जानना। जघन्य स्थितिबंधाध्यवसाय संबंधी जितने अनुभागाध्यवसायस्थान हैं वे सब निषेकों में विभाजित हो जाते हैं। प्रथम गुणहानि आदिक का प्रमाण निकालने का विधान स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों जैसा समझना। प्रथम गुणहानि के चय को एक अधिक गुणहानि से गुणा करनेपर प्रथमनिषेक आता है।

चय × गुणहानि + २ = द्वितीय निषेक 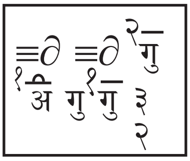

चय × गुणहानि + ३ = तृतीय निषेक

चय × दो गुणहानि = अंतिम निषेक 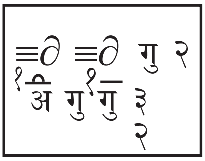

इसीप्रकार द्वितीयादि गुणहानि के निषेकों का प्रमाण निकालने का विधान जानना।

प्रथमगुणहानिद्रव्य × २ = द्वितीय गुणहानि द्रव्य 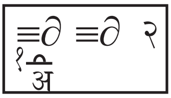

द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक = प्र.गुण.प्रथम निषेक × २ 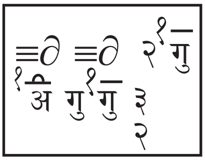

द्वितीय निषेक में $\overline{\text{गु}}^{२}$ चय, तृतीय निषेक में गु+३ चय, अन्तिम निषेक में गु २ चय लिखे हैं। तत्पश्चात् दो बार दो से गुणा करके तृतीय गुणहानि के निषेक लिखे हैं। प्रथमगुणहानि के निषेकों को अन्योन्याभ्यस्त राशि के आधे से गुणित करके चरम गुणहानि के निषेक लिखे हैं।

मध्य गुणहानि और मध्य निषेकों के ग्रहण के लिये बीच में बिंदियों की संदृष्टि लिखी हैं।

जिस प्रकार जघन्य स्थितिबंध को कारण स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानों के प्रथम निषेक में अनुभागाध्यवसाय स्थानों की रचना कहीं हैं, उसी प्रकार यथायोग्य द्वितीय स्थिति से लेकर उत्कृष्टस्थिति तक की स्थिति को कारण ऐसे स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानरूप द्वितीयादि अंततक के निषेकों में रचना जाननी चाहिए।

कितने ही आचार्यों के अभिप्राय से अनुभागबंधाध्यवसायस्थानों में जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अनुभागाध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।

अन्य आचार्य के अभिप्राय से अनुभागाध्यवसाय स्थानों की रचना →

स्थितिभेद	जघन्य स्थिति प१	मध्य स्थिति	मध्य स्थिति	मध्य स्थिति	मध्य स्थिति	मध्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति प११
स्थितिबंधा-ध्यवसाय-स्थान	ज ९	मध्यनिषेक ०००००	उ १६	मध्यनिषेक ०००००	ज २८८	मध्यनिषेक ०००००	उ ५१२
अनु- भाग- बंधाध्य- वसाय- स्थान	$\equiv\partial\equiv\partial$ जघन्य ० ० म ० ध्य ० ० म ० उत्कृष्ट	००००० ० ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट	$\equiv\partial\equiv\partial$ जघन्य ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट	००००० ० ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट	$\equiv\partial\equiv\partial$ जघन्य ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट	००००० ० ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट	$\equiv\partial\equiv\partial$ जघन्य ० ० ० ० ० ० उत्कृष्ट

जघन्यस्थिति को कारणभूत स्थितिबंधाध्यवसायस्थानों के प्रथमगुणहानि का प्रथम निषेक अंक संदृष्टि अपेक्षा ९, यथायोग्य मध्यस्थिति को कारणभूत प्रथम गुणहानि उत्कृष्ट निषेक १६, अंतगुणहानि का यथायोग्य मध्यस्थिति को कारणभूत जघन्यनिषेक २८८ और उत्कृष्टस्थिति को कारणभूत उसका उत्कृष्ट निषेक ५१२। इनमें सामान्यता से अनुभागाध्यवसाय स्थान $\equiv \partial \equiv \partial$ पाये जाते हैं। वे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट यथासंभव जानना।

प्रशस्ति रूप आठ गाथाऐं -

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटदेवेण गोम्मटं रइयं ।
कम्माण णिज्जरट्ठं तच्चट्ठवधारणट्ठं च ।।९६५।।

अन्वयार्थ - (गोम्मटदेवेण) गोम्मट देव-वर्धमान तीर्थंकर देव ने **(गोम्मटसंगहसुत्तं)** संग्रह रूप इस गोम्मट सार ग्रन्थ के विषय की, **(कम्माण णिज्जरट्ठं)**

कर्मों की निर्जरा और **(तच्चट्ठवधारणट्ठं च)** तत्त्वों के स्वरूप का निश्चय करने के लिए **(गोम्मटं)** सुंदर (प्रमाणनय से) **(रइयं)** रचना की है।

जम्हि गुणा विस्संता गणहरदेवादिइड्ढिपत्ताणं ।
सो अजियसेणणाहो जस्स गुरू जयउ सो राओ ।।९६६।।

अन्वयार्थ - (गणहरदेवादिइड्ढिपत्ताणं) बुद्धि आदि ऋद्धि प्राप्त गणधर देवादि, **(जम्हि गुणा विस्संता)** के समान जिनमें गुण विद्यमान हैं, **(सो)** ऐसे **(अजियसेणणाहो)** अजित सेन मुनिनाथ **(जस्स गुरू)** जिसके व्रत (दीक्षा) देने वाले गुरु हैं, **(सो राओ जयउ)** वह राजा चामुण्डराय सर्वोत्कृष्ट रूप से जयशील हो।

सिद्धंतुदयतडुग्गयणिम्मलवरणेमिचंदकरकलिया ।
गुणरयणभूसणंबुहिमइवेला भरउ भुवणयलं ।।९६७।।

अन्वयार्थ - (सिद्धंतुदयतडुग्गयणिम्मलवरणेमिचंदकरकलिया) सिद्धान्त रूप उदयाचल पर जिनका ज्ञान उदय को प्राप्त हुआ है, ऐसे निर्मल चन्द्रमा के समान नेमिचन्द्राचार्य की वचनरूपी किरणों से सम्बन्धित **(गुणरयणभूसणं)** गुण रूपी रत्नों से शोभित, चामुण्डराय की **(बुहिमइवेला)** बुद्धिरूप बेला, **(भुवणयलं भरउ)** समस्त जगत में अतिशय से विस्तार प्राप्त करे।

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटसिहरुवरि गोम्मटजिणो य ।
गोम्मटरायविणिम्मिय दक्खिणकुक्कुडजिणो जयउ ।।९६८।।

अन्वयार्थ - (गोम्मटसिहरुवरि) गोम्मट शिखर पर **(गोम्मटराय विणिम्मिय)** चामुण्डराय राजा ने जो जिन मन्दिर बनवाया, उसमें एक हस्त प्रमाण इन्द्रनील मणिमय नेमिनाथ तीर्थंकर देव का प्रतिबिम्ब विराजमान किया था, **(दक्खिणकुक्कुड जिणो)** तथा भारत के दक्षिण प्रान्त में श्रवण बेलगोला के पर्वत पर निर्मापित **(गोम्मटजिणो य)** बाहुबली की प्रतिमा विराजमान की थी वह प्रतिबिम्ब **(गोम्मटसंगह सुत्तं)** और गोम्मट सार संग्रह ग्रन्थ **(जयउ)** जयवंत हो।

जेण विणिम्मिय पडिमावयणं सव्वट्ठसिद्धिदेवेहिं ।
सव्वपरमोहिजोगिहि दिट्ठं सो गोम्मटो जयऊ ।।९६९।।

अन्वयार्थ - (जेण) जिस चामुण्डराय के द्वारा **(विणिम्मिय पडिमावयणं)** प्रतिमा को बनवाया, उस प्रतिमा के मुख को **(सव्वट्ठसिद्धिदेवेहिं)** सर्वार्थसिद्धि के देवों ने तथा **(सव्वपरमोहिजोगिहिं)** सर्वावधि व परमावधि ज्ञानधारी मुनियों ने **(दिट्ठं)** देखा है, **(सो गोम्मटो जयऊ)** वह चामुण्डराय सर्वोत्कृष्ट पने को प्राप्त होवे।

वज्जयलं जिणभवणं ईसिपभारं सुवण्णकलसं तु ।
तिहुवणपडिमाणेक्कं जेण कयं जयउ सो राओ ।।९७०।।

अन्वयार्थ - (जिणभवणं) जिस मन्दिर का अवनितल अर्थात् पीठबन्ध **(वज्जयलं)** वज्र के समान है, **(ईसिपभारं)** जिसका ईषत् प्राग्भार नाम है **(सुवण्णकलसं तु)** और जिसके ऊपर स्वर्णमयी कलश है, **(तिहुवणपडिमाणेक्कं)** तीन लोक में जिसकी उपमा नहीं है अर्थात् अनुपम जिनमन्दिर **(जेण कयं)** जिसके द्वारा बनवाया गया है, **(सो राओ जयउ)** वह राजा चामुण्डराय जयवंत प्रवर्ते!

जेणुब्भियथंभुवरिमजक्खतिरीटग्गकिरणजलधोया ।
सिद्धाण सुद्धपाया सो राओ गोम्मटो जयउ ।।९७१।।

अन्वयार्थ - (जेणुब्भियथंभुवरिमजक्खतिरीटग्गकिरणजलधोया) जिसने चैत्यालय के आगे स्थापित खंभों के ऊपर यक्ष के आकारवाली मूर्ति के मुकुटाग्र भाग की किरणों रूप जल से धोये हैं, **(सिद्धाण सुद्धपाया)** सिद्ध परमेष्ठी के आत्मप्रदेशों के आकार रूप शुद्ध चरणों को **(सो गोम्मटो राओ जयउ)** वह चामुण्डराय राजा जयवंत होवे।

गोम्मटसुत्तंलिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी ।
सो राओ चिरकालं णामेण य वीरमत्तंडी ।।९७२।।

अन्वयार्थ - (गोम्मटसुत्तंलिहणे) गोम्मटसार ग्रन्थ लिखते समय, **(गोम्मटरायेण)** जिस गोम्मटराय ने **(जा देसी कया)** कर्नाटक वृत्ति बनाई है और **(य वीरमत्तंडी णामेण)** ''वीर मार्तण्ड'' नाम से प्रसिद्ध **(सो राओ चिरकालं)** वह चामुण्डराय दीर्घकाल पर्यन्त जयवन्त होवे ।

।। इति प्रशस्तिः।।